जैनागम स्तोक संग्रह

जैनागम स्तोक संग्रह

संग्राहक
स्व० प्रवर्तक पं० मुनि श्री मगनलाल जी महाराज साहब

प्रबोधक
तपस्वी मुनि श्री मेघराज जी महाराज साहब
"जैन सिद्धान्त प्रभाकर"

प्रकाशक
श्री जैनदिवाकर दिव्य ज्योति कार्यालय
ब्यावर

पुस्तक का नाम :
जैनागम स्तोक संग्रह

संग्राहक :
स्व० प्रवर्तक प० श्री मगनलाल जी महाराज साहब

प्रबोधक :
तपस्वी श्री मेघराज जी महाराज साहब

संशोधित परिवर्द्धित द्वितीय आवृत्ति
२०००

प्रकाशक :
श्री जैनदिवाकर दिव्य ज्योति कार्यालय
मेवाडी बाजार, ब्यावर (राज०)

अर्द्ध मूल्य : ४) रुपया

मुद्रक :
रामनारायण मेडतवाल
श्री विष्णु प्रिंटिंग प्रेस
राजा मण्डी, आगरा–२

प्रारंभिका

जगत के दर्शन समुदाय मे जैन-दर्शन का विशिष्ट एव महत्वपूर्ण स्थान है। जैन-दर्शन बाह्य की नही, अन्तस् की प्रेरणा देता है। पर की नही, स्व की शोध कराता है। भौतिक पदार्थो का नही, आत्मा का रहस्य उद्घाटित करता है। जैन-दर्शन की गहराई मे प्रवेश करने वाले को स्तोक ज्ञान भी आवश्यक है। भिन्न-भिन्न विपयो के विशेष दृष्टि द्वारा किये गये वर्गीकरण को स्तोक कहते है। इन स्तोको को जैनागम सागर से मथन प्राप्त सुधा कहे तो भी अतिशयोक्ति नही है।

जैनागम स्तोक सग्रह का यह संशोधित एव परिवर्द्धित संस्करण है। पहले की अपेक्षा इसमे कुछ स्तोक बढाये भी गये है। इस स्तोक संग्रह में जहाँ नवतत्व, पच्चीस बोल आदि ज्ञान की प्रारम्भिक जानकारी वाले स्तोक है, वहाँ लोक-परिचयात्मक १४ राजूलोक, नरक, भवन पति, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी, वैमानिक आदि के परिचयात्मक स्तोक भी है। गर्भ-विचार, छ आरे, नक्षत्र एव विदेश गमन जैसा मनोरंजक विषय भी है। तो गुणस्थान, कर्म-विचार, चौबीस दण्डक, पुद्गल परावर्त, गतागत, वडा बासठिया जैसे—गम्भीर चिन्तन प्रधान-विषय भी है।

जैनागम स्तोक सग्रह समाज में इतना लोक-प्रिय रहा है कि इसी का गुजराती अनुवाद भी निकला और गुजराती समाज मे बहुत

फैला। अभ्यासियो की इसके प्रति निरन्तर सद्‌भावना रही है। स्तोको को कठस्थ करना, अनुवृत्त करना, स्मरण करना, प्रश्नोत्तर रूप में पृछा करना थोकड़ा प्रेमियो की परम्परा रही है।

मेरे गुरु भ्राता तपस्वी मेघराजजी महाराज "जैन सिद्धान्त प्रभाकर" की सतत् प्रेरणा रही है कि जैनागम स्तोक संग्रह का सुन्दर-सशोधित एवं परिवर्द्धित रूप थोकड़ा प्रेमियों के सामने आये, जिससे उन्हे अभ्यास मे अनुराग जागे। आप स्वयं भी थोकडा के अभ्यासी है। उन्ही की प्रेरणा का यह फल है।

ये स्तोक प्राय· श्री भगवति, उत्तराध्ययन, पन्नवणा, समवायांग ठाणांग, आदि आगमों से संग्रह किये गये है। दर्शन अभ्यासियों को, आगम प्रेमियो को यह संग्रह रुचिकर लगे और समाज में स्तोकों (थोकडो) का अभ्यास बढ़े। अध्यात्मिक प्रेमियो की ज्ञान वृद्धि हो और वे मोक्ष मार्ग के प्रति अभिमुख हों।

इसी पवित्र भावना से—

—अशोक मुनि
"साहित्यरत्न"

के० जी० एफ०
वीर निर्वाण
२४९६

प्रकाशक का निवेदन

प्रवर्तक पं० रत्न स्वर्गीय श्री मगनलाल जी महाराज साहब के सुशिष्य, सिद्धान्त प्रभाकर तपस्वी श्री मेघराज जी महाराज साहब के द्वारा पुन: संयोजित "जैनागम स्तोक सग्रह" नामक ग्रन्थ का प्रकाशन करते हुए हमे परम-प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है।

थोकड़ा-पद्धति ज्ञान-राशि का उद्घाटन करने के लिए एक प्रकार से कुंजी के समान है। पुस्तक को हर-प्रकार से उपयोगी बनाने का भरसक प्रयत्न किया गया है। फिर भी यदि कोई कमी रह गई हो, अथवा प्रेस की कोई त्रुटि रह गई हो तो कृपया प्रेमी पाठक बन्धु क्षमा करने की कृपा करे।

सुविख्यात वक्ता, कवि, "साहित्यरत्न" पं० रत्न श्री अशोक मुनिजी महाराज ने इसके लिए प्रारम्भिका लिखने की महती कृपा की। सस्था उनकी कृपा की सदा आकाक्षी है।

श्री रतनलाल जी सघवी न्यायतीर्थ छोटी सादडी वालो का संस्था प्रेम पूर्वक उल्लेख करती है कि जिनके कारण से हमें ऐसे उपयोगी ग्रन्थ को पुन प्रकाशित करने का सुअवसर प्राप्त हुआ

है। इसलिए हम श्रद्धेय मुनिराजो के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करते है।

प्रकाशन कार्य में जिन-जिन महानुभावो ने उदारता पूर्वक द्रव्य सहायता प्रदान की, उन्हे भी धन्यवाद देते है। उनकी शुभ नामावली, आभार प्रकट करते हुए इसी पुस्तक में अन्यत्र प्रकाशित कर रहे है। आशा है कि दानी सज्जन सदा इसी भाँति सस्था को अपनी ही समझते हुए इसकी हर प्रकार से सहायता करते रहेगे, और अपने द्रव्य का नित्य इसी तरह से सदुपयोग करते रहेगे।

—निवेदक

लखमीचन्द तालेड़ा—अध्ययक्ष

अभयराज नाहर—मन्त्री

श्री जैन दिवाकर दिव्य ज्योति कार्यालय

कार्तिकी पूर्णिमा, स० २०२६,

ब्यावर

स्व० प्रवर्त्तक पं० मुनिश्री मगनलाल जी महाराज का संक्षिप्त परिचय

जन्म संवत् .—१९६५ आश्विन कृष्ण ४
जन्म स्थान .—मदसौर म० प्र०
पिता का नाम :—रतन लाल जी पोरवाड
माता का नाम :—सल्लु बाई
विद्या स्थान :—इन्दौर (म० प्र०)
दीक्षा स्थान :—उज्जैन (म० प्र०)
दीक्षा सवत —१९७९ कार्तिक शुक्ला सप्तमी
दीक्षा दाता —स्व० जैन दिवाकर प्रसिद्ध वक्ता, जगत वल्लभ श्री चौथमल जी महाराज साहव
विचरण क्षेत्र .— राजस्थान, मध्यप्रदेश, गुजरात, सौराष्ट्र, आध्र, महाराष्ट्र, कर्नाटक आदि—
आपके माता, पिता आदि पूरे परिवार ने दीक्षा ग्रहण की, आगम के अच्छे अभ्यासी थे।
प्रवर्तक पद '—अजमेर सम्मेलन २०२०
स्वर्गवास —रतलाम स० २०२२ मृगसर कृष्ण १०
शिष्य – तपस्वी सागरमल जी महाराज, तपस्वी मेघराज जी महा० पं० श्री अशोक मुनि जी, सेवाभावी सुदर्शन मुनि जी
प्रशिष्य '—श्री सुरेन्द्र मुनि जी, श्री विजय मुनि जी
विशेपता :—अच्छे वक्ता, सलाहकार, प्रत्युपन्नमति वाले, सेवाभावी,
सवाई माधोपुर मे पूरे जिले मे पोरवाड जाति की फूट दूर की, बूदी का वर्षो पुराना सामाजिक झगडा दूर किया।

जैनागम स्तोक संग्रह प्रकाशन के लिए दान-दाताओं की शुभ नामावली

१०००) श्री मान केवलचन्द जी बोहरा की धर्मपत्नी उदार मना श्री सरदार बाई, रायचूर

१०००) श्री मान धनराज जी मरलेचा शूला बाजार बेंगलोर पौत्र जन्मोत्सव के उपलक्ष में

६००) श्री गजरा बाई —धनराज जी केवलचन्द जी बाफणा आलन्दुर. मद्रास १६

६००) श्री मिश्रीमल जी लोढा की धर्म पत्नी उमराव बाई, मलेश्वर बेंगलोर ३

५००) श्री गुलाबचन्द जी भवरलाल जी सकलेचा, मलेश्वर बेंगलोर ३

५००) श्री मान इन्द्रचन्द्र जी भंडारी की धर्मपत्नी पारस बाई, मद्रास

५००) श्री मान रेखचन्द्र जी रांका की धर्मपत्नी श्रीमती उगम बाई, मद्रास

३००) श्री मान तेजमल जी सुराणा, मद्रास

१००) श्री स्व० फूलचन्द जी बोरुंदिया की धर्म पत्नी बदन बाई, शूला बाजार, बेंगलोर

१००) गुप्त दान

अनुक्रमणिका

जैनागम
स्तोक
संग्रह

नव तत्त्व

जीवाजीवे पुण्णं,
पावासव-संवरो निज्जरणा य ।
बंधो मुक्खो य तहा
नव तत्ता हुंति णायव्वा ॥

●

विवेकी समदृष्टि[1] जीवो को नव तत्व[2] जानना आवश्यक है ।

नव तत्वो के नाम :—

जीव[3] तत्व, २ अजीव[4] तत्व, ३ पुण्य[5] तत्व,

---

१ जीवादि तत्त्वो मे सशय रहित एव शुद्ध मान्यता वाला तथा अनध्यसाय बुद्धि वाले को समदृष्टि कहते है ।

२ तत्त्व—सार पदार्थ को तत्त्व कहते है, जैसे दूध मे सार पदार्थ मलाई है । आत्मा का स्वभाव जानपना है, परन्तु मोक्ष जाने मे जीवादि नव पदार्थ का यथार्थ जानपना होना ही तत्त्व है ।

३ जिस वस्तु मे जानने की देखने की शक्ति होवे वह जीव है । यह अरूपी (आकाररहित) है और सदा काल जीता है ।

४ जो वस्तु ज्ञान रहित है वह अजीव है, अजीव रूपी—(आकार वाला) तथा अरूपी दोनो प्रकार का है ।

५ जो आत्मा को (जीव को) पवित्र बनाता है, ऊँची स्थिति पर लाता है, सुख की सामग्री मिलाता है, वह पुण्य है ।

४ पाप[6] तत्व, ५ आश्रव[7] तत्व, ६ संवर[8] तत्व, ७ निर्जरा[9] तत्व, ८ बंध[10] तत्व, ९ मोक्ष[11] तत्व।

१ : जीव तत्त्व के लक्षण तथा भेद

जीव तत्व :—

जो चैतन्य लक्षण सदा उपयोगी, असंख्यात प्रदेशी, सुख दुख का वोधक, सुख दुःख का वेदक एव अरूपी हो उसे जीवतत्त्व कहते है। जीव का एक भेद है, कारण सव जीवो का चैतन्य लक्षण एक ही प्रकार का है। इसलिए सग्रह नयसे जीव एक प्रकार का होता है।

जीव के दो भेद :—

१ त्रस, २ स्थावर, अथवा १ सिद्ध २ संसारी।

जीव के तीन भेद :—

१ स्त्री वेद, २ पुरुष वेद, ३ नपुंसक वेद अथवा १ भव्य सिद्धिया, २ अभव्य सिद्धिया ३ नोभव्य सिद्धिया, नोअभव्य सिद्धिया।

---

६ जो जीव को अपवित्र वनाता है, नीची स्थिति मे डालता है। दुःख की प्रतिकूल सामग्री मिलाता है वह पाप है।

७ जीव के साथ कर्मो का सयोग होना—जड (अजीव) वस्तु का मेल होना आश्रव है।

८ जीव के साथ कर्मो का सयोग रुक जाना—जड से मेल नही होना संवर है।

९ जीव के साथ अनादि काल से जड पदार्थ (कर्म) मिला हुआ है, उस जड पदार्थ—कर्म का थोड़ा-थोड़ा दूर होना निर्जरा है।

१० जीव के साथ जड़ वस्तु-कर्म का सयोग होने के वाद दोनों का दूध पानी के समान एकमेक हो जाना वन्ध है।

११ जीव का कर्मो से अलग हो जाना पूरा-पूरा छुटकारा होना मोक्ष है।

जीव के चार भेद :—

१ नारकी, २ तिर्यञ्च, ३ मनुष्य, ४ देव, अथवा १ चक्षुदर्शनी २ अचक्षुदर्शनी, ३ अवधि दर्शनी, ४ और केवल दर्शनी।

जीव के पाँच भेद :—

१ एकेन्द्रिय, २ बेइन्द्रिय, ३ त्रीन्द्रिय, ४ चौरिन्द्रिय, ५ पचेन्द्रिय, अथवा १ सयोगी, २ मन योगी, ३ वचन योगी, ४ काययोगी, और ५ अयोगी।

जीव के छः भेद :—

१ पृथ्वीकाय, २ अपकाय ३ तेजस्काय, ४ वायुकाय, ५ वनस्पति काय, ६ त्रस काय, अथवा १ सकषायी, २ क्रोधकषायी, ३ मान कषायी, ४ माया कषायी, ५ लोभ कषायी, ६ अकषायी।

जीव के सात भेद :—

१ नारकी, २ तिर्यञ्च, ३ तिर्यञ्चाणी, ४ मनुष्य, ५ मनुष्याणी ६ देव, ७ देवागना।

जीव के आठ भेद :—

१ सलेश्यी, २ कृष्ण लेश्यी, ३ नील लेश्यी, ४ कापोतलेश्यी, ५ तेजो लेश्यी ६ पद्म लेश्यी, ७ शुक्ल लेश्यी, ७ अलेश्यी।

जीव के नव भेद .—

१ पृथ्वी काय, २ अप काय, ३ तेजस्काय, ४ वायु काय, ५ वनस्पति काय, ६ बेइन्द्रिय, ७ त्रीन्द्रिय, ८ चौरिन्द्रिय, ९ पञ्चेन्द्रिय।

जीव के दस भेद :—

१ एकेन्द्रिय, २ बेइन्द्रि, ३ त्री-इन्द्रिय, ४ चौरिन्द्रिय ५ पञ्चेन्द्रिय इन पाँचो के अपर्याप्ता व पर्याप्ता—ये दश भेद।

जीव के ग्यारह भेद :—

१ एकेन्द्रिय, २ बेइन्द्रिय, ३ त्री-इन्द्रिय, ४ चौरिन्द्रिय, ५ नारकी, ६ तिर्यञ्च, ७ मनुष्य, ८ भवनपति, ९ वाणव्यन्तर, १० ज्योतिषी, ११ वैमानिक।

जीव के बारह भेद :—

१ पृथ्वीकाय, २ अपकाय, ३ तेजस्काय, ४ वायुकाय, ५ वनस्पति काय, ६ त्रसकाय, इन छ. का अपर्याप्ता व पर्याप्ता ये १२ भेद।

जीव के तेरह भेद —

१ कृष्ण लेश्यी, २ नील लेश्यी, ३ कापोत लेश्यो, ४ तेजो लेश्यी, ५ पद्म लेश्यी, ६ शुक्ल लेश्यी, इन छ का अपर्याप्ता व पर्याप्ता ये बारह और १ अलेश्यी कुल १३।

जीव के चौदह भेद ·—

१ सूक्ष्म एकेन्द्रिय का अपर्याप्ता, २ सूक्ष्म एकेन्द्रिय का पर्याप्ता, ३ बादर एकेन्द्रिय का अपर्याप्ता ४ बादर एकेन्द्रिय का पर्याप्ता, ५ बेइन्द्रिय का अपर्याप्ता, ६ बेइन्द्रिय का पर्याप्ता, ७ त्री-इन्द्रिय का अपर्याप्ता, ८ त्री-इन्द्रिय का पर्याप्ता. ९ चौरिन्द्रिय का अपर्याप्ता, १० चौरिन्द्रिय का पर्याप्ता, ११ असज्ञी पञ्चेन्द्रिय का अपर्याप्ता, १२ असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय का पर्याप्ता, १३ सज्ञी पञ्चेन्द्रिय का अपर्याप्ता, १४ सज्ञी पञ्चेन्द्रिय का पर्याप्ता।

विस्तार नय से जीव के ५६३ भेद :—

१ नारकी के चौदह भेद, २ तिर्यञ्च के अड़तालीस, ३ मनुष्य के तीन सौ तीन, और ४ देवता के एक सौ अठाणु।

नारकी के १४ भेद —

१ घम्मा, २ वसा, ३ सीला, ४ अजना, ५ रिप्टा, ६ मघा और

७ माघवती। इन सातो नरको मे रहने वाले नैरयिक जीवों के अपर्याप्ता व पर्याप्ता एव १४ भेद।

तिर्यञ्च के ४८ भेद —

१ पृथ्वीकाय, २ अपकाय, ३ तेजस्काय, ४ वायुकाय. ये चार सूक्ष्म और चार बादर (स्थूल) एव इन आठ के अपर्याप्ता और पर्याप्ता एव १६।

वनस्पति के छ भेद :—

१ सूक्ष्म, २ प्रत्येक, और ३ साधारण, इन तीन के अपर्याप्ता व पर्याप्ता ये छ. मिलकर २२ भेद, १ बेइन्द्रिय, २ त्री-इन्द्रिय, ३ चौरिन्द्रिय इन तीन का अपर्याप्ता और पर्याप्ता ये छ मिलकर २८ हुये।

तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय के २० भेद

१ जलचर, २ स्थलचर, ३ उरचर, ४ भुजपर, ५ खेचर। ये पाॅच गर्भज और पाँच समूर्छिम एव १० इन १० के अपर्याप्ता और पर्याप्ता ये २० मिलकर तिर्यञ्च के कुल (१६+६+६+२०) ४८ भेद हुए।

मनुष्य के ३०३ भेद :—

१५ कर्मभूमि के मनुष्य, ३० अकर्मभूमि के और ५६ अन्तर द्वीप के एव १०१ क्षेत्र के गर्भज मनुष्य का अपर्याप्ता व पर्याप्ता एव २०२ और १०१ क्षेत्र के समूर्छिम मनुष्य (चौदह स्थानोत्पन्न) का अपर्याप्ता। इस प्रकार मनुष्य के ३०३ भेद हुए।

देवता के १९८ भेद —

१० असुरकुमारादिक, १५ परमाधर्मी एव ये २५ भेद भवनपति के। १६ प्रकार के पिशाचादि देव व १० प्रकार के जृभिका एव ये

२६ भेद वाणव्यतर के, ज्योतिषी देव के १० भेद—५ चर ज्योतिषी और ५ अचर (स्थिर) ज्योतिषी। तीन किल्विषी, १२ देव लोक, ६ लोकान्तिक, ६ ग्रैवेयक (ग्रीवेक) ५ अनुत्तर विमान। इन ६६ (१०+१५+१६+१०+१०+३+१२+६+६+५) जाति के देवो का अपर्याप्ता व पर्याप्ता एव देवता के १६८ भेद जानना।

एवं सव मिलाकर ५६३ भेद जीव तत्व के जानना इन जीवो को जानकर इनकी दया पालनी चाहिए, जिससे इस भव मे व पर-भव में परम सुख की प्राप्ति हो।

२ : अजीव तत्व के लक्षण तथा भेद

अजीव तत्व :—

जो जड लक्षण, चैतन्य रहित, वर्णादिक रूप सहित तथा ज्ञान रहित, सुख दु.ख को नही वेदने वाला हो, उसे अजीव तत्व कहते है।

अजीव के १४ भेद .—

१ धर्मास्तिकाय का स्कध, २ उसका देश, ३ उसका प्रदेश, ४ अधर्मास्तिकाय का स्कध, ५ देश, ६ प्रदेश, ७ आकाशास्तिकाय का स्कंध, ८ देश, ६ प्रदेश, १० काल, ये १० भेद अरूपी अजीव के, १ पुद्गलास्तिकाय का स्कंध, २ देश, ३ प्रदेश। तीन तो ये और चौथा परमाणु पुद्गल एवं चार भेद रूपी अजीव के मिलाकर अजीव के कुल १४ भेद हुए।

विस्तार नय से अजीव के ५६० भेद·—

३० भेद अरूपी अजीव के :—

१ धर्मास्तिकाय, द्रव्य से एक, २ क्षेत्र से लोक प्रमाण, ३ काल से आदि अंत रहित, ४ भाव से अरूपी, ५ गुण से चलन सहाय। ६ अधर्मास्तिकाय द्रव्य से एक ७ क्षेत्र से लोक प्रमाण,

८ काल से आदि अत रहित, ९ भाव से अरूपी १० गुण से स्थिर सहाय, ११ आकाशास्तिकाय द्रव्य से एक, १२ क्षेत्र से लोकालोक प्रमाण, १३ काल से आदि अत रहित, १४ भाव से अरूपी, १५ गुण से अवगाहना-दान तथा विकास लक्षण, १६ काल द्रव्य से अनंत, १७ क्षेत्र से ढाई द्वीप प्रमाण, १८ काल से आदि अत रहित, १९ भाव से अरूपी, २० गुण से वर्तना लक्षण, ये २० और १० भेद ऊपर कहे हुवे, इस प्रकार कुल ३० भेद अरूपी अजीव के हुए।

रूपी अजीव के ५३० भेद :—

५ वर्ण, २ गन्ध, ५ रस, ५ सस्थान, ८ स्पर्श इन २५ मे से जिनमे जितने बोल पाये जाते है वे सब मिलाकर कुल ५३० भेद होते है।

विस्तार —५ वर्ण—१ काला, २ नीला, ३ लाल, ४ पीला, ५ सफेद। इन पाँचो वर्णो मे २ गन्ध, ५ रस, ५ सस्थान और ८ स्पर्श ये २० बोल पाये जाते है इस प्रकार ५×२०=१०० बोल वर्णाश्रित हुवे।

२ गन्ध —१ सुरभि गंध, २ दुरभि गंध। इन दोनो में ५ वर्ण, ५ रस, ५ संस्थान और ८ स्पर्श ये २३ बोल पाये जाते है। इस प्रकार २×२३=४६ बोल गन्ध आश्रित हुए।

५ रस—१मिष्ट, २ कटुक, ३ तीक्ष्ण, ४ खट्टा, ५ काषायित इन ५ रसो मे ५ वर्ण, २ गंध, ८ स्पर्श और ५ सस्थान ये २० बोल पाये जाते है। इस प्रकार ५×२०=१०० वोल रसाश्रित हुए।

५ सस्थान—परिमण्डल सस्थान—चुडी के आकारवत्, २ वर्तुल सस्थान-लड्डू के समान, ३ अंश संस्थान—सिंघाडे के समान, ४ चतुर सस्थान—चोकी के समान, ५ आयत सस्थान-लम्बी लकडी के समान, इन संस्थान मे ५ वर्ण, २ गन्ध, ५ रस, ८ स्पर्श ये २० बोल पाये जाते है, इस तरह ५×२०=१०० बोल संस्थान आश्रित हुए।

८ स्पर्श—१ कर्कश (कठोर) २ कोमल, ३ गुरु, ४ लघु, ५ शीत,

६ ऊष्ण ७ स्निग्ध, ८ रुक्ष एक-एक स्पर्श में वर्ण, २ गन्ध ५ रस, ६ स्पर्श और ५ संस्थान इस प्रकार २३-२३ बोल पाये जाते है। अर्थात् आठ स्पर्श में से दो स्पर्श कम कहना कर्कश का पूछा होवे तो कर्कश और कोमल ये दोनो छोडना। शीत का पूछा होवे तो शीत व ऊष्ण छोड़ना, स्निग्ध का पूछा होवे तो स्निग्ध व रुक्ष छोडना, ऐसे हरेक स्पर्श का समझ लेना एक-एक स्पर्श के २३-२३ के हिसाब से २३×८=१८४ बोल स्पर्श आश्रित हुए।

१०० वर्ण के, ४६ गन्ध के, १०० रस के, १०० संस्थान के और १८४ स्पर्श के इस प्रकार सब मिलाकर ५३० भेद रूपी अजीव के हुए। इनमे अजीव अरूपी के ३० भेद मिलाने से कुल ५६० भेद अजीव के जानना।

इस प्रकार अजीव के स्वरूप को समझकर इन पर से जो मोह उतारेगा वह इस भव में व पर भव में निराबाध परम सुख पावेगा।

●

३ : पुण्य तत्त्व के लक्षण तथा भेद

पुण्य तत्व :—

पुण्य तत्व—जो शुभ करणी के व शुभ कर्म के उदय से शुभ उज्ज्वल पुद्गल का बध पडे व जिसके फल भोगते समय आत्मा को मीठे लगे उसे पुण्य तत्व कहते हैं।

पुण्य के ९ भेद :—

१ अन्नपुण्य २ पानी पुण्य ३ लयन पुण्य (मकानादि) ४ शयन पुण्य (पाटलादि) ५ वस्त्र पुण्य ६ मन पुण्य ७ वचन पुण्य ८ काय पुण्य ९ और नमस्कार पुण्य।

इन नव प्रकार से जो पुण्य उपार्जन करता है वह ४२ प्रकार से शुभ फल भोगता है।

४२ प्रकार के शुभ फल —१ साता वेदनीय २ तिर्यच आयुष्य युगल मे ३ मनुष्यायुष्य ४ देव आयुष्य ५ मनुष्यगति ६ देवगति ७ पचेन्द्रिय की जाति ८ औदारिकशरीर ९ वैक्रियशरीर १० आहारक शरीर ११ तेजस्शरी १२ कार्मण शरीर १३ औदारिक अङ्गोपाङ्ग १४ वैक्रिय अङ्गोपाङ्ग १५ आहारक अङ्गोपाङ्ग १६ वज्रऋषभनाराच-सघयन १७ समचतुरस्र सस्थान १८ शुभ वर्ण १९ शुभ गन्ध २० शुभ रस २१ शुभ स्पर्श २२ मनुष्यानुपूर्वी २३ देवानुपूर्वी २४ अगुरु लघु नाम २५ पराघात नाम २६ उच्छ्वास नाम २७ आताप नाम २८ उद्योत नाम २९ शुभ चलने की गति ३० निर्माण नाम ३१ तीर्थंकर नाम ३२ त्रसनाम ३३ बादर नाम ३४ पर्याप्त नाम ३५ प्रत्येक नाम ३६ स्थिर नाम ३७ शुभ नाम ३८ सौभाग्य नाम ३९ सुस्वर नाम ४० आदेश नाम ४१ यशोकीर्ति नाम और ४२ उच्च गोत्र।

पुण्य के इन भेदो को जानकर पुण्य आदरेगे उन्हे इस भव में व पर भव मे निरावाध सुखो की प्राप्ति होवेगी।

●

४ : पाप तत्त्व के लक्षण तथा भेद —

पाप तत्व

जो अशुभ करणी से, अशुभ कर्म के उदय से, अशुभ, मेला पुद्गल का बध पडे व जिसके फल भोगते समय आत्मा को कडवे लगे, उसे पाप तत्त्व कहते है।

पाप के १८ भेद —

१ प्राणातिपात २ मृषावाद ३ अदत्तादान ४ मैथुन ५ परिग्रह ६ क्रोध ७ मान ८ माया ९ लोभ १० राग ११ द्वेष १२ कलह १३ अभ्याख्यान १४ पैशुन्य १५ परपरिवाद १६ रति-अरति १७ माया मृषावाद १८ मिथ्यादर्शनशल्य।

इन १८ भेद—प्रकार से जीव पाप उपार्जन करता है तथा ८२ प्रकार से भोगता है।

८२ प्रकारसे पाप भोगे जाते है :—

१ मतिज्ञानावरणीय २ श्रुतज्ञानावरणीय ३ अवधिज्ञानावरणीय ४ मन:पर्यवज्ञानावरणीय ५ केवलज्ञानावरणीय ६ निद्रा ७ निद्रा-निद्रा ८ प्रचला ९ प्रचला-प्रचला १० स्त्यानगृद्धि (थिणद्धि निद्रा) ११ चक्षु दर्शनावरणीय १२ अचक्षु दर्शनावरणीय १३ अवधिदर्शनावरणीय १४ केवलदर्शनावरणीय १५ असातावेदनीय १६ मिथ्यात्व मोहनीय १७ अनतानुबंधी क्रोध १८ मान १९ माया २० लोभ २१ अप्रत्याख्यानी क्रोध २२ अप्रत्याख्यानी मान २३ अप्रत्या० माया २४ अप्रत्या० लोभ २५ प्रत्याख्यानी क्रोध २६ प्रत्या० मान २७ प्रत्या० माया २८ प्रत्या० लोभ २९ संज्वलन क्रोध ३० संज्वलन मान ३१ सज्वलन माया ३२ संज्वलन लोभ ३३ हास्य ३४ रति ३५ अरति ३६ भय ३७ शोक ३८ जुगुप्सा (दुर्गंच्छा) ३९ स्त्री वेद ४० पुरुप वेद ४१ नपुंसक वेद ४२ नरकायुष्य ४ नरक गति ४४ तिर्यञ्च गति ४५ एकेन्द्रियपना ४६ वेइन्द्रियपना ४७ त्रीन्द्रियपना ४८ चौरिन्द्रियपना ४९ ऋपभ-नाराच संघयण ५० नाराच संघयण ५१ अर्ध नाराच सघयण ५२ कीलिका संघयण ५३ सेवार्त संघयण ५४ न्यग्रोधपरिमंडल संस्थान ५५ सादिक संस्थान ५६ वामन संस्थान ५७ कुब्ज संस्थान ५८ हुण्डक संस्थान ५९ अशुभ वर्ण ६० अशुभ गन्ध ६१ अशुभ रस ६२ अशुभ स्पर्श ६३ नरकानुपूर्वी ६५ अशुभ गति ६६ उपघात नाम ६७ स्थावर नाम ६८ सूक्ष्म नाम ६९ अपर्याप्तपना ७० साधारण पना ७१ अस्थिर नाम ७२ अशुभ नाम ७३ दुर्भाग्य नाम ७४ दु स्वर नाम ७५ अनादेय नाम ७६ अयश.कीर्ति नाम ७७ नीच गोत्र ७८ दानान्तराय ७९ लाभान्तराय ८० भोगान्तराय ८१ उपभोगान्तराय और ८२ वीर्यान्तराय।

८२ प्रकार से पाप के फल भोगे जाते है। ये पाप जानकर जो पाप के कारण छोड़ेगे वे इस भव में तथा पर भव मे निरावाध परम सुख पावेगे।

●

५ आश्रव तत्त्व के लक्षण तथा भेद

आश्रव तत्व :—

जीव रूपी तालाब के अन्दर अव्रत तथा अप्रत्याख्यान द्वारा, विषय-कषाय का सेवन करने से इन्द्रियादिक नालो के द्वारा जो कर्मरूपी जल का प्रवाह आता है उसे आश्रव कहते है।

यह आश्रव जघन्य २० प्रकार से और उत्कृष्ट ४२ प्रकार से होता है।

आश्रव के जघन्य २० प्रकार .—

१ श्रुतेन्द्रिय असंवर २ चक्षु इन्द्रिय असवर ३ घ्राणेन्द्रिय असवर ४ रसनेन्द्रिय असवर ५ स्पर्शनेन्द्रिय असवर ६ मन असंवर ७ वचन असवर ८ काय असवर ९ वस्त्रवर्तनादि भण्डोपकरण अयत्ना से लेवे अयत्ना से रक्खे १० सूचीकुशाग्र मात्र भी अयत्ना से काम मे लेवे ११ प्राणातिपात १२ मृषावाद १३ अदत्तादान १४ मैथुन १५ परिग्रह १६ मिथ्यात्व १७ अव्रत १८ प्रमाद १९ कषाय २० अशुभ योग।

विशेष रीति से आश्रव के ४२ भेद —

५ आश्रव, ५ इन्द्रिय विषय ४ कषाय ३ अशुभ योग और २५ क्रिया।

ये ४२ भेद आश्रव के जान कर जो इन्हे छोडेगा वह इस भव मे तथा पर भव में निरावाध परम सुख पावेगा।

●

६ : संवर तत्त्व के लक्षण तथा भेद

संवर तत्व .—

जीव रूपी तालाव के अन्दर इन्द्रियादिक नालों व छिद्रों के द्वारा आने वाले कर्म रूपी जल के प्रवाह को व्रत-प्रत्याख्यानादि द्वारा जो रोकता है, उसे सवर तत्त्व कहते है। सवर के सामान्य २० भेद व विशेष ५७ भेद है।

सामान्य २० भेद ·—

१ श्रुतेन्द्रिय निग्रह (संवरण) २ चक्षु इन्द्रिय निग्रह ३ घ्राणेन्द्रिय निग्रह ४ रसनेन्द्रिय निग्रह ५ स्पर्शनेन्द्रिय निग्रह ६ मननिग्रह ७ वचन निग्रह ८ काया निग्रह ९ भण्डोपकरण यत्ना से काम मे लेवे तथा यत्ना से रक्खे १० सूचीकुशाग्र भी यत्ना से काम मे लेवे ११ दया १२ सत्य १३ अचौर्य १४ ब्रह्मचर्य १५ अपरिग्रह (निर्ममत्व) १६ सम्यक्त्व १७ व्रत १८ अप्रमाद १९ अकषाय २० शुभ योग।

संवर के विशेष ५७ भेद ·—

५ समिति, ३ गुप्ति, २२ परिषह, १० यतिधर्म, १२ भावना, ५ चारित्र।

पॉच समिति —

१ ईर्या-समिति २ भाषा समिति ३ एषणा समिति ४ आदान-भण्डमात्र निक्षेपना समिति ५ उच्चारपासवणखेलजलसघायण-परिठावणिया समिति।

तीन गुप्ति —

६ मन गुप्ति ७ वचन गुप्ति ८ काय गुप्ति।

२२ परिषह ·—

९ क्षुधा परिषह १० तृषा परिषह ११ शीत १२ ताप १३ डस-

मत्सर १४ अचेल १५ अरति १६ स्त्री १७ चरिया १८ निसिहिया १९ शैय्या २० आक्रोश २१ वध २२ याचना २३ अलाभ २४ रोग २५ तृणस्पर्श २६ मल २७ सत्कार-पुरस्कार २८ प्रज्ञा २९ अज्ञान ३० दर्शन (इन २२ परिषहो को जीतना)

१० यति धर्म :—

३१ शाति ३२ निर्लोभता ३३ सरलता ३४ कोमलता ३५ अल्पोपधि ३६ सत्य ३७ सयम ३८ तप ३९ ज्ञान-दान ४० ब्रह्मचर्य (इन १० यति धर्मो का पालन करना)

१२ भावना :—

४१ अनित्य भावना

ससार के सब पदार्थ धन, यौवन, शरीर, कुटुम्बादिक अनित्य, अस्थिर है व नाशवान् है, इस प्रकार विचार करना।

४२ अशरण भावना

जीव को जब रोग पीडादिक उत्पन्न होवे तब शरण देने वाला कोई नही, लक्ष्मी, कुटुम्व, परिवार आदि कोई साथ मे नही आता ऐसा विचार करना।

४३ ससार भावना

जीव कर्म करके ससार मे चौरासी लाख जोव-योनि के अन्दर नट-नटी समान भटके। पिता मरकर पुत्र हो जाता है, पुत्र पिता हो जाता है, मित्र शत्रु हो जाता है, शत्रु मित्र हो जाता है इत्यादिक अनेक प्रकार से जीव नई-नई अवस्था को धारण करता है ऐसा विचार करे।

४४ एकत्व भावना

जीव परलोक से अकेला आया व अकेला ही जायेगा। अच्छे

बुरे कर्म को अकेला ही भोगेगा जिनके लिए पाप कर्म किए; वे भोगते समय कोई साथ नही देगे, इस प्रकार सोचे।

४५ अन्यत्व भावना

इस जीव से शरीर, पुत्र कलत्रादि धन-धान्य, द्विपद-चतुष्पद आदि सर्व परिग्रह अन्य है, ये मेरे नही, मै इनका नही, ऐसा सोचे।

४६ अशुचि भावना

यह शरीर सात धातुमय है व जिसमे से मल-मूत्र-श्लेष्मादि सदैव निकलता है, स्नान आदि से शुद्ध बनता नही, ऐसा विचार करे।

४७ आश्रव भावना

ये ससारी जीव मिथ्यात्व, अव्रत, कषाय, प्रमादादि आश्रव द्वारा निरन्तर नए नए कर्म बाध रहे है, ऐसा सोचे।

४८ संवर भावना :

व्रत, संवर, साधु के पंचमहाव्रत, श्रावक के बाहरव्रत, सामायिक पौषधोपवास आदि करने से जोव नये कर्म नही बांधता, किंवा पूर्व कर्मो को पतले करता है; ऐसा करने के लिये विचार करे।

४६ निर्जरा भावना :

चार प्रकार की तपस्या करने से निविड़ कर्म टूट कर दीर्घ ससार पार होता है, व अनेक लब्धिये भी प्राप्त होती है। ऐसा समझ कर तपस्या करने का विचार करे।

५० लोक भावना :

चौदह रज्जु प्रमाण जो लोक है उसका विचार करे।

५१ बोध भावना :

राज्य, देव, पदवी, ऋद्धि, कल्पद्रुमादि ये सर्व सुलभ है, अनन्त

बार मिले पर बोध बीज—समकित का मिलना दुर्लभ है, ऐसा सोचे।

५२ धर्म भावना :

सर्वज्ञ ने जो धर्मप्ररूपा है, वह ससार समुद्र से पार उतारने वाला है। पृथ्वी निरवलम्ब निराधार है। चन्द्रमा और सूर्य समय पर उदय होते है। मेघ समय पर वृष्टि करते है। इस प्रकार जगत् मे जो अच्छा होता है, वह सब सत्य धर्म के पञ्च चारित्र प्रभाव से, ऐसा विचार करे।

५ चारित्र

५३ सामायिक चारित्र ५४ छेदोपस्थानिक चारित्र ५५ परिहार विशुद्ध चारित्र ५६ सूक्ष्म सपराय चारित्र ५७ यथाख्यात चारित्र।

इस प्रकार ५७ भेद सवर के जान कर आचरण करने से निराबाध (पीडा रहित) परम सुख की प्राप्ति होगी।

निर्जरा तत्व के लक्षण तथा भेद

निर्जरा ·

बारह प्रकार की तपस्या द्वारा कर्मो का जो क्षय होता है, उसे निर्जरा तत्त्व कहते है।

निर्जरा के १२ भेद ·

१ अनशन, २ उनोदरि, ३ वृत्तिसक्षेप (भिक्षाचरो), ४ रसपरित्याग, ५ कायक्लेश, ६ प्रतिसलीनता। (यह छ. बाह्य तप) ७ प्रायश्चित्त, ८ विनय, ९ वैयावृत्य, १० स्वाध्याय, ११ ध्यान, १२ कायोत्सर्ग। (यह छ. आभ्यन्तर तप)

इन बारह प्रकार के तप को जान कर जो इन्हे आदरेगा वह इस भव मे व पर भव मे निराबाध परम सुख पावेगा।

८ : बन्ध तत्व के लक्षण तथा भेद

प्रकृति बन्ध, स्थिति बन्ध, अनुभाग बन्ध, प्रदेश बन्ध।

बन्ध :

क्षीर-नीर, धातु मृत्तिका, पुष्प-इत्र, तिल-तैल इत्यादि की तरह आत्मा के प्रदेश तथा कर्मो के पुद्गल का परस्पर सम्बन्ध होने को बन्ध तत्त्व कहते है।

बन्ध के ४ भेद :

१ प्रकृति बन्ध आठ कर्मो का स्वभाव।

२ स्थिति बन्ध : आठो कर्मो के जीव के साथ रहने के समय का मान।

३ अनुभाग बन्ध : कर्मो के तीव्र मन्दादिक रस।

४ प्रदेश बन्ध : कर्म पुद्गल परमाणु के दल, जो आत्मा के प्रदेश के साथ बंधे हुए है।

इन चार प्रकार के वन्ध का स्वरूप मोदक के दृष्टान्त के समान है। जैसे कई प्रकार के द्रव्यो के सयोग से बने हुए मोदक (लड्डू) की प्रकृति वात-पित्तादि की घातक होती है। वैसे ही आठो कर्म जिस-जिस गुण के घातक होवे वह प्रकृति बन्ध। जैसे वह मोदक पक्ष, मास, दो मास तक रह सकता है सो स्थिति वन्ध। जेसे वह मोदक कटक, तीक्ष्ण रस वाला होता है तैसे कर्म रस देते है सो अनुभाग बन्ध। जसे वह मोदक न्यूनाधिक परिमाण वाला होता है तैसे कर्म पुद्गल परमाणु के दल भी छोटे-वडे होते है सो प्रदेश बन्ध।

इस प्रकार बन्ध का ज्ञान होने पर जो यह वन्ध तोड़ेगा वह निराबाध परम सुख पावेगा।

●

९ मोक्ष तत्व के लक्षण तथा भेद

वन्ध तत्व का उल्टा मोक्ष तत्व है अर्थात् सकल आत्मा के प्रदेश से सर्व कर्मो का छूटना, सर्व बन्धो से मुक्त होना, सकल कार्य की सिद्धि होना तथा मोक्ष गति को प्राप्त होना सो मोक्ष तत्व।

मोक्ष प्राप्ति के चार साधन . १ ज्ञान २ दर्शन ३ चारित्र और ४ तप।

सिद्ध पन्द्रह तरह के होते है :—

१ तीर्थसिद्धा २ अतीर्थ सिद्धा ३ तीर्थ कर सिद्धा ४ अतीर्थ कर सिद्धा ५ स्वयं बुद्धसिद्धा ६ प्रत्येकबुद्ध सिद्धा ७ बुद्धबोधित सिद्धा ८ स्त्रीलिङ्ग सिद्धा ९ पुरुषलिङ्ग सिद्धा १० नपु सकलिङ्ग सिद्धा ११ स्वलिङ्ग सिद्धा १२ अन्यलिङ्ग सिद्धा १३ गृहस्थलिङ्ग सिद्धा १४ एक सिद्धा १५ अनेक सिद्धा।

मोक्ष के नव द्वार

१ सत्, २ द्रव्य, ३ क्षेत्र, ४ स्पर्शना, ५ काल, ६ भाग, ७ भाव, ८ अतर, ९ अल्पवहुत्व।

१ सत्पद प्ररुपणाद्वार :—

मोक्ष गति पूर्व समय मे थी, वर्तमान समय मे है व आगामी काल मे रहेगी उसका अस्तित्व है, आकाश कुसुमवत् उसकी नास्ति नही।

२ द्रव्य द्वार :—

सिद्ध अनन्त है, अभव्य जीव से अनन्त गुणे अधिक है। एक वनस्पति काय के जीवो को छोड कर दूसरे २३ दंडक के जीवो से सिद्ध अनन्त है।

३ क्षेत्र द्वार :

सिद्ध शिला प्रमाण (विस्तार में) है। यह सिद्ध शिला ४५ लाख योजन लम्बी व पोली है, मध्य में आठ योजन की जाडी है। किनारो के पास से मक्षिका के पांख से भी पतली है। शुद्ध सोने के समान, शंख, चन्द्र, बगुला, रत्न चॉदी का पट, मोती का हार व क्षीर सागर के जल से अधिक उज्ज्वल है। उसकी परिधि १,४२, ३०, २४६ योजन, १ गाउ १७६६ धनुष्य व पोने छ अगुल झाझेरी है। सिद्ध के रहने का स्थान सिद्ध शिला के ऊपर योजन के छेले गाऊ के छट्ठे भागा में है। अर्थात् ३३३ धनुष्य ३२ अंगुलप्रमाणेक्षेत्र में सिद्ध भगवान रहते है।

४ स्पर्शना द्वार :

सिद्ध क्षेत्र से कुछ अधिक सिद्ध की स्पर्शना है।

५ काल द्वार :

एक सिद्ध आश्रित इनकी आदि है परन्तु अन्त नही, सवसिद्ध आश्रित आदि भी नही व अन्त भी नही।

६ भाग द्वार :

सर्व जीवो से सिद्ध के जीव अनन्तवे भाग है व सर्व लोक के असख्यातवे भाग है।

७ भाव द्वार :

सिद्धो मे क्षायिकभाव तो केवलज्ञान, केवलदर्शन और क्षायिक सम्यक्त्व है और पारिणामिक भाव- यह सिद्धपना है।

अन्तर भाव :

सिद्धो को फिर लौटकर ससार मे नही आना पड़ता है, जहां एक

सिद्ध तहा अनन्त और जहा अनन्त वहा एक सिद्ध, इसलिए सिद्धो में अन्तर नही ।

९ अल्प बहुत्व द्वार :

सब से कम नपु सक सिद्ध, उससे सख्यात गुणित स्त्री सिद्ध आर उससे संख्यात गुणित पुरुष सिद्ध । एक समय मे नपु सक १० स्त्री २० और पुरुष १०८ सिद्ध होते है ।

मोक्ष मे कौन जाते है :

१ भव्य सिद्धक २ बादर ३ त्रस ४ सज्ञी ५ पर्याप्ती ६ वज्रऋषभनाराच सघयणी ७ मनुष्य गतिवाले ८ अप्रमादी ९ क्षायिक सम्यक्त्वी १० अवेदी ११ अकषायी १२ यथाख्यातचारित्री १३ स्नातक निर्ग्र थी १४ परम शुक्ल लेश्यी १५ पडित वीर्यवान् १६ शुक्ल ध्यानी १७ केवलज्ञानी १८ केवलदर्शनो १९ चरम शरीरी इस तरह १९ बोल वाले जीव मोक्ष में जाते है । जघन्य दो हाथ की उत्कृष्ट ५०० धनुष्य की अवगाहना वाले जीव मोक्ष मे जाते है, जघन्य नव वर्ष के उत्कृष्ट क्रोड़ पूर्व के आयुष्यवाले कर्मभूमि के जीवमोक्ष में जाते है। जब सबकर्मो से आत्मामुक्त होवे तव वह अरूपी भाव को प्राप्त होती है, कर्म से अलग होते ही एक समय में लोक के अग्र भाग पर आत्मा पहुँच कर अलोक को स्पर्श कर रह जाती है । अलोक मे नही जाती, कारण कि वहा धर्मास्तिकाय नही होती इसलिए वहा स्थिर हो जाती है । दूसरे समय में अचल गति प्राप्त कर लेती है । वहा से न तो चव कर कोई आती और न हलन चलन की क्रिया होती, अजर अमर, अविनाशी पद को प्राप्त हो जाती व सदा काल आत्मा अनत सुख की लहरो में निमग्न रहती है ।

जीवधड़ा

(जीव के ५६३ भेद है)

नारकी के भेद :—

१ घम्मा, २ बसा, ३ शीला, ४ अंजना, ५ रिष्टा, ६ मघा और ७ माघवती। इन सातो नरकों में रहने वाले (नेरियों) जीवो के अपर्याप्ता व पर्याप्ता एवं १४ भेद।

तिर्यञ्च के ४८ भेद :—

१ पृथ्वीकाय, २ अपकाय, ३ तेजस्काय, ४ वायु काय ये चार सूक्ष्म और चार बादर (स्थूल) एवं ८ इन आठ के अपर्याप्ता और पर्याप्ता एवं १६।

वनस्पति के छ: भेद :—

१ सूक्ष्म, २ प्रत्येक और ३ साधारण इन तीनो के अपर्याप्ता व पर्याप्ता ये ६ मिलकर २२ भेद, १ बेइन्द्रिय २ त्रीन्द्रिय, ३ चौरिन्द्रिय इन ३ का अपर्याप्ता और पर्याप्ता ये छ: मिलकर २८।

तिर्यंच पंचेन्द्रिय के २० भेद :—

१ जलचर, २ स्थलचर, ३ उरपर ४ भुजपर, ५ खेचर। ये गर्भज और पांच संमूर्छिम एव १० इन १० के अपर्याप्ता और पर्याप्ता। ये २० मिलकर तिर्यंच के कुल (१६+६+६+२०) ४८ भेद हुवे।

मनुष्य के ३०३ भेद :—

१५ कर्मभूमि के मनुष्य, ३० अकर्मभूमि के और ५६ अन्तर द्वीप के एवं १०१ क्षेत्र के गर्भज मनुष्य का अपर्याप्ता व पर्याप्ता एवं २०२ और १०१ क्षेत्र के समूर्छिम मनुष्य (चौदह स्थानोत्पन्न) का अपर्याप्ता। इस प्रकार मनुष्य के ३०३ भेद हुए।

देवता के भेद :—

१० असुर कुमारादिक १५ परमाधर्मी एव २५ भेद भवनपति के। १६ प्रकार के पिशाचादि देव १० प्रकार के जृभिका एवं २६ भेद वाणव्यंतर के। ज्योतिषी देव के १० भेद—५ चर ज्योतिषी और ५ अचर (स्थिर) ज्योतिपी। ३ किल्विषी १२ देवलोक ६ लोकान्तिक, ९ ग्रैवेयक (ग्रीवेक) ५ अनुत्तर विमान। इन ९९ (१०+१५+१६+१०+१०+३+१२+९+९+५) जाति के देवो का अपर्याप्ता व पर्याप्ता एव देवता के १९८ भेद जानना।

१ नारकी के चौदह भेद, २ तिर्यंच के अडतालीस, ३ मनुष्य के तीन सौ तीन, और ४ देवता के एक सौ अठाणु।

द्वार —

१ जीव, २ गति, ३ इन्द्रिय, ४ काय, ५ योग, ६ वेद, ७ कषाय ८ लेश्या, ९ सम्यक्त्व, १० ज्ञान, ११ दर्शन, १२ सयम, १३ उपयोग १४ आहार, १५ भाषक, १६ परित, १७ पर्याप्ता १८ सूक्ष्म, १९ सन्नी २० भव्य और २१ चरम।

(जीवधडा की सारिणी अगले पृष्ठ से देखिए)

	कुल	नरक	तिर्यंच	मनुष्य	देव
१ जीवद्वार					
१ समुच्चय जीव मे	५६३	१४	४८	३०३	१९८
२ गति द्वार					
१ नरक गति मे	१४	१४			
२ तिर्यंच गति मे	४८		४८		
३ तिर्यंचनी मे	१०		१०		
४ मनुष्य गति मे	३०३			३०३	
५ मनुष्यनी मे	२०२			२०२	
६ देव गति मे	१९८				१९८
७ देवी मे	१२८				१२८
८ सिद्ध भगवान मे					
३ इन्द्रिय द्वार					
१ सइन्द्रिय मे	५६३	१४	४८	३०३	१९८
२ एकन्द्रिय मे	२२		२२		
३ वेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौरेन्द्रिय	२		२-२-२		

	कुल	नरक	तिर्यंच	मनुष्य	देव
४ पचेन्द्रिय मे	५३५	१४	२०	३०३	१९८
५ अनिन्द्रिय मे	१५			१५	१९८
६ श्रोत्रेन्द्रिय मे	५३५	१४	२०	३०३	
७ चक्षुइन्द्रिय मे	५३७	१४	२२	३०३	१९८
८ घ्राणेन्द्रिय मे	५३९	१४	२४	३०३	१९८
९ रसना ,,	५४१	१४	२६	३०३	१९८
१० स्पर्श ,,	५६३	१४	४८	३०३	१९८
११ श्रोत्र इन्द्रिय के अलद्धिये मे	४३		२८	१५	
१२ चक्षु ,, ,, ,,	४१		२६	१५	
१३ घ्राण ,, ,, ,,	३९		२४	१५	
१४ रसना ,, ,, ,,	३७		२२	१५	
१५ स्पर्श ,, ,, ,,	१५			१५	
४ काय द्वार					
१ सकाया मे	५६३	१४	४८	३०३	१९८
२ पृथ्वी, अप् तेऊ वाय काय मे प्रत्येक मे	४		-४-४ ४-४		

	कुल	नरक	तिर्यंच	मनुष्य	देव
३ वनस्पति काय मे	६		६		
४ त्रस काय मे	५४१	१४	२६	३०३	१९८
५ अकाय मे					
५ योगद्वार					
१ संयोगी मे	५६३	१४	४८	३०३	१९८
२ मन योगी मे	२१२	७	५	१०१	९९
३ वचन योगी मे	२२०	७	१३	१०१	९९
४ काय योगी मे	५६३	१४	४८	३०३	१९८
५ चार मन के तीन वचन के ७ योग मे	२१२	७	५	१०१	९९
६ व्यवहार भाषा मे	२२०	७	१३	१०१	९९
७ औदारिक काय योग मे	३५१		४८	३०३	
८ औदारिक मिश्र काय योग मे	२४७		३०	२१७	
९ वैक्रिय काय योग मे	२३३	१४	६	१५	१९८
१० वैक्रिय मिश्र काय योग मे	२१९	१४	६	१५	१८४
११ आहारक और आहारक मिश्र काय योग मे	१५			१५	

	कुल	नरक	तिर्यंच	मनुष्य	देव
१२ कार्मण काय योग मे	३४७	७	२४	२१७	९९
१३ अयोगी मे	१५			१५	
६ वेद द्वार					
१ सवेदी मे	५६३	१४	४८	३०३	१९८
२ पुरुष वेद मे	४१०		१०	२०२	१९८
३ स्त्री वेद मे	३४०		१०	२०२	१२८
४ नपुंसक वेद मे	१९३	१४	४८	१३१	
५ एकात पुरुष वेद मे	७०				७०
६ एकात नपु सक वेद मे	१५३	१४	३८	१०१	
७ एक वेद मे	२२३	१४	३८	१०१	७०
८ दो ,,	३००			१७२	१२८
९ तीन वेद मे	४०		१०	३०	
१० अवेदी मे	१५			१५	
७ कषाय द्वार					
१ सकषायी, क्रोध, मान माया लोभ कषायी मे	५६३	१४	४८	३०३	१९८

	कुल	नरक	तिर्यंच	मनुष्य	देव
२ अकषायी मे	१५			१५	
८ लेश्या द्वार					
१ सलेशी मे	५६३	१४	४८	३०३	१९८
२ कृष्ण, नील, कापोत लेशी मे	४५९	६	४८	३०३	१०२
३ तेजोलेशी मे	३४३		१३	२०२	१२८
४ पद्म लेशी मे	६६		१०	३०	२६
५ शुक्ल लेशी मे	८४		१०	३०	४४
६ एक लेशी मे	१०६	१०			९६
७ दो लेशी मे	४	४			
८ तीन लेशी मे	१३६		३५	१०१	
९ चार लेशी मे	२७७		३	१७२	१०२
१० पाच लेशी मे					
११ छ. लेशी मे	४०		१०	३०	
१२ एकान्त कृष्ण लेशी मे	४	४			
१३ एकान्त नील लेशी मे	२	२			

	कुल	नरक	तिर्यंच	मनुष्य	देव
१४ एकान्त कापोत लेशी मे	४	४			
१५ ,, तेजो ,,	२६				२६
१६ ,, पद्म ,,	२६				२६
१७ ,, शु ल ,,	४४				४४
१८ अलेशी मे	१५			१५	
६ सम्यक्त्व द्वार					
१ सम्यग्दृष्टि मे	२८३	१३	१८	९०	१६२
२ मिथ्या दृष्टि मे	५५३	१४	४८	३०३	१८८
३ मिश्र दृष्टि मे	१०३	७	५	१५	७६
४ एकात सम्यग्दृष्टि मे	१०				१०
५ ,, मिथ्यादृष्टि मे	२८०	१	३०	२१३	३६
६ एक दृष्टि मे	२९०	१	३०	२१३	४६
७ दो दृष्टि मे	१७०	६	१३	७५	७६
८ तीन दृष्टि मे	१०३	७	५	१५	७६
९ सास्वादन समकित	१९५	१३	१८	३०	१३४

	कुल	नरक	तिर्यंच	मनुष्य	देव
१० वेदक समकित	१०३	७	५	१५	७६
११ उपशम समकित	२६५	१३	१०	९०	१५२
१२ क्षायोपशमिक समकित	२७५	१३	१०	९०	१६२
१३ क्षायिक समकित	२६२	८	२	९०	१६२
१० ज्ञान द्वार					
१ मति श्रुत ज्ञान मे	२८३	१३	१८	९०	१६२
२ अवधि ज्ञान मे	२१०	१३	५	३०	१६२
३ मन पर्याय ज्ञान व केवल ज्ञान मे	१५			१५	
४ मति श्रुत अज्ञान मे	५५३	१४	४८	३०३	१८८
५ विभग ज्ञान मे	२२२	१४	५	१५	१८८
११ दर्शन द्वार					
१ चक्षु दर्शन मे	५३७	१४	२२	३०३	१९८
२ अचक्षु दर्शन मे	५६३	१४	४८	३०३	१९८
३ अवधि दर्शन मे	२४७	१४	५	३०	१९८
४ केवल दर्शन मे	१५			१५	

	कुल	नरक	तिर्यंच	मनुष्य	देव
१२ संयत द्वार					
१ समुच्चय मयति	१५			१५	
२ सामायिक, सूक्ष्म सपराय और यथाख्यात चारित्र	१५			१५	
३ छेदोपस्थापनीय और परिहार विशुद्ध चारित्र मे	१०			१०	
४ सयतासयत मे	२०		५	१५	
५ असयति मे	५६३	१४	४८	३०३	१९८
६ नो सयति नो असंयति, नो सयतासयति मे					
१३ उपयोग द्वार					
१ साकार औ॰ अनाकार उपयोग मे	५६३	१४	४८	३०३	१९८
१४ आहारक द्वार					
१ आहारक मे	५६३	१४	३८	३०३	१९८
२ अनाहरक मे	३४७	७	२४	२१७	९९
१५ भाषक द्वार					
१ भाषक मे	२२०	७	१३	१०१	९९
२ अभाषक मे	३५८	७	३५	२१७	९९

	कुल	नरक	तिर्यंच	मनुष्य	देव
१६ परित द्वार					
१ परित मे	५६३	१४	४८	३०३	१९८
२ अपरित मे	५५३	१४	४८	३०३	१८८
३ नो परित नो अपरित मे					
१७ पर्याप्त द्वार					
१ पर्याप्त मे	२३१	७	२४	१०१	९९
२ अपर्याप्त मे	३३२	७	२४	२०२	९९
३ नो पर्याप्ता नो अपर्याप्ता मे					
१८ सूक्ष्म द्वार					
१ सूक्ष्म	१०		१०		
२ बादर	५५३	१४	३८	३०३	१९८
३ नो सूक्ष्म नो बादर					
१९ सन्नी द्वार					
१ सन्नी मे	४२४	१४	१०	२०२	११८
२ असन्नी मे	१३९		३८	१०१	

	कुल	नरक	तिर्यच	मनुष्य	देव
३ नो सन्नी नो असन्नी मे	१५			१५	
२० भव्य द्वार					
१ भव्य मे	५६३	१४	४८	३०३	१९८
२ अभव्य मे	५५३	१४	४८	३०३	१८८
३ नो भव्य नो अभव्य मे					
२१ चरम द्वार					
१ चरम मे	५६३	१४	४८	३०३	१९८
२ अचरम मे	५५३	१४	४८	३०३	१८८
२२ सहनन द्वार					
१ वज्र ऋषभ नाराच सहनन मे	२१२		१०	२०२	
२ मध्यम चार सहनन	४०		१०	३०	
३ छेवट्ट सहनन मे	१७९		४८	१३१	
२३ संस्थान द्वार					
१ सम चतुरस्त्र सस्थान	४१०		१०	२०२	१९८
२ मध्यम चार सस्थान	४०		१०	३०	

	कुल	नरक	तिर्यच	मनुष्य	देव
३ हुण्डक सस्थान मे	१९३	१४	४८	१३१	
२४ क्षेत्र द्वार					
१ भरत ऐरवत क्षेत्र मे	५१		४८	३	
२ महाविदेह क्षेत्र मे	५१		४८	३	
३ जम्बूद्वीप मे	७५		४८	२७	
४ लवणसमुद्र मे	२१६		४८	१६८	
५ धातकी खण्ड मे	१०२		४८	५४	
६ कालोदधि समुद्र मे	४८		४८		
७ अर्धपुष्कर द्वीप में	१०२		४८	५४	
८ अढाई द्वीप मे	३५१		४८	३०३	
९ अढाई द्वीप के बाहर मे	११८		४६		७२
१० नीचा लोक मे	११५	१४	४८	३	५०
११ तिरछा लोक मे	४२३		४८	३०३	७२
१२ ऊंचा लोक मे	१२२		४६		७६
१३ सिद्ध शिला के ऊपर	१२		१२		

	कुल	नरक	तिर्यंच	मनुष्य	देव
१४ सिद्ध शिला के ऊपर, सातवीं नरक के नीचे और लोक के चरमान्त मे	१२		१२		
२५ शाश्वत द्वार					
१५ शाश्वत	२५०	७	४३	१०१	९९
१६ अशाश्वत	३१३	७	५	२०२	९९
२६ अमर द्वार					
१७ अमर	१९२	७		८६	९९
१८ मरने वाला	३७१	७	४८	२१७	९९
२७ गर्भज—					
१९ गर्भज	२१२		१०	२०२	
२० नो गर्भज	३५१	१४	३८	१०१	१९८

पच्चीस क्रिया

निम्न पच्चीस क्रियाये है:—

१ काईया, २ आहिगरणिया, ३ पाउसिया, ४ पारितावणिया, ५ पाणाईवाईया; ६ अपच्चक्खाणिया, ७ आरंभिया ८ पारिग्गहिया, ९ मायावत्तिया, १० मिच्छादसणवत्तिया, ११ दिट्ठिया, १२ पुट्ठिया, १३ पाडुच्चिया, १४ सामंतोवणिवाईया, १५ साहत्थिया, १६ नेसत्थिया १७ आणवणिया, १८ वेदारणिया, १९ अणाभोगवत्तिया, २० अणव कंखवत्तिया, २१ पेज्जवत्तिया, २२ :दोषवत्तिया, २३ प्पउग, २४ सामुदाणिया, २५ इरियावहिया।

१ काईया क्रिया के दो भेद :—

१ अणुबरय काईया २ दुप्पउत्त काईया

१ अणुवरयकाईया :

जब तक यह शरीर पाप से निवर्ते नही, वहां तक उसकी क्रिया लगे।

२ दुप्पउत्त काईया :
दुष्ट प्रयोग में शरीर प्रवर्ते तो उसकी क्रिया लगे।

२ आहिगरणिया क्रिया के दो भेद :

१ संजोजनाहिगरणिया २ निव्वत्तणाहिगरणिया
१ खड्ग मुशल शस्त्रादिक प्रवर्तावे तो सजोजनाहिगरणिया क्रिया लगे।

२ नये अधिकरण-शस्त्रादिक सग्रह करे तो निव्वत्तणाहिगरणिया क्रिया लगे।

३ पाउसिया क्रिया के दो भेद .

१ जीव पाउसिया २ अजीव पाउसिया ।

१ जीव पर द्वेष करे तो जीव पाउसिया क्रिया लगे।
२ अजीव पर द्वेष करे तो अजीव पाउसिया क्रिया लगे।

४ पारितावणिया क्रिया के दो भेद :

१ सहत्थ पारितावणिया २ परहत्थ पारितावणिया ।

१ स्वय (खुद) अपने आपको तथा दूसरो को परितापना उपजावे तो सहत्थपारितावणिया क्रिया लगे।
२ दूसरो के द्वारा अपने आपको तथा अन्य किसी को परितापना उपजावे तो परहत्थ परितावणिया क्रिया लगे।

५ पाणाईवाईया क्रिया के दो भेद :

१ सहत्थ पाणाईवाईया, २ परहत्थ पाणाईवाईया ।

१ अपने हाथों से अपने तथा अन्य दूसरों के प्राण हरण करे तो सहत्थ पाणाईवाईया क्रिया लगे।
२ किसी अन्य द्वारा अपने तथा दूसरो के प्राण हरे तो परहत्थ पाणाईवाईया क्रिया लगे।

६ अपच्चक्खाण क्रिया के दो भेद

१ जीवअपच्चक्खाणक्रिया २ अजीव अपच्चक्खाणक्रिया।

१ जीव का प्रत्याख्यान नही करे तो जीव अपच्चखाण क्रिया लगे।
२ अजीव (मदिरादिक) का प्रत्याख्यान नही करे तो अजीव अपच्चखाण क्रिया लगे।

७ आरंभिया क्रिया के दो भेद :—

१ जीव आरंभिया २ अजीव आरंभिया ।

१ जीवो का आरम्भ करे तो जीव आरंभिया क्रिया लगे ।
२ अजीव का आरम्भ करे तो अजीव आरभिया क्रिया लगे ।

८ पारिग्गहिया क्रिया के दो भेद :—

१ जीव पारिग्गहिया, २ अजीव पारिग्गहिया ।

१ जीव का परिग्रह रक्खे तो जीव पारिग्गहिया क्रिया लगे ।
२ अजीव का परिग्रह रक्खे तो अजीव पारिग्गहिया क्रिया लगे

९ मायावत्तिया क्रिया के दो भेद :

आयभाव वंकणया, २ परभाव वंकणया ।

१ स्वयं आभ्यन्तर वांकां (कुटिल) आचरण आचरे तो आयभा वंकणया क्रिया लगे ।

२ दूसरों को ठगने के लिए वांकां (कुटिल) आचरण आचरे त परभाव वंकणया क्रिया लगे ।

१० मिच्छादंसण वत्तिया क्रिया के दो भेद :—

१ उणाइरित्तमिच्छादंसण वत्तिया, २ तवाइरित्त-मिच्छादंसण वत्तिया ।

१ कम ज्यादा श्रद्धान करे तथा प्ररूपे तो उणाइरित मिच्छादंसण वत्तिया क्रिया लगे ।

२ विपरीत श्रद्धान करे तथा प्ररूपे तो तवाइरित मिच्छादंसण वत्तिया क्रिया लगे ।

११ दिट्ठिया के दो भेद :

१ जीव दिठ्ठिया, २ अजीव दिठ्ठिया ।

१ अश्व-गजादिक को देखने के लिये जाने से जीव दिट्ठिया क्रिया लगे ।
२ चित्रामणादि को देखने के लिए जाने से अजीव दिट्ठिया क्रिया लगे ।

१२ पुट्ठिया क्रिया के दो भेद :—

१ जीव पुट्ठिया २ अजीव पुट्ठिया ।

१ जीव का स्पर्श करे तो जीव पुट्ठिया क्रिया लगे ।
२ अजीव का स्पर्श करे तो अजीव पुट्ठिया क्रिया लगे ।

१३ पाडुच्चिया क्रिया के दो भेद :—

१ जीव पाडुच्चिया, २ अजीव पाडुच्चिया ।

१ जीव का बुरा चिंतवे तथा उस पर ईर्ष्या करे तो जीव पाडुच्चिया क्रिया लगे ।
२ अजीव का बुरा चितवे तथा उस पर ईर्ष्या करे तो अजीव पाडुच्चिया क्रिया लगे।

१४ सामतोवणिवाईया क्रिया के दो भेद :—

१ जीवसामतोवणिवाईया, २ अजीवसामतोवणिवाईया ।

१ जीव का समुदाय रक्खे तो जीव सामंतोवणिवाईया क्रिया लगे ।
२ अजीव का समुदाय रक्खे तो अजीव सामतोवणिवाईया क्रिया लगे ।

१५ साहत्थिया के दो भेद :

१ जीव साहत्थिया २ अजीव साहत्थिया ।

१ जीव का अपने हाथों के द्वारा हनन करे तो जीव साहत्थिया क्रिया लगे ।

२ खड्गादि के द्वारा जीवको मारे तो अजीव साहत्थिया क्रिया लगे ।

१६ नेसत्थिया क्रिया के दो भेद :

१ जीव नेसत्थिया, २ अजीव नेसत्थिया ।

१ जीव को डाल देवे तो जीव नेसत्थिया क्रया लगे ।

२ अजीव को डाल देवे तो अजीव नेसत्थिया क्रिया लगे ।

१७ आणवणिया क्रिया के दो भेद :

१ जीवआणवणिया, २ अजीव आणवणिया ।

१ जीव को मंगावे तो जीव आणवणिया क्रिया लगे ।

२ अजीव को मगावे तो अजीव आणवणिया क्रिया लगे ।

१८ वेदारणिया क्रिया के दो भेद :

१ जीव वेदारणिया, २ अजीव वेदारणिया ।

१ जीव को वेदारे तो जीव वेदारणिया क्रिया लगे ।

२ अजीव को वेदारे तो अजीव वेदारणिया क्रिया लगे ।

१९ अणाभोगवत्तिया क्रिया के दो भेद :

१ अणाउत्तआयणता, २ अणाउत्तपम्मज्जणता ।

१ असावधानी से वस्त्रादिक का ग्रहण करने से अणाउत्त आयणता क्रिया लगे ।

२ उपयोग बिना पात्रादि को पूंजने से अणाउत्त पम्मज्जणता क्रिया लगे।

२० अणवकंखवत्तिया क्रिया के दो भेद :

१ आयशरीरअणवकंख वत्तिया, २ परशरीर अणवकंख वत्तिया।

१ अपने शरीर के द्वारा पाप करने से आयशरीर अणवकंख वत्तिया क्रिया लगे।
२ अन्य के शरीर द्वारा पाप कर्म करने से परशरीर अणवकंख वत्तिया क्रिया लगे।

२१ पेज्जवत्तिया क्रिया के दो भेद :

१ मायावत्तिया, २ लोभवत्तिया।

१ माया से (कपट पूर्वक) राग धारण करे तो मायावत्तिया क्रिया लगे।
२ लोभ से राग धारण करे तो लोभवत्तिया क्रिया लगे।

२२ दोसवत्तिया क्रिया के दो भेद :—

१ कोहे, २ माणे ।
१ क्रोध से कोहे क्रिया लगे।
२ मान से 'माणे' क्रिया लगे।

२३ प्पउग क्रिया के तीन भेद :—

१ मणप्पउग, २ वयप्पउग ३ कायप्पउग ।
१ मन के योग अशुभ प्रवर्ताने से मणप्पउग क्रिया लगे।
२ वचन के योग अशुभ प्रवर्ताने से वयप्पउग क्रिया लगे।
३ काया के योग अशुभ प्रवर्ताने से कायप्पउग क्रिया लगे।

२४ सामुदाणिया क्रिया के तीन भेद :

१ अणंतर सामुदाणिया, २ परंपर सामुदाणिया,
३ तदुभय सामुदाणिया ।

१ अणंतर सामुदाणिया—जो अन्तर सहित क्रिया लगे।
२ परंपर सामुदाणिया जो—अन्तर रहित क्रिया लगे।
३ तदुभय सामुदाणिया जो अन्तर सहित और रहित क्रिया लगे।

२५ इरियावहिया क्रिया :—

मार्ग में चलने से यह क्रिया लगती है।

पच्चीस क्रिया समाप्त
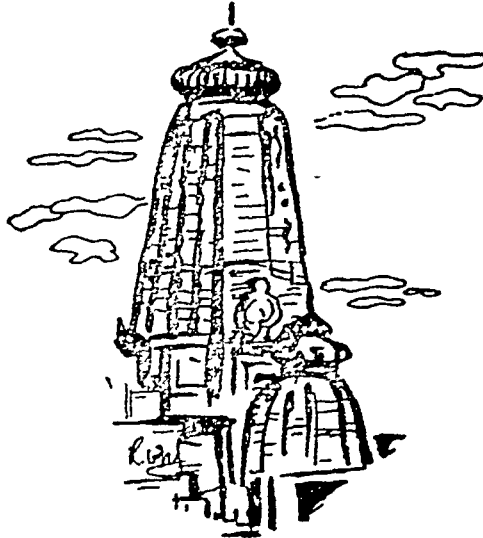
छः काय के बोल

छः काय के नाम—१ इन्द्र(इन्दी) स्थावर, ब्रह्म (बंभी) स्थावर, ३ शिल्प (सप्पी) स्थावर, ४ सुमति (समिति) स्थावर, ५ प्रजापति (पयावच्च) स्थावर, ६ जंगम—त्रस।

छः काय के गोत्र—१[1]पृथ्वी काय, [2]अप काय, [3]तेजस् काय, [4]वायु काय, [5]वनस्पति काय, [6]त्रस काय।

पृथ्वी काय

पृथ्वी काय के दो भेद—१ सूक्ष्म, २ वादर (स्थूल)।

१. सूक्ष्म पृथ्वीकाय—

सव लोक मे भरे हुए हैं, जो हनने से हनाय नही, मारने से मरे नही, अग्नि मे जले नही, जलमे डूवे नही, आँखो से दिखे नहीं, व जिसके दो टुकड़े होवे नही, उसे सूक्ष्म पृथ्वीकाय कहते है।

२. वादर (स्थूल) पृथ्वीकाय—

लोक के देश भाग मे भरे हुए हैं जो हनने से हनाय, मारने से मरे, अग्नि मे जले, जल में चलते डूवे, आँखो से दिखे व जिसके दो टुकड़े हो जावे।

---

१ मिट्टी, २ जल, ३ अग्नि, ४ पवन, ५ कन्द मूल फलादि, ६ हलन-चलन करने वाले प्राणी (जीव)।

उसे बादर पृथ्वीकाय कहते है। इसके दो भेद—१ सुंवाली (कोमल), २ खरखरी (कठिन) व (कठोर)।

१ कोमल के सात भेद—

१ काली मिट्टी, २ नीली मिट्टी, ३ लाल मिट्टी, ४ पीली मिट्टी, ५ श्वेत मिट्टी, ६ गोपी चन्दन की मिटटी, ७ परपड़ी (पण्डु) मिट्टी,।

कठोर पृथ्वी बादरकाय के २२ भेद

१ खदान की मिट्टी, २ मुरड कंकर (मरडिया) की मिट्टी, ३ रेत-वालु की मिट्टी, ४ पाषाण-पत्थर की मिट्टी ५ बड़ी शिलाओं की मिट्टी, ६ समुद्र की क्षारी (खार), ७ नमक की मिट्टी, ८ तरुआ की मिट्टी, ९ लोहे की मिट्टी १० शीशे की मिट्टी, ११ ताम्बे की मिट्टी, १२ रूपे (चांदी) की मिट्टी, १३ सोने की मिट्टी, १४ वज्र हीरे की मिट्टी, १५ हरि-ताल की मिट्टी, १६ हिंगुल की मिट्टी, १७ मनसील की मिट्टी १८ पारे की मिट्टी, १९ सुरमे की मिट्टी, २० प्रवाल की मिट्टी, २१ अभ्रक (भोडल) की मिट्टी, २२ अभ्रक के रज की मिट्टी।

१८ प्रकार के रत्न :—

१ गोमी रत्न, २ रुचक रत्न, ३ अङ्क रत्न, ४ स्फटिक रत्न, ५ लोहिताक्ष रत्न, ६ मरकत रत्न, ७ मसगल (मसारगल) रत्न, ८ भुज-मोचकरत्न, ९ इन्द्रनील रत्न, १० चन्द्र नील रत्न, ११ गेरुड़ी (गेरुक) रत्न, १२ ह्रस गर्भ रत्न, १३ पोलाक रत्न, १४ सौगन्धिक रत्न, १५ चद्रप्रभा रत्न, १६ वेरुली रत्न, १७ जलकान्त रत्न, १८ सूर्यकान्त रत्न, एवं सर्व ४७ प्रकार की पृथ्वी काय।

इसके सिवाय पृथ्वी काय के और भी बहुत से भेद है। पृथ्वी काय के एक ककर मे असख्यात जीव भगवत ने सिद्धांत मे फरमाया है। एक पर्याप्ता की नेश्राय से असख्यात अपर्याप्ता है। जो इन जीवो की दया पालेगा वह इस भव मे व पर भव मे निराबाध परम सुख पावेगा।

पृथ्वी काय का आयुष्य जघन्य अन्तर्मुहूर्त का उत्कृष्ट नीचे लिखे अनुसार :—

कोमल मिट्टी का आयुष्य एक हजार वर्ष का ।
शुद्ध मिट्टी का आयुष्य बारह हजार वर्ष का ।
बालु रेत का आयुष्य चौदह हजार वर्ष का ।
मनसिल का आयुष्य सोलह हजार वर्ष का
कंकरो का आयुष्य अट्ठारह हजार वर्ष का ।
वज्र हीरा तथा धातु का आयुष्य बावीश हजार वर्ष का ।
पृथ्वी काय का सस्थान मसुर की दाल के समान है ।
पृथ्वी काय का "कुल" बारह लाख करोड़ जानना ।

अपकाय

अपकाय के दो भेद— १ सूक्ष्म, २ बादर ।

सूक्ष्म—सारे लोक मे भरे हुए है, हनने से हनाय नही, मारने से मरे नही, अग्नि मे जले नही, जल में डूबे नही, आंखो से दिखे नही व जिसके दो भाग हो सकते नही, उसे सूक्ष्म अपकाय कहते है ।

बादर—लोक के देश भाग में भरे हुए है, हनने से हनाय, मारने से मरे, अग्नि मे जले, जल में डूबे, आंखो से नजर आवे उसे बादर अपकाय कहते है ।

इसके १७ भेद–१ ढार का जल, २ हिम का जल, ३ धूंवर का जल, ४ मेघरवा का जल, ५ ओस का जल, ६ ओले का जल, ७ बरसात का जल

८ ठण्डा जल, ९ गरम जल, १० खारा जल, ११ खट्टा जल, १२ लवण समुद्र का जल, १३ मधुर रस के समान जल, १४ दूध के समान जल, १५ घी के समान जल, १६ ईख (शेलड़ी) के रस जैसा जल, १७ सर्व रसद समान जल ।

इसके सिवाय अपकाय के और भी बहुत से भेद है । जल के एक बिन्दु मे भगवान ने असंख्यात जीव फरमाये है। एक पर्याप्त की नेश्राय से असंख्य अपर्याप्त है । इनकी अगर कोई जीव दया पालेगा तो वह इस भव मे व पर भव में निराबाध सुख पावेगा ।

अपकाय का आयुष्य जघन्य अन्तरमुहूर्त का, उत्कृष्ट सात हजार वर्ष का। जल का सस्थान जल के परपोटे के समान। "कुल" सात लाख करोड़ जानना ।

तेजस् काय

तेजस् काय के दो भेद–१ सूक्ष्म, २ बादर ।

सूक्ष्म–सर्व लोक मे भरे हुए है। हनने से हनाय नही, मारने से मरे नही। अग्नि में जले नही, जल में डूबे नही, ऑखो से दिखे नही, व जिसके दो भाग होवे नही, उसे सूक्ष्म तेजस् काय कहते है ।

बादर—तेजस् काय अढाई द्वीप मे भरे हुए है। हनने से हनाय, मारने ने मरे, अग्नि में जले, जल में डूबे, ऑखो से दिखे व जिसके दो भाग होवे, उसे बादर तेजस् काय कहते है ।

बादर अग्नि काय के १४ भेद–

१ अङ्गारे की अग्नि २ भोभर (ऊष्णराख) की अग्नि, ३ टूटती ज्वाला की अग्नि, ४ अखण्ड ज्वाला की अग्नि, ५निम्वाडे (कुम्भकार का अलाव भट्ठी) की अग्नि, ६ चकमक की अग्नि, ७ बिजली की अग्नि, ८ तारा की अग्नि, ९ अरणी (काष्ट) की अग्नि, १० बांस

की अग्नि ११ अन्य काष्टादि के घर्षण से उत्पन्न होने वाली अग्नि, १२ सूर्यकान्त (आई गलास) से उत्पन्न होने वाली अग्नि, १३ दावानल की, अग्नि, १४ बडवानल की अग्नि, ।

इसके सिवाय अग्नि के और भी अनेक भेद है। एक अग्नि की चिनगारी मे भगवान ने असख्यात जीव फरमाये है। एक पर्याप्त की नेश्राय से असंख्यात अपर्याप्त है। जो जीव इनकी दया पालेगा, वह इस भव मे निरावाध सुख पावेगा। तेजस् काय का आयुष्य जघन्य अन्तर्मुहूर्त का, उत्कृष्ट तीन अहोरात्रि (दिन रात) का। इसका सस्थान सुइयो की भारी के आकारवत् है। तेजस् काय का 'कुल' तीन लाख करोड जानना।

वायु काय

वायु काय के दो भेद—१ सूक्ष्म, २ बादर।

सूक्ष्म :—सर्व लोक मे भरे हुए है। हनने से हनाय नही, मारने से मरे नही, अग्नि में जले नही, जल में डुबे नही, आँखो से दिखे नहीं व जिस के दो भाग होवे नही, उसे सूक्ष्म वायु कहते है।

बादर :—लोक के देश भाग मे भरे हुवे है। हनने से हनाय, मारने से मरे अग्नि में जले, आँखों से दिखे व जिसके दो भाग होवे उसे बादर वायु काय कहते है।

बादर वायु काय के १७ भेद·

१ पूर्व दिशा की वायु, २ पश्चिम दिशा की वायु, ३ उत्तर दिशा की वायु, ४ दक्षिण दिशा की वायु, ५ ऊर्ध्व दिशा की वायु, ६ अधो दिशा की वायु ७ तिर्यक् दिशा की वायु, ८ विदिशा की वायु, ९ चक्र पडे सो भवर वायु १० चारो कोनो में फिरे सो मण्डल वायु,

११ उर्द्ध चढे सो गुंडल वायु १२ बाजिन्त्र जैसे आवाज करे सो गुञ्जा वायु १३ वृक्षो को उखाड़ ड़ाले सो झञ्ज (प्रभञ्जन) वायु १४ संवर्तक वायु १५ घन वायु १६ तनु वायु १७ शुद्ध वायु।

इनके सिवाय वायु काय के अनेक भेद है। वायु के एक फड़के में भगवान ने असख्यात जीव फरमाये है। एक पर्याप्त की नेश्राय से असख्यात अपर्याप्त है। खुले मुंह बोलने से, चिमटी बजाने से, अगुलि आदि का कड़िका करने से, पङ्खा चलाने से, रेंटिया कातने से, नली मे फूंकने से, सूप (सुपड़ा) झाटकने से, मूसल के खांड़ने से, घंटी बजाने से, ढोल बजाने से, पीपी आदि बजाने से, इत्यादि अनेक प्रकार से वायु के असख्यात जीवो की घात होती है। ऐसा जान कर वायु काय के जीवो की दया पालने से जीव इस भव मे व पर भव में निराबाध परमसुख पावेगा। वायुकाय का आयुष्य जघन्य अन्तर्मुहूर्त का, उत्कृष्ट तीन हजार वर्ष का। वायु काय का संस्थान ध्वजा-पताका के आकार है। वायु काय का "कुल" सातलाख करोड़ जानना।

वनस्पति काय

वनस्पति काय के दो भेद १—सूक्ष्म, २ बादर।

सूक्ष्म :—सर्व लोक में भरे हुए है। हनने से हनाय नही, मारने से मरे नही, अग्नि से जले नहीं, जल में डूबे नही, आँखो से दीखे नही, व जिसके दो भाग होवे नही, उसे सूक्ष्म वनस्पति काय कहते है।

बादर :—लोक के देश में भरे हुए है, हनने से हनाय, मारने से मरे, अग्नि मे जले, जल में डूबे, आँखों से दीखे व जिसके दो भाग होवे, उसे वादर वनस्पति काय कहते है।

वनस्पति काय के दो भेद : १ प्रत्येक, २ साधारण।

प्रत्येक के बारह भेद :

१ वृक्ष, २ गुच्छ, ३ गुलम, ४ लता, ५ वेल, ६ पावग, ७ तृण, ८ वल्ली, ९ हरित काय, १० औषधि, ११ जल वृक्ष, १२ कोसण्ड।

१ वृक्ष के दो भेद : १ अट्ठी, २ बहु अट्ठी।

एक अट्ठी : एक बीज वाले

बहु अट्ठी . याने बहु बीज वाले ।

एक अट्ठी : १ हरडे, २ बेहड़ा, ३ आँवला, ४ अरीठा,, ५ भीलामां, ६ आसापालव, ७ आम, ८ महुए, ९ रायन, १० जामुन, ११ बेर, १२ निम्बोली इत्यादि।

बहु अट्ठी १ जामफल, २ सीताफल, ३ अनार, ४ बीलफल, ५ कोठा, (कबीठ), ६ कैर, ७ नीबू, ८ टीमरु, ९ बड़ के फल, १० पीपल के फल इत्यादि बहु अट्ठी के बहुत से भेद है।

२गुच्छ :—नीचा व गोल वृक्ष हो उसे गुच्छ कहते है। जैसे १ रिंगनी, २ भोंरिंगनी, ३ जवासा ४ तुलसी ५ आवची बावची इत्यादि गुच्छ के अनेक भेद है।

३ गुल्म :—

फूलों के वृक्ष को गुल्म कहते है। १ जाई, २ जुई, ३ डमरा, ४ मरवा ५ केतकी, ६ केवड़ा इत्यादि गुल्म के अनेक भेद है।

४ लता :—१ नाग लता, २ अशोक लता, ३ चम्पक लता, ४ भोइ लता, ५ पद्म लता इत्यादि लता के अनेक भेद है।

५ वेला —जिस वनस्पति के वेल चाले सो वेला। १ ककड़ी, २ तरोई,३ करेला, ४ किकोड़ा, ५ कोला, ६ कोंठिबड़ा, ७ तुम्बा, ८ खरबुजे, ९ तरबुजे, १० वल्लर आदि।

६ पावग :—(पव्वय) जिसके मध्य में गाँठे हो, उसे पावग कहते है। १ ईख, २ एरण्ड, ३ सरकंड़, ४ बेत, ५ नेतर, ६ बाँस इत्यादि पावग के अनेक भेद है।

७ तृण :—१ डाभ का तृण, २ आरातारा का तृण, ३ कड़वाली का तृण ४ भेझवा का तृण ५ धरो का तृण ६ कालिया का तृण इत्यादि तृण के अनेक भेद है।

८ वलीया—(वल्लय) जो वृक्ष ऊपर जाकर गोलाकार बने हो, वे वलीया.—१ सुपारी २ खारक ३ खजूर ४ केला ५ तज ६ इलायची ७ लोंग ८ ताड़ ९ तमाल १० नारियल आदि वलीया के अनेक भेद है।

९ हरित काय—शाक भाजी के वृक्ष सो हरित काय :-१ मूला की भाजी २ मेथी की भाजी ३ तांदलजाकी (चदलोई की) भाजी ४ सुवा की भाजी ५ लुणी की भाजी ६ बथुए की भाजी आदि हरित काय के अनेक भेद है।

१० औषधि :—चौबीस प्रकार के धान्य को औषधि कहते है।

धान्य के नाम .

१ गोधुम (गेहू) २ जव ३ जुआर ४ बाजरी ५ डांगेर (शाल) ६ वरी ७ बंटी (वरटी) ८ बाबटो ९ कागनी १०चिण्यो-भिण्यो ११ कोदरा १२ मक्की । इन बाहर की दाल न होने से ये लहा (लासा) धान्य कहलाते है। १मूँग २ मोठ ३ उडद ४ तुवर ५ झालर (कावली चने) ६ वटले ७ चॅवले ८ चने ९ कुलत्थी १० कांग (राजगरे के सामान एक जाति का अनाज) ११ मसुर १२ अलसी इन बारह की दाल होने से इन्हे 'कठोल' कहते है।

लहा और कठोल इन दोनों प्रकार के धान्य को औषधि कहते है।

११ जल वृक्ष :—

१ पोयणा (छोटे कमल की एक जाति) २ कमल पोयणा ३ घीतेलां (जलोत्पन्न एक फल) ४ सिघाडे ५ कमल काकडी (कमल गट्टा) ६ सेवाल आदि जल वृक्ष के अनेक भेद है।

१२ कोसंड़ (कुहाण) :

१ वेल्ली के वेले २ वेल्ली के टोप आदि जमीन फोड़ कर जो निकाले सो कोसंड। इस प्रत्येक वनस्पति में उत्पन्न होते वक्त व जिनमें चक पडे उनमे अनन्त जीव, हरी रहे, उस समय तक असँख्यात जीव व पकने बाद जितने बीज हो उतने या संख्यात जीव होते है।

प्रत्येक वनस्पति का वृक्ष दश बोल से शोभा देता है-१ मूल २ कद ३ स्कध ४ त्वचा ५ शाखा ६ प्रशाखा ७ पत्र ८ फूल ९ फल १० वीज।

साधारण वनस्पति के भेद

कद मूल आदि की जाति को साधारण वनस्पति कहते है। १ लसण २ डुगली ३ अदरक ४ सूरण (कन्द) ५ रतालु ६ पेडालु (तरकारी विशेष) ६ बटाटा ८ थेक (जुवार जैसे दाने की एक जाति) ९ सकरकन्द १० मूला का कन्द ११ नीली हलद १२ नीली गली (घास की जड) १३ गाजर १४ अकुरा १५ खुरसाणी १६ थुअर १७ मोथी १८ अमृत वेल १९ कु वार (ग्वार पाठा) २० बीड़ (घासविशेष) २१ बडवी (अरवी) का गाठिया २२ गरमर आदि कन्द मूल के अनेक भेद है। इन्हे साधारण वनस्पति कहते है। सुई की अग्र (अनी) ऊपर आवे इतने छोटे से कन्द मूल के टुकडे मे उन निगोदिये जीवो के रहने को असख्यात श्रेणी है। एक एक श्रेणी मे असख्यात प्रतर है। एक एक प्रतर मे असख्यात गोले है। एक एक गोले मे असख्यात शरीर है। एक एक शरीर मे अनन्त जीव है। इस प्रकार ये साधारण वनस्पति

के भेद जानना। जो जीव इस वनस्पति काय की दया पालेगा वह इस भव में परभव में निराबाध परम सुख पावेगा। वनस्पति का आयुष्य जघन्य अन्तर मुहुर्त का, उत्कृष्ट दश हजार वर्ष का इन में निगोद का आयुष्य जघन्य अन्तरमुहूर्त उत्कृष्ट अन्तमुहूर्त। चवे और उत्पन्न होवे। वनस्पति काय का सस्थान अनेक प्रकार का है। इनका "कुल" २८ लक्ष करोड़ जानना।

त्रसकाय के भेद

त्रसकाय :—

त्रस जीव, जो हलन, चलन क्रिया कर सके। धूप में से, छाया में जावे व छाया मे से धूप में आवे उसे त्रस काय कहते है। उसके चार भेद- १ बेइन्द्रिय २ त्रीन्द्रिय ६ चौरिन्द्रिय ४ पचेन्द्रिय।

बेइन्द्रिय के भेद :—

जिसके काय और मुख ये दो इन्द्रियां होवे उसे बेइन्द्रिय कहते है। जैसे-१ शंख २ कोड़ी ३ सीप ४ जलोक ५ कीड़े ६पोरे ७ लट ८ अलसिये ९ कृमी १० चरमी ११ कातर (जलजन्तु) १२ चुडेल १३ मेर १४ एल १५ वांतर (वारा) १६ लालि आदि बेइन्द्रिय के अनेक भेद है। बेइन्द्रिय का आयुष्य जघन्य अन्तर्मुहूर्त का, उत्कृष्ट बारह वर्ष का है। इनका "कुल" सात लक्ष करोड जानना।

त्रीन्द्रिय :—

जिसके १ काय २ मुख ३ नासिका—ये तीन इन्द्रियां होवे उसे त्रीन्द्रिय कहते है। जैसे—१जूँ २ लीख ३ खटमल (मांकड़) ४ चांचड़ ५ कुँथवे ६ धनेरे ७ उदई (दीमक) ८ इल्ली (झिमेल) ९ भुंड १० कीड़ी ११ मकोड़े १२ जीघोड़े १३ जुँआ १४ गधैये १५ कानखजुरे १६ सवा १७ ममोले आदि त्रीन्द्रिय के अनेक भेद है। इनका आयुष्य

जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट ४६ दिन का है। इनका "कुल" आठ लक्ष करोड़ जानना।

चौरिन्द्रिय :

जिसके १ काय २ मुख ३ नासिका ४ चक्षु (आख) ये चारइन्द्रिय होवे उसे चौरिन्द्रिय कहते है। जैसे- १ भँवरे १ भँवरी ३ बिच्छू ४ मक्खी ५ तीड (टीढ) ६ पतग ७ मच्छर ८ मसेल ६ डांस १० मस ११ तमरा १२ करोलिया १३ कसारी १४ तीड़ गोड़ा १५ फुंदी १६ कैकड़े १७ बग १८ रूपेली आदि चौरिन्द्रिय के अनेक भेद है। इनका आयुष्य जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट छ. माह का है। "कुल" नव लक्ष करोड़ जानना।

पंचेन्द्रिय के भेद :—

जिसके १ काय २ मुख ३ नासिका ४ नेत्र ५ कान—ये पांच इन्द्रिय हो उसे पचेन्द्रिय कहते है। इनके चार भेद १ नारक २ तिर्यच ३ मनुष्य ४ देव।

१ नरक का विस्तार :—

नरक के सात भेद . १ घम्मा १ वशा ३ शिला ४ अंजना ५ रीष्टा ६ मघा ७ माघवती।

सात नरक के गोत्र :—

१ रत्नप्रभा २ शर्कराप्रभा ३ बालुप्रभा ४ पकप्रभा ५ धूमप्रभा ६ तमस्प्रभा ७ तमस् तमः प्रभा। सात नरक के ये सात गोत्र गुणनिष्पन्न है, जैसे:—

१ रत्नप्रभा मै रत्न के कुण्ड है।
२ शर्कराप्रभा मे मरड़िया आदि ककर है।
३ बालुप्रभा मे बालु (रेत) है।

४ पंकप्रभा में रक्त मास का कीचड़ (कादव) है ।
५ धूम्रप्रभा में धूम्र (धुँवा) है ।
६ तमस्प्रभा में अधकार है ।
७ तमस्तमःप्रभा मे घोरानघोर (घोरातिघोर) अंधकार है ।

नरक का विवेचन

१ रत्नप्रभा नरक :—

इस का पिड एक लाख अस्सी हजार योजन का है । जिसमें से एक हजार का दल नीचे व एक हजार का दल ऊपर छोड़कर वीच मे एक लाख ७८ हजार योजन की पोलार है । जिसमें १३ पाथड़ा १२ आंतरा है, इनमें ३० लाख नरकावास है, जिनमे असंख्यात नारक और उनके रहने के लिये असख्यात कुम्भिये है । इसके नीचे चार वोल हैं । १ वीस हजार योजन का घनोदधि है । २ असंख्यात योजन का घनवात है ३ असंख्यात योजन का तनु वात है । और ४ असंख्यात योजन का आकाशास्तिकाय है ।

२ शर्कराप्रभा नरक :—

इस का पिड एक लाख वत्तीस हजार योजन का है । जिनमें से एक हजार योजन का दल नीचे व एक हजार योजन का दल ऊपर छोड़कर वीच में एक लाख और तीस हजार का पोलार है । इनमें ११ पाथड़ा व १० आंतरा है जिनमें असंख्यात नारकों के रहने के लिये २५ लाख नरकावास और असंख्यात कुम्भिये है । इसके नीचे चार वोल १ वीस हजार योजन का घनोदधि है २ असंख्यात योजन का घनवात है ३ असख्यात योजन का तनुवात है । ४ असंख्यातयोजन का आकाशास्तिकाय हैं ।

३ वालुप्रभा नरक :—

इसका पिंड़ एक लाख और २८ हजार योजन का है । जिसमे से

एक हजार योजन का दल नीचे व एक हजार योजन का दल ऊपर छोड़ कर बीच मे एक लाख और २६ हजार योजन का पोलार है। इनमें ६ पाथड़ा ८ आंतरा है। जिसमे असंख्यात नारको के रहने के लिये १५ लाख नरकावास व असख्यात कुम्भिये है। इसके नीचे चार बोल—१ बीस हजार योजन का घनोदधि है २ असंख्यात योजन का घनवात है ३ असख्यात यो॰ ा तनुवात है ४ असख्यात योजन का आकाशास्तिकाय है।

४ पंकप्रभा नरक –

इसका पिड़ एक लाख और वीस हजार योजन का है। जिसमें से एक हजार योजन का दल नीचे व एक हजार योजन का दल ऊपर छोड कर वीच मे एक लाख और अठारह हजार योजन का पोलार है। जिसमें ७ पाथडा व ६ आंतरा है। इनमें असख्यात नारकों के रहने के लिये दस लाख नरकावास व असख्यात कुम्भिये है। इसके नीचे चार बोल—१ वीस हजार योजन का घनोदधि है, २ असंख्यात योजन का घनवात है, ३ असख्यात योजन का तनुवात है, ४ असख्यात योजन का आकाशास्तिकाय है।

५ धूम्रप्रभा नरक –

इसका पिंड एक लाख अट्ठारह हजार योजन का है। जिसमें से एक हजार योजन का दल नीचे व एक हजार योजन का ऊपर छोड़ कर बीच मे एक लाख सोलह हजार योजन का पोलार है, जिनमे ५ पाथडा व ४ आतरा है। इनमे असख्यात नेरियो के लिये तीन लाख नरकावास व असख्यात कुम्भिये है। इसके नीचे चार वोल—१ बीस हजार योजन का घनोदधि है, २ असख्यात योजन का घनवात है, ३ असख्यात योजन का तनुवात है, ४ असंख्यात योजन का आकाशा-स्तिकाय है।

६ तमःप्रभा नरक :—

इसका पिड़ एक लाख सोलह हजार योजन का है। जिसमें से एक हजार योजन का दल नीचे व एक हजार योजन का दल ऊपर छोड़कर वीचमें एक लाख चौदह हजार योजन का पोलार है। जिसमें ३ पाथड़ा व २ आंतरा है। इनमें असख्यात नेरियों के रहने के लिये ९९९९५ नरकावास व असंख्यात कुम्भिये है, इसके चार बोल—१ बीस हजार योजन का घनोदधि २ असंख्यात योजन का घनवात ३ असंख्यात योजन का तनुवात ४ असंख्यात योजन का आकाशास्ति काय है।

७ तमस् तमःप्रभा नरक :—

इसका पिंड एकलाख आठ हजार योजनका है। ५२॥ हजार योजन का दल नीचे व ५२॥ हजार योजन का दल ऊपर छोड कर वीच मे तीन हजार योजन का पोलार है। जिसमे एक पाथड़ा है, आंतरा नही। यहां असंख्यात नेरियों के रहने के लिये असंख्यात कुम्भिये व पांच नरकावास है। पांच नरकावास— १ काल २ महाकाल ३ रुद्र ४ महारुद्र ५ अप्रतिष्ठान। इसके नीचे चार वोल १ वीस हजार योजन का घनोदधि है २ असख्यात योजन का घनवात है ३ असंख्यात योजन का तनुवात है, ४ असख्यात योजन का आकाशास्तिकाय है। इसके बारह योजन नीचे जाने पर अलोक आता है।

नरक की स्थिति जघन्य दश हजार वर्षकी उत्कृष्ट ३३ सागरोपम की। इनका "कुल" पच्चीस लाख करोड़ जानना।

२ तिर्यञ्च का विस्तार:—

तिर्यञ्च के पांच भेद :—

१ जलचर २ स्थलचर ३ उरपर ४ भुजपर ५ खेचर।

इनमें से प्रत्येक के दो भेद १ संमूर्च्छिम, २ गर्भज।

१ जलचर :—

जलमे चले सो जलचर तिर्यंच। जैसे—१मच्छ २ कच्छ, ३ मगर-मच्छ ४ कछुआ ५ ग्राह ६ मेढक ७ सुसुमाल इत्यादिक जलचर के अनेक भेद है। इनका "कुल" १२॥ लाख करोड़ जानना।

२ स्थलचर :—

जमीनपर चले सो स्थलचर तिर्यंच। इनके विशेष नाम—

१ एक खुरवाले—घोड़े, गधे खच्चर इत्यादि।

२ दो खुरवाले—(कटेहुए खुरवाले) गाय, भैस, बकरे, हिरन, रोझ ससलिये आदि।

३ गण्डीपद —(सोनार के एरण जैसे गोल पाँव वाले) ऊँट, गेड़े आदि।

४ श्वानपद—(पंजेवाले जानवर) वाघ, सिंह, चीता, दीपड़े (धब्बे वाले चीते) कुत्ते, बिल्ली, लाली, गीदड़, जरख, रीछ, वन्दर इत्यादि। स्थलचर का "कुल" दस लाख करोड़ जानना।

३ उरपरिसर्प के भेद :

हृदय बल से जमीन पर चलने वाले सो उरपरिसर्प। इनके चार भेद—१ अहि, २ अजगर, ३ असालिया ४ महुरग।

१ अहि—पाँचो ही रङ्ग के होते है। १काला, २ नीला, ३ लाल, ४ पीला, ५ सफेद।

२ मनुष्यादि को निगल जावे सो अजगर।

३ असालिया— यह दो घड़ी मे १२ योजन (४८कोस) लम्बा हो जाता है। चक्रवर्ती (वलदेवादि) की राजधानी के नीचे उत्पन्न होता है। इसे भस्म नामक दाह होता है, जिससे आस पास के ग्राम ,नगर सेना सब दब कर मर जाते है इसे असालिया कहते हैं।

४ महुरग—उत्कृष्ट एक हजार योजन का लम्बा महुरग (महोरग) कहलाता है। यह अढाई द्वीप के बाहर रहता है। उरपर (सर्प)) का "कुल" दस लाख करोड़ जानना।

४ भुजपरिसर्प :—

जो भुजाओं (हाथों) के बल चले सो भुजपरिसर्प कहलाते है। इनके विशेष नाम—१कोल,२ नकुल, (नोलिया) ३ चूहा, ४ छिपकली ५ ब्राह्मणी, ६ गिलहरी, ७ काकीड़ा, ८ चन्दन गोह (ग्राह) ९ पाटला-गोह (ग्राहविशेष) इत्यादि अनेक नाम है। इनका "कुल" नव लाख करोड जनना।

५ खेचर :—आकाश में उड़नेवाले जीव खेचर (पक्षी) कहलाते है। इनके चार भेद—१चर्म पंखी, २ रोम पंखो, ३ समुद्ग पखी, ४ वीतत (विस्तृत) पखी।

१ चर्म पंखी—बगुला, चामचिड़ी कातकटिया, चमगीदड़ इत्यादि चमड़े की पांख वाले सो चर्म पंखी,।

२ रोम पखी—मयूर (मोर) कबूतर, चकले (चिड़ी) कौवे, कमेडी मैना, पोपट चील, बगुले, कोयल, ढेल, शकरे, हौल, तोते, तीतर, वाज इत्यादि रोम (बाल) की पांख वाले सो रोमपखी। ये दो प्रकार के पक्षी अढाई द्वीप के बाहर भी मिलते है और अन्दर भी।

३ समुद्ग पंखी—डब्बे जैसी भीड़ी हुई गोल पांख वाले सो समुद्ग पंखी।

४ वीतत पंखी—विचित्र प्रकार की लम्वी व पोली पाख वाले सो वीतत पंखी। ये दोनो प्रकार के पक्षी अढाई द्वीप के बाहर ही मिलते है। खेचर (पक्षी) का "कुल" वारह लाख करोड जानना।

गर्भज तिर्यंच की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की उत्कृष्ट तीन पल्यो-

पम की। संमूर्च्छिम तिर्यञ्च की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की उत्कृष्ट पूर्व करोड़ की (विस्तार दण्डक से जानना)।

३ मनुष्य के भेद :—

मनुष्य के दो भेद—१ गर्भज २ समूर्च्छिम।

गर्भज के तीन भेद १ पन्द्रह कर्मभूमि के मनुष्य, २ तीस अकर्मभूमि के मनुष्य, ३ छप्पन्न अन्तरद्वीप के मनुष्य।

१ पन्द्रह कर्मभूमिज मनुष्य के १५ क्षेत्र :—

१ भरत, २ ऐरावत, ३ महाविदेह, ये तीन क्षेत्र एक लाख योजन वाले जम्बूद्वीप के अन्दर है। इसके (चारो ओर) बाहर (चूड़ी के-आकार) दो लाख योजन का लवण समुद्र है। इसके बाहर चार लाख योजनका धातकीखण्ड जिसमे २ भरत २ ऐरावत, २ महाविदेह ये ६ क्षेत्र है। इसके बाद आठ लाख योजन का कालोदधि समुद्र है, जिसके बाहर आठ लाख योजन का अर्धपुष्करद्वीप है, जिसमें २ भरत, २ऐरावत, २ महाविदेह ये ६ क्षेत्र है। इस प्रकार ये पन्द्र क्षेत्र हुए।

जहा असि (हथियारसे) मसि (लेखनादि व्यापार से) और कृषि (खेती से) उपजीविका करने वाले है उसे कर्मभूमि कहते है। इन क्षेत्रो मे विवाह आदि कर्म होते है व मोक्ष मार्ग का साधन भी है।

२ तीस अकर्मभूमिज मनुष्य के ३० क्षेत्र :—

१ हेमवय १ हिरण्यवय १ हरिवास, १ रम्यकवास, १ देवकुरु, १ उत्तर कुरु। ये छ क्षेत्र एक लाख योजन वाले जम्बू द्वीप मे है। इसके वाहर दो लाख योजन का लवण समुद्र है, जिसके बाहर चार लाख योजन का धातकी खण्ड जिसमे २ हेमवय, २ हिरण्यवय, २ हरिवास २ रम्यक् वास, २ देव कुरु, २ उत्तरकुरु ये १२ क्षेत्र है। इसके वाहर आठ लाख योजन का कालोदधि समुद्र है। इसके बाहर

आठ लाख योजन का अर्ध पुष्कर द्वीप है, जिसमें २ हेमवय, २ हिरण्य-वय, २ हरिवास, २ रम्यक्वास २ देवकुरु, १ उत्तरकुरु ये १२ क्षेत्र है। इस प्रकार ये तीस क्षेत्र अकर्मभूमि के है, जिनमें न खेती आदि होती है, न विवाह आदि कर्म होते है, और न वहां कोई मोक्ष मार्ग का ही साधन है।

३ छप्पन अन्तरद्वीप के क्षेत्र :-

मेरु पर्वत के उत्तर में भरत क्षेत्र की सीमा पर १०० योजन ऊंचा २५ योजन पृथ्वी में ऊंडा (गहरा) १०५२$\frac{१२}{१९}$ [१२कला] योजन चौडा २४९३२ योजन और $\frac{३}{४}$ कला लम्बा पीले सोने काचुल्लहेमवन्त पर्वत है। इसकी बांह ५३५० योजन और १५ कला की है। धनुष्य पीठीका २५२३० योजन और ४ कला की है। इस पर्वत के पूर्व पश्चिम सिरे से चोरासीसौ, चोरासीसो योजन जाझेरी लम्बी दो डाढें (शाखा) निकली हुई है। एक-एक शाखा पर सात-सात अन्तर द्वीप है। जगती (तलहटी) से ऊपर की डाढ की ओर ३०० योजन जाने पर ३००योजन लम्बा व चौडा पहला अन्तर द्वीप आता है। वहाँ से चार सौ योजन जाने पर चार सौ योजन लम्बा व चौडा दूसरा अन्तरद्वीप आता है। वहाँ से ५०० योजन आगे जाने पर ५०० योजन लम्बा व चौडा तीसरा अन्तर द्वीप आता है। वहाँ से ६०० योजन आगे जाने पर ६०० योजन लम्बा और चौडा चौथा अन्तर द्वीप आता है। वहाँ से ७०० योजन आगे जाने पर ७०० योजन का लम्बा व चौडा पाँचवां अन्तर द्वीप आता है। वहा से ८०० योजन आगे जाने पर ८०० योजन लम्बा व चौडा छठा अन्तर द्वीप आता है। वहाँ से ९०० योजन आगे जाने पर ९०० योजन लम्बा व चौडा सांतवां अन्तर द्वीप आता है।

इस प्रकार एक २ शाखा पर सात-सात अन्तर द्वीप है। इन्हे चार से गुणा करने पर [चार शाखा पर] २८ अन्तर द्वीप हुए। ये अन्तर द्वीप 'चुल्ल हेमवन्त' पर्वत पर है। ऐसे ही ऐरावत क्षेत्र की

सीमा पर 'शिखरी' नामक पर्वत है, जो 'चुल्ल हेमवन्त' पर्वत के सामान है। इस शिखरी नामक पर्वत के पूर्व पश्चिम के सिरो पर भी २८ अन्तर द्वीप है। इस प्रकार दो पर्वत के सिरो पर कुल छप्पन अन्तर द्वीप है।

संमूर्च्छिम मनुष्य के भेद:—

समूर्च्छिम मनुष्य—गर्भज मनुष्यके एक सौ एक क्षेत्र में १४ स्थानों (जगह) में उत्पन्न होते है।

१४ उत्पत्ति स्थानो के नाम :—

१ उच्चारेसुवा—बडी नीति—विष्टा मे।
२ पासवणेसुवा—लघु नीति-पेशाब (मूत्र) में।
३ खेलेसुवा—खँखार मे।
४ संघाणसुवा—श्लेष्म नाक के मेल मे।
५ वतेसुवा—वमन-उल्टी मे।
६ पित्तेसुवा—पित्त में।
७ पुइयेसुवा—रस्सी-पीप मे।
८ सोणियेसुवा—रुधिर-रक्त मे।
९ सुक्केसुवा—वीर्य रज मे।

१० सुक्कपोग्गलपडिसाडियाएसुवा—वीर्यके सूखे पुद्गल पुनः गीले होवे उसमे।

११ विगयजीव कलेवरेसुवा—मनुष्य के मृतक शरीर मे।

१२ इत्थिपुरिससजोगेसुवा—स्त्री पुरुष के सयोग मे।

१३ नगरनिद्धमनियाएसुवा—नगर की गटर आदि में।

१४ सव्व असुईठाणेसुवा—सर्व मनुष्य सम्बन्धी अशुची स्थानों में।

गर्भज मनुष्य की स्थिति जघन्य अन्तमुहूर्त की, उत्कृष्ट तीन पल्यो-

पम की। संमूर्च्छिम मनुष्य की स्थिति जघन्य अन्तरमुहूर्त की उत्कृष्ट भी अन्तमुहूर्त की। मनुष्य का "कुल" बारह लाख करोड़ जानना।

४ : देव के भेद :-

देव के चार भेद—१ भवनपति २ वाणव्यन्तर ३ ज्योतिषी ४ वैमानिक।

१ भवनपति के २५ भेद :—१० दश असुर कुमार, १५ पन्द्रह परमाधामी।

दश असुर कुमार :—१ असुर कुमार २ नाग कुमार ३ सुवर्ण कुमार ४ विद्युतकुमार ५ अग्निकुमार ६ द्वीपकुमार ७ उदधि कुमार ८ दिशा कुमार ९ पवन कुमार १० स्तनित कुमार।

पन्द्रह परमाधामी :—१ आम्र (अम्ब) २ अम्बरोप ३ श्याम ४ सबल ५ रुद्र ६ महारुद्र ७ काल ८ महाकाल ९ असिपत्र १० धनुष्य ११ कुम्भ १२ वालुका १३ वैतरणी १४ खरस्वर १५ महाघोष।

इस प्रकार कुल २५ प्रकार के भवनपति कहे। पहली नरक में एक लाख अठ्योतर हजार योजन का पोलार है। जिसमे बारह आंतरा है। जिसमे से नीचे के दश आंतरो मे भवनपति देव रहते है।

वाणव्यन्तर देव :—वाणव्यन्तर देवो के २६ भेद। १६ सोलह जाति के देव, १० दश जातिके जृम्भक देव, कुल २६।

१ सोलह जाति के देव —१ पिशाच २ भूत ३ यक्ष ४ राक्षस ५ किन्नर ६ किंपुरुष ७ महोरग ८ गंधर्व ९ आणपन्नी १० पाणपन्नी ११ इसीवाई १२भूइवाई १३कदीय १४ महाकदीय १५ कोहंड १६ पयंग।

दश जाति के जृम्भक :—आण जृम्भक, पाण जृम्भक, लयन जृम्भक, शयन जृम्भक, वस्त्र जृम्भक, पुष्प जृम्भक, फल जृम्भक, पुष्पफल-जृम्भक, विद्या जृम्भक, अव्यक्त जृम्भक।

ये (१६+१०) २६ जाति के वाणव्यन्तर देव हुए। पृथ्वी का दल

एक हजार योजन का है। जिसमे से सौ योजन का दल नीचे व सौ योजन का दल ऊपर छोड कर, बीच मे आठ सौ योजन का पोलार है। जिसमे सोलह जाति के व्यन्तरो के नगर है। ये नगर कुछ तो भरत क्षेत्र के समान है। कुछ इन से बड़े महाविदेह क्षेत्र के समान हैं। और कुछ जबूद्वीप के समान बड़े है।

पृथ्वी का सौ योजन का दल जो ऊपर है, उसमें से दश योजन का दल नीचे व दश योजन का दल ऊपर छोड कर, बीच मे अस्सी योजन का पोलार है। इनमे दस जाति के जृम्भक देव रहते है जो सध्या समय, मध्य रात्रिको, सुबह व दोपहर हुज्जा-हुज्जा ('अस्तु - अस्तु') कहते हुए फिरते रहते है (जो हसता हो वो हसते रहना, रोता हो वो रोते रहना, इस प्रकार कहते फिरते है) अतएव हर समय ऐसा वैसा नही बोलना चाहिये। पहाड पर्वत व वृक्ष के ऊपर तथा वृक्ष के नीचे मन को जो जगह अच्छी लगे वहा ये देव आकर बैठते है तथा रहते है।

ज्योतिषी देव—इनके दश भेद: १ चन्द्रमा, २ सूर्य, ३ ग्रह, ४ नक्षत्र, ५ तारे। पाँच चर व पाँच अचर भेद से दश हुए।

ये पाच ज्योतिषी देव अढाई द्वीप मे चर है व अढाई द्वीप के बाहर अचर (स्थिर)है। इनके सबंधमे कहा है :—

तारा रवि चद रिक्ख, बुह, सुका, जूव, मगल सणीआ।
सग सय नेउआ, दस असिय, चउ, चउक्कसमोतिया चउसो। १।

अर्थ :— पृथ्वी से ७६० योजन ऊ चा जाने पर ताराओ का विमान आता है, पृथ्वी से ८०० योजन ऊ चा जाने पर सूर्य का विमान आता है, पृथ्वी से ८८० योजन ऊचा जाने पर चन्द्रमा का विमान आता है। पृथ्वी से ८८४ योजन ऊचा जाने पर नक्षत्र का विमाना आता है, ८८८

योजन जाने पर बुध का तारा आता है, ८९१ योजन जाने पर शुक्र का तारा आता है, ८९४ योजन ऊँचा जाने पर वृहस्पति का तारा आता है, ८९७ योजन ऊंचा जाने पर मगल का तारा आता है, पृथ्वी से ९०० योजन ऊचा जाने पर शनिश्चर का तारा आता है ।

इस प्रकार ११० योजन का ज्योतिष चक्र है । पांच चर है पांच स्थिर है । अढाई द्वीप में जो चलते है वो चर और अढ़ाई द्वीप के बाहर जो चलते नहीं वे स्थिर है । जहॉ सूर्य है वहां सूर्य और जहाँ चन्द्र है वहां चन्द्र ।

वैमानिक के ३८ भेद :

३ किल्विषी १२ देवलोक ९ लोकांतिक, ९ ग्रैवेयक ५ अनुत्तर विमान, कुल ३८ ।

किल्विषी देव :—तीन पल्योपम की स्थिति वाले प्रथम किल्विषी पहले दूसरे देवलोक के नीचे के भाग मे रहते है । तीन सागर की स्थिति वाले दूसरे किल्विषी तीसरे चोथे देवलोक के नीचे के भाग मे रहते है । तेरह सागर की स्थिति वाले तीसरे किल्विषी छठ्ठे देवलोक के नीचे के भागमे रहते है । ये देव ढ़ेढ़ (भगी) देव पणे उत्पन्न हुए है । कैसे ? तीर्थंकर, केवली, साधु, साध्वी के अपवाद बोलने से ये किल्विषी देव हुए है ।

वारह देवलोक :—१ सुधर्मा देवलोक २ ईशान देवलोक ६ सनत् कुमार देवलोक ४ महेन्द्र देवलोक ५ ब्रह्म देवलोक ३ लातक देवलोक ७ महाशुक्र देवलोक ८ सहस्रार देवलोक ९ आणत देवलोक १० प्राणत देवलोक ११ आरण देवलोक १२ अच्युत देवलोक ।

वारह देवलोक कितने ऊचे, किस आकार के व इनके कितने कितने विमान है ? इसका विवेचन इस प्रकार है ।

ज्योतिपी चक्र के ऊपर असंख्यात योजन करोडाकरोड—प्रमाण

ऊ चा जानेपर पहला सुधर्मा व दूसरा इशान ये दो देवलोक आते है, जो लगड़ाकार है। व एक-एकअर्ध चन्द्रमा के आकार (सामान) है और दोनो मिल कर पूर्ण चन्द्रमा के आकार (समान) है। पहले मे ३२ लाख और दूसरे मे २८ लाख विमान है। यहां से असंख्यात योजन करोडाकरोड प्रमाण ऊचे जाने पर तीसरा सनत कुमार व चौथा महेन्द्र ये दो देवलोक आते है। जो लग्गड़ (ढाचा) के आकार है। एक एक अर्ध चन्द्रमा के आकार है। दोनो मिल कर पूर्ण चन्द्रमा के आकार (समान) है। तीसरे मे १२ लाख व चौथे मे आठ लाख विमान है। यहां से असंख्यात योजन करोडाकरोड प्रमाण ऊचा जाने पर पाचवा ब्रह्म देवलोक आता है। जो पूर्ण चन्द्रमा के आकार का है। इसमे चार लाख विमान है। यहां से असख्यात योजन करोडा-करोड प्रमाणे ऊंचा जाने पर छठ्ठा लांतक देवलोक आता है। जो पूण चन्द्रमा के आकार का है। इसमे ५० हजार विमान है। यहाॅ से असख्यात योजन करोड़ाकरोड प्रमाणे ऊचा जाने पर सातवा महाशुक्र देवलोक आता है। जो पूर्ण चन्द्रमा के आकार का है। इसमे ४० हजार विमान है। यहाॅ से असख्यात योजन करोड़ा-करोड प्रमाणे ऊचा जाने पर आठवां सहस्रार देव लोक आता है जो पूर्ण चन्द्रमा के आकार का है। इसमे ६ हजार विमान है। यहाॅ से असख्यात योजन करोडाकरोड़ प्रमाणे ऊचा जाने पर नौवा आनत और दसवा प्राणत ये दो देवलोक आते है, जो लग्गडाकार है व एक-एक अर्ध चद्रमा के आकार का है। दोनो मिलकर पूर्ण-चद्रमा के समान है। दोनो देवलोक मे मिल कर ४०० विमान है। यहाॅ से असख्यात योजन के करोडाकरोड प्रमाणे ऊंचा जाने पर ग्यारवा आरण्य और बारहवां अच्युत देवलोक आते है, जो लगड़ाकार है। व एक-एक अर्ध चन्द्रमा के आकार का है, दोनो मिलकर पूर्ण चन्द्रमा के समान है दोनो देव लोक मे मिल कर ३०० विमान है एव बारह देव लोक के सर्व मिला कर ८४,९६, ७०० विमान है।

नव लोकान्तिक देव

पांचवे देवलोक में आठ कृष्ण राजी नामक पर्वत है जिसके अन्तर (वीच) मे ये नव लोकान्तिक देव रहते है। इनके नाम इस प्रकार है:

सारस्सय, माइच्च, वन्हि, वरुण, गज तोया।
तुसीया अव्वाबाहा, अगीया, चेव, रीठा, य ॥

अर्थ :—१ सारस्वत लोकातिक, २ आदित्य लोकांतिक, ३ वन्हि लोकांतिक, ४ वरुण, ५ गर्दतोय ६ तुषित, ७ अव्यावाध, ८ अगीत्य, ९ रिष्ट लोकातिक।

ये नव लोकान्तिक देव जव तीर्थकर महाराज दीक्षा धारण करने वाले होते है, उस समय कानों मे कुण्डल, मस्तक पर मुकुट, बांह पर बाजुबन्द, कण्ठ मे नवसर हार पहनकर घुंघरुओ के घमकार सहित आकर इस प्रकार बोलते है—"अहो त्रिलोकनाथ! तीर्थ मार्ग प्रवर्तावो, मोक्ष मार्ग चालू करो।" इस प्रकार वोलने का—इन देवों का जीत व्यवहार (परम्परा से रिवाज) चला आता है।

नव ग्रैवेयक

भद्दे, सुभद्दे, सुजाये, सुमाणसे, पीयदंसणे।
सुदंसणे, अमोहे, सुपडीबद्धे, जसोधरे ॥

अर्थ :—भद्र, सुभद्र, सुजात, सुमानस, प्रियदर्शन, सुदर्शन, अमोघ, सुप्रतिवद्ध और यशोधर ये ग्रैवेयक देवो के ९ भेद हैं .।

वारहवे देवलोक से ऊपर असख्यात योजन करोड़ा-करोड योजन प्रमाणे ऊचा जाने पर नव ग्रैवेयक की पहली त्रिक् आती है। ये देवलोक गागर बेवड़े के समान हैं।

इनके नाम—१ भद्र २ सुभद्र ३ सुजात। इस पहली त्रिक् में१११ विमान है। यहां से असख्यात योजन करोडाकरोड़ प्रमाण ऊंचा जाने पर दूसरी त्रिक् आती है। यह भी गागर वेवड़े के (आकार) समान है। इनके नाम—४ सुमानस, ५ प्रियदर्शन व ६ सुदर्शन। इस त्रिक् मे १०७ विमान है। यहा से असख्यात योजन के करोडा करोड प्रमाण ऊंचा जाने पर तीसरी त्रिक् आती है, जो गागर बेवड़े के समान है। इनके नाम ७ अमोघ, ८ सुप्रतिबद्ध, ९ यशोधर। इस त्रिक मे १०० विमान है।

पांच अनुत्तर विमान

नौ ग्रैवेयक के ऊपर असख्यात करोडाकरोड योजन प्रमाण ऊंचा जाने पर पॉच अनुत्तर विमान आते है। इनके नाम—१ विजय, २ वैजयन्त, ३ जयन्त, ४ अपराजित, ५ सर्वार्थसिद्ध।

ये सर्व मिल कर ८४,९७,०२३ विमान हुए। देव की जघन्य आयु दस हजार वर्ष की व उत्कृष्ट ३३ सागरोपम की है। देवका "कुल" २६ लाख करोड़ जानना।

सिद्धशिला का वर्णन

सर्वार्थसिद्ध विमान की ध्वजा—पताका से १२ योजन ऊंचा जाने पर सिद्ध शिला आती है। यह ४५ लाख योजन की लम्बी चोडी व गोल और मध्य में ८ योजन की जाडी और चारो तरफ से घटती-घटती किनारे पर मक्खी के पख से भी अधिक पतली है। शुद्ध सुवर्ण से भी अधिक उज्वल, गोक्षीर, शङ्ख, चन्द्र, वक (बगुला) रत्न चॉदी मोती का हार व क्षीर सागर के जल से भी अत्यन्त उज्वल है।

इस सिद्ध शिला के बारह नाम है—१ इषत्, २ इषत् प्रभार, ३ तनु, ४ तनु-तनु, ५ सिद्ध, ६ सिद्धालय ७ मुक्ति, ८ मुक्ता लय,९ लोकाग्र

१० लोकस्तुभिका ११ लोक प्रतिबोधिका १२ सर्व प्राणीभूत जीव सत्व सौख्यवाहिका। इसकी परिधि (घेराव) १,४२,३० २४९ योजन, एक कोस १७६६ धनुष पौने छः अंगुल जाजेरी है। इस शिला के एक योजन ऊपर जानेपर—एक योजन के चार हजार कोस मे से ३९९९ कोस नीचे छोड़कर शेष एक भाग में सिद्ध भगवान विराजमान है। यदि ५०० धनुष की अवगाहना वाले सिद्ध हुए हो तो ३३३ धनुष और ३२ अंगुल की (क्षेत्र) अवगाहना होती है। सात हाथ के सिद्ध हुए हो तो चार हाथ और सोलह अंगुल की (क्षेत्र) अवगाहना होती है। यदि दो हाथ के सिद्ध हुए हों तो एक हाथ और आठ अंगुल की (क्षेत्र) अवगाहना होती है। ये सिद्ध भगवान कैसे है? अवर्णी, अगन्धी, अरसी, अस्पर्शी, जन्म जरा-मरण-रहित और आत्मिक गुण सहित है। ऐसे सिद्ध भगवान को मेरा समय-समय पर वंदना—नमस्कार होवे।

॥ छः काय के बोल समाप्त ॥

छः काय का स्वरूप

	नाम	कुल करोडा-करोड	आयुष्य[1]	वर्ण	सस्थान	मुहूर्त मे उ० जन्म मरण[2]
१	पृथ्वी काय	१२ लाख	२२००० वर्ष	पीला	मसुर की दाल	१२८२४
२	अप काय	७ लाख	७००० ,,	सफेद	जल का परपोटा	१२८२४
३	तेजस् काय	३ लाख	३ अहोरात्रि	लाल	सुइयो की भारी	१२८२४
४	वायु काय	७ लाख	३००० वर्ष	नीला	ध्वजा पताका	१२८२४
५	वनस्पति काय	२८ लाख	१०००० वर्ष	विविध	विविध	३२००० प्र०व० ६५५३६ सा०व०
६	त्रस काय					
	बेइन्द्रिय	७ लाख	१२ वर्ष	,,	,,	८०
	त्रीन्द्रिय	८ लाख	४९ दिवस।	,,	,,	६०

---

१ जघन्य अन्तर् मुहूर्त का। २ जघन्य एक भव

नाम	कुल करोड़ा-करोड़	[1]आयुष्य	वर्ण	संस्थान	[2]मुहूर्त में उ० जन्म मरण
चौरीन्द्रिय	६ लाख	६ मास	,,	,,	४०
नरक	२५ लाख	ज० १०००० वर्ष उ० ३३ सागर	,,	,,	१
तिर्यंच	५३।। लाख	३ पल्योपम	,,	,,	१
मनुष्य	१२ लाख	३ पल्योपम	,,	,,	१
देवता	२६ लाख	ज० १०००० वर्ष उ० ३३ सागरोपम	,,	,,	१

१ जघन्य अन्तर् मुहूर्त का। २ जघन्य एक भव

२५ बोल

पहले बोले गति[1] चार :—

१ नरक गति, २ तिर्यंच गति, ३ मनुष्य गति, ४ देव गति ।

दूसरे बोले जाति[2] पाँच :—

१ एकेन्द्रिय, २ बेइन्द्रिय, ३ त्रीन्द्रिय, ४ चौरिन्द्रिय, ५ पचेन्द्रिय ।

तीसरे बोले काय[3] छ —

१ पृथ्वीकाय, २ अपकाय, ३ तेजस्काय, ४ वायुकाय, ५ वनस्पति-काय, ६ त्रसकाय ।

चौथे बोले इन्द्रिय[4] पाँच —

१ श्रोत्रेन्द्रिय, २ चक्षुइन्द्रिय, ३ घ्राणेन्द्रिय, ४ रसनेन्द्रिय, ५ स्पर्शेन्द्रिय ।

---

१ जहाँ पर जीवो का आवागमन (जन्म-मरण) होवे उसे गति कहते है ।

२ एक सा होना, एकाकार होना जाति है ।

३ समूह तथा बहु प्रदेशी वस्तु को काय कहते है ।

४ शब्द, रूप, रस, गन्ध, स्पर्श आदि वस्तुओ का जिसके द्वारा ग्रहण होता है, उसे इन्द्रिय कहते है । ये पाँच है—१ कान, २ आँख, ३ नाक, ४ जीभ, ५ शरीर (गले से पैर तक धड) ।

पाँचवें बोले पर्याप्ति[५] छः—

१ आहार पर्याप्ति, २ शरीर पर्याप्ति, ३ इन्द्रिय पर्याप्ति, ४ श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति, ५ भाषा पर्याप्ति, ६ मनः पर्याप्ति।

छट्ठे बोले प्राण[६] दश :—

१ श्रोत्रेन्द्रिय बलप्राण, २ चक्षु इन्द्रिय बलप्राण, ३ घ्राणेन्द्रिय बलप्राण, ४ रसनेन्द्रिय बलप्राण, ५ स्पर्शेन्द्रिय बलप्राण, ६ मनः बलप्राण, ७ वचन बलप्राण, ८ काय बलप्राण, ९ श्वासोच्छ्वास बलप्राण, १० आयुष्य बल प्राण।

सातवें बोले शरीर[७] पाँच :—

१ औदारिक, २ वैक्रिय, ३ आहारक, ४ तेजस्, ५ कार्मण।

आठवे बोले[८] योग पन्द्रह :—

१ सत्य मन योग, २ असत्य मन योग, ३ मिश्र मन योग, ४ व्यवहार मन योग, ५ सत्य वचन योग, ६ असत्य वचन योग, ७ मिश्र वचन योग, ८ व्यवहार वचन योग, ९ औदारिक शरीर काय योग, १० औदारक मिश्र शरीर काय योग, ११ वैक्रिय शरीर काय योग,

---

५ आहारादि रूप पुद्गल को परिणमन करने की शक्ति (यन्त्र) को पर्याप्ति कहते है।

६ पर्याप्ति रूप यन्त्र को मदद करने वाले वायु (Steem) को प्राण कहते है।

७ जो नाश को प्राप्त होता हो या जिसके नष्ट होने से—अदृश्य होने से जीव का नाश माना जाता है उसे शरीर कहते हैं।

८ मन, वचन काया की प्रवृत्ति को, चपलता को (प्रयोग को) जोग (योग) कहते हैं।

१२ वैक्रिय मिश्र शरीर काय योग, १३ आहारक शरीर काय योग, १४ आहारक मिश्र शरीर काय योग, १५ कार्मण काय योग।

चार मन के, चार वचन के व सात काय के ये पन्द्रह योग हुए।

नववे बोले उपयोग[९] बारह :—

पाँच ज्ञान—१ मतिज्ञान, २ श्रुतज्ञान, ३ अवधिज्ञान, ४ मनः पर्यवज्ञान, ५ केवलज्ञान।

तीन अज्ञान—१ मति अज्ञान, २ श्रुत अज्ञान, ३ विभङ्ग अज्ञान।

चार दर्शन—१ चक्षु दर्शन, २ अचक्षु दर्शन, ३ अवधि दर्शन, ४ केवल दर्शन एवं बारह उपयोग।

दसवे बोले [१०]कर्म आठ :—

१ ज्ञानावरणीय, २ दर्शनावरणीय ३ वेदनीय, ४ मोहनीय, ५ आयुष्य ६ नाम, ७ गोत्र, ८ अन्तराय,।

ग्यारहवे बोले गुणस्थान[११] चौदह :—

१ मिथ्यात्व गुणस्थान, २ सास्वादान गुणस्थान, ३ मिश्र गुणस्थान ४ अव्रतीसमदृष्टि गुणस्थान, ५ देशव्रती श्रावक गुणस्थान, ६ प्रमत्त-संयति गुणस्थान, ७ अप्रमत्त सयति गुणस्थान ८ (नियट्टी) निर्वतित-बादर गुणस्थान, ९ (अनियट्टी) अनिर्वतित बादर गुणस्थान, १०

---

९ जानने पहचानने की शक्ति को उपयोग कहते है। यही जीव का लक्षण है।

१० जो जीव को पर भव मे घुमावे, विभाव दशा मे बनावे व अन्य रूपसे दिखावे सो कर्म।

११ सकर्मी जीवो की उन्नति की भिन्न २ अवस्था को गुणस्थान कहते हैं। अवस्था अनन्त है परन्तु गुणस्थान १४ ही है। कक्षा (Class) वत्।

सूक्ष्मसम्पराय गुणस्थान, ११ उपशान्त मोहनीय गुणस्थान, १२ क्षीण मोहनीय गुणस्थान, १३ सयोगी केवली गुणस्थान, १४ अयोगी केवली गुणस्थान ।

बारहवे बोले पॉच इन्द्रिय के २३ विषय[12] :–

१ श्रोत्रेन्द्रिय के तीन विषय—१ जीव शब्द, २ अजीव शब्द ३ मिश्र शब्द ।

२ चक्षु इन्द्रिय के पॉच विषय—१ कृष्ण वर्ण, २ नील वर्ण, ३ रक्त वर्ण ४ पीत(पीला)वर्ण, ५ श्वेत (सफेद) वर्ण ।

३ घ्राणेन्द्रिय के दो विषय—१ सुरभिगन्ध, २ दुरभिगन्ध ।

४ रसनेन्द्रिय के पॉच विषय—१ तीक्ष्ण(तीखा) २ कटुक (कडवा) ३ काषाय (कषायला), ४ क्षार (खट्टा), ५ मधुर (मिष्ट-मीठा) ।

५ स्पर्शनेन्द्रिय के आठ विषय—१ कर्कश, २ मृदु, ३ गुरु, ४ लघु, ५ शीत, ६ ऊष्ण, ७ स्निग्ध (चिकना), ८ रूक्ष (लुखा) ।
इस प्रकार उपर्युक्त २३ विषय है ।

तेरहवे बोले मिथ्यात्व[13] दश:—

१ जीव को अजीव समझे तो मिथ्यात्व, २ अजीव को जीव समझे तो मिथ्यात्व, ३ धर्म को अधर्म समझे तो मिथ्यात्व, ४ अधर्म को धर्म समझे तो मिथ्यात्व, ५ साधु को असाधु समझे तो मिथ्यात्व, ६ असाधु को साधु समझे तो मिथ्यात्व, ७ सुमार्ग (शुद्ध मार्ग) को कुमार्ग समझ

---

१२ जिस इन्द्रिय से जो २ वस्तु ग्रहण होती है, वही उस इन्द्रिय का विषय है । जैसे कान का विषय शब्द ।

१३ जीवादि नव तत्वो की सशय युक्त वा विपरीत मान्यता होना तथा अनध्यवसाव-निर्णय बुद्धि का न होना मिथ्यात्व है ।

तो मिथ्यात्व, ८ कुमार्ग को सुमार्ग समझे तो मिथ्यात्व ६ सर्व दु ख से मुक्त को अमुक्त समझे तो मिथ्यात्व और १० सर्व दु.ख से अमुक्त को मुक्त समझे तो मिथ्यात्व।

चौदहवे बोले नव तत्त्व के ११५ बोल :—

नव तत्त्व के नाम . १ जीव तत्व २ अजीव तत्त्व ३ पुण्यतत्त्व ४ पाप तत्व ५ आश्रव तत्व ६ सवर तत्व ७ निर्जरा तत्व ८ बन्ध त्व ६ मोक्ष तत्त्व।

तत्त्व के लक्षण तथा भेद—प्रथम नवतत्व के अन्दर विस्तार पूर्वक लिखा गया है अत यहां केवल संक्षेप में ही लिखा जाता है।

१ जीव तत्व के १४, २ अजीव तत्व के१४, ३ पुन्य के ६, ४ पाप के १८, ५ आश्रव के २०, ६ सवर के २० , ७ निर्जरा के १२ ८ बन्ध के ४, और ६ मोक्ष के चार इस प्रकार नव तत्व के सर्व ११५ बोल हुए।

पन्द्रहवे बोले आत्मा[1] आठ :—

१ द्रव्य आत्मा २ कषाय आत्मा ३ योग आत्मा ४ उपयोग आत्मा ५ ज्ञान आत्मा ६ दर्शन आत्मा ७ चारित्र आत्मा ८ वीर्य आत्मा।

सोलहवे बोले दण्डक[2] २४ :—

७ नरक के नारको का एक दण्डक १, दश भवनपति देव का दश दण्डक, ११ पृथ्वीकाय का एक, १२, अपकाय का एक, १३, तेजस्

---

१ अपनापन ही आत्मा है। जीव की शक्ति किसी भी रूप मे होना ही आत्मा है।

२ जिस स्थान पर तथा जिस रूप मे रह कर आत्मा कर्मो से दण्डाती है,वह दन्डक है। भेद अन्तर है, परन्तु समावेश चोवीस मे है।

काय का एक, १४, वायु काय का एक, १५, वनस्पति काय का एक १६, बेइन्द्रिय का एक, १७, त्रीन्द्रिय का एक, १८, चौरिन्द्रिय का एक, १९, तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय का एक २०, मनुष्य का एक, २१, वाणव्यन्तर देव का एक, २२, ज्योतिषी का एक, २३, वैमानिक का एक, २४।

सत्तरवे बोले लेश्या[1] छ :—

१ कृष्ण लेश्या २ नील लेश्या ३ कापोत लेश्या ४ तेजोलेश्या ५ पद्म लेश्या ६ शुक्ल लेश्या।

अट्ठारहवें बोले दृष्टि[2] तीन :—

१ सम्यक् दृष्टि २ मिथ्यात्व दृष्टि ३ मिश्र दृष्टि।

उन्नीसवें बोले ध्यान[3] चार :—

१ आर्त ध्यान २ रौद्र ध्यान ३ धर्म ध्यान ४ शुक्ल ध्यान।

बीसवें बोले षट् (छ) द्रव्य[4] के ३० भेद :—

१ धर्मास्तिकाय के पांच भेद—१ द्रव्य से एक द्रव्य २ क्षेत्र से लोक प्रमाण ३ काल से आदि अन्त रहित ४ भाव से अवर्णी, अगधी,

---

१ कषाय तथा योग के साथ जीव के शुभाशुभ भाव को लेश्या कहते हैं। योग तथा कषाय रूप जल में लहरो का होना ही लेश्या है।

२ आत्मा अनात्मा को किसी भी तरह देखना मानना और श्रद्धा करना ही दृष्टि है।

३ चित्त-मन की एकाग्रता को ध्यान कहते है। ध्येय वस्तु के प्रति ध्याता की स्थिरता को ध्यान कहते हैं।

४ आकारादि के बदलने पर भी पदार्थ वस्तु का कायम रहना ही द्रव्य है।

अरसी, अस्पर्शी (अरूपी) अमूर्तिमान ५ गुण से चलन गुण। जैसे पानी मे मछली का दृष्टान्त।

२ अधर्मास्तिकाय के पांच भेद —१ द्रव्य से एक द्रव्य २ क्षेत्र से लोक प्रमाण ३ काल से आदि अत रहित ४ भाव से अमूर्ति मान ५ गुण से स्थिर गुण। अधर्मास्तिकाय को थके हुए पक्षी को वृक्ष का आश्रय (विश्राम) का दृष्टान्त।

३ आकाशास्तिकाय के पांच भेद —१ द्रव्य से एक द्रव्य २ क्षेत्र से लोकालोक प्रमाण ३ काल से आदि अन्त रहित ४ भाव से अमूर्तिमान ५ गुण से आकाश का विकास गुण। आकाशास्तिकाय को दुग्ध मे शर्करा का दृष्टान्त।

४ काल द्रव्य के पॉच भेद —१ द्रव्य से अनन्त द्रव्य २ क्षेत्र से समय क्षेत्र प्रमाण ३ काल से आदि अन्त रहित ४ भाव से अमूर्तिमान ५ गुण से नूतन (नया) जीर्ण (पुराणा) वर्तना लक्षण। काल को नया पुराना वस्त्र का दृष्टान्त।

५ पुद्गलास्ति काय के पाँच भेद :—१ द्रव्य से अनत द्रव्य २ क्षेत्र से लोक प्रमाण ३ काल से आदि अत रहित ४ भाव से वर्ण, गन्ध, रस स्पर्श सहित ५ गुण से मिलना गलना, विनाश होना, जीर्ण होना, व बिखरना। पुद्गलास्ति काय को बादलो का दृष्टान्त।

६ जीवास्तिकाय द्रव्य के पाँच भेद :—१ द्रव्य से अनत २ क्षेत्र से लोक प्रमाण ३ काल से आदि अत रहित ४ भाव से अमूर्तिमान (अरूपी) ५ गुण से चैतन्य उपयोग लक्षण। जीवास्तिकाय द्रव्य को चन्द्रमा का दृष्टान्त।

इकवीसवे बोले राशि[1] दो :—

१ जीव राशि २ अजीव राशि।

---

१ समूह को राशि कहते है। जगत् मे जीव तथा पुद्‌ल द्रव्य अनन्त है। इनके समूहो को राशि रहते है।

बावीसवे बोले श्रावक के बारहव्रत[1] :—

१ स्थूल (मोटी, बडी) जीवों की हत्या का त्याग करे २ स्थूल झूठ का त्याग करे ३ स्थूल चोरी करने का त्याग करे ४ पुरुष पर स्त्री-सेवन का व स्त्री पर पुरुष सेवन का त्याग करे ५ परिग्रह की मर्यादा करे ६ दिशाओ (में गमन करने) की मर्यादा करे ७ चौदह नियम व २६ बोल की मर्यादा करे ८ अनर्थदंड का त्याग करे ९ प्रतिदिन सामायिक आदि करे १० दिशावकाशिक[2] (दिशाओं व भोगोपभोगो का परिमाण) करे ११ पौषध व्रत करे १२ निर्ग्रंथ साधु व मुनि को प्रासुक व ऐषणीय आहारादि चौदह बोल प्रतिलाभे (अतिथि सविभाग व्रत करे)।

तेवीसवे बोले साधुजी (मुनि) के 'पच महाव्रत'[3] :

१ सर्व हिसा का त्याग करे २ सर्व मृषावाद का त्याग करे ३ सर्व अदत्तादान (चोरी) का त्याग करे ४ सर्व मैथुन का त्याग करे ५ सर्व परिग्रह का त्याग करे (मुनि के ये त्याग तीन करण व तीन योग से होते है)

---

१ पर वस्तु मे आत्मा लुभा रही है। अत. आत्मा को पर वस्तु से अलग कर स्वत्व मे कायम रहना व्रत है।

२ पूर्वोक्त छट्ठे व्रत मे दिशा की और सातवे मे उपभोग परिभोग का जो परिणाम किया है वह जीवन पर्यन्त है परन्तु यह दिशावकाशिक प्रतिदिन का किया जाता है।

३ बडे व्रतो को—पूर्ण को महाव्रत कहते है। त्यागी मुनि ही इनका पालन कर सकते है, गृहस्थ नही।

चौवीसवे बोले श्रावक के बाहर व्रत के ४६ भांगे :–

आक एक ग्यारह ११ का :—एक करण एक योग से प्रत्याख्यान (त्याग) करे। इसके भागे ६-

अमुक दोष युक्त कर्म जिसका मैने त्याग लिया है उसे १ करूं नही मन से २ करू नही वचन से ३ करू नही काया से, ४ कराऊं नही मन से ५ कराऊ नही वचन से ६ कराऊं नही काया से, ८ करते हुए को अनुमोदू (सराहू) नही मन से ८ करते हुवे को अनुमोदू नही वचन से ९ करते हुए को अनुमोदूं नही काया से। एव नव भागे।

आक एक बारह (१२) का :—एक करण और दो योग से त्याग करे। इसके नव भागे—

१ करूं नही मन से वचन से २ करूं नही मन से काया से ३ करूं नही वचन से काया से ४ कराऊ नही मन से वचन से ५ कराऊ नही मन से काया से ६ कराऊं नही वचन से काया से। ७ करते हुवे को अनुमोदू नही मन से वचन से ८ करते हुवे को अनुमोदू नही मन से काया से ९ करते हुवे को अनुमोदूं नही वचन से काया से।

आक एक तेरह १३ का :—एक करण और तीन योग से त्याग करे। भागा तीन—

१ करू नही मनसे, वचन से, काया से, २ कराऊ नही मनसे वचन से, काया से, ३ करते हुवे को अनुमोदूं नही मन से, वचन से, काया से, एवं कुल (९+९+३) २१ भांगा।

आक एक इक्कीस २१ का :—दो करण और एक योग से त्याग करे। भागा नव—

१ करूं नही कराऊ नही मन से २ करू नही कराऊ नही वचन से ३ करूं नही कराऊ नही काया से ४ करूं नही अनुमोदूं नही मन से ५ करूं नही अनमोदू नही वचन से ६ करू नही अनुमोदूं

नही काया से। ७ कराऊ नही अनुमोदू नही मन से ८ कराऊं नही अनुमोदूं नही वचन से ९ कराऊं नही अनुमोदू नही काया से।

आक एक बावीस २२ का .—दो करण और दो योग से त्याग करे। भागा नव—

१ करूं नही, कराऊं नही, मन से, वचन से। २ करूं नहो, कराऊं नही, मन से, काया से। ३ करूं नही, कराऊ नही, वचन से, काया से। ४ करू नही, अनुमोदूं नहो, मन से वचन से। ५ करूं नही, अनुमोदूं नही, मन से, काया से। ६ करूं नही, अनुमोदू नही, वचन से, काया से। ७ कराऊं नही, अनुमोदूं नही, मन से वचन से। ८ कराऊं नही अनुमोदू नही, मन से काया से। ९ कराऊं नही, अनुमोदूं नही वचन से, काया से।

आक एक तेईस २३ का :—दो करण और तीन योग से त्याग करे। भांगा तीन—

१ करूं नही, कराऊं नही, मन से, वचन से, काया से। २ करूं नही. अनुमोदूं नही, मन से, वचन से, काया से। ३ कराऊं नही, अनुमोदू नही, मन से वचन से, काया से। एवं ४२ भांगा।

आंक एक इकत्तीस ३१ का :—तीन करण व एक योग से त्याग ग्रहण करे। भांगा तीन—

१ करू नही, कराऊं नही, अनुमोदूं नही, मन से। २ करूं नही, कराऊं नही, अनुमोदू नही, मन से, काया से। ३ करूं नही, कराऊ नही, अनुमोदूं नही, वचन से, काया से।

आंक एक बत्तीस ३२ का:—तीन करण व दो योग से त्याग ग्रहण करे। भांगा तीन—

करूं नही कराऊं नही, अनुमोदूं नही, मन से वचन से। करूं नही, कराऊं नही, अनुमोदूं नही मन से काया से। करूं नही, कराऊं नही, अनुमोदूं नही, वचन से, काया से।

आंक एक तेतीस ३३ का :—तीन करण व तीन योग से त्याग लेवे। भांगा एक—

१ करू नही, कराऊ नही, अनुमोदू नही, मन से, वचन से, काया से। एव ४९ भांगा।

२५ पच्चीसवे बोले 'चारित्र'[1] पाच :

१ सामायिक चारित्र २ छेदोपस्थानिक चारित्र ३ परिहार विशुद्ध चारित्र ४ सूक्ष्म सपराय चारित्र ५ यथाख्यात चारित्र।

---
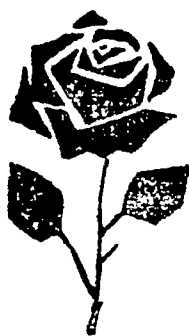
१ आत्मा का पर भाव से दूर होना और स्वभाव मे रमण करना ही चारित्र है।

सिद्ध द्वार

१ पहली नरक के निकले हुवे एक समय में जघन्य एक सिद्ध होवे, उत्कृष्ट दश सिद्ध होते है।

२ दूसरी नरक के निकले हुवे एक समय मे जघन्य एक सिद्ध, उत्कृष्ट दश सिद्ध होते है।

३ तीसरी नरक के निकले हुवे एक समय में जघन्य एक सिद्ध, उत्कृष्ट दश सिद्ध होते है।

४ चौथी नरक के निकले हुवे एक समय में जवन्य एक, उत्कृष्ट चार सिद्ध होते है।

५ भवनपति के निकले हुवे एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट दश सिद्ध होते है।

६ भवनपति की देवियों में से निकले हुवे एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट पांच सिद्ध होते है।

७ पृथ्वीकाय के निकले हुए एक समय में जघन्य एक, उत्कृप्ट चार सिद्ध होते है।

८ अपकाय के निकले हुए एक समय मे जघन्य एक उत्कृष्ट चार सिद्ध होते है।

९ वनस्पति काय के निकले हुए एक समय में जघन्य एक उत्कृष्ट छः सिद्ध होते है।

१० तिर्यञ्च गर्भज के निकले हुए एक समय मे जघन्य एक, उत्कृष्ट दश सिद्ध होते है।

११ तिर्यञ्चणी मे से निकले हुए एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट दश सिद्ध होते है।

१२ मनुष्य गर्भज में से निकले हुए एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट दश सिद्ध होते है।

१३ मानवियो में से निकले हुए एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट बीस सिद्ध होते है।

१४ बाण-व्यंतर में से निकले हुए एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट दश सिद्ध होते है।

१५ बाण व्यन्तर की देवियो में से निकले हुए एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट पांच सिद्ध होते है।

१६ ज्योतिषी के निकले हुए एक समय मे जघन्य एक सिद्ध उष्कृष्ट दश सिद्ध होते है।

१७ ज्योतिषी देवियो मे से निकले हुए एक समय मे जघन्य एक, उत्कृष्ट वीस सिद्ध होते है।

१८ वैमानिक से निकले हुए एक समय मे जघन्य एक सिद्ध, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते है।

१९ वैमानिक की देवियो मे से निकले हुए एक समय मे जघन्य एक, उत्कृष्ट वीस सिद्ध होते है।

२० स्वलिङ्गी एक समय मे जघन्य एक, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते है।

२१ अन्य लिङ्गी एक समय मे जघन्य एक, उत्कृष्ट दश सिद्ध होते है।

२२ गृहस्थ लिङ्गी एक समय मे जघन्य एक, उत्कृष्ट चार सिद्ध होते है।

२३ स्त्री लिङ्गी एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट वीस सिद्ध होते है।

२४ पुरुष लिङ्गी एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते है।

२५ नपुंसक लिङ्गी एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट दश सिद्ध होते है।

२६ ऊर्ध्व लोक में एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट चार सिद्ध होते है।

२७ अधोलोक मे एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट वीस सिद्ध होते है।

२८ तिर्यक् (तीर्छा) लोक मे एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते है।

२९ जघन्य अवगाहना वाले एक समय मे जघन्य एक, उत्कृष्ट चार सिद्ध होते है।

३० मध्यम अवगाहना वाले एक समय में जघन्य एक सिद्ध, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते है।

३१ उत्कृष्ट अवगाहना वाले एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट दो सिद्ध होते है।

३२ समुद्र के अन्दर एक समय मे जघन्य एक, उत्कृष्ट दो सिद्ध होते है।

३३ नदी प्रमुख जल के अन्दर एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट तीन सिद्ध होते है।

३४ तीर्थसिद्ध होवे तो एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते है।

३५ अतीर्थ सिद्ध होवे तो एक समय मे जघन्य एक उत्कृष्ट दस सिद्ध होते है ।

३६ तीर्थंकर सिद्ध होवे तो, एक समय मे जघन्य एक, उत्कृष्ट बीस सिद्ध होते है ।

३७ अतीर्थंकर सिद्ध होवे तो एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते है ।

३८ स्वयबोध (बुद्ध) सिद्ध होवे तो एक समय मे जघन्य एक, उत्कृष्ट चार सिद्ध होते है ।

३९ प्रतिबोध सिद्ध होवे तो, एक समय मे जघन्य एक, उत्कृष्ट दश सिद्ध होते है ।

४० बुधबोधी सिद्ध होवे तो, एक समय मे जघन्य १, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते है ।

४१ एक सिद्ध होवे तो, एक समय मे जघन्य एक, उ० भी एक सिद्ध होते है ।

४२ अनेक सिद्ध होवे तो, एक समय मे जघन्य एक, उ० १०८ सिद्ध होते है ।

४३ विजय विजय प्रति एक समय मे ज० एक, उत्कृष्ट बीस सिद्ध होते है ।

४४ भद्र शाल वन मे एक समय मे ज० एक, उ० चार सि० होते है ।

४५ नदन वन मे एक समय मे ज० एक, उ० चार सि० होते है ।

४६ सोमनस वन में एक समय मे ज० एक, उ० चार सि० होते है ।

४७ पंडग वन में एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट दो सि० होते है।

४८ अकर्म भूमि मे एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट दश सि० होते है।

४९ कर्मभूमि में एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते है।

५० पहले आरे में एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट दश सि० होते है।

५१ दूसरे आरे में एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट दश सि० होते है।

५२ तीसरे आरे में एक समय मे जघन्य एक उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते है।

५३ चौथे आरे में एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट १०८ सि० होते है।

५४ पांचवे आरे में एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट दस सिद्ध होते है।

५५ छठ्ठे आरे में एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट दश सिद्ध होते है।

५६ अवसर्पिणी में एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते हैं।

५७ उत्सर्पिणी में एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते हैं।

५८ नोत्सर्पिणी नो अवसर्पिणी मे एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते है।

इन ५८ बोलों में अन्तर सहित एक समय में जघन्य—उत्कृष्ट

जो सिद्ध होते है सो कहे है। अब अन्तर रहित आठ समय तक यदि सिद्ध होवे तो कितने होते है ? सो कहते है।

१	पहले	समय	में	जघन्य	एक	उत्कृष्ट	१०८	सिद्ध	होते है।
२	दूसरे	,,	,,	,,	,,	,,	१०२	,,	,,
३	तीसरे	,,	,,	,,	,,	,,	९६	,,	,,
४	चौथे	,,	,,	,,	,,	,,	८४	,,	,,
५	पांचवे	,,	,,	,,	,,	,,	७२	,,	,,
६	छठ्ठे	,,	,,	,,	,,	,,	६०	,,	,,
७	सातवे	,,	,,	,,	,,	,,	४८	,,	,,
८	आठवे	,,	,,	,,	,,	,,	३२	,,	,,

आठ समय के बाद अन्तर पडे विना सिद्ध नही होते।
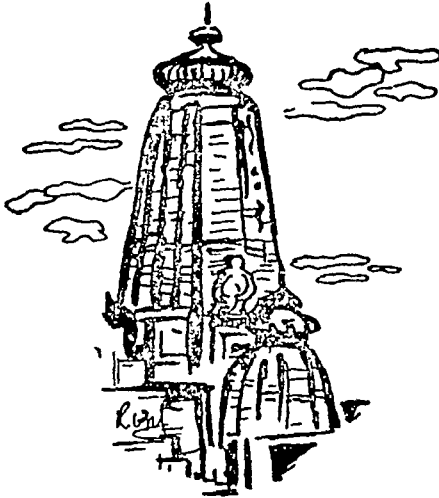
चौवीस दण्डक

चौवीस दण्डक का वर्णन श्री जीवाभिगमसूत्र में किया हुआ है।

गाथा

सरीरो गाहण संघयण, संठाण कसाय तहहुंति सन्नाय।
लेसिदिअ समुग्घाए, सन्नी वेदेअ पज्जत्ति ॥१॥
दिठि दंसण नाणानाण, जोगोवउग तह आहारे।
उववाय ठिइ समुहाये चवण गई आगई चेव ॥२॥

चौवीस द्वारों के नाम :—

१ शरीर, २ अवगाहना,[1] ३ संघयण,[2] ४ संस्थान ५ कषाय, ६ संज्ञा, ७ लेश्या, ८ इन्द्रिय, ९ समुद्घात, १० संज्ञीअसज्ञी, ११ वेद, १२ पर्याप्ति, १३ दृष्टि, १४ दर्शन, १५ ज्ञान, १६ योग, १७ उपयोग, १८ आहार, १९ उत्पत्ति, २० स्थिति, २१ समोहिया (मरण) २२ च्यवन, २३ गति और २४ आगति।

१ शरीर द्वार :—शरीर पांच

१ औदारिक शरीर, २ वैक्रिय शरीर, ३ आहारिक शरीर, ४ तेजस् शरीर ५ कार्माण शरीर।

---

१ लम्बाई २ शरीर की बनावट, शरीर की आकृति।

१ औदारिक शरीर :—

जो सड़ जाय, पड़ जाय, गल जाय, नष्ट हो जाय, बिगड़ जाय व मरने के बाद कलेवर पड़ा रहे, उसे औदारिक शरीर कहते है।

२ वैक्रिय शरीर :—

(औदारिक का उल्टा) जो सड़े नही, पड़े नही, गले नही, नष्ट होवे नही व मरने के बाद बिखर जावे उसे वैक्रिय शरीर कहते है।

३ आहारक शरीर :—

चौदह पूर्वधारी मुनियों को जब शङ्का उत्पन्न होती है तब एक हाथ की काया का पुतला बनाकर महाविदेह क्षेत्र में श्री मन्दिर स्वामी से प्रश्न पूछने को भेजें। प्रश्न पूछकर पीछे आने के बाद यदि आलोचना करे तो आराधक व आलोचना नही करे तो विराधक कहलाते है, इसे आहारक शरीर कहते हैं।

४ तेजस् शरीर :—

जो आहार करके उसे पचावे, उसे तेजस् शरीर कहते हैं।

५ कार्माण शरीर :—

जीव के प्रदेश व कर्म के पुद्गल जो मिले हुए हैं, उन्हे कार्माण शरीर कहते है।

२ अवगाहना द्वार

जीवों मे अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवे भाग उत्कृष्ट हजार योजन झाझेरी (अधिक) औदारिक शरीर की अवगाहना जघन्य अगुल के असंख्यातवें भाग। उत्कृष्ट हजार योजन झाझेरी (वनस्पति आश्रित)।

—वैक्रिय शरीर की—भव धारणिक वैक्रिय की जघन्य अंगुल के असंख्यातवे भाग उत्कृष्ट ५०० धनुष्य की।

—उत्तर वैक्रिय की—जघन्य अंगुल के असंख्यातवे भाग उत्कृष्ट लक्ष योजन की।

—आहारक शरीर की—जघन्य मुंड हाथ की उत्कृष्ट एक हाथ की।

—तेजस् शरीर व कार्माण शरीर की अवगाहना जघन्य अगुल के असंख्यातवे भाग उत्कृष्ट चौदह राजू लोक प्रमाणे तथा अपने अपने शरीर के अनुसार।

३ संघयण द्वार : संघयण छः

१ वज्रऋषभनाराच, २ ऋषभ नाराच, ३ नाराच ४ अर्धनाराच, ५ कीलिका ६ सेवार्त।

१ वज्रऋषभ नाराच :—

वज्र अर्थात् किल्ली, ऋपभ याने लपेटने का पाटा अर्थात् ऊपर का वेष्टन, नाराच याने दोनो ओर का मर्कटबन्ध अर्थात् सन्धि और सघयन याने हाडकों का सञ्चय अर्थात् जिस शरीर मे हाडके दो पुड़ से, मर्कट बन्ध से बधे हुए हो, पाटे के समान हाडके वीटे हुए हो व तीन हाड़कों के अन्दर वज्र की किल्ली लगी हुई हो वह वज्र ऋषभ नाराच संघयन (अर्थात् जिस शरीर की हड्डियाँ, हड्डी संधियाँ व ऊपर का वेष्टन वज्र का होवे व किल्ली भी वज्र की होवे)।

२ ऋषभ नाराच :—

ऊपर लिखे अनुसार। अन्तर केवल इतना है कि इसमे वज्र अर्थात् किल्ली नही होती है।

३ नाराच :—

जिसमे केवल दोनों तरफ मर्कट बन्ध होते है।

४ अर्ध नाराच :—जिसके एक तरफ मर्कट बन्ध व दूसरी (पड़दे) तरफ किल्ली होती है।

५ कीलिका —जिसके दो हड्डियो की सन्धि पर किल्ली लगी हुई होवे।

६ सेवार्त :—जिसकी एक हड्डी दूसरी हड्डी पर चढी हुई हो (अथवा जिसके हाड अलग-अलग हो, परन्तु चमडे से बधे हुए हो)।

४ संस्थान द्वार : सस्थान छः

१ समचतु.रस्र संस्थान, २ निग्रोध परिमण्डलसंस्थान, ३ सादिक सस्थान, ४ वामन सस्थान, ५ कुब्ज सस्थान, ६ हुण्डक सस्थान।

१ पॉव से लगाकर मस्तक तक सारा शरीर सुन्दराकार अथवा शोभायमान होवे। वह समुचतु रस्र सस्थान।

२ जिस शरीर का नाभि से ऊपर तक का हिस्सा सुन्दराकार हो, परन्तु नीचे का भाग खराब हो, (वट वृक्ष सदृश) वह न्यग्रोध परिमण्डल सस्थान।

३ जो केवल पॉव से लगा कर नाभि (या कटि) तक सुन्दर होवे, वह सादिक सस्थान।

४ जो ठिगना (५२ अगुल का) हो, वह वामन संस्थान।

५ जिस शरीर के पॉव, हाथ, मस्तक ग्रीवा न्यूनाधिक हो व कुबड निकली हो और शेष अवयव सुन्दर होवे सो कुब्ज सस्थान।

६ हुण्डक सस्थान— रुँढ,मूँढ, मृगा-पुत्र, रोहवा के शरीर के समान अर्थात् सारा शरीर बेडौल होवे वह हुण्डक सस्थान।

५ कषाय द्वार · कषाय चार

१ क्रोध, २ मान, ३ माया, ४ लोभ।

६ संज्ञा द्वार : संज्ञा चार

१ आहार संज्ञा, २ भय-संज्ञा, ३ मैथुन संज्ञा, ४ परिग्रह संज्ञा ।

७ लेश्या द्वार : लेश्या छः

१ कृष्ण लेश्या, २ नील लेश्या, ३ कापोत लेश्या, ४ तेजो लेश्या, ५ पद्म लेश्या, ६ शुक्ल लेश्या ।

८ इन्द्रिय द्वार : इन्द्रिय पाच

१ श्रोतेन्द्रिय, २ चक्षु इन्द्रिय, ३ घ्राणेन्द्रि, ४ रसनेन्द्रिय, ५ स्पर्शेन्द्रिय ।

९ समुद्घात द्वार--समुद्घात सात

१ वेदनीय समुद्घात, २ कषाय समुद्घात, ३ मारणान्तिक समुद्घात, ४ वैक्रिय समुद्घात, ५ तेजस् समुद्घात, ६ आहारक समुद्घात ७ केवली समुद्घात ।

१० संज्ञी-असंज्ञी द्वार

जिनमें विचार करने की (मन) शक्ति होवे सो संज्ञी और जिनमें (मन) विचार करने की शक्ति नही होवे सो असज्ञी ।

११ वेद द्वार--वेद तीन

१ स्त्री वेद, २ पुरुप वेद, ३ नपुंसक वेद ।

१२ पर्याप्तिद्वार—पर्याप्ति छः

१ आहार पर्याप्ति, २ शरीर पर्याप्ति, ३ इन्द्रिय पर्याप्ति, ४ श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति, ५ मनः पर्याप्ति, ६ भापा पर्याप्ति ।

१३ दृष्टि द्वार—दृष्टि तीन

१ सम्यग् दृष्टि २ मिथ्यात्व दृष्टि ३ सम्यग् मिथ्यात्व (मिश्र) दृष्टि ।

१४ दर्शन द्वार—दर्शन चार

१ चक्षु दर्शन, २ अचक्षु दर्शन, ३ अवधि दर्शन ४ केवल दर्शन।

१५ ज्ञान-अज्ञान द्वार—ज्ञान पाच

१ मति ज्ञान, २ श्रुत ज्ञान, ३ अवधि ज्ञान, ४ मनः पर्यय ज्ञान, ५ केवल ज्ञान।

अज्ञान तीन—१ मति अज्ञान, २ श्रुत अज्ञान, ३ विभङ्ग अज्ञान।

१६ योग द्वार--योग पन्द्रह

१ सत्य मन योग, २ असत्य मन योग, ३ मिश्र मन योग, ४ व्यवहार मन योग, ५ सत्य वचन योग, ६ असत्य वचन योग, ७ मिश्र वचन योग, ८ व्यवहार वचन योग, ९ औदारिक शरीर काय योग, १० औदारिक मिश्र शरीर काय योग, ११ वैक्रिय शरीर काय योग, १२ वैक्रिय मिश्र शरीर काय योग, १३ आहारक शरीर काय योग, १४ आहारक मिश्र शरीर काय योग, १५ कार्माण शरीर काय योग।

१७ उपयोग द्वार--उपयोग बारह

१ मति ज्ञान उपयोग २ श्रुत ज्ञान उपयोग ३ अवधि ज्ञान उपयोग ४ मनःपर्यय ज्ञान उपयोग ५ केवल ज्ञान उपयोग ६ मति अज्ञान उपयोग ७ श्रुत अज्ञान उपयोग ८ विभङ्ग अज्ञान उपयोग चक्षु दर्शन उपयोग १० अचक्षु दर्शन उपयोग ११ अवधि दर्शन उपयोग १२ केवल दर्शन उपयोग।

१८ आहार द्वार--आहार तीन

१ ओजस आहार २ रोम आहार ३ कवल आहार। यह सचित आहार, अचित आहार, मिश्र आहार (तीन प्रकार का होता है।)

१९ उत्पति द्वार

चौवीस दण्डक का आवे। सात नरक का एक दण्डक १, दस भवन पति के दश दण्डक ११, पृथ्वीकाय का एक दण्डक १२, अपकाय का एक दण्डक १३, तेजस् काय का एक १४, वायु काय का एक १५, वनस्पति काय का एक १६, वेइन्द्रिय का एक १७, त्रीन्द्रिय का एक १८, चौरिन्द्रिय का एक १९, तिर्यञ्च पचेन्द्रिय का एक, २० मनुष्य का एक, २१ वाणव्यन्तर का एक, २२ ज्योतिषी का एक, २३ वैमानिक का एक, २४।

२० स्थिति द्वार

स्थिति जघन्य अन्तरमुहूर्त की उत्कृष्ट तेतीस सागरोपम की।

२१ मरण द्वार

समोहिया मरण, असमोहिया मरण। समोहिया मरण जो चीटी की चाल के समान चले और असमोहिया मरण जो दडी के समान चले। (अथवा वन्दूक की गोली समान)।

२२ चवन द्वार

चौवीस ही दण्डक मे जावे—पहले कहे अनुसार।

२३ आगति द्वार

चार गति मे से आवे। १ नरक गति, २ तिर्यञ्च गति, ३ मनुष्य गति, व ४ देव की गति में से।

२४ गति द्वार

पांच गति में जावे। १ नरक गति मे, २ तिर्यञ्च गति में, ३ मनुष्य गति मे, ४ देव गति मे, ५ सिद्ध गति मे।

●

नारकी का एक तथा देवता के तेरह एवं १४ दन्डक

१ शरीर द्वार :-

नारकी मे शरीर पावे तीन—१ वैक्रिय, २ तेजस्, ३ कार्माण।

देवता मे शरीर पावे तीन—१ वैक्रिय, २ तेजस्, ३ कार्माण।

२ अवगाहना द्वार :-

१ पहली नारकी की अवगाहना जघन्य अगुल के असंख्यातवे भाग, उत्कृष्ट पोना आठ धनुष्य और छ अगुल।

२ दूसरी नारकी की अवगाहना जघन्य अगुल के असख्यातवे भाग, उत्कृष्ट साडा पन्द्रह धनुष्य व बारह अगुल।

३ तीसरी नारकी की अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवे भाग, उत्कृष्ट सवाइकतीस धनुष्य की।

४ चौथी नरक की अवगाहना जघन्य अगुल के असख्यातवे भाग, उत्कृष्ट साडा बासठ धनुष्य की।

५ पाचवे नरक की जघन्य अगुल के असंख्यातवे भाग, उत्कृष्ट १२५ धनुष्य की।

६ छठ्ठे नरक की जघन्य अंगुल के असख्यातवे भाग, उत्कृष्ट २५० धनुष्य की।

७ सातवे नरक की जघन्य अंगुल के असंख्यातवे भाग, उत्कृष्ट ५०० धनुष्य की। उत्तर वैक्रिय करे तो जघन्य अगुल के असख्यातवे भाग, उत्कृष्ट—जिस नरक की जितनी उत्कृष्ट अवगाहना है, उससे दुगनी वैक्रिय करे (यावत् सातवे नरक की एक हजार धनुष्य की अवगाहना जानना।)

१ भवन पति के देव व देवियों की अवगाहना ,जघन्य अंगुल के असंख्यातवे भाग उत्कृष्ट सात हाथ की ।

२ वाणव्यन्तर के देव व देवियो की अवगाहना जघन्य अंगुल के असख्यातवे भाग, उत्कृष्ट सात हाथ की ।

३ ज्योतिषी देव व देवियों की अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवे भाग उत्कृष्ट सात हाथ की ।

४ वैमानिक की अवगाहना नीचे लिखे अनुसार :—

पहले तथा दूसरे देवलोक के देव व देवियों की जघन्य अंगुल के असंख्यातवे भाग, उत्कृष्ट सात हाथ की। तीसरे, चौथे देवलोक के देव की जघन्य अगुल के असंख्यातवे भाग; उत्कृष्ट छ. हाथ की। पॉचवे छट्ठे देवलोक के देवों की जघन्य अगुल के असंख्यातवे भाग, उत्कृष्ट पाच हाथ की ।

सातवे, आठवे देवलोक के देवो की जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट चार हाथ का ।

नववे, दसवे ग्यारहवे व वारहवे देवलोक के देवो की जघन्य अंगुल के असंख्यातवे भाग, उत्कृष्ट तीन हाथ की। नव ग्रैवेक (ग्रीयवेक) के देवो की जघन्य अगुल के असंख्यातवे भाग, उत्कृष्ट दो हाथ की।

चार अनुत्तर विमान के देवो की ज० अगुल के असंख्यातवे भाग, उ० एक हाथ की ।

पाँचवें अनुत्तर विमान के देवो की ज० अंगुल के असंख्यातवें भाग, उ० मुंड (एक मूँठ कम) हाथ की ।

भवनपति से लगाकर वारह देवलोक पर्यन्त उत्तर वैक्रिय करे तो ज० अंगुल के संख्यातवे भाग उत्कृष्ट लक्ष योजन की ।

नव ग्रैवेयक तथा पाच अनुत्तर विमान के देव उत्तर वैक्रिय नही करते ।

३ सघयण द्वार —

नरक के नैरयिक असघयनी । देव असघयनी ।

४ सस्थान द्वार .—

नरक मे हुण्डक सस्थान व देवलोक के देवो का समचतु:रस्र सस्थान ।

५ कषाय द्वार :—

नरक मे चार कषाय व देवलोक मे भी चार ।

६ संज्ञा द्वार —

नारकी मे सज्ञा चार, देवलोक मे सज्ञा चार ।

७ लेश्या द्वार :—

नारकी मे लेश्या तीन :—
पहली दूसरी नरक में कापोत लेश्या ।
तीसरी नरक में कापोत व नील लेश्या ।
चौथी नरक मे नील लेश्या ।
पाचवी नरक मे कृष्ण व नील लेश्या ।
छठ्ठी नरक मे कृष्ण लेश्या ।
सातवी नरक मे महाकृष्ण लेश्या ।

भवनपति व वाणव्यन्तर मे चार लेश्या १ कृष्ण २ नील ३ कापोत ४ तेजस् ।

ज्योतिषी, पहला व दूसरा देवलोक में—१ तेजस् लेश्या ।
तीसरे, चौथे व पांचवे देवलोक मे—१ पद्म लेश्या ।

छठ्ठे देवलोक से नव ग्रैवेयक (ग्रैवेयक) तक १ शुक्ल लेश्या ।
पांच अनुत्तर विमान में—१ परम शुक्ल लेश्या

८ इन्द्रिय द्वार :—

नरक में पांच व देवलोक में पांच ।

९ समुद्घात द्वार :—

नरक मे चार समुद्घात १ वेदनीय २ कषाय ३ मारणान्तिक ४ वैक्रिय ।

देवताओ में पांच—१ वेदनीय २ कषाय ३ मारणान्तिक ४ वैक्रिय ५ तेजस् ।

भवनपति से बारहवे देवलोक तक पांच समुद्घात ; नव ग्रैयवेक से पाच अनुत्तर विमान तक तीन समुद्घात १ वेदनीय २ कषाय ३ मारणान्तिक ।

१० संज्ञी द्वार :—

पहली नरक मे सज्ञी व [1]असज्ञी और शेष नारको में संज्ञी ।
भवन पति, वाणव्यन्तर में—संज्ञी, असंज्ञी ।
ज्योतिपी से अनुत्तर विमान तक सज्ञी ।

११ वेद द्वार :—

नरक में नपुषक वेद, भवन पति, वाण व्यन्तर, ज्योतिपी तथा पहले दूसरे देवलोक मे १ स्त्री वेद २ पुरुष वेद शेप देवलोक में १ पुरुप वेद।

---

१ असज्ञी तिर्यञ्च मर कर इस गति मे उत्पन्न होते हैं, अपर्याप्ता दशा मे असज्ञी है । पर्याप्ता होने के बाद अवधि तथा विभग ज्ञान उत्पन्न होता है । इस अपेक्षा से समझना चाहिए ।

१२ पर्याप्ति द्वार :—

(भाषा, व मन दोनो एक साथ बांधते है) नरक में पर्याप्ति पाच और अपर्याप्ति पांच, देवलोक मे पर्याप्ति पांच और अपर्याप्ति पांच ।

१३ दृष्टि द्वार :

नरक मे दृष्टि तीन, भवनपति से बारहवे देवलोक तक दृष्टि तीन, नव ग्रैवयेक मे दृष्टि दो (मिश्र दृष्टि छोड़कर) पाच अनुत्तर विमान मे दृष्टि १ सम्यग् दृष्टि ।

१४ दर्शन द्वार --

नरक मे दर्शन तीन—१ चक्षु दर्शन २ अचक्षु दर्शन ३ अवधि-दर्शन ।

देवलोक मे दर्शन तीन—१ चक्षु दर्शन २ अचक्षु दर्शन ३ अवधि-दर्शन ।

१५ ज्ञान द्वार :—

नरक मे तीन ज्ञान और तीन अज्ञान । भवनपति से नव ग्रैवेयक तक तीन ज्ञान व तीन अज्ञान । पाच अनुत्तर विमान में केवल तीन ज्ञान, अज्ञान नही ।

१६ योग द्वार –

नरक मे तथा देवलोक में ग्यारह योग—१ सत्य मनयोग २ असत्य मनयोग ३ मिश्र मनयोग ४ व्यवहार मनयोग ५ सत्य वचन योग ६ असत्य वचन योग ७ मिश्र वचन योग ८ व्यवहार वचन योग ९ वैक्रिय शरीर काय योग १० वैक्रिय मिश्र शरीर काय योग ११ कार्मण शरीर काय योग ।

१७ उपयोग द्वार :--

नरक, व भवनपति से नव ग्रैवेयक तक उपयोग नव—१ मति ज्ञान उपयोग २ श्रुत ज्ञान उपयोग ३ अवधि ज्ञान उपयोग ४ मति अज्ञान उपयोग ५ श्रुत अज्ञान उपयोग ६ विभग ज्ञान उपयोग ७ चक्षु दर्शन उपयोग ८ अचक्षु दर्शन उपयोग ९ अवधि दर्शन उपयोग।

पांच अनुत्तर विमान मे ६ उपयोग—तीन ज्ञान और तीन दर्शन।

१८ आहार द्वार :--

नरक व देवलोक में दो प्रकार का आहार १ ओजस् २ रोम। छः ही दिशाओं से आहार लेते है। परन्तु लेते है एक प्रकार का—नेरिये अचित आहार करते है किन्तु अशुभ, और देवता भी अचित्त आहार करते है किन्तु शुभ।

१९ उत्पत्ति द्वार और २२ च्यवन द्वार :

पहली नरक से छठ्ठी नरक तक मनुष्य व तिर्यच पंचेन्द्रिय—इन दो दण्डक के आते है—व दो ही (मनुष्य, तिर्यच) दण्डक मे जाते है।

सातवी नरक में दो दण्डक के आते है, मनुष्य व तिर्यंच, व एक दण्डक में-तिर्यंच पचेन्द्रिय-मे जाते है।

भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी तथा पहले दूसरे देवलोक में दो दण्डक–मनुष्य व तिर्यंच के आते है व पांच दण्डक में जाते है १ पृथ्वी २ अप ३ वनस्पति, ४ मनुष्य ५ तिर्यंच पंचेद्रिय।

तीसरे देवलोक से आठवें देवलोक तक दो दण्डक—मनुष्य और तिर्यंच-का आवे और दो ही दण्डक में जावे।

नवमें देवलोक से अनुत्तर विमान तक एक दण्डक—मनुष्य का आवे और एक मनुष्य-ही में जावे।

२० स्थिति द्वार :—

पहले नरक के नेरियो की स्थिति जघन्य दश हजार वर्ष की, उत्कृष्ट एक सागर की।

दूसरे नरक की ज० १ सागर की, उ० ३ सागर की।
तीसरे नरक की ज० ३ सागर की, उ० ७ सागर की।
चौथे नरक की ज० ७ सागर की, उ० १- सागर की।
पाँचवे नरक की ज० १० सागर की, उ० १७ सागर की।
छठ्ठे नरक की ज० १७ सागर की, उ० २२ सागर की।
सातवे नरक की ज० २२ सागर की उ० ३३ सागर की।

दक्षिण दिशा के असुरकुमार के देव की स्थिति जघन्य दश हजार वर्ष की उ० एक सागरोपम की। इनकी देवियो की स्थिति जघन्य दश हजार वर्ष की उ० ३॥ पल्योपम की। इनके नवनिकाय के देवो की स्थिति जघन्य दश हजार वर्ष की उ० १॥ पल्योपम की। इनकी देवियो की स्थिति जघन्य दश हजार वर्ष की उ० पौन पल्यकी।

उत्तर दिशा के असुर कुमार के देवो की स्थिति जघन्य दश हजार वर्ष की, उ० एक सागर झाझेरी। इनकी देवियो की स्थिति ज० दश हजार वर्ष की, उ० ४॥ पल्य की। नवनिकाय के देव की ज० दश हजार वर्ष उ० देश उणा (कम) दो पल्योपम की, इनकी देवियो की ज० दश हजार वर्ष की उ० देश उणा (कम) एक पल्योपम की।

वाणव्यन्तर के देव की स्थिति ज० दश हजार वर्ष की, उ०

एक पल्य की। इनकी देवियों की ज० दश हजार वर्ष की, उ० अर्ध पल्य की।

चन्द्र देव की स्थिति ज० पाव पल्य की उ० एक पल्य और एक लक्ष वर्ष की। देवियों की स्थिति ज० पाव पल्य की उ० अर्ध पल्य और पचास हजार वर्ष की।

सूर्य देव की स्थिति ज० पाव पल्य की उ० एक पल्य और एक हजार वर्ष की। देवियों की ज० पाव पल्य की उ० अर्ध पल्य और पाँच सौ वर्ष की।

ग्रह (देव) की स्थिति ज० पाव पल्यकी उ० एक पल्य की। देवी की ज० पाव पल्य की उ० अर्ध पल्य की।

नक्षत्र की स्थिति ज० पाव पल्य की उ० अर्ध पल्य की। देवी की ज० पाव पल्य की उ० पाव पल्य झाझेरी।

तारा की स्थिति ज० पल्य के आठवें भाग उ० पाव पल्य की। देवी की ज० पल्य की आठवे भाग उ० पल्य के आठवे भाग झाझेरी।

पहले देवलोक के देव की ज० एक पल्य की उ० दो सागर की। देवी की ज० एक पल्य की उ० सात पल्य की। अपरिगृहिता देवी की ज० एक पल्य की उ० ५० पल्य की।

दूसरे देवलोक के देव की ज० एक पल्य झाझेरी उ० दो सागर झाझेरी, देवी की ज० एक पल्य झाझेरी उ० नव पल्य की। अपरिगृहिता देवी की ज० एक पल्य झाझेरी उ० पञ्चावन पल्य की।

तीसरे देवलोक के देव की ज० २ सागर की उ० ७ सागर
चौथे ,, ,, ,, ,, २ ,, झाझेरी ,, ७ ,, जा.
पांचवें ,, ,, ,, ,, ७ ,, की ,, १० ,, की
छठ्ठे ,, ,, ,, ,, १० ,, ,, ,, १४ ,, ,,
सातवे ,, ,, ,, ,, १४ ,, ,, ,, १७ ,, ,,

आठवे देवलोक के	देव	की	ज०	१७	सागर	की	उ०	१८	सागर	
नवे	,,	,,	,,	,, १८	,,	,,	,,	१९	,,	,,
दशवे	,,	,,	,,	,, १९	,,	,,	,,	२०	,,	,,
ग्यारहवे	,,	,,	,,	,, २०	,,	,,	,,	२१	,,	,,
बारहवे	,,	,,	,,	,, २१	,,	,,	,,	२२	,,	,,
पहली ग्रैवेयक	,,	,,	,,	,, २२	,,	,,	,,	२३	,,	,,
दूसरी	,,	,,	,,	,, २३	,,	,,	,,	२४	,,	,,
तीसरी	,,	,,	,,	,, २४	,,	,,	,,	२५	,,	,,
चौथी	,,	,,	,,	,, २५	,,	,,	,,	२६	,,	,,
पांचवी	,,	,,	,,	,, २६	,,	,,	,,	२७	,,	,,
छठ्ठी	,,	,,	,,	,, २७	,,	,,	,,	२८	,,	,,
सातवी	,,	,,	,,	,, २८	,,	,,	,,	२९	,,	,,
आठवी	,,	,,	,,	,, २९	,,	,,	,,	३०	,,	,,
नवी	,,	,,	,,	,, ३०	,,	,,	,,	३१	,,	,,
चार अनुत्तर विमान	,,		,,	,, ३१	,,	,,	,,	३२	,,	,,

पाँचवे अनुत्तर विमान की ज० उ० ३३ सागरोपम की।

२१ मरण द्वार.—

१ समोहिया और २ असमोहिया।

२२ च्यवन (मृत्यु) द्वार :—

कम से कम १-२-३ और उत्कृष्ट असख्यात चवे अथवा निकले

२३ आगति और २४ गति द्वार :—

पहली नरक से छठ्ठी नरक तक दो गति-मनुष्य और तिर्यञ्च का आवे और दो गति-मनुष्य, तिर्यञ्च मे जावे। सातवी नरक में दो गति—मनुष्य, तिर्यञ्च का आवे और एक गति—तिर्यञ्च मे जावे।

भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी यावत् आठवे देवलोक तक

दो गति—मनुष्य और तिर्यञ्च का आवे और दो गति—मनुष्य और तिर्यञ्च में जावे।

नवे देवलोक से सर्वार्थसिद्ध तक एक गति—मनुष्य का आवे और एक गति-मनुष्य में जावे।

पांच एकेन्द्रिय के पांच दण्डक

१ शरीर द्वार :—

वायु काय को छोड शेष चार एकेन्द्रिय में शरीर तीन १ औदारिक २ तैजस् ३ कार्माण। वायुकाय में चार शरीर १ औदारिक २ वैक्रिय ३ तेजस् ४ कार्माण।

२ अवगाहना द्वार :—

पृथ्व्यादि चार एकेन्द्रिय की अवगाहना जघन्य अगुल के असंख्यातवे भाग।

वनस्पति की अवगाहना ज० अंगुल के असंख्यातवे भाग उ० हजार योजन झाझेरी कमल नाल आश्रित।

३ संघयन द्वार :

पांच एकेन्द्रिक में सेवार्त संघयन।

४ संस्थान द्वार :

पांच एकेन्द्रिय में हुण्डक संस्थान।

५ कषाय द्वार :

पांच एकेन्द्रिय में कषाय चार।

६ संज्ञा द्वार :

पांच एकेन्द्रिय में संज्ञा चार।

७ लेश्या द्वार :

पृथ्वी, अप व वनस्पति काय-अपर्याप्त में लेश्या चार १ कृष्ण

२ नील ३ कापोत ४ तेजो। पर्याप्ता में तीन—१ कृष्ण २ नील ३ कापोत। तेजस् (अग्नि) और वायुकाय मे तीन-१ कृष्ण २ नील ३ कापोत।

८ इन्द्रिय द्वार .

पांच एकेन्द्रिय मे एक इन्द्रिय—स्पर्शेन्द्रिय।

९ समुद्घात द्वार :

वायुकाय को छोड कर शेष चार एकेन्द्रिय में तीन समुद्घात १ वेदनोय, २ कषाय और ३ मारणान्तिक। वायु काय मे चार १ वेदनीय २ कषाय ३ मारणान्तिक ४ वैक्रिय।।

१० संज्ञी द्वार :

पांचो एकेन्द्रिय असंज्ञी।

११ वेद द्वार :

पांच एकेन्द्रिय में नपुंसक वेद।

१२ पर्याप्ति द्वार :

पांच एकेन्द्रिय में पर्याप्ति चार (पहली) अपर्याप्ति चार।

१३ दृष्टि द्वार :

पाच एकेन्द्रिय में एक मिथ्यात्व दृष्टि।

१४ दर्शन द्वार :

पांच एकेन्द्रिय में एक अचक्षु दर्शन।

१५ ज्ञान द्वार :

पांच एकेन्द्रिय में दो अज्ञान १ मति अज्ञान २ श्रुत अज्ञान।

१६ योग द्वार :

वायुकाय को छोड कर शेष चार एकेन्द्रिय में योग तीन

१ औदारिक शरीर काय योग २ औदारिक मिश्र शरीर काय योग ३ कार्मण शरीर काय योग। वायु काय में योग पांच—१ औदारिक शरीर काय योग २ औदारिक मिश्र शरीर काय योग ३ वैक्रिय शरीर काय योग ४ वैक्रिय मिश्र शरीर काय योग ५ कार्मण शरीर काय योग।

१७ उपयोग द्वार :

पांच एकेन्द्रिय में उपयोग तीन १ मति अज्ञान २ श्रुत अज्ञान ३ अचक्षु दर्शन।

१८ आहार द्वार :

पाच एकेन्द्रिय तीन दिशाओं का, चार दिशाओ का, पांच दिशाओं का आहार लेवे व्याघात न पड़े तो छ दिशाओं का आहार लेवे। आहार दो प्रकार का है—१ ओजस २ रोम। ये १ सचित २ अचित ३ मिश्र तीनों तरह का लेते है।

१६ उत्पत्ति द्वार २२ च्यवन द्वार :

पृथ्वी, अप्, वनस्पति काय मे नरक छोड़ कर शेष २३ दण्डक का आवे और दश दण्डक मे जावे—पांच एकेन्द्रिय तीन विकलेन्द्रिय, मनुष्य व तिर्यच एवं दश दण्डक।

तेजस् काय, वायु काय में दश दण्डक का आवे-पॉच एकेन्द्रिय, तीन विकलेन्द्रिय, मनुष्य, तिर्यंच—एवं दश और नव दण्डक में जावे, मनुष्य छोड़ कर शेष ऊपर समान।

२० स्थिति द्वार :

पृथ्वी काय की स्थिति जघन्य अन्तरमुहूर्त की उत्कृष्ट बावीस हजार वर्ष की।

अप् काय की जघन्य अन्तर मुहूर्त की उत्कृष्ट सात हजार वर्ष

की। तेजस् काय की ज० अ० मुहूर्त की उ० तीन अहोरात्रि की। वायु काय की ज० अ० मुहूर्त की उ० तीन हजार वर्ष की। वनस्पति काय की ज० अ० मुहूर्त की उ० दश हजार वर्ष की।

२१ मरण द्वार :

इनमें समोहिया मरण और असमोहिया मरण दोनों होते है।

२३ आगति द्वार . २४ गति द्वार :

पृथ्वी काय, अपकाय, वनस्पति काय, इन तीन एकेन्द्रिय में तीन—१ मनुष्य २ तिर्यंच ३ देव—गति के आवे और १ मनुष्य २ तिर्यंच—दो गति मे जावे। तेजस और वायु काय में १ मनुष्य २ तिर्यंच दो गति के आवे और तिर्यंच-एक गति में जावे।

बेइन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चौरिन्द्रिय और तिर्यञ्च संमूर्च्छिम पंचेन्द्रिय के दण्डक—

१ शरीर द्वार ·

बेइन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चौरिन्द्रिय व तिर्यञ्च समूर्च्छिम पचेन्द्रिय मे शरीर तीन—१ औदारिक, २ तेजस् ३ कार्माण।

२ अवगाहना द्वार

बेइन्द्रिय की अवगाहना जघन्य अगुल के असख्यातवे भाग उत्कृष्ट बारह योजन की। त्रीन्द्रिय की अवगाहना जघन्य अंगुल के असख्यातवे भाग उत्कृष्ट तीन गाउ (६ मील) की। चौरिन्द्रिय की जघन्य अंगुल के असंख्यातवे भाग उत्कृष्ट चार गाउ की। तिर्यञ्च समूर्च्छिम पचेन्द्रिय की जघन्य अगुल के असख्यातवे भाग उत्कृष्ट नीचे अनुसार :—

गाथा—जोयण सहस्स, गाउअ पुहुत्तं तत्तो जोयण पुहुत्तं ।
दोण्हं तु धणुह पुहुत्तं संमूछीमे होइ उच्चत्तं ॥

१ जलचर की एक हजार योजन को ।
२ स्थलचर की प्रत्येक गाउ की (दो से नव गाउ तक की)
३ उरपर (सर्प) की प्रत्येक योजन की (दो से नव योजन तक)
४ भुजपुर (सर्प) की प्रत्येक धनुष्यकी (दो से नव धनुष्य तक की)
५ खेचर की प्रत्येक धनुष्य की (दो से नव धनुष्य की)

३ संघयण द्वार :

तीन विकलेन्द्रिय (बेइन्द्रिय त्रीन्द्रिय चौरिन्द्रिय) और तिर्यच संमूर्छिम पंचेन्द्रिय में संघयन एक—सेवार्त्त ।

४ संस्थान द्वार :

तीन विकलेन्द्रिय और समूर्छिम पचेन्द्रिय मे संस्थान एक—हुण्डक ।

५ कषाय द्वार :

कषाय चार ही पावे ।

६ संज्ञा द्वार :

सज्ञा चार ही पावे ।

७ लेश्या द्वार :

लेश्या तीन पावे—१ कृष्ण २ नील ३ कापोत ।

८ इन्द्रिय द्वार :

बेइन्द्रिय में दो इन्द्रिय—१ स्पर्शेन्द्रिय २ रसनेन्द्रिय (मुख)

त्रीन्द्रिय मे तीन इन्द्रिय १ स्पर्शेन्द्रिय २ रसनेन्द्रिय ३ घ्राणेन्द्रिय। चौरिन्द्रिय मे चार इन्द्रिय १ स्पर्शेन्द्रिय २ रसनेन्द्रिय ३ घ्राणेन्द्रिय ४ चक्षु इन्द्रिय।

तिर्यञ्च समूर्छिम मे पाच इन्द्रिय—१ स्पर्शेन्द्रिय २ रसनेन्द्रिय ३ घ्राणेन्द्रिय ४ चक्षु इन्द्रिय ५ श्रोत्रेन्द्रिय।

९ समुद्घात द्वार .

इनमे समुद्घात तीन पावे—१ वेदनीय २ कषाय ३ मारणातिक।

१० सज्ञी असंज्ञी द्वार :

तीन विकले० तथा समूर्छिम तिर्यञ्च पंचे०, असज्ञी।

११ वेद द्वार :

इनमे वेद एक—नपुंसक।

१२ पर्याप्ति द्वार :

पर्याप्ति पावे पाच—१ आहार पर्याप्ति २ शरीर पर्याप्ति ३ इन्द्रिय पर्याप्ति ४ श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति ५ भाषा पर्याप्ति।

१३ दृष्टि द्वार :

बेइ०, त्रीइ०, चौरि० तथा तिर्यञ्च समुर्च्छिम पचे० के अपर्याप्ति में दृष्टि दो १ समकित दृष्टि २ मिथ्यात्व दृष्टि। पर्याप्ति में एक मिथ्यात्व दृष्टि।

१४ दर्शन द्वार ·

बेइ०, त्रीइ० में दर्शन १ अचक्षु दर्शन चौरि० और तिर्यञ्च संमूर्च्छिम पंचे० में दो :—१ चक्षु दर्शन २ अचक्षु दर्शन।

१५ ज्ञान द्वार :

अपर्याप्ति में ज्ञान दो—१ मतिज्ञान, २ श्रुतज्ञान। अज्ञान दो :— १ मति अज्ञान २ श्रुत अज्ञान, पर्याप्ति में अज्ञान दो।

१६ योग द्वार :

इनमें योग पावे चार :—१ औदारिक शरीर काय योग २ औदारिक मिश्र शरीर काय योग ३ कार्माण शरीर काय योग ४ व्यवहार वचन योग ।

१७ उपयोग द्वार :

बेइ०, त्रीइ० के अपर्याप्ति में पॉच उपयोग :—१ मतिज्ञान २ श्रुतज्ञान ३ मति अज्ञान ४ श्रुत अज्ञान ५ अचक्षु दर्शन । पर्याप्ति में तीन उपयोग—दो अज्ञान और एक अचक्षु-दर्शन । चौरि० और तिर्यञ्च समूर्च्छिम पचे० के अपर्याप्ति में छः उपयोग १ मतिज्ञान उपयोग २ श्रुतज्ञान उपयोग ३ मतिअज्ञान उपयोग ४ श्रुतअज्ञान उपयोग ५ चक्षु दर्शन ६ अचक्षु दर्शन । पर्याप्ति मे चार उपयोग दो अज्ञान और दो दर्शन ।

१८ आहार द्वार :—

आहार छ. दिशाओं का लेवे, आहार तीन प्रकार का १ ओजस् २ रोम ३ कवल और १ सचित २ अचित ३ मिश्र ।

१६ उत्पत्ति द्वार और २२ च्यवन द्वार :

बेइन्द्रिय, त्रीइन्द्रिय, चौरिन्द्रिय में दश दण्डक—पाँच एके०, तीन विकले०, मनुष्य और तिर्यञ्च का आवे और दश ही दण्डक में जावे । तिर्यञ्च समूर्छिम पचे० में दश दण्डक का आवे—(ऊपर कहे हुए) और ज्योतिषी वैमानिक इन दो दण्डक को छोडकर शेष २२ दण्डक मे जावे ।

२० स्थिति द्वार

द्वीन्द्रिय की स्थिति जघन्य अन्तर मुहूर्त की उत्कृष्ट बारह वर्ष की । त्रीन्द्रिय की स्थिति ज० अ० मुहूर्त की उ० ४६ दिन की । चौरि०

की ज० अ० मुहूर्त की उ० छः मास की। तिर्यंच समूछिम पचे० की नीचे अनुसार—

गाथा—पुव्वक्कोड चउरासी, तेपन, बायालीस, बहुत्तरे।
सहसाइ वासाइ स मुछिमे आऊय होइ॥

जलचर की स्थिति ज० अ० मुहूर्त की उ० क्रोड़ पूर्व वर्ष की। स्थलचर की ज० अ० मुहूर्त की उ० चौराशी हजार वर्ष की। उरपर (सर्प) की ज० अ० मुहूर्त की उ० ५३ हजार वर्ष की। भुजपर (सर्प) की ज० अ० मुहूर्त की उ० २ हजार वर्ष की। खेचर की ज० अ० मुहूर्त की उ० ७२ हजार वर्ष की।

२१ मरण द्वार

समोहिया मरण —चीटी की चाल के समान जिस की गति हो।

असमोहिया मरण—बन्दूक की गोली के समान जिस की गति हो।

२३ आगति द्वार २४ गति द्वार

द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चौरि० मे दो गति—मनुष्य और तिर्यंच का आवे और दो गति मनुष्य तिर्यंच मे जावे। तिर्यंच समूर्छिम पचे० में दो-मनुष्य और तिर्यंच-गति के आवे और चार गति मे जावे १ नरक २ तिर्यंच ३ मनुष्य ४ देव।

तिर्यञ्च गर्भज पचेन्द्रिय का एक दंडक

(१) शरीर : तिर्यञ्च गर्भज पचेन्द्रिय में शरीर ४

१ औदारिक २ वैक्रिय ३ तेजस् ४ कार्माण

(२) अवगाहना।

गाथा—जोयण सहस्स छ गाउ आइं ततो जोयण सहस्स।
गाउ पुहत्त भुजये धणुह पुहुत्तं च पक्खीसु॥

जलचरकी :—ज० अंगुल के असख्यातवे भाग, उ० एक हजार योजन की।

स्थलचरकी :—ज० अगुल के असंख्यातवे भाग, उ० छ. गाउ की।

उरपरिसर्पकी :—ज० अंगुल के असख्यातवे भाग, उ० एक हजार योजन की।

भुजपरिसर्पकी :—ज० अंगुल के असख्यातवे भाग, उ० प्रत्येक गाउकी।

खेचरकी :—ज० अंगुल के असंख्यातवे भाग, उ० प्रत्येक धनुष्य की। उत्तार वैक्रिय करे तो ज० अगुल के असख्यातवे भाग उ० ६०० योजन की।

(३) संघयण द्वार :—तिर्यच गर्भज पंचे० में संघयण छः।

(४) संस्थान ,, संस्थान छः।

(५) कषाय ,, कषाय चार।

(६) संज्ञा ,, सज्ञा चार।

(७) लेश्या ,, लेश्या छः।

(८) इन्द्रिय ,, इन्द्रिय पाँच।

(९) समुद्घात ,, समुद्घात पांच :—१ वेदनीय २ कषाय ३ मारणांतिक ४ वैक्रिय ५ तेजस्।

(१०) संज्ञी द्वार : संज्ञी।

(११) वेद ,, वेद तीन।

(१२) पर्याप्ति ,, पर्याप्ति छः और अपर्याप्ति छः।

(१३) दृष्टि ,, दृष्टि तीन ।

(१४) दर्शन ,, : दर्शन तीन :—१ चक्षु दर्शन २ अचक्षु दर्शन ३ अवधि दर्शन ।

(१५) ज्ञान द्वार · ज्ञान तीन —

१ मति ज्ञान २ श्रुतज्ञान २ अवधि ज्ञान । अज्ञान भी तीन—१ मति अज्ञान २ श्रुत अज्ञान ३ विभग ज्ञान ।

(१६) योग द्वार : योग तेरह :—

१ सत्य मनयोग २ असत्य मनयोग ३ मिश्र मनयोग ४ व्यवहार मनयोग ५ सत्य वचनयोग ६ असत्य वचनयोग ७ मिश्र वचन योग ८ व्यवहार वचन योग ९ औदारिक शरीर काय योग १० औदारिक मिश्र शरीर काययोग ११ वैक्रिय शरीर काययोग १२ वैक्रिय मिश्र शरीर काययोग १३ कार्मण शरीर काययोग ।

(१७) उपयोग द्वार :—

तिर्यच गर्भज में उपयोग ९ (नौ) १ मति ज्ञान उपयोग २ श्रुतज्ञान ३ अवधि ज्ञान उपयोग ४ मति अज्ञान उपयोग ५ श्रुत अज्ञान उपयोग ६ विभग ज्ञान उपयोग ७ चक्षु दर्शन उपयोग ८ अचक्षु दर्शन उपयोग ९ अवधि दर्शन उपयोग ।

(१८) आहार :—आहार तीन प्रकार का ।

(१९) उत्पत्ति द्वार : (२२) च्यवन द्वार :

चौवीस दडक मे उपजे, चौवीस दडक मे जावे ।

(२०) स्थिति द्वार :—

जलचर की—जघन्य अन्तर मुहूर्त उत्कृष्ट तीन पल्य की ।

स्थलचर की—जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट तीन पल्य की ।

उरपरि सर्प की—ज० अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट करोड पूर्व वर्ष की।
भुजपरि सर्प की—ज० अर्न्तमुहूर्त उत्कृष्ट करोड़ पूर्व वर्ष की।
खेचर की—ज० अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट पल्य के असंख्यातवे भाग की।

(२१) मरण द्वार :

समोहिया मरण, असमोहिया मरण।

(२३) आगति द्वार : (२४) गति द्वार :

तिर्यञ्च गर्भज पंचेन्द्रिय मे चार गति के जीव आवे और चार गति मे जावे।

मनुष्य गर्भज पंचेन्द्रिय का एक दण्डक

१ शरीर द्वार :—मनुष्य गर्भज में शरीर पाँच।

२ अवगाहना द्वार:—

अवर्सपिणीकाल मे मनुष्य गर्भज की अवगाहना पहला आरा लगते तीन गाउ की, उतरते आरे दो गाउ की, दूसरा आरा लगते दो गाउ की, उतरते एक गाउ की।

तीसरे आरे लगते १ गाउ की उतरते आरे ५०० धनुष्य की।
चौथे ,, ,, ५०० धनुष्य की ,, ,, सात हाथ की।
पांचवे ,, ,, सात हाथ की ,, ,, एक हाथ की।
छट्ठे ,, ,, एक हाथ की ,, ,, मुंड हाथ की।

उत्सर्पिणी काल मे :—

पहिले आरे लगते मुंड हाथ की उतरते आरे १ हाथ की
दूसरे ,, ,, १ ,, ,, ,, ,, ७ हाथ की
तीसरे ,, ,, ७ ,, ,, ,, ,, ५०० धनुष्य की

चौथे ,, ,, ५०० धनुष्य की ,, ,, १ गाउ की
पांचवे ,, ,, १ गाउ की ,, ,, २ ,, ,,
छट्ठे ,, ,, २ ,, ,, ,, ,, ३ ,, ,,

मनुष्य वैक्रिय करे तो जघन्य अगुल के संख्यातवे भाग उत्कृष्ट लक्ष योजन झाझेरी (अधिक)

३ सघयण द्वार—सघयण छ. ही पावे ।
४ संस्थान द्वार—संस्थान ,, ,, ,,
५ कषाय द्वार—कषाय चार ,, ,,
६ सज्ञा द्वार—सज्ञा चार ही पावे ।
७ लेश्या द्वार—लेश्या छ. ,, ,,
८ इन्द्रिय द्वार—इन्द्रिय पाच ही पावे ।
९ समुद्घात ,,—समुद्घात सात ही पावे ।
१० सज्ञी ,,—ये सज्ञी है ।
११ वेद ,,—वेद तीन ही पावे ।
१२ पर्याप्ति द्वार—इनमें पर्याप्ति ६ अपर्याप्ति ६ ।
१३ दृष्टि ,,—इनमें दृष्टि तीन ।
१४ दर्शन ,,— ,, दर्शन चार ।
१५ ज्ञान ,,— ,, ज्ञान पाच, अज्ञान तीन ।
१६ योग ,,— ,, योग पन्द्रह
१७ उपयोग ,,— ,, उपयोग बारह ।
१८ आहार ,,— ,, आहार तीन प्रकार का ।
१९ उत्पत्ति ,,— ,, मनुष्य गर्भज में- तेजस्, वायु काय को छोड़ कर शेष बावीस दण्डक का आवे ।

२२ स्थिति द्वार अवसर्पिणी काल में

पहिले आरे लगते तीन पल्य की स्थिति उतरते आरे दो पल्य की

दूसरे	आरे लगते	दो	पल्य की	स्थिति	उतरते	एक पल्य की
तीसरे ,,	,,	एक ,,	,,	,,	,,	,, करोड़ पूर्व ,,
चौथे ,,	,,	करोड़ पूर्व	,,	,,	,,	,,२००वर्ष उणा
पांचवे ,,	,,	२००वर्ष उणी,,		,,	,,	,, बीस वर्ष ,,
छट्ठे ,,	,,	बीस वर्ष की,,		,,	,,	,, सोलह ,, ,,

उत्सर्पिणी काल मे

पहिले	आरे लगते	१६ वर्ष की	स्थिति	उतरते	आरे	२० वर्ष की
दूसरे ,,	,,	२० वर्ष की	,,	,,	,,	२०० वर्ष ,,
तीसरे ,,	,,	२०० ,, ,,	,,	,,	,,	करोड़ पूर्व ,,
चौथे ,,	,,	करोड़ वर्ष की	,,	,,	,,	एक पल्य ,,
पांचवे ,,	,,	एक पल्य ,,	,,	,,	,,	दो ,, ,,
छठ्ठे ,,	,,	दो ,, ,,	,,	,,	,,	तीन ,, ,,

२१ मरण द्वार—मरण दो १ समोहिया और २ असमोहिया।

२२ च्यवन द्वार—चौवीस ही दण्डक में जावे—ऊपर कहे अनुसार।

२३—आगति द्वार—मनुष्य गर्भज में चार गति का आवे—१ नरक गति २ तिर्यंच गति ३ मनुष्य गति ४ देव गति।

२४ गति द्वार—मनुष्य गर्भज पाच ही गति में जावे।

मनुष्य संमूर्च्छिम का दण्डक :

१ शरीर द्वार:—इनमें शरीर पावे तीन—औदारिक, तेजस कार्माण।

२ अवगाहना द्वार :—इनकी अवगाहना जघन्य अगुल के असंख्यातवे भाग व उत्कृष्ट अगुल के असंख्यातवे भाग।

३ संघयण ,, :—इनमें संघयण एक—सेवार्त्त

४ सस्थान ,, .— ,, सस्थान एक—हुण्डक

५ कषाय ,, :— ,, कषाय चार

६ सज्ञा ,, :—सज्ञा चार

७ लेश्या ,, :— ,, लेश्या तीन कृष्ण, नील, कापोत

८ इन्द्रिय ,, :— ,, इन्द्रिय पाच

९ समुद्घात ,, .—इनमें समुद्घात तीन—वेदनीय, कषाय, मारणातिक।

१० संज्ञी ,, :—ये असज्ञी हैं।

११ वेद ,, .—इनमे वेद एक—नपुंसक

१२ पर्याप्ति ,, .— ,, पर्याप्ति चार, अपर्याप्ति पांच

१३ दृष्टि ,, :— ,, दृष्टि एक १ मिथ्यात्व दृष्टि

१४ दर्शन ,, :— ,, दर्शन दो-चक्षु और अचक्षु दर्शन

१५ ज्ञान ,, .— ,, ज्ञान नही, अज्ञान दो मति और श्रुत अज्ञान।

१६ योग द्वार .—इन योग तीन १ औदारिक शरीर काय योग २ औदारिक मिश्र शरीर काय योग ३कार्मण शरीर काय योग।

१७ उपयोग द्वार :

उपयोग चार—१ मति अज्ञान उपयोग २ श्रुत अज्ञान उपयोग ३ चक्षु दर्शन उपयोग ४ अचक्षु दर्शन उपयोग।

१८ आहार द्वार :

आहार दो प्रकार का—ओजस, रोम० वे-सचित, अचित, मिश्र तीनो ही तरह का लेते है।

१९ उत्पत्ति द्वार

मनुष्य संमूर्च्छिम में आठ दण्डक का आवे १ पृथ्वी काय २ अप काय ३ वनस्पति काय ४ बेइन्द्रिय ५ त्रीन्द्रिय ६ चौरिन्द्रिय ७ मनुष्य ८ तिर्यंच पचे० ।

२० स्थिति द्वार :

इनकी स्थिति जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरमुहूर्त की ।

२१ मरण द्वार :

मरण दो प्रकार का समोहिया, असमोहिया ।

२२ च्यवन द्वार

ये दश दण्डक में जावे—पांच एके० तीन विकले० मनुष्य, तिर्यच ।

२३ आगति द्वार

इनमें दो गति का आवे—मनुष्य, तिर्यंच ।

२४ गति द्वार

दो गति में जावे—मनुष्य और तिर्यंच ।

युगलिया का दण्डक

१ शरीर द्वार :—युगलियों में शरीर तीन—१ औदारिक २ तैजस् ३ कार्मण ।

२ अवगाहना द्वार :—हेमवय, हिरण्य वय में ज० अंगुल के असख्यातवे भाग उ० एक गाउ की, हरिवास, रम्यक वास मे ज० अगुल के असंख्यातवे भाग उ० दो गाउ की, देवकुरु, उत्तरकुरु में ज० अगुल के असख्यातवे भाग उ० तीन गाउ की, छप्पन्न अन्तर द्वीप में आठ सो धनुष्य की ।

३ सघयण :—युगलियो मे संघयण एक १ वज्रऋषभनाराच संघयण ।

४ सस्थान :—युगलियो मे सस्थान एक—१ समचतुरस्र सस्थान ।

५ कषाय :—युगलियो में कषाय चार ।

६ संज्ञा :—युगलियो मे सज्ञा चार ।

७ लेश्या .—युगलियो लेश्या चार—कृष्ण, नील, कापोत, तेजस् ।

८ इन्द्रिय .—युगलियों मे इन्द्रिय पाँच ।

९ समुदघात ·—युगलियो में समुद्घात तीन १ वेदनीय २ कषाय ३ मारणातिक ।

१० संज्ञी :—युगलिया सज्ञी ।

११ वेद ·—युगलियो मे वेद दो १ स्त्री वेद, २ पुरुष वेद

१२ पर्याप्ति .—युगलियो मे पर्याप्ति ६, अपर्याप्ति ५ ।

१३ दृष्टि —युगलियो[1] पॉच देव कुरु, पाँच उत्तर कुरु मे दृष्टि दो-१ सम्यग् दृष्टि २ मिथ्यात्व दृष्टि ।

पॉच हरिवास पॉच रम्यक वास, पॉच हेमवय, पॉच हिरण्य वय—इन वीस अकर्मभूमि मे व छप्पन अन्तरद्वीप मे दृष्टि १ मिथ्यात्व दृष्टि ।

१४ दर्शन ·—इनमे दर्शन दो १ चक्षु दर्शन २ अचक्षु दर्शन ।

१५ ज्ञान :—[1]पाच देव कुरु, पाच उत्तर कुरु में दो ज्ञान—मति ज्ञान और श्रुत ज्ञान और २ अज्ञान—मतिअज्ञान और श्रुत अज्ञान, शेप बीस अकर्म भूमि व छप्पन्न अन्तर द्वीप मे दो अज्ञान १ मति अज्ञान और २ श्रुत अज्ञान ।

---

१. ३० अकर्मभूमि मे २ दृष्टि २ ज्ञान तथा २ अज्ञान होते है और ५६ अन्तरद्वीप मे ही १ मिथ्यात्व दृष्टि व २ अज्ञान होते है ऐसा कई ग्रथो मे वर्णन आता है ।

१६ योग :—इनमें योग ११ :-१ सत्य मन योग २ असत्य मन योग ३ मिश्र मन योग ४ व्यवहार मन योग ५ सत्य वचन योग ६ असत्य वचन योग ७ मिश्र वचन योग ८ व्यवहार वचन योग ९ औदारिक शरीर काय योग १० औदारिक मिश्र शरीर काय योग ११ कार्माण शरीर काय योग ।

१७ उपयोग द्वार :—[1]पाँच देव कुरु, पाँच उत्तर कुरु में उपयोग ६—१ मति ज्ञान २ श्रुत ज्ञान ३ मति अज्ञान ४ श्रुत अज्ञान ५ चक्षु दर्शन ६ अचक्षु दर्शन । शेष वीस अकर्म भूमि व छप्पन अन्तर द्वीप में उपयोग ४ :—१ मति अज्ञान, २ श्रुत अज्ञान ३ चक्षु दर्शन ४ अचक्षु दर्शन ।

१८ आहार द्वार :—युगलियों में आहार तीन प्रकार का ।

१९ उत्पत्ति द्वार व २२ च्यवन द्वार :—तीस अकर्म भूमि में दो दण्डक का आवे १ मनुष्य २ तिर्यञ्च और १३ दण्डक में जावे—दश भवन पति के दश दण्डक, एक वाणव्यन्तर का, एक ज्योतिषी का, एक वैमानिक का-एव तेरह दण्डक ।

छप्पन अन्तर् द्वीप में दो दण्डक का आवे मनुष्य और तिर्यच और ग्यारह दण्डक में जावे—१० भवनपति और एक वाण-व्यन्तर एव ग्यारह में जावे ।

२० स्थिति द्वार —हेमवय, हिरण्य वय में जघन्य एक पल्य में देश उण, उत्कृष्ट एक पल्य की ।

हरिवास रम्यक्वास में जघन्य दो पल्य में देश उण, उत्कृष्ट दो

---

१. ३० अकर्म भूमि मे ६ उपयोग (२ ज्ञान, २ अज्ञान, २ दर्शन) और ५६ अन्तरद्वीप मे ४ उपयोग (२ अज्ञान, २ दर्शन) ही होते है ऐसा अन्य ग्रंथो मे वर्णन है ।

पल्य की, देव कुरु उत्तर कुरु में जघन्य तीन पल्य में देश उण उत्कृष्ट तीन पल्य की ।

छप्पन्न अन्तर द्वीप में जघन्य पल्य के असंख्यातवे भाग में देश उण उत्कृष्ट पल्य के असंख्यातवे भाग ।

२१ मरण द्वार :—मरण दो—१ समोहिया और २ असमोहिया ।

२३ आगति द्वार :—इनमें दो गति का आवे—१ मनुष्य और २ तिर्यञ्च ।

२४ गति द्वार :—ये एक गति मनुष्य मे जावे ।

सिद्धों का विस्तार

१ शरीर द्वार—सिद्धों के शरीर नही ।

२ अवगाहना द्वार :—५०० धनुष्य अवगाहना वाले जो सिद्ध हुए है उनकी अवगाहना ३३३ धनुष्य और ३२ अंगुल ।

सात हाथ के जो सिद्ध हुए है उनकी अवगाहना चार हाथ और सोलह अंगुल की ।

दो हाथ के जो सिद्ध हुए है उनकी एक हाथ और आठ अंगुल की ।

३ संघयन द्वार :— सिद्ध असघयनी (सघयन नही) ।

४ सस्थान द्वार :— सिद्ध असस्थानी (सस्थान नही) ।

५ कषाय द्वार :— सिद्ध अकषायी (कषाय नही) ।

६ सज्ञा द्वार :— सिद्ध मे सज्ञा नही ।

७ लेश्या द्वार :— सिद्ध मे लेश्या नही ।

८ इन्द्रिय द्वार :— सिद्ध में इन्द्रिय नही ।

९ समुद्घात द्वार :— सिद्ध में समुद्घात नही ।

१० संज्ञी द्वार :—सिद्ध नही तो संज्ञी और न असंज्ञी।

११ वेद द्वार :—सिद्ध मे वेद नही।

१२ पर्याप्ति द्वार :—सिद्ध में न पर्याप्ति है और न अपर्याप्ति है

१३ दृष्टि द्वार :—सिद्ध सम्यग् दृष्टि।

१४ दर्शन द्वार :—सिद्ध मे केवल एक दर्शन—केवलदर्शन

१५ ज्ञान द्वार :—सिद्ध में केवल ज्ञान।

१६ योग द्वार :—सिद्ध में योग नही।

१७ उपयोग द्वार :—सिद्ध में उपयोग दो— १ केवल ज्ञान २ केवल दर्शन।

१८ आहार द्वार :—सिद्ध में आहार नही।

१९ उत्पत्ति द्वार :—सिद्ध में उत्पत्ति नही।

२० स्थिति द्वार :—सिद्ध की आदि है परन्तु अन्त नही।

२१ मरण द्वार :—सिद्ध में मरण नही।

२२ चवन द्वार :—सिद्ध चवते नही।

२३ आगति द्वार :—सिद्ध मे एक गति-मनुष्य का आवे।

२४ गति द्वार :—सिद्ध मे गति नही।

ऐसे श्री सिद्ध भगवन्त को मेरा तीनो काल पर्यन्त नमस्कार होवे।
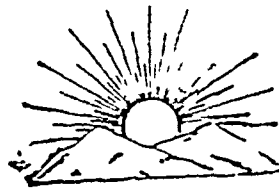
आठ कर्म की प्रकृति

आठ कर्मो के नाम : १ ज्ञानावरणीय २ दर्शनावरणीय ३ वेदनीय ४ मोहनीय ५ आयुष्य ६ नाम ७ गोत्र ८ अन्तराय ।

कर्म के लक्षण

१ ज्ञानावरणीय कर्म . सूर्य को ढाकने वाले बादल के समान ।

२ दर्शनावरणीय कर्म . राजा के समीप पहुँचाने में जैसे द्वारपाल है उसके (द्वारपाल) समान ।

३ वेदनीय कर्म : साता वेदनीय मधु लगी हुई तलवार की धार के समान-जिसे चाटने से तो मीठी मालूम होवे परन्तु जीभ कट जावे ।

असाता वेदनीय अफीम लगी हुई खड्ग समान ।

४ मोहनीय कर्म दारू (शराब) समान ।

५ आयुष्य कर्म : राजा की बेडी समान जो समय हुवे बिना छूट नही सके ।

६ नाम कर्म : चीतारा (पेन्टर) समान जो विविध प्रकार के रूप बनाता है ।

७ गोत्र कर्म .—कुम्भकार के चक्र समान जो मिट्टी के पिड को घुमाता है ।

८ अन्तराय कर्म :--सर्व शक्ति रूप लक्ष्मी को रखता है जैसे राजा का भंडारी भडार (खजाना) को रखता है।

आठ कर्म की प्रकृति तथा आठ कर्मो का बन्ध कितने प्रकार से होता है व कितने प्रकार से वे भोगे जाते है, तथा आठ कर्मो की स्थिति आदि :—

१ ज्ञानावरणीय कर्म

ज्ञानावरणीय कर्म की पाँच प्रकृति : १ मतिज्ञानावरणीय २ श्रुतज्ञानावरणीय ३ अवधिज्ञानावरणीय ४ मन:पर्यय ज्ञानावरणीय ५ केवलज्ञानावरणीय ।

ज्ञानावरणीय कर्म छः प्रकारे बाँधे

१ नाणप्पडिणियाए—ज्ञान तथा ज्ञानो का अवर्णवाद बोले तो ज्ञानावरणीय कर्म बांधे २ नाणनिन्हवणियाए—ज्ञान देने वाले के नाम को छिपावे तो ज्ञानावरणीय कर्म बांधे २ नाणअन्तरायेणं—ज्ञान प्राप्त करने में अन्तराय (वाधा) डाले तो ज्ञानावरणीय कर्म वांधे ४ नाणपउसेणं ज्ञान तथा ज्ञानी पर द्वेष करे तो ज्ञानावरणीय कर्म बांधे ५ नाण आसायणाए—ज्ञान तथा ज्ञानी की असातना (तिरस्कार, निरादर) करे तो ज्ञानावरणीय कर्म बाँधे ६ विसपायणा जोगेणं— ज्ञानी के साथ खोटा (झूठा) विवाद करे तो ज्ञानावरणीय कर्म बाँधे।

ज्ञानावरणीय कर्म १० प्रकारे भोगे

१ श्रोत आवरण २ श्रोत विज्ञान आवरण ३ नेत्र आवरण ४ नेत्र विज्ञान आवरण ५ घ्राण आवरण ६ घ्राण विज्ञान आवरण ७ रस आवरण ८ रस विज्ञान आवरण ९ स्पर्श आवरण १० स्पर्श विज्ञान आवरण ।

ज्ञानावरणीय कर्म की स्थिति जघन्य अन्तरमुहूर्त की उत्कृष्ट तीस करोडाकरोडी सागरोपम की, अवाधा काल तीन हजार वर्ष का।

दर्शनावरणीय कर्म का विस्तार

दर्शनावरणीय कर्म की प्रकृति नव

१ निद्रा :—सुख से ऊँघे और सुख से जागे।

२ निद्रा निद्रा :—दु:ख से ऊँघे और दु:ख से जागे।

३ प्रचला —बैठे २ ऊँघे।

४ प्रचला प्रचला —बोलते बोलते व खाते खाते ऊँघे।

५ थीणाद्धि (स्त्यानर्द्धि) निद्रा—ऊँघ के अन्दर अर्ध वासुदेव का बल आवे। जब ऊँघ के अन्दर ही उठ बैठे, उठ कर द्वार (किवाड) खोले, खोल कर अन्दर से आभूषणों का डिब्बा और वस्त्रो की गठडी लेकर नदी पर जावे। वह डिब्बा हजार मन की शिला उठा कर उसके नीचे रखे व कपडो को धोकर घर पर आवे, सुबह सोकर उठे परन्तु मालूम होवे नही कि रात को मैंने क्या-क्या किया। डिब्बे को ढूंढे परन्तु घर मे मिले नही। ऐसी निद्रा छ महिने बाद फिर आवे उस समय डिब्बा जहाँ रक्खा होवे वहाँ से लाकर घर में रखे पश्चात् काम करे। ऐसी निद्रा लेने वाला जीव मर कर नरक में जावे। इसे स्त्यानर्द्धि निद्रा कहते है।

६ चक्षु दर्शनावरणीय ७ अचक्षु दर्शनावरणीय ८ अवधिदर्शनावरणीय ९ केवलदर्शनावरणीय।

दर्शनावरणीय कर्म छ: प्रकारे बांधे

१ दंसणपडिणियाए :—सम्यक्त्वी का अवर्णवाद बोले तो दर्शनावरणीय कर्म बांधे।

२ दंसण निण्हवणियाए :—बोध बीज सम्यक्त्व दाता के नाम को छिपावे तो दर्शनावरणीय कर्म बाँधे।

३ दसण अंतरायेण :—यदि कोई समकित ग्रहण करता हो उसे अन्तराय देवे तो दर्शनावरणीय कर्म बाँधे।

४ दंसण पाउसियाए :—समकित तथा सम्यक्त्वी पर द्वेष करे तो दर्शनावरणीय कर्म बाँधे।

५ दसणआसायणाए :—समकित तथा सम्यक्त्वी की असातना करे तो दर्शनावरणीय कर्म बाँधे।

६ दंसणविसवायणा जोगेणं :—सम्यक्त्वी के साथ खोटा व झूठा विवाद करे तो दर्शनावरणीय कर्म बाँधे।

दर्शनावरणीय कर्म नव प्रकार से भोगे

१ निद्रा २ निद्रा-निद्रा ३ प्रचला ४ प्रचला प्रचला ५ थीणद्धि (स्त्यानर्द्धि) ६ चक्षु दर्शनावरणीय ७ अचक्षु दर्शनावरणीय ८ अवधि-दर्शनावरणीय ९ केवलदर्शनावरणीय।

दर्शनावरणीय कर्म की स्थिति जघन्य अन्तरमुहूर्त की उत्कृष्ट तीस करोडाकरोडी सागरोपम की, अबाधाकाल तीन हजार वर्ष का।

३ वेदनीय कर्म का विस्तार

वेदनीय कर्म के दो भेद—१ सातावेदनीय २ असातावेदनीय। वेदनीय कर्म की सोलह प्रकृति—आठ साता वेदनीय की और आठ असातावेदनीय की।

साता वेदनीय कर्म की आठ प्रकृति

१ मनोज्ञ शब्द २ मनोज्ञ रूप ३ मनोज्ञ गंध ४ मनोज्ञ रस ५ मनोज्ञ स्पर्श ६ मन सौख्य (सुहिया) ७ वचन सौख्य ८ काया सौख्य।

असातावेदनीय कर्म की आठ प्रकृति

१ अमनोज्ञ शब्द २ अमनोज्ञ रूप ३ अमनोज्ञ गध ४ अमनोज्ञ रस ५ अमनोज्ञ स्पर्श ६ मन दुख ७ वचन दुख ८ काया दुख ।

वेदनीय कर्म २२ प्रकारे बाधे इसमे साता वेदनीय .—

१० प्रकारे बाधे

१ पाणाणुकपियाए[1] २ भूयाणुकपियाए ३ जीवाणु-कंपियाए ४ सत्ताणुकपियाए ५ बहूण पाणाणं भूयाणं जीवाणं सत्ताणं अक्दुखणीयाए ६ असोयणियाए ७ अझुर-णियाए ८ अटीप्पणियाए ९ अपीट्टणियाए १० अपरिता-वणियाए ।

असातावेदनीय १२ प्रकारे बांधे

११ परदुक्खणियाए १२ परसोयणियाए १३ पर झुरणियाए १४ परटीप्पणियाए १५ परपीट्टणियाए १६ परपरितावणियाए १७ बहुणं पाणाण भूयाणं जीवाणं सत्ताण दुक्खणियाए १८ सोयणियाए १९ झुरणियाए २० टीप्पणियाए २१ पीट्टणियाए २२ परितावणियाए ।

१—१ प्राणी अनुकम्पा २ भूत अनुकम्पा ३ जीव अनुकम्पा ४ सत्त्व अनुकम्पा ५ बहु प्राणी भूत, जीव, सत्त्व को दुख देना नही ६ शोक करना नही ७ झूरणा नही ८ टपक २ आसू (अश्रुपात) गिराना नही ९ पीटना नही और परितापना (पश्चाताप) करना नही ।

वेदनीय कर्म सोलह प्रकारे भोगवे उक्त सोलह प्रकृति अनुसार।

वेदनीय कर्म की स्थिति—साता वेदनीय की स्थिति जघन्य दो समय की उत्कृष्ट १५ करोड़ाकरोड़ी सागरोपम की, अबाधा काल करे तो जघन्य अन्तर मुहूर्त का उत्कृष्ट १॥ हजार वर्ष का।

आसातावेदनीय की स्थिति जघन्य एक सागर के सात हिस्सो में से तीन हिस्से और एक पल्य के असख्यातवे भाग उणी (कम) उत्कृष्ट तीस करोड़ाकरोड़ी सागरोपम की, अबाधाकाल तीन हजार वर्ष का।

४ मोहनीय कर्म का विस्तार

मोहनीय कर्म के दो भेद :—१ दर्शन मोहनीय २ चारित्र मोहनीय।

दर्शनमोहनीय की तीन प्रकृति:—१ सम्यक्त्व मोहनीय २ मिथ्यात्व मोहनीय ३ मिश्र (समिथ्यात्व) मोहनीय।

चारित्र मोहनीय के दो भेद :—१ कषायचारित्र मोहनीय २ नोकषायचारित्र मोहनीय। कषायचारित्र मोहनीय की सोलह प्रकृति, नोकषायचारित्र मोहनीय की नव प्रकृति एव २८ प्रकृति।

कषाय चारित्र मोहनीय की १६ प्रकृति

१ अनन्तानुबधी क्रोध—पर्वत की चीर समान
२ " " मान—पत्थर के स्तम्भ समान

---

११ पर (दूसरा) को दुख देना १२ पर को शोक कराना १३ पर को झुराना १४ पर से आसू गिरवाना १५ पर को पीटना १६ पर को परिताप देना १७ वहु प्राणी भूत जीव सत्वो को दुख देना १८ शोक करना १९ झूरना २० टपक २ आसू गिराना २१ पीटना २२ परितापना करना।

३ अनन्तानुबन्धी माया—बाँस की जड़ (मूल) समान

४ ,, ,, लोभ—कीरमची रग समान

इन चार प्रकृति की गति नरक की, स्थिति जावजीव की, घात करे समकित की।

५ अप्रत्याख्यानी क्रोध—तालाब की तीराड़ के समान

६ ,, ,, मान—हड्डी के स्तम्भ समान

७ ,, ,, माया—मेढे के सीग समान

८ ,, लोभ—नगर की गटरके कर्दम (कादा) समान।

इन चार की गति तिर्यञ्च की, स्थिति एक वर्ष की, घात करे देश व्रत की।

९ प्रत्याख्यानावरणीय क्रोध—बालु (रेत) की भीत (दीवार) समान।

१० प्रत्याख्यानावरणीय मान—लक्कड के स्तम्भ समान

११ ,, ,, माया–गौमूत्रिका (बेल मूतणी) समान

१२ ,, ,, लोभ – गाडा का आजन (कज्जल) ,,

इन चार की गति—मनुष्य की, स्थिति चार माह की, घात करे साधुत्व की

१३ सज्वलन क्रोध—जल के अन्दर लकीर समान

१४ ,, मान—तृण के स्तम्भ समान

१५ ,, माया – बास की छोई (छिलका) समान

१६ ,, लोभ—पतंग तथा हल्दी के रग समान

इन चार की गति—देव की, स्थिति १५ दिनो की घात करे केवलज्ञान की।

नोकषाय चारित्र मोहनीय की नव प्रकृति

१ हास्य २ रति ३ अरति ४ भय ५ शोक ६ दुगुंछा ७ स्त्रीवेद ८ पुरुषवेद ६ नपुंसकवेद।

मोहनीय कर्म छः प्रकार से बाँधे

१ तीव्र क्रोध २ तीव्र मान ३ तीव्र माया ४ तीव्र लोभ ५ तीव्र दर्शन मोहनीय ६ तीव्र चारित्र मोहनीय।

मोहनीय कर्म पांच प्रकारे भोगवे

१ सम्यक्त्व मोहनीय २ मिथ्यात्व मोहनीय ३ सम्यक्त्व मिथ्यात्व (मिश्र) मोहनीय ४ कषाय चारित्र मोहनीय ५ नोकषाय चारित्र मोहनीय।

मोहनीय कर्म की स्थिति

जघन्य अन्तर मुहूर्त की उत्कृष्ट ७० करोड़ाकरोड़ सागरोपम की, अबाधा काल ज० अन्तर मुहूर्त का उ० सात हजार वर्ष का।

आयुष्य कर्म का विस्तार

आयुष्य कर्म की चार प्रकृति :—१ नरक का आयुष्य २ तिर्यञ्च का आयुष्य ३ मनुष्य का आयुष्य ४ देव का आयुष्य।

आयुष्य कर्म सोलह प्रकारे बाँधे

१ नरक आयुष्य चार प्रकारे बाँधे २ तिर्यच का आयुष्य चार प्रकारे बाँधे ३ मनुष्य का आयुप्य चार प्रकारे बाँधे ४ देव आयुष्य चार प्रकारे बाँधे।

नरक आयुष्य चार प्रकारे बाँधे :—१ महा आरम्भ २ महापरिग्रह ३ मद्य-माँस का आहार ४ पचेन्द्रिय वध।

तिर्यंच आयुष्य चार प्रकारे बाँधे :—१ कपट २ महा कपट ३ मृषावाद ४ खोटा तोल, खोटा माप।

मनुष्य आयुष्य चार प्रकारे बाँधे :—१ भद्र प्रकृति २ विनय प्रकृति ३ सानुक्रोष (दया) ४ अमत्सर (इर्ष्या रहित)।

देव आयुष्य चार प्रकारे बाँधे :—१ सराग सयम २ सयमासंयम ३ बालतप ४ अकाम निर्जरा।

आयुष्य कर्म चार प्रकारे भोगवे

१ नेरिये नरक का भोगवे २ तिर्यंच, तिर्यंच का भोगवे ३ मनुष्य, मनुष्य का भोगवे ४ देव, देव का भोगवे।

आयुष्य कर्म की स्थिति

नरक व देव की स्थिति ज० दश हजार वर्ष और अन्तर मुहूर्त की, उ० तेतीस सागर और करोड पूर्व का तीसरा भाग अधिक।

मनुष्य व तिर्यंच की स्थिति ज० अ० मुहूर्त की उ० तीन पल्य करोड पूर्व का तीसरा भाग अधिक।

नाम कर्म का विस्तार

नाम कर्म के दो भेद —१ शुभ नाम २ अशुभ नाम।

नाम कर्म के ९३ प्रकृति जिसके ४२ थोक

१ गति नाम २ जाति नाम ३ शरीर नाम ४ शरीर अंगोपाग नाम ५ शरीर बधन नाम ६ शरीर संघातकरण नाम ७ सघयन नाम ८ सस्थान नाम ९ वर्ण नाम १० गध नाम ११ रस नाम १२ स्पर्श नाम १३ अगुरु लघु नाम १४ उपघात नाम १५ पराघात नाम १६ अणुपूर्वी नाम १७ उच्छ्वास नाम १८ उद्योत नाम १९ आताप नाम २० विहाय-गति नाम २१ त्रस नाम २२ स्थावर नाम २३ सूक्ष्म नाम २४ बादर नाम २५ पर्याप्त नाम २६ अपर्याप्त नाम २७ प्रत्येक नाम

२८ साधारण नाम २९ स्थिर नाम ३० अस्थिर नाम ३१ शुभ नाम ३२ अशुभ नाम ३३ सौभाग्य नाम ३४ दुर्भाग्य नाम ३५ सुस्वर नाम ३६ दु:स्वर नाम ३७ आदेय नाम ३८ अनादेय नाम ३९ यशोकीर्ति नाम ४० अयशोकीर्ति नाम ४१ तीर्थङ्कर नाम ४२ निर्माण नाम ।

४२ थोक की ९३ प्रकृति

(१) गति नाम के चार भेद :—१ नरक गति २ तिर्यञ्च गति ३ मनुष्य गति ४ देव गति ।

(२) जाति नाम के पांच भेद :—१ एकेन्द्रिय जाति २ द्वीन्द्रिय जाति ३ त्रीन्द्रिय जाति ४ चौरिन्द्रिय जाति ५ पंचेन्द्रिय जाति ।

(३) शरीर के पांच भेद:—१ औदारिक शरीर २ वैक्रिय शरीर ३ आहारक शरीर ४ तेजस् शरीर ५ कार्माण शरीर ।

(४) शरीर अंगोपांग के तीन भेद:—१ औदारिक शरीर अंगोपांग २ वैक्रिय शरीर अंगोपांग ३ आहारक शरीर अंगोपाग ।

(५) शरीर बंधन नाम के पांच भेद:—१ औदारिक शरीर बंधन २ वैक्रिय शरीर बंधन ३ आहारक शरीर बंधन ४ तेजस् शरीर बंधन ५ कार्माण शरीर बंधन ।

(६) शरीर संघातकरणं नाम के पांच भेद.— १ औदारिक शरीर सघात करणं २ वैक्रिय शरीर संघात करण ३ आहारक शरीर संघातकरणं ४ तेजस् शरीर सघात करणं ५ कार्माण शरीर संघात करणं ।

(७) संघयण नाम के छ: भेद·—१ वज्रऋषभ नाराच सघयण २ ऋषभ नाराच संघयण ३ नाराच संघयण ४ अर्ध नाराच सघयण ५ कीलिका सघयण ६ सेवार्त्त संघयण ।

(८) संस्थान नाम के छः भेद:—१ समचतुरस्र संस्थान २ न्यग्रोधपरिमडल सस्थान ३ सादिक संस्थान ४ कुब्ज संस्थान ५ वामन संस्थान ६ हुंडक सस्थान,—३९

(९) वर्ण नाम के पाच भेद.—१ कृष्ण २ नील ३ रक्त ४ पीत ५ श्वेत,–४४

(१०) गध के दो भेद:—१ सुरभिगध २ दुरभिगध,–४६

(११) रस के पाच भेद —१ तीक्ष्ण २ कटुक ३ कषाय ४ क्षार (खट्टा) ५ मिष्ट,–५१

(१२) स्पर्श के आठ भेद.—१ लघु २ गुरु ३ कर्कश ४ कोमल ५ शीत ६ उष्ण ७ रुक्ष ८ स्निग्ध,–५९

(१३) अगुरु लघु नाम का एक भेद, ६०

(१४) उपघात नाम का एक भेद, ६१

(१५) पराघात नाम का एक भेद, ६२

(१६) अणुपूर्वी के चार भेद·—१ नरक की अणुपूर्वी २ तिर्यञ्च की अणुपूर्वी ३ मनुष्य की अणपूर्वी ४ देव की अणुपूर्वी, ६६

(१७) उच्छ्वास नाम का एक भेद , ६७

(१८) उद्योत नाम का एक भेद, ६८

(१९) आताप नाम का एक भेद, ६९

(२०) विहाय गति नाम के दो भेद:—१ प्रशस्त विहाय गति—गन्ध हस्ती के सामान शुभ चलने की गति २ अप्रशस्त विहाय गति, ऊँट के सामान अशुभ चलने की गति, ७१

शेष २२ बोल जो रहे उनमे से प्रत्येक का एक भेद एवं (७१+२२) ९३ प्रकृति।

नाम कर्म आठ प्रकार से बांधे :

शुभ नाम कर्म चार प्रकार से बाधे:—१ काया की सरलता—काया के योग अच्छे प्रकार से प्रवर्तावे २ भाषा की सरलता—वचन के योग अच्छे प्रकार से प्रवर्तावे ३ भाव की सरलता —मन के योग अच्छे प्रकार से प्रवर्तावे ४ अक्लेशकारी प्रवर्तन खोटा व झूठा विवाद नही करे।

अशुभ नाम कर्म चार प्रकारे वांधे.—१ काया की वक्रता २ भाषा की वक्रता ३ भाव की वक्रता ४ क्लेशकारी प्रवर्तन।

नाम कर्म २८ प्रकारे भोगवे

शुभ नाम कर्म १४ प्रकारे भोगवे:—१ इष्ट शब्द २ इष्ट रूप ३ इष्ट गध ४ इष्ट रस ५ इष्टस्पर्श ६ इष्ट गति ७ इष्ट स्थिति ८ इष्ट लावण्य ९ इष्ट यशोकीर्ति १० इष्ट उत्थान, कर्म बल वीर्य पुरुषाकार पराक्रम ११ इष्ट स्वर १२ कान्त स्वर १३ प्रिय स्वर १४ मनोज्ञ स्वर।

अशुभ नाम कर्म १४ प्रकारे भोगवे.—१ अनिष्ट शब्द २ अनिष्ट रूप ३ अनिष्ट गंध ४ अनिष्टरस ५ अनिष्ट स्पर्श ६ अनिष्ट गति ७ अनिष्ट स्थिति ८ अनिष्ट लावण्य ९ अनिष्ट यशोकीर्ति १० अनिष्ट उत्थान, कर्म बल वीर्य पुरुषाकार पराक्रम ११ हीनस्वर १२ दीन स्वर १३ अनिष्ट स्वर १४ अकान्त स्वर।

नाम कर्म की स्थिति जघन्य आठ मुहूर्त की उत्कृष्ट वीस करोड़ाकरोड़ सागरोपम की, अवाधाकाल दो हजार वर्ष का।

७ गोत्र कर्म का विस्तार

गोत्र कर्म के दो भेद:—१ उच्च गोत्र २ नीच गोत्र। गोत्र कर्म की सोलह प्रकृति जिसमें से उच्च गोत्र की आठ प्रकृति—

१ जाति विशिष्ट २ कुल विशिष्ट ३ बल विशिष्ट ४ रूप विशिष्ट ५ तप विशिष्ट ६ सूत्र विशिष्ट ७ लाभ विशिष्ट ८ ऐश्वर्य विशिष्ट।

नीचे गोत्र की आठ प्रकृति—१ जाति विहीन २ कुल विहीन ३ बल विहीन ४ रूप विहीन ५ तप विहीन ६ सूत्र विहीन ७ लाभ विहीन ८ ऐश्वर्य विहीन।

गोत्र कर्म सोलह प्रकारे वांधे:— ऊच गोत्र आठ प्रकारे वांधे:—१ जाति अमद (अभिमान नही करे) २ कुल अमद ३ वल अमद

४ रूप अमद ५ तप अमद ६ सूत्र अमद ७ लाभ अमद ८ ऐश्वर्य अमद ।

नीच गोत्र आठ प्रकारे बाधे —१ जाति मद २ कुल मद ३ बल मद ४ रूप मद ५ तप मद ६ सूत्र मद ७ लाभ मद ८ ऐश्वर्य मद ।

गोत्र कर्म सोलह प्रकारे भोगवे:— ऊंच गोत्र आठ प्रकारे भोगवे और नीच गोत्र आठ प्रकारे भोगवे । उक्त नाम कर्म की सोलह प्रकृति के सामान ही सोलह प्रकारे भोगवे ।

गोत्र कर्म की स्थिति·—जघन्य आठ मुहूर्त की, उत्कृष्ट बीस करोड़ाकरोड सागरोपम की, अबाधा काल दो हजार वर्ष का ।

८ अन्तराय कर्म का विस्तार

अन्तराय कर्म की पांच प्रकृति·—१ दानान्तराय २ लाभान्तराय ३ भोगान्तराय ४ उपभोगान्तराय ५ वीर्यान्तराय ।

अन्तराय कर्म पांच प्रकारे बांधे—ऊपर सामान ।

अन्तराय कर्म पाच प्रकारे भोगवे—ऊपर सामान ।

अन्तराय कर्म की स्थिति—जघन्य अन्तर मुहूर्त की, उत्कृष्ट तीस करोडाकरोड़ सागरोपम की, अबाधा काल तीन हजार वर्ष का ।

गतागति द्वार

गाथा

[1]बारस [2]चउवीसाइ [3]संतर [4]एगसमय [5] कत्तीय ।
[6]उवट्टण परभव [7]आउयं, च अठेव आगरिसा ।।

पहला बारह द्वार

नरक, तिर्यञ्च, मनुष्य, देव इन चार गतियो में उत्पन्न होने का, चवने का अन्तर पडे तो जघन्य एक समय उत्कृष्ट बाहर मुहूर्त का अन्तर पड़े। सिद्ध गति में अन्तर पड़े तो जघन्य एक समय, उत्कृष्ट छः मास का। चवने का अन्तर नही पड़े।

दूसरा चउवीस द्वार

(१) पहली नरक में अन्तर पड़े तो जघन्य एक समय, उत्कृष्ट चौवीस मुहूर्त का।

(२)दूसरी नरक में अन्तर पड़े तो जघन्य एक समय उत्कृष्ट सात दिन का।

(३) तीसरी नरक में जघन्य एक समय उत्कृष्ट पन्द्रह दिन का।

(४) चौथी नरक में ,, ,, ,, ,,एक माह का
(५) पांचवी ,, ,, ,, ,, ,, ,,दो ,, ,,
(६) छठ्ठी ,, ,, ,, ,, ,, ,,चार ,, ,,
(७) सातवी,, ,, ,, ,, ,, ,,छः ,, ,,

भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी, पहिला दूसरा देव लोक में अन्तर पड़े तो जघन्य एक समय उत्कृष्ट चौबीस मुहूर्त का, तीसरे देव लोक मे अन्तर पड़े तो जघन्य एक समय उत्कृष्ट नव दिन और बीस मुहूर्त का।

चौथे देवलोक मे अन्तर पड़े तो जघन्य एक समय उत्कृष्ट बारह दिन और दस मुहूर्त का।

पाचवे देव लोक मे अन्तर पड़े तो जघन्य एक समय उत्कृष्ट साड़ा बावीस दिन का।

छठ्ठे देवलोक मे अन्तर पडे तो जघन्य एक समय उत्कृष्ट पैंतालीस दिन का।

सातवे देवलोक मे अन्तर पड़े तो जघन्य एक समय उत्कृष्ट अस्सी दिन का।

आठवे देवलोक में अन्तर पडे तो जघन्य एक समय उत्कृष्ट सौ दिन का।

नववे, दशवे देवलोक में जघन्य एक समय उत्कृष्ट संख्याता माह का, ग्यारहवे, बारहवे देवलोक में जघन्य एक समय उत्कृष्ट सख्याता वर्ष का, ग्रैवेयक की पहली त्रिक् मे अन्तर पड़े तो जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट संख्याता सौ वर्ष का, ग्रैवेयक की दूसरी त्रिक् मे जघन्य एक समय उ० सख्याता हजार वर्ष का ग्रैवेयक की तीसरी त्रिक् मे ज० एक समय उत्कृष्ट संख्याता लक्ष वर्ष का, चार अनुत्तर विमान में ज० एक समय उ० पल्य के असख्यातवे भाग, पांचवे सर्वार्थसिद्ध विमान में ज० एक समय उ० संख्यातवे भाग।

पाँच एकेन्द्रिय मे अन्तर नही पडे।

तीन विकलेन्द्रिय और तिर्यच समूर्छिम में अन्तर पड़े तो जघन्य एक समय उत्कृष्ट अन्तर मुहूर्त का।

तिर्यंच गर्भज व मनुष्य गर्भज में जघन्य एक समय उत्कृष्ट बारह मुहूर्त का। मनुष्य संमूर्छिम में जघन्य एक समय उत्कृष्ट चौवीस मुहूर्त का।

सिद्ध मे अन्तर पड़े तो जघन्य एक समय उत्कृष्ट छः माह का। इसी प्रकार सिद्ध को छोड़कर शेष मे चवने का अन्तर उक्त उत्पन्न होने के अन्तर के समान जानना।

तीसरा सअन्तर-निरन्तर द्वार

सअन्तर अर्थात् अन्तर सहित, निरन्तर अर्थात् अन्तर रहित उत्पन्न होवे।

पाँच एकेन्द्रिय के पाँच दण्डक छोड़कर शेष उन्नीस दण्डक में तथा सिद्ध में सअन्तर तथा निरन्तर उत्पन्न होवे।

पाँच एकेन्द्रिय के पाँच दण्डक में निरन्तर उत्पन्न होवे ऐसे ही उद्वर्तन (चवने का) जानना (सिद्ध को छोडकर)।

४ एक समय में किस बोल मे कितने उत्पन्न होवे व चवे उसका द्वार

सात नरक, ७, दस भवनपति, १७. वाणव्यन्तर, १८. ज्योतिषी, १९. पहले देवलोक से आठवे देवलोक तक, २७. तीन विकलेन्द्रिय, ३०. तिर्यंच संमूर्छिम, ३१. तिर्यंच गर्भज, ३२. मनुष्य संमूर्छिम, ३३. इन तेंतीस बोल में एक समय में जघन्य एक, दो, तीन उत्कृष्ट उपजे तो असंख्याता उपजे। नववां, दसवां, ग्यारवा व बारहवा देवलोक ये चार देवलोक ४, नव ग्रैवेयक, १३, पाँच अनुत्तर विमान १८ मनुष्य गभज १९ इन उन्नीस बोल मे जघन्य एक समय मे एक, दो, तीन उत्कृष्ट सख्याता उपजे, पृथ्वी, अप, अग्नि, वायु इन चार एकेन्द्रिय में समय-समय असंख्याता उपजे वनस्पति में समय-समय असंख्याता (यथास्थाने) अनन्ता उपजे।

सिद्ध में एक समय में जघन्य एक, दो, तीन उत्कृष्ट एक सौ आठ उपजे, ऐसे ही उद्वर्तन (चवन) सिद्ध को छोडकर शेष सर्व का जानना (उत्पन्न होने के समान।

पाँचवा कत्तो (कहा से आवे) छठ्ठा उद्वर्तन (चव कर कहाँ जावे) ये दोनो द्वार।

५६३ मे से जिस-जिस बोल के आकर उत्पन्न होवे वह आगति और चव कर ५६३ मे से जिस-जिस बोल है जावे वह गति (उद्वर्तन)।

(१) पहली नरक मे २५ बोल की आगति—१५ कर्मभूमि, ५ संज्ञी तिर्यच, ५ असज्ञी तिर्यच पचेन्द्रिय ये २५ का पर्याप्ता। गति[1] ४० बोल की—१५ कर्मभूमि, ५ सज्ञी तिर्यच इन बीस का पर्याप्ता तथा अपर्याप्ता एव ४०।

(२) दूसरी नरक मे बीस बोल की आगति—१५ कर्मभूमि, ५ संज्ञी तिर्यंच एव २० का पर्याप्ता। गति ४० बोल की पहली नरक समान।

(३) तीसरी नरक में उन्नीस बोल की आगति—उक्त दूसरी नरक बोल में से भुजपर (सर्प) को छोड़ शेष उन्नीस। गति ४० की ऊपर के २० समान।

(४) चौथी नरक मे अठ्ठारह बोल की आगति—उक्त २० बोल मे से १ भुज पर (सर्प) तथा २ खेचर छोड शेष १८ बोल। गति ४० की ऊपर समान।

(५) पाँचवी नरक मे १७ बोल की आगति—उक्त २० बोल मे से १ भुज पर (सर्प) २ खेचर ३ स्थल चर ये तीन छोड शेष १७ बोल। गति ४० की पहली नरक समान।

---

१ नेरिये और देवता काल करके मनुष्य तथा तिर्यच मे उत्पन्न होते है। ये अपर्याप्त अवस्था मे नही मरते अत इस अपेक्षा से कोई केवल पर्याप्ता ही मानते है।

(६) छठ्ठी नरक में १६ बोल की आगति—उक्त २० बोल मे से १ भुजपर (सर्प), २ खेचर, ३ स्थल चर, ४ उरपरि सर्प चार छोड़ शेष १६ वोल। गति ४० वोल की पहली नरक समान।

(७) सातवी नरक में १६ बोल की आगति पन्द्रह कर्मभूमि और १ जलचर एव १६ बोल। इसमें स्त्री मर कर नही आती है, केवल पुरुप तथा नपुंसक मर कर आते है। गति दस बोल की—पॉच संज्ञी तिर्यंच का पर्याप्ता और अपर्याप्ता।

२५ भवनपति और २६ वाण व्यन्तर। इन ५१ जाति के देवताओ मे आगति १११, वोल की—१०१, संज्ञी मनुष्य का पर्याप्ता, पाँच संज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय और पॉच असज्ञी तिर्यंच एवं १११ का पर्याप्ता। गति ४६ वोल की—१५ कर्मभूमि, पाँच संज्ञी तिर्यंच, वादर पृथ्वी काय, वादर अपकाय, वादर वनस्पति काय एवं तेवीस का पर्याप्ता और अपर्याप्ता।

ज्योतिषी और पहला देवलोक में ५० वोल की आगति—१५ कर्म भूमि, ३० अकर्म भूमि, ५ संज्ञी तिर्यंच एवं ५० का पर्याप्ता। गति ४६ बोल की भवनपति समान।

दूसरा देवलोक में ४० बोल की आगति—१५ कर्मभूमि, पाँच सज्ञी तिर्यञ्च ये २० और ३० अकर्मभूमि मे से पॉच हेमवय और पाँच हिरणवय छोड़ शेष २० अकर्मभूमि एवं ४० वोल का पर्याप्ता। गति ४६ वोल की भवनपति समान।

पहला किल्विषी में ३० वोल की आगति—१५ कर्मभूमि, ५ संज्ञी तिर्यञ्च, ५ देव कुरु, ५ उत्तर कुरु एवं ३० का पर्याप्ता। गति ४६ वोल की भवनपति समान।

तीसरे देवलोक से आठवे देवलोक तक, नव लोकातिक और दूसरा तीसरा किल्विषी—इन १७ प्रकार के देवताओं में २० वोल की आगति १५ कर्म भूमि, ५ सज्ञी तिर्यञ्च एवं २० वोल का पर्याप्ता।

गति ४० बोल की—१५ कर्मभूमि, ५ सञ्ज्ञीतिर्यञ्च एवं २० का पर्याप्ता और अपर्याप्ता।

नवे, दशवे, ग्यारहवे और बारहवे देवलोक मे, नव ग्रैवेयक व पांच अनुत्तर विमान में आगति १५ बोल की—१५ कर्म भूमि का पर्याप्ता। गति ३० बोल की—१५ कर्मभूमि का पर्याप्ता और अपर्याप्ता एवं ३० बोल।

पृथ्वी, अप, वनस्पति—इन तीन मे २४३ की आगति—१०१ संमूर्च्छिम मनुष्य का अपर्याप्ता, १५ कर्मभूमि का अपर्याप्ता और पर्याप्ता, ३०, ४८ जाति का तिर्यञ्च, और ६४ जाति का देव (२५ भवनपति, २६ वाणव्यन्तर १० ज्योतिषी, पहला किल्विषी, पहला और दूसरा देवलोक एवं ६४ जाति के देव) का पर्याप्ता एवं (१०१+३०+४८+६४) २४३ बोल। गति १७९ बोल की—१०१ संमूर्च्छिम मनुष्य का अपर्याप्ता, १५ कर्मभूमि का अपर्याप्ता और पर्याप्ता, और ४८ जाति का तिर्यञ्च एवं १७९ बोल।

तेजस् वायु की आगति १७९ बोल की—ऊपर समान। गति ४८ बोल की—४८ जाति का तिर्यञ्च।

तीन विकलेन्द्रिय (द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चौरिन्द्रिय) की आगति १७६ बोल की ऊपर समान गति। गति १७९ बोल की ऊपर समान।

असंज्ञी तिर्यञ्चकी आगति १७९ बोल की—१०१ समूर्च्छिम मनुष्य का अपर्याप्ता, १५ कर्मभूमि का अपर्याप्ता और पर्याप्ता और ४८ जाति का तिर्यञ्च एव १७९ बोल। गति ३९५ बोल की—५६ अन्तरद्वीप, ५१ जाति का देव, पहली नरक इन १०८ का अपर्याप्ता और पर्याप्ता ये २१६ और ऊपर कहे हुवे १७९ एवं ३९५ बोल।

सञ्ज्ञी तिर्यञ्च की आगति २६७ बोल की—८१ जाति का देव (९९ जाति के देवताओं में से ऊपर के चार देवलोक नव ग्रैवेयक,

५ अनुत्तर विमान एवं १८ छोड शेष ८१ जाति का देव) सात नरक का पर्याप्ता ये ८८ और ऊपर कहे हुवे १७९ एवं २६७ बोल ।

गति पॉचों की अलग अलग

१ जलचर की ५२७ बोल की :—५६३ मे से नववे देवलोक से सर्वार्थसिद्ध तक १८ जाति का देव का अपर्याप्ता और पर्याप्ता एव ३६ बोल छोड़, शेष ५२७ बोल ।

२ उरपर (सर्प) की ५२३ बोल की :—उक्त ५२७ मे से छठ्ठी और सातवी नरक का अपर्याप्ता और पर्याप्ता ये चार बोल छोड़ शेष ५२३ बोल ।

३ स्थलचर की ५२१ बोल की—५२३ में से पांचवी नरक का अपर्याप्ता और पर्याप्ता—ये दो बोल घटाना ।

४ खेचर की ५१९ बोल की—५२१ में से चौथी नरक का अपर्याप्ता और पर्याप्ता—ये दो बोल घटाना ।

५ भुजपर (सर्प) की ५१७ बोल की :—५१९ में से तीसरी नरक का अपर्याप्ता और पर्याप्ता ये २ बोल घटाना ।

असंज्ञी मनुष्य की आगति १७१ बोल की—ऊपर कहे हुए १७९ बोल में से तेजस् वायु का आठ बोल घटाना । गति १७९ बोल की, ऊपर समान ।

१५ कर्मभूमि सज्ञी मनुष्य की आगति २७६ बोल की—उक्त १७९ बोल में से तेजस् वायु का आठ बोल घटाने से शेष १७१ बोल, ९९ जाति के देव, और पहली नरक से छठ्ठी नरक तक एव (१७१+९९+६) २७६ वोल । गति ५६३ बोल की ।

३० अकर्म भूमि संज्ञी मनुष्य की आगति २० बोल की । १५ कर्म भूमि, ५ सज्ञी तिर्यञ्च एवं २० वोल गति नीचे अनुसार ।

५ देव कुरु, ५ उत्तर कुरु । इन दस क्षेत्र के युगलियो की १२८ बोल की ६४ जाति के देव का अपर्याप्ता और पर्याप्ता एव १२८ वोल की ।

५ हरि वास, ५ रम्यक वास। इन दस क्षेत्र के युगलियो की १२६ बोल की—उक्त १२८ बोल मे से पहला किल्विषी का अपर्याप्ता और पर्याप्ता घटाना।

५ हेमवय, ५ हिरण्यवय। इन दस क्षेत्र के युगलियो की १२४ बोल की—उक्त १२६ बोल मे से दूसरे देवलोक का अपर्याप्ता और पर्याप्ता घटाना।

५६ अन्तर द्वीप के युगलियो की २५ बोल की आगति—१५ कर्म भूमि, ५ सञ्ज्ञी तिर्यञ्च, ५ असञ्ज्ञी तिर्यञ्च एव २५ गति १०२ बोल की—२५ भवन पति, २६ वाण व्यन्तर। इन ५१ का अपर्याप्ता एवं १०२ ये २२ बोल सम्पूर्ण इन २२ बोल मे चौबीस दण्डक की गतागति कही गई है।

नव उत्तम पदवी मे से माडलिक राजा छोड़ शेष आठ पदवीधर मिथ्यात्वी तथा तीन वेद एव १२ बोल की गतागति :—

(१) तीर्थङ्कर की आगति ३८ बोल की—वैमानिक का ३५ भेद व पहली, दूसरी, तीसरी नरक एव ३८, गति मोक्ष की।

(२) चक्रवर्ती की आगति ८२ बोल की—६६ जाति के देव मे से—१५ परमाधर्मी ३ किल्विषी ये १८ छोड शेष ८१ व पहली नरक एव ८२, गति १४ बोल की—सात नरक का अपर्याप्ता एव पर्याप्ता १४ (यदि ये दीक्षा लेवे तो गति देव की मोक्ष की)।

(३) वासुदेव की आगति ३२ बोल की—१२ देवलोक, ९ लोकांतिक नव ग्रैवेयक, व पहली दूसरी नरक एव ३२। गति १४ बोल की—सात नरक का अपर्याप्ता और पर्याप्ता।

(४) बलदेव की आगति ८३ बोल की—चक्रवर्ती के ८२ बोल कहे वे और एक दूसरी नरक एव ८३। गति ७० बोल की—वैमानिक के ३५ भेद का अपर्याप्ता और पर्याप्ता एवं ७०।

(५) केवली की आगति १०८ बोल की—६६ जाति देव में से १५ परमाधर्मी और ३ किल्विषी एवं १८ घटाना—शेष ८१ बोल और १५ कर्म भूमि, ५ सज्ञो तिर्यञ्च, पृथ्वी, अप, वनस्पति, पहली, दूसरी, तीसरी व चौथी नरक एवं (८१+१५+५+१+१+४) १०८ बोल का पर्याप्ता, गति मोक्ष की।

(६) साधु की आगति २७५ बोल की—ऊपर के १७६ बोल में से तेजस् वायु का आठ बोल छोड़ शेष १७१ बोल, ६६ जाति के देव व पहलो नरक से पाँचवी नरक तक (१७१+६६+५) एवं २७५ बोल। गति ७० बोल की बलदेव समान।

(७) श्रावक की आगति २७६ बोल की—साधु के २७५ बोल व छठ्ठी नरक का पर्याप्ता एवं २७६ बोल।

गति ४२ बोल की—१२ देवलोक, ६ लोकांतिक इन २१ का अपर्याप्ता और पर्याप्ता एव ४२।

(८) सम्यक्त्व दृष्टि की आगति ३६३ बोल की—६६ जाति के देव का पर्याप्ता, १०१ सज्ञी मनुष्य का पर्याप्ता, १०१ संमूर्च्छिम मनुष्य का अपर्याप्ता १५ कर्मभूमि का अपर्याप्ता, सात नरक का पर्याप्ता और तिर्यञ्च के ४८ भेद में से तेजस् वायु का आठ बोल छोड़ शेष ४० एवं (६६+१०१+१०१+१५+७+४०) ३६३ बोल। [१]गति २५८ की—६६ जाति का देव, १५ कर्म भूमि, ५ सज्ञी तिर्यञ्च, ६ नरक। इन १२५ का अपर्याप्ता और पर्याप्ता एवं २५०। तीन विकलेन्द्रिय का अपर्याप्ता और ५ असंज्ञी तिर्यञ्च का अपर्याप्ता एवं २५८।

(९) मिथ्यात्व दृष्टि की आगति ३७१ बोल की :—६६ जाति का देव और ऊपर कहे हुए १७६ बोल एव २७८, सात नरक का पर्याप्ता और ८६ जाति का युगलिया का पर्याप्ता एवं ३७१ बोल। गति

---

१ कोई-कोई २२२ की भी मानते है। १५ परमाधामी और तीन किल्विषी के पर्याप्ता और अपर्याप्ता एव ३६ छोडकर।

५५३ की .—५६३ बोल मे से पॉच अनुत्तर विमान का अपर्याप्ता और पर्याप्ता ये १० छोड़ शेष ५५३।

(१०) स्त्री वेद की आगति ३७१ बोल की मिथ्या-दृष्टि समान। गति ५६१ बोल की :—सातवी नरक का अपर्याप्ता और पर्याप्ता ये दो बोल छोड (५६३-२) शेष ५६१।

(११) पुरुष वेद की आगात ३७१ बोल की—मिथ्या दृष्टि की आगति समान। गति ५६३ की।

(१२) नपु सक वेद की आगति २८५ बोल की .—९९ जाति का देव का पर्याप्ता व उपरोक्त १७९ बोल और सात नरक का पर्याप्ता एवं (९+१७९९+७) २८५ बोल। गति ५६३ बोल की।

सातवा आयुष्य द्वार

इस भव के आयुष्य के कौन से भाग मे परभव के आयुष्य का बंध पड़ता है उसका खुलासा :—

दस औदारिक का दण्डक सोपकर्मी व नोपकर्मी जानना—नारकी का १ दण्डक और देव का १३ दण्डक ये १४ दण्डक, ये १४ दण्डक नोपकर्मी जानना।

दस औदारिक के दण्डक मे से जिसका असंख्यात वर्ष का आयुष्य है वो नोपकर्मी तथा जिसका संख्यात वर्ष का आयुष्य है वो सोपकर्मी और नोपकर्मी दोनो है।

नोपकर्मी निश्चय मे आयुष्य के तीसरे भाग में परभव का आयुष्य बाधते है।

सोपकर्मी है वो आयुष्य के तीसरे भाग में, उसके भी तीसरे भाग मे तथा अन्त में अन्तर मुहूर्त शेष रहे तब भी परभव का आयुष्य बाधते है।

असख्यात वर्ष के मनुष्य तिर्यञ्च तथा नेरिये व देव नोपकर्मी है। ये निश्चय मे आयुष्य के ६ माह शेष रहे उस समय परभव का आयुष्य बांधते है।

परभव जाते समय जीव ६ बोल के साथ आयुष्य छोड़ते है— १ जाति, २ गति, ३ स्थिति, ४ अवगाहना, ५ प्रदेश और ६ अनुभाव।

आठवा आकर्ष द्वार

तथाविध प्रयत्न करके कर्म पुद्गल का ग्रहण करने व खेचने को आकर्ष कहते है। जैसे गाय पानी पीते समय भय से पीछे देखे और फिर पीवे वैसे ही जीव जाति, निद्धतादि आयुष्य को जघन्य एक, दो, तीन उत्कृष्ट आकर्ष करके बाधता है।

आकर्ष का अल्प तथा बहुत्व

सबसे थोडा जीव आठ आकर्ष से जाति निद्धतायुष्य को बाधने वाले, उससे सात से बांधने वाले संख्यात गुणा, उससे छः से बाधने वाले संख्यात गुणा, उससे पांच से बाधने वाले सख्यात गुणा, उससे चार से बांधने वाले संख्यात गुणा, उससे तीन से बांधने वाले संख्यात गुणा, उससे दो से बांधने वाले संख्यात गुणा, उससे एक से बांधने वाले संख्यात गुणा।
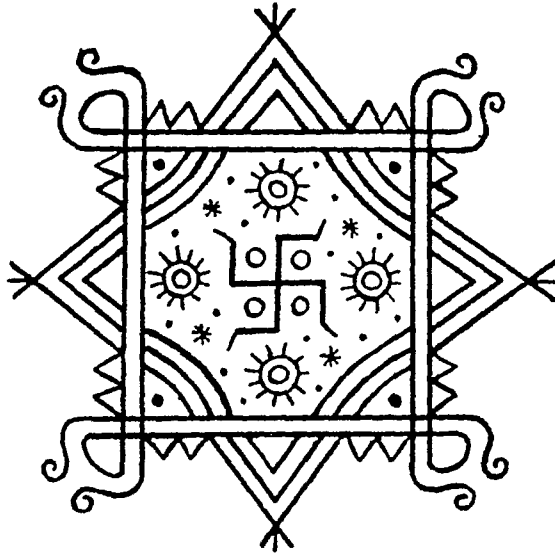
छः आरों का वर्णन

दस करोडा-करोडी सागरोपम के छः आरे जानना

प्रथम आरा——सुषमा-सुषमा

(१) चार करोडा-करोडी सागरोपम का 'सुखमा सुखमा' (एकान्त सुख वाला) नाम का पहला आरा होता है इस आरे में मनुष्य का देहमान (शरीर) तीन गाउ (कोस) का तथा आयुष्य तीन पल्योपम का होता है उतरते आरे में देहमान दो कोस का व आयुष्य दो पल्योपम का जानना। इस आरे में मनुष्य के शरीर मे २५६ पृष्ठ करंड (पांसली, हड्डी) व उतरते आरे मे १२८ पासलिया होती है। सघयन-वज्र ऋषभ नाराच व सस्थान-समचतुरस्र होता है। महास्वरूपवान, सरल स्वभावी स्त्री-पुरुष का जोड़ा होता है जिनको आहार की इच्छा तीन दिन के अन्तर से होती है, तब शरीर प्रमाणे[1] आहार करते है। इस समय मिट्टी का स्वाद भी मिश्री के समान मिष्ट होता है व उतरते आरे मिट्टी का स्वाद शर्करा जैसा होता है। इस समय मनुष्यो को दश प्रकार के कल्प वृक्षो[2] द्वारा मन-वाछित सुख की प्राप्ति होती है यथा :—

---

१. पहिले आरे मे तूर जितना, दूसरे आरे मे बोर जितना और तीसरे आरे मे आवले जितना आहार युगल मनुष्य करते है ऐसा ग्रन्थकार कहते है।

२ जिस कल्प वृक्ष के पास जो फल है वह वही फल देता है इस तरह दश ही कल्प वृक्ष मिलकर दश वस्तु देते है, परन्तु जिस वस्तु की मन मे चिन्ता करते है उसे देने मे समर्थ नही होते है।

१मतंगाय २भिगा, ३तुड़ीयंगा ४दीव ५जोई ६ चितंगा ।
७चित्तरसा ८मणवेगा, ९गिहंगारा १०अनियगणाउ ।।

अर्थ—१'मतङ्ग वृक्ष' जिससे मधुर फल प्राप्त होते है । २ 'भिङ्ग वृक्ष' से रत्न जड़ित सुवर्ण भोजन (पात्र) मिलते है ३ 'तुड़ियङ्गा वृक्ष' से ४९ जाति के वाद्यन्त्र (वाजित्र) के मनोहर नाद सुनाई देते है ४ 'दीव वृक्ष से' रत्नजड़ित दीपक समान प्रकाश होता है ५ जोति (जोई) वृक्ष रात्रि में सूर्य समान प्रकाश करते है ६, चितङ्गा वृक्ष से सुगंधी फूलो के भूषण प्राप्त होते है ७ 'चितरसा' वृक्ष से (१८ प्रकार के) मनोज्ञ भोजन मिलते है ८ 'मनोवेग' से सुवर्ण रत्न के आभूषण मिलते है ९ 'गिहगारा' वृक्ष से ४२ मंजल के महल मिल जाते है १० 'अनिय गणाउ' वृक्ष से नाक के श्वास से उड जावे ऐसे महीन (पतले व उत्तम, वस्त्र प्राप्त होते है ।) प्रथम आरे के स्त्री पुरुष का आयुष्य जब छः महीने का शेष रहता है, उस समय युगलिये परभव का आयुष्य बांधते है और तब युगलनी एक पुत्र-पुत्री के जोड़े को प्रसूतती (जन्म देती) है । उन बच्चे बच्ची का ४९ दिन तक पालन करने के बाद वे होशियार हो दम्पति बन सुखोपभोगानुभव करते हुए विचतरते है और युगल युगलनी का क्षण मात्र भी वियोग नही होता है । उनके माता-पिता एक को छीक और दूसरे को उबासी आते ही मर कर देव गति मे जाते है । (क्षेत्राधिष्ठित) देव उन युगल के मृतक शरीर को क्षीर सागर मे प्रक्षेप कर मृत्युसस्वार (मृत्यु-सस्कार) करते है । गति एक देव की ।

इस आरे में बैर नही, ईर्ष्या नही, जरा (बुढापा) नही, रोग नही, कुरूप नही, परिपूर्ण अग-उपांग पाकर सुख भोगते है ये सब पूर्व भव के दान पुण्यादि सत्कर्म का फल जानना ।

दूसरा आरा

(२) उक्त प्रकार प्रथम आरे की समाप्ति होते ही तीन करोड़ा

करोडी सागरोपम का 'सुखमा' (केवल सुख) नामक दूसरा आरा आरम्भ होता है। उस वक्त पहिले से वर्ण, गध, रस, स्पर्श के पुद्‌गलों की उत्तमता मे अनन्त गुणी हीनता हो जाती है। इस आरे में मनुष्य का देहमान दो कोस का व आयुष्य दो पल्योपम का होता है। उतरते आरे एक कोस का शरीर व एक पल्योपम का आयुष्य रह जाता है। घट कर पासलिये १२८ रह जाती है व उतरते आरे ६४। मनुष्यो मे वज्रऋषभनाराच सघयन व समचतुरस्र सस्थान होता है। इस आरे के मनुष्यो को आहार की इच्छा दो दिन के अन्दर से होती है तब शरीर प्रमाणे आहार करते है। पृथ्वी का स्वाद शर्करा जैसा रह जाता है व उतरते आरे गुड जैसा। इस आरे मे दश प्रकार के कल्प-वृक्ष दश प्रकार का मनोवाछित सुख देते है (पहला आरा समान) मृत्यु के छ महीने जब शेष रहते है तब युगलनी एक पुत्र-पुत्री का प्रसव करती है। बच्चे-बच्ची का ६४ दिन पालन करने के बाद वे (पुत्र-पुत्री) दम्पति बन सुखोपभोग करते हुए विचरते है और उनके माता-पिता एक को छीक और दूसरे को उबासी आते ही मर कर देव गति मे जाते है। क्षेत्राधिष्ठित देव इनके मृतक शरीर को क्षीर सागर में डाल कर मतक क्रिया करते है। गति एक देव की। इस आरे मे ईर्ष्या नही, वर नही, जरा नही, रोग नही, कुरूप नही, परिपूर्ण अङ्ग उपाङ्ग पाकर सुख भोगते है। ये सब पूर्व भव के दान पुन्यादि सत्कर्म का फल जानना।

तीसरा आरा

(३) यो दूसरा आरा समाप्त होते ही दो करोडाकरोड़ सागरो-पम का 'सुखमा-दुखमा' (सुख बहुत दुख थोडा) नामक तीसरा आरा शुरू होता है तब पहिले से वर्ण-गध-रस स्पर्श की उत्तमता में हीनता हो जाती है। क्रम से घटते-घटते मनुष्यो का देहमान एक गाउ (कोश) का व आयुष्य एक पल्योपम का रह जाता है उतरते

आरे ५०० धनुष्य का देहमान व करोड़ पूर्व का आयुष्य रह जाता है। इस आरे में वज्रऋषभ नाराच संघयन व समचतुरस्र सस्थान होता है। शरीर में ६४ पांसलिये होती है व उतरते आरे केवल ३२ पांसलिये रह जाती है। इस आरे मे मनुष्यो को आहार की इच्छा एक दिन के अन्तर से होती है तब शरीर प्रमाणे आहार करते है। पृथ्वी का स्वाद गुड़ जैसा रह जाता है तथा उतरते आरे कुछ ठीक। इस आरे में दश प्रकार के कल्पवृक्ष दश प्रकार का मनोवांछित सुख देते है। मृत्यु के जब छ. महीने शेष रह जाते है तब युगलिये परभव का आयुष्य बॉधते है व उस समय युगलनी एक पुत्र व पुत्री का प्रसव करती है। बच्चे-बच्ची का ७६ दिन पालन करने के बाद वे (पुत्र पुत्री) दम्पति बन सुखोपभोग करते हुए विचरते है और उनके माता पिता को छीक और दूसरे को उबासी आते ही मरकर देव गति में जाते है। क्षेत्राधिष्ठित देव इनके मृतक शरीर को क्षीर सागर मे डाल कर मृतक क्रिया करते है। गति एक देव की।

इन तीन आरों में युगलियों का केवल युगलधर्म रहता है। जिसमे वैर नही, ईर्ष्या नही, जरा नहीं, रोग नही, कुरूप नहीं, परिपूर्ण अङ्ग-उपाङ्ग पाकर सुख भोगते है ये सब पूर्व भव के दान पुन्यादि सत्कर्म का फल जानना।

तीसरे आरे की समाप्ति में चौरासी लाख पूर्व तीन वर्ष व साड़े आठ माह जब शेष रह जाते है, उस समय सर्वार्थसिद्ध विमान में ३३ सागरोपम का आयुष्य भोग कर तथा वहाँ से चलकर वनिता नगरी के अन्दर नाभिराजा के यहां मरुदेवी रानी की कुक्षि (कोख) में श्री ऋषभ देव स्वामी उत्पन्न हुए। (माता ने) प्रथम ऋषभ का स्वप्न देखा इससे ऋषभ देव नाम रखा गया जिन्होने युगलिया धर्म मिटा कर १ असि २ मसि ३ कृषि इत्यादिक ७२ कला पुरुषों को सिखाई व ६४ कला स्त्री को। वीस लाख पूर्व तक आप कौमार्य

अवस्था मे रहे, ६३ लाख पूर्व तक राज्य शासन किया। पश्चात् अपने पुत्र भरत को राज्य भार सौप कर आपने ४ हजार पुरुषो के साथ दीक्षा ग्रहण की। सयम लेने के एक हजार वर्ष बाद आपको केवल ज्ञान उत्पन्न हुआ इस प्रकार छद्मस्थ व केवल अवस्था मे आप कुल मिला कर एक लाख पूर्व तक सयम पाल कर अष्टापद पर्वत पर पद्म आसन से स्थित हो, दश हजार साधु के परिवार से निर्वाण पद को प्राप्त हुए। भगवत के पांच कल्याणक उत्तराषाढा नक्षत्र में हुए। १ पहला कल्याणक, उत्तराषाढ नक्षत्र में सर्वार्थसिद्ध विमान से च्यव कर मरुदेवी रानी की कुक्षि में उत्पन्न हुए। २ दूसरा कल्याणक, उत्तराषाढा नक्षत्र मे आपका जन्म हुआ। ३ कल्याणक उत्तराषाढा नक्षत्र मे राज्यासन पर विराजमान हुए। ४ चौथा कल्याणक, उत्तराषाढा नक्षत्र में दीक्षा ग्रहण की। ५ पाचवॉ कल्याणक उत्तराषाढा नक्षत्र मे केवल ज्ञान प्राप्त हुआ व अभिजित नक्षत्र में आप मोक्ष में पधारे। युगलिया धर्म लोप होने के बाद गति पाच जानना।

चौथा आरा

इस प्रकार तीसरा आरा समाप्त होते ही एक करोड़ा-करोड सागरोपम में ४२००० वर्ष कम का दु खमा-सुखमा नामक (दुख बहुत सुख थोडा) चौथा आरा लगता है। तव पहिले से वर्ण-गध-रस स्पर्श पुद्गलो की उत्तमता मे हीनता हो जाती है क्रम से घटते-घटते मनुष्यो का देह मान ५०० धनुष्य का व आयुष्य करोडा-करोड पूर्व का रह जाता है उतरते आरे सात हाथ का देहमान व २०० वर्ष में कुछ कम का आयुष्य रह जाता है। इस आरे में सघयन छ. सस्थान छः व मनुष्यो के शरीर मे ३२ पांसलिये, उतरते आरे केवल १६ पांसलिये रह जाती है। इस आरे की समाप्ति मे ७५ वर्ष ८॥ माह जब शेष रह जाते है तब दशवे प्राणत देवलोक से वीस सागरोपम का आयुष्य भोग कर तथा चव कर माहणकुंड नगरी मे ऋषभ दत्त ब्राह्मण के यहॉ देवानन्दा ब्राह्मणी की कुक्षि में श्री महावीर स्वामी

उत्पन्न हुए जहां आप ८२ रात्रि पर्यन्त रहे। ८३ वी रात्रि को शक्रेन्द्र का आसन चलायमान हुआ तव शक्रेन्द्र ने उपयोग द्वारा मालूम किया कि श्री महावीर स्वामी भिक्षुक कुल के अन्दर उत्पन्न हुये है। ऐसा जानकर शक्रेन्द्र ने हरिरणगमेषी देव को बुला कर कहा कि तुम जाकर क्षत्रियकुण्ड के अन्दर, सिद्धार्थ राजा के यहाँ, त्रिशला देवी रानी की कुक्षि (कोंख) में श्री महावीर स्वामी का गर्भ प्रवेश करो और जो गर्भ त्रिशला देवी रानी की कोंख में है उसे ले जाकर देवानन्दा ब्राह्मणी की कोंख में रक्खो। इस पर हरिरण गमेषी आज्ञानुसार उसी समय माहण कुण्ड नगरी में आया व आकर भगवंत को नमस्कार करके बोला "हे स्वामी! आपको भलीभांति विदित है कि मैं आपका गर्भ हरण करने आया हूं।" इस समय देवानन्दा को अवस्वापिनि निद्रा मे डाल कर गर्भ हरण किया व गर्भ को ले जाकर क्षत्रीय कु ड नगर के अन्दर सिद्धार्थ राजा के यहाँ, त्रिशला देवी रानी की कोख में रक्खा व त्रिशला देवी रानी की कोख मे जो पुत्री थी उसे ले जाकर देवानन्दा ब्राह्मणी की कोंख में रक्खी। यो सवा नव मास पूर्ण होने पर भगवंत का जन्म हुआ। दिन प्रति दिन बढने लगे व अनुक्रम से यौवनावस्था को प्राप्त हुए, तब यशोदा नामक राजकुमारी के साथ आपका पाणि-ग्रहण हुआ। समस्त सांसारिक सुख भोगते हुए आपके एक पुत्री उत्पन्न हुई, जिसका नाम प्रियदर्शना रक्खा गया। आप तीस वर्ष तक संसार मे रहे। माता-पिता के स्वर्गवासी होने पर आपने अकेले ही दीक्षा ग्रहण की, सयम लेकर १२ वर्ष ६ माह १५ दिन तक कठिन तप, जप ध्यान धर कर भगवत को वैशाख माह की सुदी दशमी को सुवर्त नामक दिन को विजय मुहूर्त में, उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र में, शुभ चन्द्रमा के मुहूर्त में विजयंता नामक पिछली पहर मे जृंभिया नगर के वाहर, ऋजुबालुका नदी के उत्तर दिशा के तट पर समाधिक गाथापति कृष्णी के क्षेत्र में, वैयावृत्यी यक्षालय के ईशान दिशा की ओर शाल वृक्ष के समीप,

उंकड़ा तथा गोधुम आसन पर बैठे हुए, सूर्य की आतापना लेते हुए, चउविहार छट्ठ भक्त करके इस प्रकार धर्म ध्यान मे प्रवर्तते हुए तथा चार प्रकार का शक्ल ध्यान ध्याते हुए, आठ कर्मो में से १ ज्ञानावरणीय २ दर्शनावरणीय ३ मोहनीय ४ अन्तराय इन चार घनघाती कर्म—जो अरि अर्थात् शत्रु समान, वैरी समान, पिशाच (झोटिग) समान है का नाश करके ज्ञान रूपी प्रकाश का करने वाला ऐसा केवल ज्ञान. केवल दर्शन आपको उत्पन्न हुआ। २९ वर्ष ५।। माह तक आप केवल ज्ञान पने विचरे। एवं सर्व ७२ वर्ष का आयुष्य भोग कर चौथे आरे के जब तीन वर्ष ८।। माह शेप रहे तब कार्तिक वदि अमावस को पावापुरी के अन्दर अकेले (बिना साधुओं के परिवार से) मोक्ष पधारे। भगवंत के पांच कल्याणक उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र में हुए। १ पहला कल्याणक दसवे प्राणत देवलोक से चल कर देवानन्दा की कोख मे जब उत्पन्न हुए तब २ दूसरे कल्याणक में गर्भ का हरण हुआ ३ तीसरे कल्याणक मे जन्म हुआ ४ चौथे कल्याणक मे दीक्षा ग्रहण की ओर पाचवे कल्याणक मे केवलज्ञान प्राप्त हुआ। स्वातिनक्षत्र मे भगवन्त मोक्ष पधारे। इस आरे मे गति पॉच जानना। श्री महावीर स्वामी मोक्ष पधारे उसी समय गौतम स्वामी को केवल ज्ञान उत्पन्न हुआ व बारह वर्ष पर्यन्त केवल प्रवर्ज्या पालकर गौतम स्वामी मोक्ष पधारे। उसी समय श्री सुधर्मा स्वामी को केवलज्ञान उत्पन्न हुआ जो आठ वर्ष तक केवल प्रवर्ज्या पालकर मोक्ष पधारे। उसी समय श्री जम्बू स्वामी को केवल ज्ञान प्राप्त हुआ। इन्होने ४४ वर्ष तक केवल प्रवर्ज्या पाली व पश्चात् मोक्ष पधारे, एवं सर्व मिलाकर श्री महावीर स्वामी के मोक्ष पधारने के बाद ६४ वर्ष तक केवल ज्ञान रहा। पश्चात् विच्छेद (नष्ट) हो गया। इस आरे मे जन्मे हुये को पांचवे आरे में मोक्ष मिल सकता है परन्तु पांचवे आरे मे जन्मे हुए को पॉचवे आरे में मोक्ष नही मिल सकता। श्री जम्बू स्वामी के मोक्ष

पधारने के बाद दस बोल विच्छेद १ परम अवधि ज्ञान २ मन.पर्यय-ज्ञान ३ केवल ज्ञान ४ परिहार विशुद्ध चारित्र ५ सूक्ष्मसंपराय चारित्र ६ यथाख्यात चारित्र–७ पलाक लब्धि ८ क्षपक—उपशम श्रेणी ९ आहारक शरीर १० जिनकल्पी साधु—ये दश बोल विच्छेद हुए।

पांचवां आरा

चौथे आरे के समाप्त होते ही २१००० वर्ष का 'दुखम' नामक पाँचवां आरा प्रविष्ट होता है तब पूर्वापेक्षा वर्ण, गंध, रस, स्पर्श की उत्तम पर्यायो में अनन्त गुण हीनता हो जाती है। क्रम से घटते-घटते सात हाथ का (उत्कृष्ट) शरीर व २०० वर्ष का आयुष्य रह जाता है। उतरते आरे एक हाथ का शरीर व वीस वर्ष का आयुष्य रह जाता है—इस आरे के संघयन छ:, सस्थान छ:, उतरते आरे सेवार्त्त संघयरा, हुंडक संस्थान व शरीर में केवल १६ पांसलिये व उतरते आरे केवल आठ पांसलिये जानना। मनुष्यों को इस आरे में दिन में दो समय आहार की इच्छा होती है तब शरीर प्रमाणे आहार करते है। पृथ्वी का स्वाद कुछ ठीक जानना व उतरते आरे कुम्भकार (कुम्हार) की मिट्टी की राख समान। इस आरे में गति चार (मोक्ष गति छोड़कर) पाँचवें आरे के लक्षण के ३२ बोल।

१ नगर (शहर) गांव जैसे होवे।
२ ग्राम श्मशान जैसे होवे।
३ सुकुलोत्पन्न दास दासी होवे।
४ प्रधान (मन्त्री) लालची होवे।
५ यम जैसे क्रूर दंडदाता राजा होवे।
६ कुलीन स्त्री लज्जा रहित (दुराचारिणी) होवे।
७ कुलीन स्त्री वेश्या समान कर्म करने वाली होवे।
८ पिता की आज्ञा भंग करने वाला पुत्र होवे।

९ गुरु की निन्दा करने वाला शिष्य होवे ।
१० दुर्जन लोग सुखी होवे ।
११ सज्जन लोग दुखी होवे ।
१२ दुर्भिक्ष अकाल बहुत होवे ।
१३ सर्प, विच्छु, दश, मत्कुणादि क्षुद्र जीवों की उत्पत्ति बहुत होवे।
१४ ब्राह्मण लोभी होवे ।
१५ हिंसा धर्म प्रवर्तक बहुत होवे ।
१६ एक मत के अनेक मतान्तर होवे ।
१७ मिथ्यात्वी देव बहुत होवे ।
१८ मिथ्यात्वी लोग की वृद्धि होवे ।
१९ लोगो को देव-दर्शन दुर्लभ होवे ।
२० वैताढ्यगिरि के विद्याधरो की विद्या का प्रभाव मन्द होवे ।
२१ गो रस (दुग्ध, दही, घी) मे स्निग्धता (चिकनाई) कम होवे ।
२२ बलद (ऋषभ) प्रमुख पशु अल्पायुषी होवे ।
२३ साधु-साध्वियो के मास, कल्प, चातुर्मास आदि मे रहने योग्य क्षेत्र कम होवे ।
२४ साधु की १२ प्रतिमा व श्रावक की ११ प्रतिमा के पालक नही होवे (श्रावक की ११ प्रतिमा का विच्छेद कोई कोई मानते है) ।
२५ गुरु शिष्य को पढावे नही ।
२६ शिष्य अविनीत (क्लेशी) होवे ।
२७ अधर्मी, क्लेशी, कदाग्राही, धूर्त, दगाबाज व दुष्ट मनुष्य अधिक होवे ।

२८ आचार्य अपने गच्छ व सम्प्रदाय की परम्परा समाचारी अलग अलग प्रर्वेर्तावेगे तथा मूर्ख मनुष्यों को मोह मिथ्यात्व के जाल में डालेगे, उत्सूत्र प्ररूपक लोगों को भ्रम में फंसाने वाले, निन्दनीक कुबुद्धिक व नाम मात्र के धर्मी जन होवेगे व प्रत्येक आचार्य लोगो को अपनी-अपनी परम्परा में रखने वाले होवेगे।

२९ सरल, भद्रिक, न्यायी, प्रमाणिक पुरुष कम होवे।

३० म्लेछ राजा अधिक होवे।

३१ हिन्दू राजा अल्प ऋद्धि वाले व कम होवे।

३२ सुकुलोत्पन्न राजा नीच कर्म करने वाले होवे।

इस आरे में धन सर्व-विच्छेद हो जावेगा, लोहे की धातु रहेगी, व चर्म की मोहरे चलेगी जिसके पास ये रहेगे वे श्रीमन्त (धनवान) कहलावेगे। इस आरे में मनुष्यों को उपवास मासखमण समान लगेगा।

[इस आरे में ज्ञान सर्वविच्छेद हो जावेगा केवल दशवैकालिक सूत्र के चार अध्ययन रहेगे। कोई कोई मानते है कि १ दशवैकालिक २ उत्तराध्ययन ३ आचारांग ४ आवश्यक ये चार सूत्र रहेगे। इसमें चार जीव एकावतारी होगे—१ दुपसह नामक आचार्य २ फाल्गुनी नामक साध्वी ३ जिनदास श्रावक ४ नागश्री श्राविका ये सर्व पाचवे आरे के अन्त तक श्री महावीर स्वामी के युगन्धर जानना।]

आषाढ सुदी १५ को शक्रेन्द्र का आसन चलायमान होवेगा तब शक्रेन्द्र उपयोग द्वारा मालूम करेगे कि आज पांचवा आरा समाप्त होकर छठ्ठा आरा लगेगा ऐसा जान कर शक्रेन्द्र आवेगे व आकर चार जीवों को कहेगे कि कल छठ्ठा आरा लगेगा अत. आलोचना व प्रतिक्रमण द्वारा शुद्ध बनो अनन्तर ऐसा सुनकर वे

चारो जीव सभी से क्षमा कर, निशल्य होकर संथारा करेंगे। उस समय संवर्तक, महासवर्तक नामक हवा चलेगी जिससे पर्वत, गढ, कोट, कुवे, बावडिये आदि सर्व स्थानक नष्ट हो जावेगे केवल १ वैताढच पर्वत २ गगा नदी ३ सिधु नदी ४ ऋषभ कूट ५ लवण की खाडी ये पाँच स्थान बचे रहेगे शेष सब नष्ट हो जावेगे। वे चार जीव समाधि परिणाम से काल करके प्रथम देवलोक में जावेगे पश्चात चार बोल विच्छेद होवेगे १ प्रथम प्रहर में जैन धर्म २ दूसरे प्रहर मे मिथ्यात्वियो के धर्म ३ तीसरे प्रहर मे राजनीति और चौथे प्रहर मे बादर अग्नि का विच्छेद हो जावेगा।

पांचवे आरे के अन्त तक जीव चार गति में जाते है केवल एक पाचवी मोक्ष गति में नही जाते है।

छट्ठा आरा

उक्त प्रकार से पचम आरे की समाप्ति होते ही २१००० वर्ष 'दु:खमा-दुखमा' नामक छट्ठे आरे का आरम्भ होगा। तब भरत-क्षेत्राधिष्ठित देव पञ्चम आरे के विनाश पाते हुए पशु मनुष्यो मे से बीज रूप कुछ मनुष्यो को उठाकर वैताढच गिरि के दक्षिण और उत्तर मे जो गगा और सिन्धु नदी है उनके आठो किनारो में से एक एक तट मे नव नव बिल है एव सर्व ७२ बिल है और एक एक बिल में तीन तीन मजिल है उनमे से उन पशु व मनुष्यो को रक्खेंगे। छट्ठे आरे मे पूर्वापेक्षा वर्ण गन्ध, रस, स्पर्श आदि पुद्गलों की पर्यायो की उत्तमता मे अनन्त गुणी हानि हो जावेगी। क्रम से घटते-घटते इस आरे मे देह मान एक हाथ का, आयुष्य २० वर्ष का उतरते आरे मूठ कम एक हाथ का व आयुष्य १६ वर्ष का रह जावेगा। इस आरे मे सघयन एक सेवार्त्त, सस्थान एक हुँडक उतरते आरे मे भी ऐसा ही जानना। मनुष्य के शरीर में आठ पसलियाँ व उतरते आरे केवल चार पसलिये रह जावेगी। इस आरे

में छः वर्ष की स्त्री गर्भ धारण करने लग जावेगी व कुत्ती के समान परिवार के साथ विचरेगी। गगा सिन्धु नदी का ६२।। योजन का पाट है, जिनमे से रथ के चक्र समान थोड़ा पाट व गाड़ी की धूरी डूबे इतना गहरा जल रह जायगा जिनमे मत्स्य, कच्छ आदि जीव-जन्तु विशेष रहेगे। ७२ बिल के अन्दर रहने वाले मनुष्य सध्या तथा प्रभात के समय उन मत्स्य, कच्छ आदि जीवों को जल से बाहर निकाल कर नदी के किनारे रेत में गाड़ कर रख देंगे वे जीव सूर्य की तेज व उग्र शरदी से भुना जावेगे जिनका मनुष्य आहार कर लेवेगे। इनके चमड़े व हड्डियों को चाट कर तिर्यच अपना निर्वाह करेगे। मनुष्यो के मस्तक की खोपड़ी मे जल लाकर पीवेंगे। इस तरह २१००० वर्ष पूर्ण होवेंगे। जो मनुष्य दान पुण्य रहित, नमोक्कार रहित, व्रत प्रत्याख्यान रहित होवेगे केवल वे ही इस आरे में आकर उत्पन्न होवेंगे।

ऐसा जान कर जो जीव जैन धर्म पालेगा तथा जैन धर्म पर आस्था (श्रद्धा) रखेगा वह जीव इस भवसागर से पार उतर कर परम सुख प्राप्त करेगा।

दश द्वार के जीव स्थानक

गाथा :—

१ जीवठाण, २ लक्खण, ३ ठिई ४ किरिया, ५ कम्मसत्ताअ ।
६ बन्ध ७ उदीरण ८ उदय ९ निज्जरा १० छभाव दश दाराअ ॥

अर्थ—दश द्वार के नाम.—१ चौदह जीव स्थानक के नाम २ लक्षण द्वार ३ स्थिति द्वार ४ क्रिया द्वार ५ कर्म सत्ता द्वार ६ कर्म बन्ध द्वार ७ कर्म उदीर्णा द्वार ८ कर्म उदय द्वार ९ कर्म निर्जरा द्वार १० छः भाव द्वार ।

दश द्वार का विस्तार

(१) नाम द्वार —चौदह जीव स्थानक के नाम १ मिथ्यात्व जीव स्थानक २ सास्वादान जीव स्थानक ३ सम मिथ्यात्व (मिश्र) दृष्टि जीव स्थानक ४ अव्रती समदृष्टि जीव स्थानक ५ देशव्रती जीव स्थानक ६ प्रमत्त सयति जीव स्थानक ७ अप्रमत्त सयति जीव स्थानक ८ निवर्ती बादर जीव स्थानक ९ अनिवर्ती बादर जीव स्थानक १० सूक्ष्म सपराय जीव स्थानक ११ उपसममोहनीय जीव स्थानक १२ क्षीण मोहनीय जीव स्थानक १३ सयोगी केवली जीव स्थानक १४ अयोगी केवली जीव स्थानक ।

(२) लक्षण द्वार :—१ मिथ्यात्व दृष्टि जीव स्थानक का लक्षण—इसके दो भेद १ उणाइरित २ तवाइरित ।

१ उणाइरित .—जो कम ज्यादा श्रद्धान करे व प्ररूपे ।

२ तवाइरित :—जो विपरीत श्रद्धान करे व प्ररूपे ।

मिथ्यात्व के चार भेद :—

(१) एक मूल से ही वीतराग के वचनों पर श्रद्धान नही करे ३६३ पाखण्डी समान शाख (साक्षी) सूयगडांग (सूत्रकृतांग)।

(२) एक कुछ श्रद्धान करे कुछ नही करे—जमाली—सूत्र के प्रमुख सात निन्हवो के समान। साक्षी सूत्र उववाई तथा ठाणाग के सातवे ठाणे की।

(३) एक आगा पीछा कम ज्यादा श्रद्वान करे उदक-पेढाल वत् (समान) शाख सूत्र सूयगडांग स्कन्ध २ अध्ययन ७।

(४) एक ज्ञान अन्तरादिक तेरह बोल के अन्दर शङ्का-कङ्क्षा वेदे १ ज्ञानान्तर, २ दर्शनान्तर, ३ चारित्रान्तर, ४ लिङ्गान्तर, ५ प्रवचनान्तर, ६ प्रावचनान्तर, ७ कल्पान्तर, ८ मार्गान्तर, ९ मतान्तर, १० भङ्गान्तर, ११ नयान्तर, १२ नियमान्तर, १३ प्रमाणान्तर एवं १३ अन्तर। शाख सूत्र भगवती शतक पहला उद्देशा तीसरा।

२ सास्वादान समदृष्टि जीवस्थानक का लक्षण :—जो समकित छोडता २ अन्त मे स्पर्श मात्र रह जावे, बेइन्द्रियादिक को अपर्याप्त होते समय होवे व पर्याप्त होने के बाद मिट जावे सज्ञी पचेन्द्रिय को पर्याप्त होने के बाद भी होवे उसे सास्वादान समदृष्टि कहते हैं। शाख सूत्र जीवाभिगम दण्डक के अधिकार से।

३ मिश्रदृष्टि जीव स्थानक का लक्षण :—जो मिथ्यात्व में से निकला। परन्तु जिसने समकित प्राप्त की नही इस बीच मे अध्यवसाय के रस से प्रवर्तता हुआ आयुष्य कर्म बांधे नही, काल भी करे नही, वहा से थोड़े समय के अन्दर अनिश्चयता से तीसरे जीव स्थानक से गिर कर पहले जीव स्थानक आवे अथवा वहा से चौथे आदि जीव स्थानक पर जावे तव आयुष्य बांधे काल भी करे। शाख सूत्र भगवती शतक ३० वे अथवा २६ वे।

४ अव्रती समदृष्टि जीव स्थानक का लक्षण :—जो शङ्का काक्षा रहित होकर वीतराग के वचनो पर शुद्ध भाव से श्रद्धान करे तथा प्रतीति लाकर रोचे, चोरी प्रमुख विरुद्ध आचरण आचरे नही—इसलिये कि उसकी लोक मे हिलना होवे नही व व्यवहार मे समकित रहे। शाख सूत्र उत्तराध्ययन के २८ वें मोक्ष मार्ग के अध्ययन से।

५ देशव्रती जीव स्थानक का लक्षण :—जो यथातथ्य समकित सहित, विज्ञान विवेक सहित, देश पूर्वक व्रत अङ्गीकार करे, जो जघन्य एक नमोकारशी प्रत्याख्यान तथा एक जीव की घात करने का प्रत्याख्यान उत्कृष्ट श्रावक की ११ प्रतिमा आदरे उसे देशव्रती जीव स्थानक कहते है। शाख सूत्र भगवती शतक सतरहवा उद्देशा दूसरा।

६ प्रमत्त सयति जीव स्थानक का लक्षण :—जो समकित सहित सर्व व्रत आदरे, जो (अप्रमत्त जीव स्थानक के सज्वलन के चार कषाय है उनसे) प्र, अर्थात् विशेष मत्त कहता माता (मस्त) होवे सज्वलन का क्रोध मान माया लोभ उसे प्रमत्त सयति जीव स्थानक कहते है, परन्तु प्रमादी नही कहते है।

७ अप्रमत्त सयति जीव स्थानक का लक्षण :—जो अ, कहता नही, प्र, कहता विशेष, मत्त, कहता माता सज्वलन का क्रोध मान माया लोभ एव छठ्ठे जीव स्थानक से जो कुछ पतला होवे उसे अप्रमत्त सयति जीव स्थानक कहते है।

८ निवर्ती बादर जीव स्थानक का लक्षण :—जो निवर्ती कहता निवर्ता (दूर, अलग) है सज्वलन का क्रोध तथा मान से उसे निवर्ती बादर जीव स्थानक कहते है।

९ अनिवर्ती बादर जीव स्थानक का लक्षण :—जो अनिवर्ती कहता नही, निवर्ती संज्वलन के लोभ से उसे अनिवर्ती बादर जीव स्थानक कहते है।

१० सूक्ष्म संपराय जीव स्थानक का लक्षण :—जहां थोड़ा सा संज्वलन का लोभ का उदय है वह सूक्ष्मसंपराय जीव स्थानक कहलाता है ।

११ उपशान्त मोह जीव स्थानक का लक्षण :—जिसने मोहनीय कर्म की २८ प्रकृतियां उपशमाई है, उसे उपशान्त मोहनीय जीव स्थानक कहते है ।

१२ क्षीण मोहनीय जीव स्थानक का लक्षण :—जिसने मोहनीय कर्म की २८ प्रकृति का क्षय किया है, उसे क्षीण मोहनीय जीव स्थानक कहते है ।

१३ सयोगी केवली जीव स्थानक का लक्षण :—जो मन, वचन व काया के शुभ योग सहित केवलज्ञान केवलदर्शन में प्रवर्त रहा है, उसे सयोगी केवली जीव स्थानक कहते है ।

१४ अयोगी केवली जीव स्थानक का लक्षण :—जो शरीर सहित मन, वचन व काया के योग रोक कर केवलज्ञान केवल दर्शन में प्रवर्त रहा है, उसे अयोगी केवली जीव स्थानक कहते है ।

३ स्थिति द्वार

१ मिथ्यात्व जीव स्थानक की स्थिति तीन तरह को :—

(१) अनादि अपर्यवसित :—जिस मिथ्यात्व की आदि नही और अन्त भी नही, ऐसा अभव्य जीवो का मिथ्यात्व जानना ।

(२) अनादि सपर्यवसित :—जिस मिथ्यात्व की आदि नही, परन्तु अन्त है ऐसा भव्य जीवो का मिथ्यात्व जानना ।

(३) सादि सपर्यवसित :—जिस मिथ्यात्व की आदि है और अन्त भी है । अनादि काल से जीव को यह मिथ्यात्व लगा है, परन्तु किसी समय भव्य जीव समकित की प्राप्ति करता है व संसार परिभ्रमण योग कर्म के प्राबल्य से फिर समकित से गिर कर

मिथ्यात्व को अंगीकार करता है। ऐसे भव्य जीवों को समदृष्टि पडिवाई कहते है। इस मिथ्यात्व जीव स्थानक की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट अर्द्धपुद्गल परावर्तन मे देश न्यून। ऐसे जीव निश्चय से समकित पाकर मोक्ष जाते है। शाख सूत्र जीवाभिगम दण्डक के अधिकार से।

२-३ दूसरे व तीसरे जीव स्थानक की स्थिति जघन्य एक समय की उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की।

चौथे जीव स्थानक की स्थिति :—जघन्य अन्तर्महूर्त की उत्कृष्ट ६६ सागरोपम झाझेरी।

पाँचवे जीव स्थानक की स्थिति :—जघन्य अन्तर्मुहूर्त की उत्कृष्ट करोड़ पूर्व मे देश न्यून।

छट्ठे जीव स्थानक की स्थिति :—परिणाम आश्री जघन्य एक समय उत्कृष्ट करोड़ पूर्व मे देश न्यून।

प्रवर्तन आश्री जघन्य अन्तर्मुहूर्त की उत्कृष्ट करोड पूर्व मे देश न्यून। धर्म देव आश्री, शाख सूत्र भगवती शतक १२ उद्देशा ६।

सातवे, आठवे, नववे, दसवे, ग्यारवे जीव स्थानक की जघन्य एक समय की उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की। शाख सूत्र भगवती शतक पच्चीसवां।

बारहवे जीव स्थानक की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की।

तेरहवें जीव स्थानक की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की उत्कृष्ट करोड पूर्व देश न्यून।

चौदहवे जीवे स्थानक की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की। वह अन्तर्मुहूर्त कैसा ?

लघु स्वर (ह्रस्व स्वर—अ, इ, उ, ऋ लृ) का उच्चारण करने में जितना समय लगे उसे अन्तर्मुहूर्त कहते है ।

४ क्रिया द्वार

काइया क्रिया इत्यादि २५ क्रिया मे से जो-जो क्रिया जिस-जिस जीव स्थानक पर जिन-जिन कारणो से लगती है, उसका विस्तार पूर्वक वर्णन :–कर्म आठ है, जिनमें चौथा मोहनीय कर्म सरदार है । इसकी २८ प्रकृति :—कर्म प्रकृति के थोकड़े में लिखे हुए मोहनीय कर्म की प्रकृति की सत्ता, उदय, क्षयोपशम, क्षय आदि से जो-जो क्रिया लगे और जो-जो नही लगे उसका वर्णन :—

(१) प्रथम मिथ्यात्व जीव स्थानक पर—मोहनीय कर्म की २८ प्रकृति में से अभव्य को २६ प्रकृति की सत्ता है—१ समकित मोहनीय, २ मिश्र मोहनीय ये दो छोड कर शेष २६, कुछ भव्य जीव को २८ प्रकृति का उदय होता है, जिसमें मिथ्यात्व का वल विशेष । दो की नीमा व तीन की (वाद) भजना १ समकित मोहनीय २ मिश्र मोहनीय इन दो की नीमा, १ अक्रिया वादी, २ अज्ञानवादी, ३ विनयवादी इन तीन की भजना इस तरह चौवीस संपराय क्रिया लगे ।

(२) दूसरे जीव स्थानक में मोहनीय कर्म की २८ प्रकृतियो में से वीस का उदय होता है, उसमें सास्वादन का वल विशेष होता है उसमें दो की नीमा १ मिथ्यात्व मोहनीय, २ मिश्र मोहनीय । दो का वाद होता है—१ अक्रियावादी, २ अज्ञानवादी जिससे चौवीस संपराय क्रिया लगती है ।

(३) मिश्र दृष्टि जीव स्थानक मे मोहनीय कर्म की २८ प्रकृति में से २८ का उदय इनमें मिश्र का वल विशेष है, उसमें दो की नीमा और दो का वाद १ समकित मोहनीय, २ मिथ्यात्व मोहनीय ।

इन दो की नीमा १ अज्ञान वादी, २ विनयवादी इन दो का वाद इस तरह २४ सपराय क्रिया लगती है।

(४) अव्रती समदृष्टि जीव स्थानक मे मोहनीय कर्म की २८ प्रकृति मे से ७ का क्षयोपशम, २१ का उदय। अनन्तानु बधी क्रोध, मान, माया, लोभ ५ समकित मोहनीय ६ मिथ्यात्व मोहनीय इन सात का क्षयोपशम २१ का उदय—ऊपर कहे हुए सात क्षयोपशम मे एक मिथ्यादर्शनवत्तिया क्रिया नही लगे २१ के उदय में २३ सपराय क्रिया लगे।

(५) देशव्रती जीव स्थानक मे मोहनीय कर्म की २८ प्रकृति मे से ११ का क्षयोपशम व १७ का उदय १ अनन्तानु बंधी क्रोध २ मान ३ माया ४ लोभ ५ समकित मोहनीय ६ मिथ्यात्व मोहनीय ७ मिश्र मोहनीय ८ अप्रत्याख्यानी क्रोध ६ मान १० माया १ लोभ। इन ११ का क्षयोपशम व उक्त ११ बोल छोड कर शेष २८-११) १७ का उदय, ११ क्षयोपशम मे मिथ्यात्व दर्शन वत्तिया क्रिया व अप्रत्याख्यान क्रिया ये दो क्रिया नही लगे, १७ के उदय मे २२ सपराय क्रिया लगे।

(६) प्रमत्त सयति जीवस्थानक मे मोहनीय कर्मकी २८ प्रकृति मे से १५ का क्षयोपशम १३ का उदय १ अनन्तानु बधी क्रोध, २ मान ३ माया ४ लोभ ५ समकित मोहनीय ६ मिथ्यात्व माहनीय ७ मिश्र मोहनीय ८ अप्रत्याख्यानी क्रोध ६ मान १० माया ११ लोभ १२ प्रत्याख्यानी क्रोध १३ मान १४ माया १५ लोभ। इन १५ का क्षयोपशम॰उक्त १५ बोल छोडकर शेष १३ बोल का उदय १५ के क्षयोपशम मे २२ सपराय क्रिया नही लगे १३ के उदय मे १ आरम्भिया, २ माया वत्तिया ये दो क्रिया लगे। छट्ठे जीव स्थानक आरम्भ नही करे, परन्तु घृत के कुम्भवत्।

(७) जीव स्थानक मे मोहनीय कर्म की २८ प्रकृति में से १६ का क्षयोपशम, १२ का उदय १५ बोल तो ऊपर कहे हुए और १ सज्वलन

का क्रोध एव १६ का क्षयोपशम २८ प्रकृति मे से ये १६ छोड़ शेप १२ का उदय। १६ के क्षयोपशम में २३ संपराय क्रिया नही लगे। १२ के उदय में एक माया वत्तिया क्रिया लगे।

आठवे जीव स्थानक में मोहनीय कर्म की २८ प्रकृति में से सात का उपशम तथा क्षायिक (क्षय) १० का क्षयोपशम और ११ का उदय। ७ उपशम तथा क्षायिक—१ अनन्तानुबंधी क्रोध २ मान ३ माया ४ लोभ ५ समकित मोहनीय ६ मिथ्यात्व मोहनीय ७ मिश्र मोहनीय अप्रत्याख्यानी ४, प्रत्याख्यानी ४ एव ८, ९ सज्वलन का क्रोध १० संज्वलन की माया ११ लोभ एव ११ का उदय। १० के क्षयोपशम में २३ संपराय क्रिया नही लगे। ११ के उदय में एक माया वत्तिया क्रिया लगे।

नववे जीव स्थानक में मोहनीय कर्म की २८ प्रकृति में से १० का उपशम तथा क्षायिक, ११ का क्षयोपशम, ७ का उदय। अनन्तानुबंधी के चार ५ समकित मोहनीय ६ मिथ्यात्व मोहनीय ७ मिश्र मोहनीय और ३ वेद एवं १० का उपशम तथा क्षायिक, अप्रत्याख्यानी ४, प्रत्याख्यानी चार, ८, ९ संज्वलन का क्रोध १० मान ११ माया एवं ११ का क्षयोपशम, ९ कषाय के नव में से ३ वेद को छोड़ शेष ६ और संज्वलन का लोभ एव सात का उदय, ११ के क्षयोपशम में २३ संपराय क्रिया नही लगे। सात के उदय में एक माया वत्तिया क्रिया लगे।

दसवे जीव स्थानक में मोहनीय कर्म की २७ प्रकृति में से २७ का उपशम अथवा क्षायिक, १ कुछ संज्वलन का लोभ का उदय २७ के उपशम तथा क्षायिक में २३ संपराय क्रिया नही लगे और एक संज्वलन का लोभ के उदय में एक मायावत्तिया क्रिया लगे।

११ वे जीव स्थानक में मोहनीय कर्म की २८ प्रकृति में से सर्व प्रकृति उपशमाई है। इससे ४ संपराय क्रिया नही लगे,

परन्तु सात कर्म का उदय है। इससे एक इर्यापथिका (इरियावहिया) क्रिया लगे।

१२ वे जीव स्थानक में मोहनीय कर्म की २८ प्रकृति उपशमाई है। इससे २४ संपराय क्रिया नही लगे, परन्तु सात कर्म का उदय है, इससे एक इर्यापथिका क्रिया लगे।

१३ वे जीव स्थानक में चार घातिया कर्म का क्षय होता है। इससे २४ सपराय क्रिया नहीं लगे। चार अघातिया कर्म का उदय है, इससे एक इर्यापथिका क्रिया लगे।

१४ वें जीव स्थानक में चार घातिया कर्म का क्षय होता है और चार अघातिया कर्म का उदय है, जिसमें भी वेदनीय कर्म का बल था वह नही रहा। इससे एक भी क्रिया नही लगे।

५ कर्म की सत्ता द्वार

पहले जीव स्थानक से ग्यारवें जीव स्थानक तक आठ ही कर्मो की सत्ता, बारहवे जीव स्थानक मे सात कर्म की सत्ता—मोहनीय कर्म की नही, तेहरवे और चौदहवे मे चार कर्म की सत्ता—१ वेदनीय कर्म, २ आयुष्य कर्म ३ नाम कर्म और ४ गौत्र कर्म।

६ कर्म का बंध द्वार

पहला तथा दूसरा जीव स्थानक पर सात तथा आठ कर्म बाधे (सात बांधे तो आयुष्य कर्म छोड कर सात बाधे) चौथे से सातवे जीवस्थानक तक सात तथा आठ कर्म बांधे। ऊपर समान तीसरे, आठवे, नववे जीव स्थानक पर सात कर्म बाधे (आयुष्य कर्म छोड़ कर) दसवे जीव स्थानक पर ६ कर्म बाधे (आयुष्य और मोहनीय कर्म छोड़ कर) ११, १२ और १३ वे जीव स्थानक पर एक साता वेदनीय कर्म बांधे और चौदहवे जीव स्थानक पर एक भी कर्म नही बाधे।

७ कर्म की उदीरणा द्वार

पहले जीवस्थानक पर सात, आठ अथवा छः कर्म की उदीरणा करे (सात की करे तो वेदनीय कर्म छोड़कर व छः कर्म की करे तो वेदनीय व आयुष्य कर्म छोडकर) ।

दूसरे, तीसरे, चौथे व पाँचवे जीवस्थानक पर सात अथवा आठ कर्म की उदीरणा करे (सात की करे तो आयुष्य कर्म छोड़कर) ।

छः, सात, आठ व नववे जोवस्थानक पर सात, आठ, छः की उदीरणा करे (सात की करे तो आयुष्य छोड़कर और छः की करे तो आयुष्य और वेदनीय कर्म छोड़कर) ।

दसवे जीवस्थानक पर छः व पाँच की उदीरणा करे (छ. की करे तो आयुष्य और वेदनीय छोड़कर और पाँच की करे तो आयुष्य, वेदनीय व मोहनीय ये तीन छोड़कर) ।

ग्यारहवे जीवस्थानक पर पांच कर्म की उदीरणा करे (आयुष्य, वेदनीय और मोहनीय कर्म छोड़कर) ।

बारहवे, तेरहवे जीवस्थानक पर दो कर्म की उदीरणा करे, नाम और गोत्र कर्म की ।

चौदहवे जीवस्थानक पर एक भी कर्म की उदीरणा नही करे।

८ कर्म का उदय व ९ कर्म की निर्जरा द्वार

पहले से दसवे जीवस्थानक तक आठ कर्म का उदय और आठ कर्म की निर्जरा ग्यारहवे व बारहवे जीव स्थानक पर मोहनीय कर्म छोड कर शेष सात कर्म का उदय और सात कर्म की निर्जरा तेरहवे चौदहवे जीव स्थानक पर चार कर्म का उदय और चार कर्म की निर्जरा—१ वेदनीय, २ आयुष्य, ३ नाम और ४ गौत्र ।

१० छः भाव का द्वार

छः भाव का नाम :—१ औदयिक, २ औपशमिक, ३ क्षायिक, ४ क्षायोपशमिक, ५ पारिणामिक, ६ सान्निपातिक ।

छः भाव के भेदः

(१) औदयिक भाव के दो भेद :—१ जीव औदयिक, २ अजीव औदयिक।

१ जीव औदयिक के दो भेद :—१ औदयिक, २ औदयिक निष्पन्न। १ जिसमें आठ कर्म का उदय हो वो औदयिक और आठ कर्म के उदय से जो २ पदार्थ उत्पन्न होवे (निपजे) वह औदयिक निष्पन्न।

आठ कर्म के उदय से जो २ पदार्थ उत्पन्न होवे उस पर ३२ बोल।

गाथा :—

गई, काय, कसाय, वेद, लेस्स मिच्छ दिठि, अविरिये।
असन्नी अनाणी आहारे, छउमत्थ सजोगी संसारत्थ असिद्धेय॥

अर्थ —गति चार ४ काय छः, १०, कषाय ४, १४, वेद तीन, १७, लेश्या ६, २३, २४ मिथ्यात्व दृष्टि, २५ अव्रतीत्व (अव्रतीपना) २६, असंज्ञीत्व २७, अज्ञान २८, आहारिकपना २९, छद्मस्थपना ३०, सजोगी (सयोगीपना) ३१, सांसारिकपना (संसार मे रहना) ३२, असिद्धपना एव ३२ बोल जीव औदयिक से पावे।

२ अजीव औदयिक के १४ भेद :—१ औदारिक शरीर, २ औदारिक शरीर से परिणामने वाले पुद्गल, ३ वैक्रिय शरीर, ४ वैक्रिय शरीर से परिणमने वाले पुद्गल, ५ आहारक शरीर, ६ आहारक शरीर से परिणमने वाले पुद्गल, ७ तेजस् शरीर, ८ तेजस् शरीर से परिणमने वाले पुद्गल, ९ कार्मण शरीर, १० कार्मण शरीर से परिणामने वाले पुद्गल, ११ वर्ण, १२ गन्ध, १३ रस और १४ स्पर्श।

(२) औपशमिक भाव के दो भेद :—औपशमिक और २ औपशमिक निष्पन्न। मोहनीय कर्म की जो २८ प्रकृति उपशमाई वो औपशमिक और मोहनीय कर्म उपशम करने से जो २ पदार्थ निपजे वो औपशमिक निष्पन्न।

उपशमाने (उपशान्त करने से जो २ पदार्थ निपजे उस पर गाथा (अर्थ सहित) :—

कसाय पेज्जदोसे, दंसण मोहणीजे चरित्त मोहणीजे ।
सम्मत्त चरीत्त लद्धी, छउ मत्थे वीयरागे य ।

अर्थ :—कषाय चार, ४, ५ राग ६, दोष ७, दर्शन मोहनीय ८ चारित्र मोहनीय इन आठ की उपशमता ९ समकित तथा उपशम चारित्र की लब्धि की प्राप्ति होवे १० छद्मस्थपना ११ यथाख्यात चारित्रपना ये ११ बोल उपशम से पावे। इसी प्रकार ये ११ बोल उपशम निष्पन्न से भी पावे।

(३) क्षायिक भाव के दो भेद :—१ क्षायिक, २ क्षायिक निष्पन्न। जिनमें से क्षायिक से आठ कर्म का क्षय होवे। आठ कर्म खपाने (क्षय करने) के बाद जो २ पदार्थ निपजे उसे क्षायिक निष्पन्न कहते है।

क्षायिक निष्पन्न के आठ भेद :—१ ज्ञानावरणीय कर्म का क्षय हो तब केवल ज्ञान उत्पन्न हो, २ दर्शनावरणीय कर्म का क्षय होवे तब केवल दर्शन उत्पन्न हो, ३ वेदनीय कर्म का क्षय हो तब निराबाधत्वपन उत्पन्न हो, ४ मोहनीय कर्म का क्षय हो तब क्षायिक सम्यकत्व उत्पन्न हो, ५ आयुष्य कर्म का क्षय हो तब अक्षयत्वपन उत्पन्न हो, ६ नाम कर्म का क्षय हो तब अरूपीपन उत्पन्न हो, ७ गोत्र कर्म का क्षय हो तब अगुरु लघुपन उत्पन्न हो, ८ अन्तराय कर्म का क्षय हो तब वीर्यपना उत्पन्न हो।

(४) क्षायोपशमिक भाव के दो भेद :—१ क्षायोपशमिक, २ क्षायोपशमिक निष्पन्न। उदय मे आये हुए कर्मो को खपावे और जो कर्म उदय में नही आवे उन्हे उपशमावे उसे क्षायोपशमिक भाव कहते है। क्षायोपशम करने से जो २ पदार्थ निपजे उन्हे क्षायोपशमिक निष्पन्न कहते है।

क्षायोपशम से जो २ पदार्थ निपजे उस पर गाथा :—

दस उव उग तिदिट्ठ चउ चरित्त, चरित्ता चरिते य।
दाणाई पच लद्धि, वीरियत्ति पच इंदिए ॥१॥
दुवालस अंग धरे, नव पुव्वी जाव चउदस पुविए।
उवसम, गणी पडिमाअ, इइ चउसम नीककन्ने ॥२॥

अर्थ :—छद्मस्थ के १० उपयोग, १०, ३ दृष्ठि, १३, ४ चारित्र पहला, १७, १८ श्रावकत्व, दानादि पञ्चलब्धि, २३, ३ वीर्य २६; ५ इन्द्रिय, ३१; १२, अङ्ग की धारना ४३, नव पूर्व यावत् १४ पूर्व का ज्ञान होना, ४४ उपशम, ४५ आचार्य की प्रतिमा, ४६ एवं ४६ बोल क्षायोपशमिक भाव से निपजे। क्षायोपशमिक निष्पन्न भाव से भी ये ४६ बोल।

(५) पारिणामिक भाव के दो भेद :—१ सादि पारिणामिक, २ अनादि पारिणामिक। इनमें से प्रथम पारिणामिक भाव के दस भेद १ धर्मास्तिकाय, २ अधर्मास्तिकाय, ३ आकाशास्तिकाय, ४ जीवास्तिकाय, ५ पुद्गलास्तिकाय, ६ अद्धाकाल, ७ भव्य, ८ अभव्य, ९ लोक, १० अलोक, ये दस सर्वदा विद्यमान है। सादि पारिणामिक के भेद नीचे अनुसार।

गाथा :—

जुना सुरा, जुना गुला, जुना घिय, जुना तदुल चेव।
अभयं, अभयरुखा, सद्ध गधव्व नगरा ॥१॥
उक्कावाए दिसिदाहे, गज्जीए मिज्जुए, णिग्घाए।
जुवए जख्खालित्तए, धुमित्ता महीता रजोघाए ॥२॥
चदी वरागा, सुरोवरागा, चदो पडिवेसा सुरोपडिवेसा।
पडिचदा पडिसुरा, इन्द धणु उदग, मछा, कविहसा अमोहे ॥३॥
वासा, वासहरा चेव, गाम, घर णगरा।
पयल पायाल भवणा अ, निरअ पासाए ॥४॥

पुढ विसत्त कप्पो बार, गेविज्य अणुत्तर सिद्धि ।
पम्माणु पोग्गल दोपएसी, जाव अणंत प्पएसी खधे ॥५॥

अर्थ :—पुरानी शराव, पुराना गुड़, पुराना घी, पुराने चांवल, बादल, बादल की रेखा, सध्या का वर्ण, गंधर्व के चिह्न, नगर के चिह्न (१) १ उल्का पात, २ दिशि दाह, ३ गर्जना, ४ विद्युत, ५ निर्घात (काटक), ६ शुक्ल पक्ष का बालचन्द्र, ७ आकाश में यक्ष का चिन्ह, ८ कृष्ण धूयर, १० रजोघात (२) चन्द्र ग्रहण, सूर्य ग्रहण, चन्द्र का जलकुण्ड, सूर्य जलकुण्ड, एक ही समय दो चाँद, दो सूर्य दिखाई देवे, इन्द्र धनुष्य, जल पूर्ण बादल, मच्छ के चिन्ह, बन्दर के चिन्ह, हस का चिन्ह और बाण का चिन्ह (३) क्षेत्र, वर्षधर, पर्वत, ग्राम, घर, नगर, प्रासाद (महल), पाताल, कलश, भवन पति के भवन नरक वासे, (४) सात पृथ्वी, कल्प (देवलोक) बारह, नव ग्रैवेयक, पाँच अनुत्तर विमान, सिद्ध शिला, परमाणु पुद्गल दो प्रदेशो स्कन्ध यावत् अनंत प्रदेशी स्कन्ध, (५) इन बोलो में पुद्गल जावे तथा आवे, गले तथा (आकर) मिले । अतः इन्हे सादि पारिणामिक कहते है ।

(६) सान्निपातिक भाव :—इस पर २६ भागे । दो संयोगी के दस, तीन सयोगी के दस, चार सयोगी के पाँच, पांच संयोगी के एक एव ३६ भागे नीचे लिखे यन्त्र समान जानना ।

दो संयोगी के दस भांगे

भागा	औदयिक	औपशमिक	क्षायिक	क्षायोपशमिक	पारि०
१	१	१	१	०	०
२	१	०	१	०	०
३	१	०	०	१	०
४	१	०	०	०	१
५	०	१	१	०	०

६	०	१	०	१	०
७	०	१	०	०	१
८	०	०	१	१	०
९	०	०	१	०	१
१०	०	०	०	१	१

नववा भांगा सिद्ध को पावे।

तीन संयोगी के दस भागे

भागा	औदयिक	औपशिमक	क्षायिक	क्षायोपशमिक	पारि०
११	१	१	१	०	०
१२	१	१	०	१	०
१३	१	१	०	०	१
१४	१	०	१	१	०
१५	१	०	१	०	१
१६	१	०	०	१	१
१७	०	१	१	१	०
१८	०	१	१	०	१
१९	०	१	०	१	१
२०	०	०	१	१	१

पन्द्रहवां भागा तेरहवे, चौदहवे, जीव स्थानक पर पावे। सोलहवा भागा पहले से सातवे जीव स्थानक तक पावे।

चार संयोगी के पाच भांगे

भांगा	औदयिक	औपशमिक	क्षायिक	क्षायोपशमिक	पारि०
२१	१	१	१	१	०
२२	१	१	१	०	१
२३	१	१	०	१	१
२४	१	०	१	१	१
२५	०	१	१	१	१

तेईसवां भांगा उपशम श्रेणी के आठवे से ग्यारवे जीव स्थानक तक पावे, २४ वां भांगा क्षपक श्रेणी के आठवें से १२ वे जीव स्थानक (११ वां छोड़ कर) तक पावे ।

पाँच संयोगी के एक भांगा

भांगा	औदयिक	औपशमिक	क्षायिक	क्षायोपशमिक	पारिणामिक
२६	१	१	१	१	१

इस यन्त्र के २६ भांगे में पाँच भांगा पारिणामिक है। शेष २१ भांगा अपारिणामिक है ।

श्री गुणस्थान द्वार

गाथा :–

नाम, लखरण, गुण ठिइ, किरिया, सत्ता, बंध वेदेय।
उदय, उदिरणा, चेव, निज्जरा, भाव कारणा ॥ १ ॥
परिसह, मग्ग, आयाय, जीवाय भेदे, जोग, उविउग।
लेस्सा, चरण, सम्मत, आया बहुच्च, गुणठाणेहिं ॥ २ ॥

१ नाम द्वार

१ मिथ्यात्व गुणस्थान, २ सास्वादान गुणस्थान, ३ मिश्र गुणस्थान ४ अव्रती सम्यक्त्व दृष्टि गुणस्थान, ५ देशव्रती गुणस्थान, ६ प्रमत्त संजति (सयति) गुणस्थान, ७ अप्रमत्त सजति गुणस्थान, ८ नियट्ठि (निवर्ती) वादर गुणस्थान, ९ अनियट्ठि (अनिवर्ती) बादर गुणस्थान, १० सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थान, ११ उपशान्त मोहनीय गुणस्थान, १२ क्षीण मोहनीय गुणस्थान, १३ सजोगी केवली गुणस्थान, १४ अजोगी केवली गुणस्थान।

२ लक्षण द्वार

१ मिथ्यात्व गुणस्थान :—मिथ्यात्व गुणस्थान का लक्षण—श्री वीतराग के वचनो को कम, ज्यादा, विपरीत श्रद्धे (माने) विपरीत फरसे उसे मिथ्यात्व गुणस्थान कहते हैं। जैसे कोई कहे कि जीव अगूठे समान है, तदुल समान है, शामा (तिल) समान है, दीपक समान है आदि ऐसी परूपना कम (ओछा) परूपना है। अधिक परूपना—एक जीव सर्व लोक ब्रह्माण्ड मात्र मे व्याप रहा है ऐसी परूपना अधिक परूपना है। यह आत्मा पाँच भूतो से उत्पन्न हुई है

और इसके नष्ट होने पर जीव भी नष्ट होता है। पाँच भूत जड़ है, इनसे चैतन्य उपजे व नष्ट होवे ऐसी परूपना विपरीत श्रद्धे, परूपे फरसे उसे मिथ्यात्व कहते है। जैन मार्ग से आत्मा अकृत्रिम (स्वाभाविक) अखण्ड अविनाशी व नित्य है, सारे शरीर में व्यापक है तिवारे (तब) गौतम स्वामी वन्दना करके श्री भगवन्त को पूछने लगे—"स्वामीनाथ ! मिथ्यात्वी जीव को किन गुणों की प्राप्ति होवे ?" तब श्री महावीर स्वामी ने जवाब दिया कि यह जीवरूपी दड़ी (गेंद) कर्मरूपी डण्डे (गुटाटी) से ४ गति २४ दण्डक ८४ लाख जीव योनि में बार-बार परिभ्रमण करता रहता है, परन्तु संसार का पार अभी तक पाया नही।

२ सास्वादान गुणस्थान :—दूसरे गुणस्थान का लक्षण —जिस प्रकार (जैसे) कोई पुरुष खीर खाण्ड का भोजन करके फिर वमन करे उस समय कोई पुरुष उससे पूछे कि—"भाई खीर-खाण्ड का कैसा स्वाद है ?" उस समय उसने उत्तर दिया—"थोडा सा स्वाद है।" इस प्रकार भोजन के (स्वाद) समान समकित व वमन के (स्वाद के) समान मिथ्यात्व।

दूसरा दृष्टान्त :—जैसे घण्टे का नाद प्रथम गहर गम्भीर होता है और फिर थोड़ी सी झनकार शेष रह जाती है, उसी प्रकार गहर गम्भीर शब्द के समान समकित और झनकार समान मिथ्यात्व।

तीसरा दृष्टान्त :—जीव रूपी आम्र वृक्ष, प्रमाण रूप शाखा, समकित रूप फल, मोह रूप हवा चलने से प्रमाण रूप डाल से समकित रूप फल टूट कर पृथ्वी पर गिरा, परन्तु मिथ्यात्व रूप पृथ्वी पर फल गिरा नही, अभी बीच मे ही है-इस समय तक (जब तक वह बीच में है) सास्वादान गुणस्थान रहता है और जब पृथ्वी पर गिर पड़ा तब मिथ्यात्व गुणस्थान। गौतम स्वामी हाथ जोड़ी

मान मोड़ी श्री भगवन्त से पूछने लगे—"स्वामीनाथ ! इस जीव को कौन से गुणो की प्राप्ति होवे ?" तब श्री भगवन्त ने फरमाया कि यह जीव कृष्ण पक्षी का शुक्ल पक्षी हुआ और इसे अर्द्ध पुद्गल परावर्तन काल ही केवल ससार मे परिभ्रमण करना शेष रहा। जैसे किसी जीव को एक लाख करोड रुपये देना हो और उसने उसमे से सब ऋण चुका दिया हो, केवल अधेली (आधा रुपया) देनी शेष रही हो। इसी प्रकार इस जीव को आधे रुपये कर्ज के समान ससार मे परिभ्रमण करना शेष रहा। सास्वादान समकित पॉच बार आवे।

३ मिश्र गुणस्थान :—तीसरे गुणस्थान का लक्षण :—सम्यक्त्व और मिथ्यात्व इन दो के मिश्र से मिश्र गुणस्थान बनता है। इस पर श्रीखण्ड का दृष्टान्त जैसे श्रीखण्ड कुछ खट्टा और कुछ मीठा होता है, वैसे ही मीठ समान समकित और खट्टे समान मिथ्यात्व। जो जिन मार्ग को अच्छा समझे। जैसे किसी नगर के बाहर साधु महापुरुष पधारे हुए है और श्रावक लोग जिन्हे नमस्कार करने के लिये जा रहे हो उस समय मिश्र दृष्टि मित्र मार्ग मे मिला। उसने पूछा, "मित्र ! तुम कहाँ जा रहे हो ?" इस पर श्रावक ने जवाब दिया कि मै साधु महापुरुष को वन्दना करने जा रहा हूँ। मिश्र दृष्टि वाले ने पूछा कि वन्दना करने से क्या लाभ होता है ? श्रावक ने कहा कि महा लाभ होता है। इस पर मित्र ने कहा कि मै भी बन्दना करने को आता हूॅ। ऐसा कह कर उसने चलने के लिये पैर उठाये। इतने मे दूसरा मिथ्यात्वी मित्र मिला, इसने इन्हे देख कर पूछा कि तुम कहा जा रहे हो ? तब मिश्र गुणस्थान वाला बोला कि हम साधु महापुरुष को वन्दना करने के लिये जा रहे है। यह सुनकर मिथ्यावादी बोला कि इनकी वन्दना करने से क्या होता है, ये तो बड़े मैले-कुचैले रहते है इत्यादि कह कर उसे (मिश्र दृष्टि वाले को) पुनः जाते हुए को लौटाया। श्रावक साधु मुनिराज को वन्दना

करके पूछने लगा कि महाराज मेरे मित्र ने वन्दना करने के लिये पैर उठाया, इससे उसे किस गुण की प्राप्त हुई ? तव मुनि ने उत्तर दिया कि जो काले उडद के समान था वह दाल के समान हुआ, कृष्ण पक्षी का शुक्ल पक्षी हुआ, अनादि काल से उल्टा था जिसका सुलटा हुआ, समकित के सन्मुख हुआ, परन्तु पैर भरने समर्थ नही। इस पर गौतम स्वामी हाथ जोड़ मान मोड़ वन्दना नमस्कार कर श्री भगवन्त को पूछने लगे 'हे स्वामी ाथ, इस जोव को किस गुण की प्राप्ति हुई ?' तब भगवान ने कहा कि जीव ४ गति २४ दंडक में भटक कर उत्कृष्ट देश न्यून अर्द्ध परावर्तन काल मे संसार का पार पायेगा।

४ अव्रतीसम्यग् दृष्टि गुणस्थान :—अव्रती सम्यक्त्व दृष्टि—अनन्तानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ, सम्यक्त्व मोहनीय, मिथ्यात्व मोहनीय, मिश्र मोहनीय । इन सात प्रकृति का क्षयोपशम करे अर्थात् ये सात प्रकृति जब उदय में आवे तब क्षय करे और सत्ता में जो दल है उनको उपशम करे उसे क्षयोपशम सम्यक्त्व कहते है। यह सम्यक्त्व असख्यात बार आता है। ७ प्रकृति के दलो को सर्वथा उपशमावे तथा ढांके उसे उपशम सम्यक्त्व कहते है, यह सम्यक्त्व पॉच बार आवे। सात प्रकृति के दलों को क्षयोपशम करे उसे क्षायिक समकित कहते है, यह समकित केवल एक बार आवे। इस गुणस्थान पर आया हुआ जीव जीवादिक नव पदार्थ द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से, भाव से नोकारसी आदि छमासी तप जाने, श्रद्धे, परूपे, परन्तु फरस सके नही। तिवारे गौतम स्वामी हाथ जोड़ मान मोड श्री भगवन्त को पूछने लगे कि—स्वामीनाथ इस गुणस्थान के जीव को किस गुण की प्राप्ति होती है ? उत्तर में श्री भगवन्त ने फरमाया कि—हे गौतम ! समकित व्यवहार से शुद्ध प्रवर्तता हुआ, यह जीव जघन्य तीसरे भव मे व उत्कृष्ट पन्द्रहवे भव में मोक्ष जावे। वेदक समकित एक बार आवे। इस समकित की स्थिति एक समय

की पूर्व में अगर आयुष्य का बन्ध न पड़ा हो तो फिर सात बोल का बन्ध नहीं पड़े—नरक का आयुष्य, भवनपति का आयुष्य, तिर्यञ्च का आयुष्य, बाणव्यन्तर का आयुष्य, ज्योतिषी का आयुष्य, स्त्री वेद, नपुंसक वेद एवं सात का आयुष्य बँधे नही यह जीव समकित के आठ आचार आराधता हुआ और चतुर्विध सघ की वात्सल्यता पूर्वक, परम हर्ष सहित भक्ति (सेवा) करता हुआ जघन्य पहले देवलोक मे उत्पन्न होवे, उत्कृष्ट बारहवे देवलोक में। शाख पन्नवणाजी सूत्र की। पूर्व कर्म के उदय से व्रत पच्चक्खाण (प्रत्याख्यान) कर नहीं सके, परन्तु अनेक वर्ष की श्रमणोपासक की प्रव्रज्या का पालक होवे दशाश्रुतस्कन्ध मे जो श्रावक कहे है उनमे का दर्शन श्रावक को अविरत (अव्रती) समदृष्टि कहना चाहिये।

५ देशव्रती गुणस्थान —उक्त (ऊपर कही हुई) सात प्रकृति व अप्रत्याख्यानी क्रोध, मान, माया, लोभ एव ११ प्रकृति का क्षयोपशम करे। ११ प्रकृति का क्षय करे वो क्षायक समकित और ११ प्रकृति को ढाके व उपशमावे वह उपशमित और ११ प्रकृति को कुछ उपशमावे तथा कुछ क्षय करे वह क्षयोपशम समकित। पॉचवे गुण स्थान पर आया हुआ जीवादिक पदार्थ द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से, भाव से नोकारसी आदि छमासी तप जाने, श्रद्धे प्ररूपे व शक्ति प्रमाणे फरसे। एक पच्चखाण से लगा कर १२ व्रत, श्रावक की ११ पडिमा आदरे यावत् सलेखणा (सलेषणा) तक अनशन कर आराधे। तिवारे (उस समय) गौतमस्वामी हाथ जोड मान मोड श्री भगवन्त को पूछने लगे—हे स्वामीनाथ! इस जीव को किस गुण की प्राप्ति होवे? तब भगवन्त ने उत्तर दिया कि जघन्य तीसरे भव मे व उत्कृष्ट १५ भव मे मोक्ष जावे। जघन्य पहले देवलोक मे उत्कृष्ट १२ वे देवलोक मे। साधु के व्रत की अपेक्षा से इसे देशव्रती कहते

है, परन्तु परिणाम से अव्रत की क्रिया उतर गई है अल्प इच्छा, अल्प आरम्भ, अल्प परिग्रह, सुशील, सुव्रती, धर्मिष्ठ, धर्म व्रती, कल्प उग्र विहारी, महासवेग विहारी, उदासीन, वैराग्यवन्त, एकान्त आर्य, सम्यग् मार्गी, सुसाधु, सुपात्र, उत्तम क्रियावादी, आस्तिक, आराधक, जैनमार्ग प्रभावक, अरिहन्त का शिष्य आदि से इसे वर्णन किया है। यह गीतार्थ का जानकार होता है। शास्त्र सिद्धान्त की श्रावकत्व एक भव में प्रत्येक हजार बार आवे।

६ प्रमत्त सयति गुणस्थान :—उक्त ११ प्रकृति व प्रत्याख्यानी क्रोध, मान, माया, लोभ एव १५ प्रकृति का क्षयोपशम करे। इन १५ प्रकृतियो का क्षय करे वह क्षायिक समकित और १५ प्रकृति का उपशम करे व उपशम समकित और कुछ उपशमावे, कुछ क्षय करे व क्षयोपशम समकित। उस समय गौतम स्वामी हाथ जोड, मान मोड़ श्री भगवान को पूछने लगे कि इस गुण स्थान वाले को किस गुण की प्राप्ति होवे ? भगवन्त ने उत्तर दिया—यह जीव द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से, भाव से जीवादिक नव पदार्थ तथा नोकारसी आदि छमासी तप जाने श्रद्धे परूपे, फरसे। साधुत्व एक भव में नव सौ बार आवे। यह जीव जघन्य तीसरे भव में उत्कृष्ट १५ भव में मोक्ष जावे। आराधक जीव जघन्य पहले देवलोक मे उत्कृष्ट अनुत्तर विमान मे उपजे। १७ भेद से सयम निर्मल पाले, १२ भेदे तपस्या करे, परन्तु योग चपलता, कषाय चपलता, वचन चपलता व दृष्टि चपलता कुछ शेष रह जाने से यद्यपि उत्तम अप्रमाद से रहे तो भी प्रमाद रह जाता है। इसलिये प्रमाद करके कृष्णादिक द्रव्य लेश्या व अशुभ योग से किसी समय परिणति बदल जाती है, जिससे कपाय प्रकृष्टमत्त बन जाता है। इसे प्रमत्त संयति गुणस्थान कहते है।

७ अप्रमत्त संयति गुणस्थान —पॉच प्रमाद का त्याग करे तब सातवे गुणस्थान आवे पाँच प्रमाद का नाम।

गाथा :—

मद, विषय, कसाया, निदा, विगहा पचमी, भणिया।
ए ए पच पमाया, जीवा पाडन्ति ससारे ॥

इन पाँच प्रमाद का त्याग व उक्त १५ प्रकृति और १ सज्वलन का क्रोध एव १६ प्रकृति का क्षयोपशम करे इससे किस गुण की प्राप्ति होवे ? जीवादि नव पदार्थ द्रव्य से, काल से, भाव से तथा नोकारसी आदि छमासी तप ध्यान युक्तिपूर्वक जाने, श्रद्धे, परूपे, फरसे वह जीव जघन्य उसी भव मे उत्कृष्ट तीसरे भव में मोक्ष जावे। गति प्राय: कल्पातीत की पावे। ध्यान में, अनुष्ठान में, अप्रमत्त पूर्वक प्रवर्ते व शुभ लेश्या के योग सहित अध्यवसाय प्रवंतता हुआ जिसके प्रमत्त कषाय नही वह अप्रमत्त सयति गुणस्थान कहलाता है।

८ नियट्टीबादर गुणस्थान :—उक्त १६ प्रकृति व सज्वलन का मान एव १७ प्रकृति का क्षयोपशम करे, तब आठवे गुणस्थान आवे (तब गौतम स्वामी हाथ जोड़ पूछने लगे आदि उपरोक्त समान) इस गुणस्थान वाले को किस गुण की प्राप्ति हो। जो परिणाम-धारा व अपूर्व करण जीव को किसी समय व किसी दिन उत्पन्न नही हुआ हो ऐसी परिणाम धारा व करण की श्रेणी जीव को उपजे। जीवादिक नव पदार्थ द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से, भाव से नोकारसी आदि छमासी तप जाने श्रद्धे, परूपे फरसे। यह जीव जघन्य उसी भव मे, उत्कृष्ट तीसरे भव मे मोक्ष जावे। यहाँ से दो श्रेणी होती है—१ उपशम श्रेणी, २ क्षपक श्रेणी। उपशम श्रेणी वाला जीव मोहनीय कर्म की प्रकृति के दलो को उपशम करता हुआ ग्यारवे गुणस्थान तक चला आता है। पडिवाई भी हो जाता है व हीयमान परिणाम भी परिणमता है। क्षपक श्रेणीवाला जीव मोहनीय कर्म की प्रकृति के दलो को क्षय करता हुआ शुद्ध परिणाम से निर्जरा

करता हुआ नववे, दसवे गुणस्थान पर होता हुआ ग्यारवे को छोड़ कर बारहवे गुणस्थान पर चला जाता है, यह अपडिवाइ होता है और वर्द्धमान परिणाम मे परिणमता है। जो निवर्ता है बादर कषाय से, वादर सपराय क्रिया से, श्रेणी करे आभ्यन्तर परिणाम पूर्वक अध्यवसाय स्थिर करे व बादर चपलता से निवर्ता है, उसे नियट्टि बादर गुणस्थान कहते है (दूसरा नाम अपूर्व करण गुणस्थान भी है)। किसी समय पूर्व में पहले जीव ने यह श्रेणी कभी की नही और इस गुणस्थान पर पहला ही करण पण्डित वीर्य का आवरण। क्षय करण रूप करण परिणाम धारा, वर्द्धन रूप श्रेणी करे उसे अपूर्व करण गुणस्थान कहते है।

९ अनियट्टि बादर गुणस्थान :—उपरोक्त १७ प्रकृति और संज्वलन की माया, स्त्री वेद, नपुंसक वेद एवं २१ प्रकृति का क्षयोपशम करे, तव जीव नववे गुणस्थान आवे। इस जीव को किस गुण की प्राप्ति होवे ? उत्तर—यह जीव जीवादिक नव पदार्थ तथा नोकारसी आदि छमासी तप द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से, भाव से, निर्विकार अमायी, विषय निरवछा पूर्वक जाने श्रद्धे, परूपे, फरसे। यह जीव जघन्य उसी भव में उत्कृष्ट तीसरे भव में मोक्ष जावे। सर्व प्रकार से निवर्ता नही केवल अश मात्र अभी संपराय क्रिया शेष रही, उसे अनियट्टि बादर गुणठाणा कहते है। आठवां नववां गुणठाणा (गुणस्थान) के शब्दार्थ बहुत ही गम्भीर है अत. इन्हे पञ्चसग्रहादिक ग्रन्थ तथा सिद्धान्त में से जानना।

१० सूक्ष्मसंपराय गुणस्थान :—उपरोक्त २१ प्रकृति और १ हास्य, २ रति, ३ अरति, ४ भय, ५ शोक, ६ दुगंछा एवं २७ प्रकृति का क्षयोपशम करे। इस जीव को किस गुण की प्राप्ति होवे ? उत्तर यह जीव द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से, भाव से जीवादिक नव पदार्थ तथा नोकारसी आदि छमासी तप, निरभिलाष, निवछक, निर्वेद-

कतापूर्वक, निराशी, अव्यामोही अविभ्रमतापूर्वक जाने श्रद्धे परूपे फरसे । यह जीव जघन्य उसी भव मे उत्कृष्ट तीसरे भव मे मोक्ष जावे । सूक्ष्म अर्थात् थोडी सी (पतली सी) सपराय क्रिया शेष रही । अतः इसे सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थान कहते है ।

११ उपशान्त मोहनीय गुणस्थान :—उपरोक्त २७ प्रकृति और सज्वलन का लोभ एव २८ प्रकृति उपशमावे सर्वथा ढाके (छिपावे), भस्म (राख) से दबी हुई अग्निवत् इस जीव को किस गुण की उत्पत्ति होवे ? उत्तर—यह जीव जीवादिक नव पदार्थ द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से, भाव से, नोकारसी आदि छमासी तप वीतराग भाव से, यथाख्यातचारित्र पूर्वक जाने, श्रद्धे, परूपे, फरसे । इतने मे यदि काल करे तो अनुत्तर विमान मे जावे, फिर मनुष्य होकर मोक्ष जावे और यदि (काल नही करे) सूक्ष्म लोभ का उदय होवे तो कषाय रूप अग्नि प्रकट होकर दसवे गुणस्थान पर से गिरता हुआ यावत् पहले गुणस्थान तक चला आवे (ग्यारहवे गुणस्थान से आगे चढे नही) सर्वथा प्रकारे मोह का उपशम करना (जल से बुझाई हुई अग्निवत् नही) परन्तु भस्म से दबी हुई अग्निवत् उसे उपशान्त मोहनीय गुणस्थान कहते है ।

१२ क्षीण मोहनीय गुणस्थान —उपरोक्त २८ प्रकृतियो को सर्वथा प्रकारे खपावे क्षायिक श्रेणी, क्षायक भाव, क्षायक समकित, क्षायक यथाख्यात चारित्र, करण सत्य, योग सत्य, भाव सत्य, अमायी, अकषायी, वीतरागी, भाव निर्ग्रन्थ, सम्पूर्ण सम्बुद्ध (निवर्ते), सम्पूर्ण भावितात्मा, महा तपस्वी, महा सुशील अमोही, अविकारी, महा ज्ञानी, महा ध्यानी, वर्द्धमान परिणामी, अपडिवाई होकर अन्तर्मुहूर्त रहे । इस गुणस्थान पर काल करते नही व पुनर्भव होता नही । अन्त समय मे पॉच ज्ञानावरणीय, नव दर्शनावरणीय, पाँच प्रकारे अन्तराय कर्म क्षय करके तेरहवे गुणस्थान पर पहले समय

में क्षय करे तब केवल ज्योति प्रकट होवे। क्षीण अर्थात् क्षय किया है सर्वथा प्रकारे मोहनीय कर्म जिस गुणस्थान पर उसे क्षीण मोहनीय गुणस्थान कहते है।

१३ सयोगी केवली गुणस्थान :—दस बोल सहित तेरहवे गुणस्थान पर विचरे। सयोगी, सशरीर, सलेशी, शुक्ल लेशी, यथाख्यात-चारित्र, क्षायक समकित पंडित वीर्य, शुक्लध्यान, केवलज्ञान, केवलदर्शन एवं दश बोल जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट देश न्यून करोड़ पूर्व तक विचरे। अनेक जीवों को तार कर, प्रतिबोध देकर, निहाल करके, दूसरे तीसरे शुक्ल ध्यान के पाये को ध्याय कर चौदहवे गुणस्थान पर जावे। सयोगी याने शुभ मन, वचन, काया के योग सहित बाह्य चलोपकरण है। गमनागमनादिक चेष्टा शुभ योग सहित है केवलज्ञान, केवलदर्शन उपयोग समयांतर अविछिन्न रूप से शुद्ध प्रणमें इसलिये इसे सयोगी केवली गुणस्थान कहते है।

१४ अयोगी केवली गुणस्थान :—शुक्ल ध्यान का चौथा पाया समुछिन्नक्रिय, अनन्तर अप्रतिघाती, अनिवृति, ध्याता, मन योग रूंध कर, वचन योग रूंध कर, काय योग रूंध कर, आनप्राण निरोध कर रूपातीत परम शुक्ल ध्यान ध्याता हुवा ७ बोल सहित विचरे। उक्त १० बोल मे से सयोगी, सलेशी, शुक्ल लेशी, एवं तीन वोल छोड शेष ७ वोल सहित सर्व पर्वतों के राजा मेरु के समान अडोल, अचल, स्थिर अवस्था को प्राप्त होवे। शैलेशी पूर्वक रह कर पच लघु अक्षर के उच्चार प्रमाण काल तक रह कर शेष वेदनीय, आयुष्य, नाम एव गोत्र ४ कर्म क्षीण करके मोक्ष पावे। शरीर औदारिक, तेजस्, कार्मण सर्वथा प्रकारे छोड़कर समश्रेणी ऋजु गति अन्य आकाश प्रदेश को नही अवगाहता हुवा—अणफरसता हुवा एक समय मात्र में उर्ध्वगति अविग्रह गति से वहां जाकर एरड वीज बंधन मुक्त वत्, निर्लेप तुम्बीवत्, कोदंड मुक्त बाणवत्, इन्धन-वह्नि

मुक्त धूम्र वत् । उस सिद्ध क्षेत्र में जाकर साकारोपयोग से सिद्ध होवे, बुद्ध होवे, परांगत होवे, परंपरांगत होवे सकल कार्य—अर्थ साध कर कृतकृतार्थ निष्ठितार्थ अतुल सुख सागर निमग्न सादि अनन्त भागे सिद्ध होवे । इस सिद्ध पद का भाव स्मरण चिंतन मनन सदा सर्वदा काले मुझको होवे ? वह घड़ी पल धन्य सफल होवे । अयोगी अर्थात् योग रहित केवल सहित विचरे उसे अयोगी केवली गुणस्थान कहते हैं ।

३ : स्थिति द्वार

पहले गुणस्थान की स्थिति ३ प्रकार को :—"अणादिया अपज्ज-वसिया" याने जिस मिथ्यात्व की आदि नहीं और अन्त भी नहीं । अभव्य जीव के मिथ्यात्व आश्री । २ अणादिया सपज्जवसिया अर्थात् जिस मिथ्यात्व की आदि नहीं परन्तु अन्त है । भव्य जीव के मिथ्यात्व आश्री । ३ सादिया सपज्जवसिया अर्थात् जिस मिथ्यात्व की आदि भी है और अन्त भी है । पडिवाई समदृष्टि के मिथ्यात्व आश्री । इसकी स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट अर्द्ध पुद्गल परा-वर्तन में देश न्यून । बाद में अवश्य समकित पाकर मोक्ष जावे । दूसरे गुणस्थान की स्थिति जघन्य एक समय की उ० ६ आवलिका व ७ समय की । तीसरे गुणस्थान की स्थिति ज० उ० अन्तर्मुहूर्त की चौथे गुणस्थान की स्थिति ज० अन्तर्मुहूर्त की उ० ६६ सागरोपम झाझेरी । २२ सागरोपम की स्थिति से तीन बार बारहवें देवलोक में उपजे तथा दो बार अनुत्तर विमान में ३३ सागरोपम की स्थिति से उपजे (एव ६६ सागरोपम) और तीन करोड़ पूर्व अधिक मनुष्य के भव आश्री जानना । पांचवे, छठ्ठे, तेरहवे गुणस्थान की स्थिति ज० अन्तर्मुहूर्त उ० देश न्यून (उणी) ८।। वर्ष न्यून एक करोड़ पूर्व की, सातवे से ग्यारहवे तक ज० १ समय उ० अन्तर्मुहूर्त बारहवे गुण० की स्थिति ज० उ० अन्तर्मुहूर्त चौदहवे गुण० की स्थिति पांच

लघु (ह्रस्व) स्वर (अ, इ, उ, ऋ, लृ,) के उच्चारण के काल प्रमाणे जानना।

४: क्रिया द्वार

पहले तीसरे गुणस्थान में २४ क्रिया पावे इरियावहिया क्रिया छोड़कर। दूसरे चौथे गुण० २३ क्रिया पावे इरियावहिया, और मिथ्यात्व की ये दो छोड़ कर। पांचवे गुण० २२ क्रिया पावे मिथ्यात्व, अविरति इरियावहिया क्रिया छोड कर। छट्टे गुण० २ क्रिया पावे १ आरंभिया २ मायावत्तिया । सातवे गुण० से दशवे गुण० तक १ मायावतिया क्रिया पावे। ग्यारहवे, बारहवे, तेरहवे गुण० १ इरियावहिया क्रिया पावे। चौदहवे गण० क्रिया नही पावे।

५ : सत्ता द्वार

पहले गुणस्थान से ग्यारहवें गुण० तक आठ कर्म की सत्ता। बारहवें गुण० ७ कर्म की सत्ता मोहनीय कर्म छोड़ कर। तेरहवे चौदहवे गुण० ४ कर्म की सत्ता वेदनीय, आयुष्य, नाम, गोत्र एव चार कर्म।

६ : बंध द्वार

पहिले गुणस्थान से सातवे गुण० तक (तीसरा गुण० छोड कर) ८ कर्म बधे या सात कर्म बंधे (आयुष्य कर्म छोड़ कर) तीसरे, आठवे नववे गुण० ७ कर्म बधे (आयुष्य छोड़ कर) दशवे गुण० ६ कर्म वधे (आयुष्य मोहनीय कर्म छोड़ कर) ग्यारहवे, बारहवे तेरहवे गुण० १ साता वेदनीय कर्म बंधे। चौदहवे गुण० कर्म नही वधे।

७ : वेद द्वार और ८ उदय द्वार

पहिले गुण० से दशवे गुण० तक ८ कर्म वेदे और ८ कर्म का उदय। ग्यारहवे बारहवे ७ कर्म (मोहनीय छोड़ कर) वेदे और ७

कर्म का उदय। तेरहवे चौदहवे गुण० ४ कर्म वेदे और ४ कर्म का उदय-वेदनीय, आयुष्य, नाम और गोत्र।

९ : उदीरणा द्वार

पहेले गुण० से सातवे गुण० तक ८ कर्म की उदीरणा तथा सात की (आयुष्य कर्म छोड़ कर) आठवे, नववे गुण० ७ कर्म की उदीरणा (आयुष्य छोड़ कर) तथा ६ कर्म की (आयुष्य मोहनीय छोड कर) दशवे गुण० ६ की करे ऊपर समान तथा ५ की करे (आयुष्य मोहनीय वेदनीय छोड़ कर) ग्यारहवे बारहवे गुण० ५ कर्म की (ऊपर समान) तथा २ कर्म की करे-नाम और गोत्र कर्म की। तेरहवे गुण० २ कर्म की उदीरणा-नाम, गोत्र। चौदहवे गुण० उदीरणा नही करे।

१० : निर्जरा द्वार

पहले से ग्यारवे गुणस्थान तक ८ कर्म की निर्जरा बारहवें ७ कर्म की निर्जरा (मोहनीय कर्म छोड़ कर) तेरहवे चौदहवे गुणस्थान ४ कर्म की निर्जरा-वेदनीय, आयुष्य, नाम और गोत्र।

११ : भाव द्वार

१ उदय भाव २ उपशम भाव ३ क्षायक भाव ४ क्षायोपशम भाव ५ पारिणामिक भाव ६ सनिवाई भाव।

पहले तीसरे गुणस्थान ३ भाव—उदय, क्षयोपशम पारिणामिक। दूसरे, चौथे, पांचवे, छट्ठे, सातवे व आठवे गुण० से ग्यारहवें गुण० तक उपशम श्रेणि वाले को ४ भाव-उदय, उपशम क्षयोपशम, पारिणामिक (कोई उपशम की जगह क्षायक भी कहते है) और आठवे से लगा कर बारहवे गुण० तक क्षपक श्रेणि वाले को ४ भाव-उदय, क्षयोपशम, क्षायक, पारिणामिक, तेरहवे चौदहवे गुण० ३ भाव-उदय क्षायक, परिणामिक।

१२ : कारण द्वार

कर्म बन्ध के कारण पांच—१ मिथ्यात्व २ अविरति (अवर्ती) ३ प्रमाद ४ कषाय ५ योग। पहेले तीसरे गुण० ५ कारण पावे। दूसरे, चौथे गुण० चार कारण (मिथ्यात्व छोड़ कर) पाँचवे छट्ठे गु० ३ कारण (मिथ्यात्व, अविरति छोड़ कर) सातवें से दशवे गु० तक २ कारण पावे कषाय, योग। ग्यारहव, बारहव, तेरहव गु० १ कारण पावे १ योग चौदहवे गु० कारण नही पावे।

१३ : परिषह द्वार

पहले से चौथे गु० तक यद्यपि परिषह २२ पावे परन्तु दु ख रूप है निर्जरा रूप में प्रणमें नही। पाँचवें से नवव गुण० तक २२ परिपह पावे एक समय में २० वेदे, शीत का होवे वहां ताप का नही और ताप का होवे वहां शीत का नही, चलने का होवे वहां बैठने का नही और बैठने का होवे वहां चलने का नही। दशवे ग्यारहवे बारहवें गुण० १४ परिषह पावे (मोहनीय कर्म के उदय से होने वाले ८ छोड़ कर)-अचेल, अरति, स्त्री का, बैठने का, आक्रोश का, मेल का, सत्कार पुरस्कार का एवं सात चारित्र मोहनीय कर्म के उदय होने से और १ दंसण परिषह (दर्शन मोहनीय के उदय होने से) एवं आठ परिषह छोड कर शेप १४ इनमे से एक समय में १२ वेदे शीत का वेदे वहा ताप का नही, और ताप का वहां शीत का नही, चलने का होवे वहां बैठने का नही और बैठने का होवे वहां चलने का नही ? तेरहवे चौदहवे गुण० ११ परिपह पावे। उक्त परिषह में से तीन छोड कर शेप ११ (१) प्रज्ञा का (२) अज्ञान का ये दो परिषह। ज्ञानावरणीय कर्म के उदय से और (३) अलाभ का परिपह अन्तराय कर्म के उदय से एवं ३ परिषह छोड़ कर। इन परिषह मे से एक समय में ९ वेदे शीत का होवे वहां ताप का नही, और ताप का वेदे वहां शीत का

नही, चलने का होवे वहां बैठने का नही और बैठने का होवे वहां चलने का नही ।

१४ : मार्गणा द्वार

पहले गुण० मार्गणा ४ तीसरे, चौथे, पाचवे, सातवे जावे । दूसरे गुण० मार्गणा १, गिरे तो पहले गुण० आवे (चढे नही) । तीसरे गुण० ४, गिरे तो पहले आवे और चढे तो चौथे, पाँचवे, सातवे जावे । चौथे गुण० मार्गणा ५, गिरे तो पहले गुण० दूसरे, तीसरे गुण० आवे और चढे तो पॉचवे, सातवे जावे । पाचवे गु० मा० ५, गिरे तो पहले, दूसरे, तीसरे, चौथे गु० आवे और चढे तो सातवे जावे । छट्ठे गु० मा० ६, गिरे तो पहले, दूसरे, तीसरे, चौथे, पांचवे गु० आवे और चढे तो सातवे जावे । सातवे गु० मा० ३, गिरे तो छट्टे चौथे आवे और चढे तो आठवे गु० जावे । आठवे गु० मा० ३, गिरे तो सातवे चौथे आवे और चढे तो नववे गु० जावे । नववे गु० मा० ३, गिरे तो आठवे चौथे आवे और चढे तो दशवे जावे । दशवे गुण० मा० ४, गिरे तो नववे चौथे आवे चढे तो ग्यारहवे बारहवे जावे । ग्यारहवे गु० मा० २, काल करे तो अनुत्तर विमान मे जावे और गिरे तो दशवे से पहले तक आवे, चढे नही । बारहवे गु० मा० १, तेरहवे जावे, गिरे नही । तेरहवे गुण० मा० १, चौदहवें जावे, गिरे नही । चौदहवे गु० मा० नही, मोक्ष जावे ।

१५ · आत्मा द्वार

आत्मा आठ—१ द्रव्यात्मा, २ कषायात्मा, ३ योगात्मा, ४ उपयोगात्मा, ५ ज्ञानात्मा, ६ दर्शनात्मा, ७ चारित्रात्मा, ८ वीर्यात्मा एवं ८ । पहले, तीसरे गु० ३ आत्मा, ज्ञान और चारित्र ये २ छोड कर, दूसरे चौथे गु० ७ आत्मा चारित्र छोड कर, पांचवे गु० भी ७

आत्मा (देश चारित्र है) छट्ठे से दशवे गु० तक ८ आत्मा, ग्यारहवे, बारहवे तेरहवे गु० ७ आत्मा कषाय छोड कर, चौदहवे गु० ६ आत्मा कषाय और योग छोड़ कर, सिद्ध में ४ आत्मा—ज्ञानात्मा, दर्शनात्मा, द्रव्यात्मा और उपयोगात्मा ।

१६ जीव भेद द्वार

पहले गु० १४ भेद पावे, दूसरे गु० ६ भेद पावे । बेइन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चौरिन्द्रिय, असंज्ञी तिर्यंच व पचेन्द्रिय इन चार का अपर्याप्ता और संज्ञी पचेन्द्रिय का अपर्याप्ता व पर्याप्ता एवं ६, तीसरे गु० संज्ञी पचेन्द्रिय का पर्याप्ता पावे । चौथे गु० २ भेद पावे संज्ञी पचेन्द्रिय का अपर्याप्ता और पर्याप्ता । पाँचवे से चौदहवे गु० तक १ संज्ञी पंचेन्द्रिय का पर्याप्ता पावे ।

१७ योग द्वार

पहल, दूसरे, चौथे गु० योग १३ पावे, आहारक के दो छोड कर । तीसरे गु० १० योग पावे ४ मन का, ४ वचन का, ८,९ औदारिक का और १० वैक्रिय का एव १०, पांचवे गु० १२ योग पावे आहारक के दो और एक कार्मण का एव तीन छोड़ शेष १२ योग । छठ्ठे गु० १४ योग पावे (कार्माण को छोड़ कर) सातवे गु० ११ योग--४ मन के, ४ वचन के, १ औदारिक का, १ वैक्रिय का, १ आहारिक का एवं ११ आठवे गु० से १२ गु० तक ९ योग पावे—४ मन के, ४ वचन के और १ औदारिक का, एवं ९, तेरहवे गु० योग ७ दो मन के, दो वचन के, औदारिक, औदारिक का मिश्र, कार्मण काय योग एवं ७ योग, चौदहवे गु० योग नही ।

१८ उपयोग द्वार

पहले तीसरे गु० ६ उपयोग ३ अज्ञान और ३ दर्शन एवं ६, दूसरे, चौथे, पाचवे गु० ६ उपयोग ३ ज्ञान ३ दर्शन एवं ६, छठ्ठे से बारहवे

तक उपयोग ७—४ ज्ञान ३ दर्शन (एव ७) तेरहवे चौदहवें गु० तथा सिद्ध में २ उपयोग १ केवल ज्ञान और २ केवल दर्शन।

१९ लेश्या द्वार

पहले से छठ्ठे गु० तक ६ लेश्या पावे, सातवे गु० तीन लेश्या पावे-तेजो, पद्म और शुक्ल। आठवे से बारहवे गु० तक १ शुक्ल लेश्या तेरहवे गु० १ परम शुक्ल लेश्या, चौदहवे गु० लेश्या नही।

२० चारित्र द्वार

पहले से चौथे गु० तक कोई चारित्र नही, पाचवे गु० देश थकी सामायिक चारित्र, छट्ठे सातवे गु० ३ तीन चारित्र सामायिक चारित्र, छेदोपस्थानीय चारित्र, परिहारविशुद्ध चारित्र, एवं तीन। आठवे नववे गु० २ दो चरित्र सामायिक और छेदोपस्थापनीय चारित्र दशवे गु० १ सूक्ष्मसपरायचारित्र, ग्यारहवे, से चौदहवें गु० तक १ यथाख्यात चारित्र।

२१ समकित द्वार

पहले तीसरे गु० समकित नही, दूसरे गु० १ सास्वादान समकित, चौथे, पांचवे, छट्ठे गु उपशम तथा क्षयोपशम और सातवे गु० ३ उपशम, क्षयोपशम, क्षायक। दशवे ग्यारहवे गु० २ दो समकित, उपशम और क्षायक, बारहवे तेरहवे, चौदहवे गु० तथा सिद्ध में १ क्षायक पावे।

२२ अल्पबहुत्व द्वार

सर्व से थोडा ग्यारहवे गुणस्थानवाले। एक समय में उपशम-श्रेणिवाला ५४ जीव मिले। इससे बारहवे गुणस्थानवाला सख्यात गुणा। एक समय मे क्षपकश्रेणि वाला १०८ जीव पावे। इससे आठवे नववे दशवे गु० संख्यात गुणा, जघन्य २०० उत्कृष्ट ९०० पावे। इससे

तेरहवें गु० संख्यात गुणा, जघन्य दो क्रोड़ी (करोड़) उ० नव करोड पावे। इससे सातवें गु० संख्यात गुणा, जघन्य २०० करोड़ उ० नवसे करोड़ पावे। इससे छठ्ठ गु० सख्यात गुणा, ज० दो हजार करोड़ उ० नव हजार करोड पावे। इससे पांचवे गु० असंख्यात गुणे, तिर्यंच, श्रावक, आश्री। इससे दूसरे गु० असंख्यात गु० ४ गति आश्री। इससे तीसरे गु० असंख्यात गुणा (४ गति में विशेष है) इससे चौथे गु० असंख्यात गु० (अत्यन्त स्थिति होने से) इससे चौदहवे गु० और सिद्ध भगवन्त अनन्तगुणा। इससे पहेला गु० अनन्त गुणा (एकेन्द्रिय प्रमुख सर्व मिथ्या दृष्टि है इस आश्री)
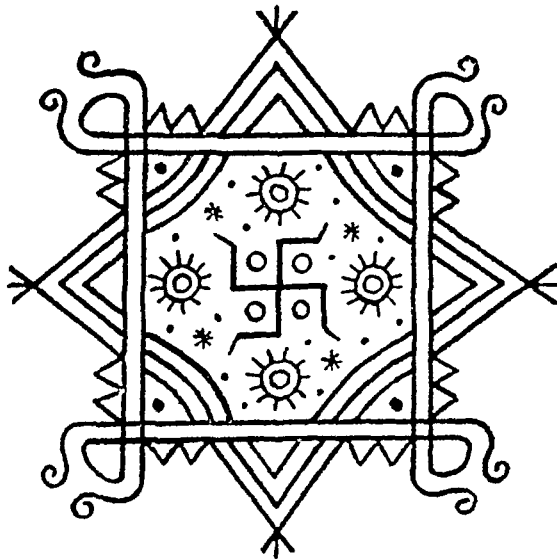
६ भाव

१ उदयभाव २ उपशम भाव ३ क्षायक भाव ४ क्षयोपशम भाव ५ पारिणामिक भाव ६ सन्निवाई भाव ।

१. उदय भाव के दो भेद : १ जीव उदयनिष्पन्न २ अजीव उदयनिष्पन्न । जीव उदयनिष्पन्न मे ३३ बोल पावे :—४ गति, ६ काय, ६ लेश्या, ४ कषाय, ३ वेद एव २३ और १ मिथ्यात्व २ अज्ञान ३ अविरति ४ असंज्ञीत्व ५ आहारिक पना ६ छद्मस्थ पना ७ सयोगीपना ८ संसार परियट्टणा ९ असिद्ध १० अ० केवली एवं सर्व ३३ बोल । अजीव उदयनिष्पन्न मे ३० बोल पावे : ५ वर्ण २ गन्ध ५ रस ८ स्पर्श ५ शरीर और ५ शरीर के व्यापार एव ३० दोनो मिलाकर (३३+३०) ६३ बोल उदय भाव के हुवे ।

२. उपशमभाव मे ११ बोल · चार कषाय का उपशम ४, ५ राग का उपशम, ६ द्वेष का उपशम, ७ दर्शन मोहनीय का उपशम, ८ चारित्र मोहनीय का उपशम एव ८ मोहनीय की प्रकृति, और ९ उवसमिया दंसरण लद्धि (समकित) १० उवसमिया चरित्त लद्धि ११ उवसमिया अकषाय छउमथ वीतराग लद्धि एव ११ ।

३. क्षायक भाव में ३७ बोल : ५ ज्ञानावरणीय ९ दर्शनावरणीय, २ वेदनीय, १ राग, १ द्वेष, ४ कषाय, १ दर्शन मोहनीय, १ चरित्र

मोहनीय, ४ आयुष्य, २ नाम, २ गोत्र, ५ अन्तराय एवं ३७ प्रकृति का क्षय करे उसे क्षायक भाव कहते है ये ९ बोल पावे।

१ क्षायक समकित २ क्षायक यथाख्यात चारित्र ३ केवल ज्ञान ४ केवल दर्शन और क्षायक दानादि पांच लब्धि एव ९ बोल।

४. क्षयोपशम भाव में ३० बोल. (प्रथम) ४ ज्ञान, ३ अज्ञान, ३ दर्शन, ३ दृष्टि, ४ चारित्र १ (प्रथम) चरित्ताचरित्त (श्रावकपना पावे) १ आचार्यगणि की पदवी, १ चौदह पूर्व ज्ञान की प्राप्ति, ५ इन्द्रिय लब्धि, ५ दानादि लब्धि एवं सर्व ३० बोल।

५. पारिणामिक भाव के दो भेद : १ सादिपारिणामिक २ अनादि परिणामिक। सादि नष्ट होवे अनादि नही। सादि परिणामिक के अनेक भेद है—पुरानी सुरा (मदिरा) पुराना गुड, तदुल आदि ७३ बोल होते है शास्त्र भगवती सूत्र की। अनादि परिणामिक के १० भेद :—१ धर्मास्तिकाय २ अधर्मास्ति काय ३ आकाशास्ति काय ४ पुद्गलास्ति काय ६ काल ७ लोक ८ अलोक ९ भव्य १० अभव्य एवं १०।

६. सन्निवाई भाव के २६ भांगे. १० द्विक सयोगी के १० त्रिक सयोगी के, ५ चोक संयोगी के, १ पंच संयोगी का एव २६ भागे विस्तार श्री अनुयोग द्वार सिद्धान्त से जानना देखो पृष्ठ १९०, १९१. १९२।

१४ गुणस्थान पर १० क्षेपक द्वार

हेतु द्वार

२५ कषाय, १५ योग एवं ४० और ६ काय, ५ इन्द्रिय, १ मन एवं १२ अव्रत (४०+१२=५२), ५ मिथ्यात्व एव सर्व ५७ हेतु। पहेले गुणस्थाने ५५ हेतु (आहारक के २ छोड़कर) दूसरे गुणस्थाने ५० हेतु (५५ में से ५ मिथ्यात्व के छोडना) तीसरे गु० ४३ हेतु (५७ में से—

अनन्तानुबंधी के चार, औदारिक का मिश्र १, वैक्रिय का मिश्र १, आहारक के २ कार्मण का १, मिथ्यात्व ५, एवं १४ छोडना) चौथे गुण० ४६ हेतु (४३ तो ऊपर के और औदारिक का मिश्र १, वैक्रिय का मिश्र १, कार्मण काययोग एव (४३+३=४६) पांचवे गु० ४० हेतु (४६ के ऊपर के उसमे से अप्रत्याख्यानो की चोकडी, त्रस काय का अव्रत और कार्मण काय योग ये ६ घटाना शेष (४६—६=४० हेतु) छठ्ठे गु० २७ हेतु (४० मे से प्रत्याख्यानी की चोकड़ी पाच स्थावर का अव्रत, पाच इन्द्रिय का अव्रत और १ मन का अव्रत एवं १५ घटाना शेष २५ रहे और २ आहारक के एव २७ हेतु) सातवे गु० २४ हेतु (२७ मे से-औदारिक मिश्र, वैक्रिय मिश्र, आहारक मिश्र ये तीन घटाना शेष २४ हेतु) आठवे गु० २२ हेतु (२४ में से वैक्रिय और आहारक के २ घटाना) नववे गु० १६ हेतु (२२ मे से हास्य, रति, अरति, भय, शोक, दुर्गंछा ये ६ घटाना) दशवे गु० १० हेतु ९ योग और १ संज्वलन का लोभ एवं १० हेतु। ग्यारहवे, बारहवे गु० ९ हेतु (९ योग के) तेरहवे गु० ७ हेतु (सात योग के) चौदहवे गु० हेतु नही।

२ दण्डक द्वार

पहले गुण० २४ दण्डक, दूसरे गुण० १९ दण्डक, (५ स्थावर के छोडकर) तीसरे, चौथे, गुण० १६ दण्डक (१९ मे से ३ विकलेन्द्रिय के घटाना। पाचवे गुण० २ दण्डक-सज्ञी तिर्यंच और सज्ञी मनुष्य छठ्ठे से चौदहवे गुण० तक १ मनुष्य का दण्डक।

३ जीव-योनि द्वार

पहले गुण० ८४ लाख जीवा योनि, दूसरे गुण० ३२ लाख, (एकेन्द्रिय की ५२ लाख छोड़कर) तीसरे चौथे गुण० २६ लाख जीवा

योनि द्वार, पांचवे गुण० १८ लाख जीवायोनि, छठ्ठे से चौदहवें गुण० १४ लाख जीवा योनि।

४ अन्तर द्वार

पहले गुण० जघन्य अन्तर्मुहूर्त उ० ६६ सागरोपम झाझेरी अथवा १३२ सागर झाझेरी, ये ६६ सागर चौथे गुण० रह कर पुनः चौथे गुण० ६६ सागर रह कर मिथ्यात्व गुण० आवे। दूसरे गुण० से ग्यारहवे गुण० तक जघन्य अन्तर्मुहूर्त अथवा पल्य के असख्यातवे भाग (इतने काल के बिना उपशम श्रेणी करके गिरे नही) उत्कृष्ट अर्द्ध पुद्गल में देश न्यून, बारहवे, तेरहवे गुण० अन्तर नही पड़े।

५ ध्यान द्वार

पहले, दूसरे, तीसरे, गुण० २ ध्यान (पहला) चौथे, पांचवे गुण० २ ध्यान, छठ्ठे गुण० २ ध्यान १ आर्त्त ध्यान २ धर्म ध्यान। सातवे गुण० १ धर्म ध्यान, आठवे से चौदहवे गुण० तक १ शुक्ल ध्यान।

६ फरसना द्वार

पहले गुण० १४ राज लोक फरसे, (स्पर्श) दूसरे गुण० नीचले पंडग बन से छठ्ठी नरक तक फरसे तथा ऊँचा अधोगाम की विजय से नवग्रैयवेक तक फरसे, तीसरे गुण० लोक के असंख्यातवे भाग फरसे। चौथा गुण० अधोगाम की विजय से बारहवे देवलोक तक फरसे अथवा पंडग वन से छट्ठे नरक तक फरसे, पांचवाँ गुण० इसी प्रकार अधोगाम की विजय से बारहवे देवलोक तक फरसे। छट्ठे से ग्यारहवे गुण० तक अधोगाम की विजय से ५ अनुत्तर विमान तक फरसे। बारहवां गुण० लोक का असख्यातवां भाग फरसे। तेरहवां गुण० सर्व लोक फरसे। चौदहवां गुण० लोक का असंख्यातवां भाग फरसे।

७ तीर्थंकर गोत्र ४ गुणस्थान में बान्धे

चौथे, पाचवे, छट्ठे और सातवे एव ४ गुणस्थान बांधे, शेष गुण० नही बांधे । तीर्थकरदेव ९ गुण० फरसे—४, ६, ७, ८, ९, १०, १२, १३, १४, एव नव फरसे ।

८ शाश्वताशाश्वत द्वार

१४ गुण० मे १, ४, ५, ६, १३, एवं ५ शाश्वता शेष ९ गुणस्थान अशाश्वता ।

९ संघयण द्वार

१४ गुण० में १, २, ३, ४, ५, ६, ७, एव सात गुण० ६ संघयण (सहनन) आठवे से चौदहवे गुण० तक एक वज्रऋषभनाराच सघयण (संहनन) ।

१० साहरण द्वार

आर्याजी, अवेदी, परिहार-विशुद्धचारित्रवत, पुलाक लब्धिवन्त, अप्रमादी साधु, चौदह पूर्व धारी साधु और आहारक शरीर एवं इन सात का देवता साहारण नही कर सके ।
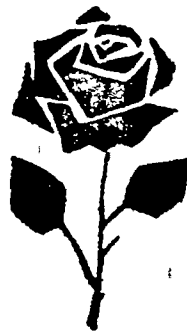
तेतीस बोल

१ एक प्रकार का संयम :

सर्व आश्रव से निवर्तन होना।

२ दो प्रकार का बंध :

१ राग बंध २ द्वेष बंध।

३ तीन प्रकार का दण्ड :

१ मन दण्ड २ वचन दण्ड ३ काय दण्ड। तीन प्रकार की गुप्ति :—१ मन गुप्ति २ वचन गुप्ति ३ काय गुप्ति। तीन प्रकार का शल्य :—१ माया शल्य २ निदान शल्य ३ मिथ्यादर्शन शल्य। तीन प्रकार का गर्व :—१ ऋद्धि गर्व २ रस गर्व ३ साता गर्व। तीन प्रकार की विराधना :—१ ज्ञान विराधना २ दर्शन विराधना ३ चारित्र विराधना।

४ चार प्रकार का कषाय :

१ क्रोध कषाय २ मान कषाय ३ माया कषाय ४ लोभ कषाय। चार प्रकार की संज्ञा—१ आहार संज्ञा २ भय सज्ञा ३ मैथुन सज्ञा ४ परिग्रह संज्ञा। चार प्रकार की कथा—१ स्त्री कथा २ भत्त कथा ३ देश कथा ४ राज कथा। चार प्रकार का ध्यान :—१ आर्त ध्यान २ रौद्र ध्यान ३ धर्म ध्यान ४ शुक्ल ध्यान।

५ पांच प्रकार की क्रिया :

१ कायिका क्रिया २ आधिकरणिका क्रिया ३ प्राद्वेपिका क्रिया ४ पारितापनिका क्रिया ५ प्राणातिपातिका क्रिया। पांच प्रकार का

काम—गुण—१ शब्द २ रूप ३ गन्ध ४ रस ५ स्पर्श। पाच प्रकार का महाव्रत :—१ सर्वप्राणातिपात वेरमण २ सर्व मृषावाद वेरमण ३ सर्व अदत्तादान वेरमण ४ सर्व मैथुन वेरमण ५ सर्व परिग्रह वेरमण। पाच प्रकार की समिति १ इरियासमिति २ भाषा समिति ३ एषणा समिति ४ आदान भंडमात्र निक्षेपनसमिति ५ उच्चारप्रश्रवण (पासवण) खेल, जलश्लेष्म आदि परिठावणिया समिति। पांच प्रकार का प्रमाद —१ मद २ विषय ३ कषाय ४ निद्रा ५ विकथा।

६ छः प्रकार का जीव निकाय :

१ पृथ्वी काय २ अपकाय ३ तेजस् काय ४ वायुकाय ५ वनस्पति काय ६ त्रस काय। छः प्रकार की लेश्या १ कृष्ण लेश्या २ नील लेश्या ३ कापोत लेश्या ४ तेजोलेश्या ५ पद्म लेश्या ६ शुक्ल लेश्या।

७ सात प्रकार का भय :

१ इहलोक भय (मनुष्य से मनुष्य को भय होवे) २ देव, तिर्यंच से जो भय होवे वह परलोक भय ३ धन से उत्पन्न होने वाला आदान भय ४ छायादि देखकर जो भय उत्पन्न होवे, वह अकस्मात् भय, ५ आजीविका भय ६ मृत्यु (मरने का) भय ७ अपयश-अपकीर्ति भय।

८ आठ प्रकार का मद :

१ जाति मद २ कुल मद ३ बल मद ४ रूप मद ५ तप मद ६ श्रुत मद ७ लाभ मद ८ ऐश्वर्य मद।

९ नव प्रकार की ब्रह्मचर्य गुप्ति :

(१) स्त्री, पशु, पडक रहित आलय (स्थानक) में रहना (इस पर) चूहे बिल्ली का दृष्टान्त (२) मन को आनन्द देने वाली तथा काम-राग की वृद्धि करने वाली स्त्री के साथ कथावार्ता नही करना, नीबू के रस का दृष्टान्त (३) स्त्री के आसन पर बैठना नही तथा स्त्री के

साथ सहवास करना नही। घृत के घट को अग्नि का दृष्टांत (४) स्त्री का अङ्ग अवयव, उसकी आकृति, उसकी बोलचाल व उसका निरीक्षण आदि को राग दृष्टि से देखना नही- सूर्य की दुखती आँखों से देखने का दृष्टान्त (५) स्त्री सम्बन्धी कूजन, रुदन, गीत, हास्य, आक्रन्दन आदि सुनाई देवे ऐसी दीवार के समीप निवास नही करना, मयूर को गर्जारव का दृष्टान्त (६) पूर्वगत स्त्री सम्बन्धी क्रीडा, हास्य, रति, दर्प, स्नान, साथ में भोजन करना आदि स्मरण नही करना। सर्प के जहर (विष) का दृष्टान्त (७) स्वादिष्ट तथा पौष्टिक आहार नित्यप्रति करना नही। त्रिदोषी को घृत का दृष्टान्त (८) मर्यादित काल में धर्मयात्रा के निमित्त भोजन चाहिये उससे अधिक आहार करना नही। कागज की कोथली में रुपयो का दृष्टात (९) शरीर सुन्दर व विभूषित करने के लिये शृंगार व शोभा करना नही। रंक के हाथ रत्न का दृष्टान्त।

१० दश प्रकार का श्रमण धर्म :

(यति) धर्म-१ क्षमा (सहन करना) २ मुक्ति (निर्लोभिता रखना) ३ आर्जव (निर्मल स्वच्छ हृदय रखना) ४ मार्दव (कोमल-विनयबुद्धि रखना व अहङ्कार-मद नही करना) ५ लाघव-(अल्प उपकरण-साधन रखना) ६ सत्य (सत्यता-प्रमाणिकता से वर्तना) ७ सयम (शरीर-इन्द्रिय आदि को नियमित रखना) ८ तप (शरीर दुर्बल होवे इससे उपवासादि तप करना) ९ चैत्य -(दूसरों को उपकार बुद्धि से ज्ञानादि देना) १० ब्रह्मचर्य (शुद्ध आचार-निर्मल पवित्र वृत्ति में रहना) दश प्रकार की समाचारी-१ आवश्यकी —स्थानक से बाहर जाना हो तो गुरु आदि को कहना कि अवश्य करके मुझे जाना है २ नैषेधिक— स्थानक में आना हो तो कहना कि निश्चय कार्य कर के मै आया हूँ ३ आप्पृच्छना-अपने को कार्य होवे तब गुरु को पूछना, ४ प्रतिपृच्छना दूसरे साधओ का कार्य होवे तब बारंबार गुरु को जतलाने के लिये

पूछना ५ छंदना-गुरु अथवा बड़ों को अपने पास की वस्तु आमत्रण करना ६ इच्छाकार-गुरु तथा बड़ो को कहना "हे पूज्य ! सूत्रार्थ ज्ञान देने के लिये आपकी इच्छा है ?" ७ मिथ्याकार—पाप लगा हो तो गुरु के समीप मिथ्या कहकर क्षमा याचना करना (अर्थात् प्रायश्चित लेना) ८ तथ्यकार—गुरु के कथन प्रति कहे कि आप कहो वैसा ही करूगा। ६ अभ्युत्थान—गुरु तथा बड़ो के आने पर सात आठ पांव सामने जाना वैसे ही जाने पर सात आठ पाव पहुँचाने को जाना १० उपसंपद-गुरु आदि के समीप सूत्रार्थ रूप लक्ष्मी प्राप्त करने को हमेशा रहना।

११ ग्यारह प्रकार की श्रावक प्रतिमा

१ एक मासकी—इस में शुद्ध सत्य धर्म की रुचि होवे परन्तु नाना व्रत-उपवासादि अवश्य करने के लिये श्रावक को नियम न होवे। उसे दर्शन श्रावक प्रतिमा कहते है। २ दूसरी प्रतिमा दो माह की-इसमे सत्यधर्म की रुचि के साथ-साथ नाना शीलव्रत-गुणव्रत प्रत्याख्यान पौषधोपवासादि करे परन्तु सामायिक दिशावकाशिक व्रत करने का नियम न होवे वह उपासक प्रतिमा। ३ तीसरी प्रतिमा तीन माह की-इसमे ऊपर कहा उसके उपरान्त सामायिकादि करे, परन्तु अष्टमी, चतुर्दशी, अमावस्या, पूर्णमासी आदि पर्व मे पौषधोपवास करने का नियम न होवे। ४ चौथी प्रतिमा चार माह की-इसमे ऊपर कहा उसके उपरान्त प्रति पूर्ण पौषधोपवास अष्टम्यादि सर्व पर्व मे करे। ५ पांचवी प्रतिमा पाच माह की—इसमें पूर्वोक्त सर्व आचरे, विशेष एक रात्रि मे कायोत्सर्ग करे और पाच बोल आचरे; १ स्नान न करे २ रात्रि भोजन न करे ३ लांग न लगावे ४ दिन में ब्रह्मचर्य पाले ५ रात्रि में परिमाण चरे। ६ छट्ठी प्रतिमा छः माह की-इसमे पूर्वोक्त उपरान्त सर्व समय ब्रह्मचर्य पाले। ७ सातवी प्रतिमा जघन्य एक दिन उत्कृष्ट सात माह की—इसमें सचित्त आहार नही

करे परन्तु खुद के लिये आरम्भ त्याग करने का नियम न होवे। ८ आठवी प्रतिमा जघन्य एक दिन की उत्कृष्ट आठ माह की इसमें आरम्भ नही करे। ९ नववी प्रतिमा-उसी प्रकार उत्कृष्ट नव माह की इसमें आरम्भ करने का भी नियम करे। १० दशवी प्रतिमा-उत्कृष्ट दश माह की। इसमें पूर्वोक्त सर्व नियम करे व उपरान्त क्षुर मुंडन करावे अथवा शिखा रखे कोई यह एक बार पूछने पर तथा वांर-वार पूछने पर दो भाषा बोलना कल्पे। जाने तो हां कहना कल्पे और न जाने तो नहीं कहना कल्पे। ११ ग्यारहवी प्रतिमा-उत्कृष्ट ११ माह की-इसमें क्षुर मुंडन करावे अथवा केश लोच करावे, साधु-श्रमण समान उपकरण—पात्र रजोहरण आदि धारण करे, स्वजाति में गौचरी अर्थ भ्रमण करे और कहे कि मै प्रतिमा धारी हूँ, भिक्षा देवो? साधु समान उपदेश देवे। एवं सर्व मिला कर ११ प्रतिमा में ५ वर्ष ६ माह काल लागे।

१२ बारह भिक्षु की प्रतिमा :—

(अभिग्रह रूप)-१ पहली प्रतिमा एक माह की, इसमें शरीर ऊपर ममता-स्नेह भाव नही रखे, शरीर की शुश्रुषा नही करे कोई मनुष्य देव तिर्यंच आदि का परिषह उत्पन्न होवे उसे सम परिणाम से सहन करे।

२ एक दाति आहार की, एक दाति जल की लेना कल्पे। यह आहार शुद्ध निर्दोष; कोई श्रमण, ब्राह्मण, अतिथि, कृपण, रक प्रमुख द्विपद तथा चतुष्पद को अन्तराय नही लगे, इस तरह से लेवे। तथा एक मनुष्य जिमता (भोजन करता) होवे व एक के निमित्त भोजन तैयार किया होवे वह आहार लेवे। दो के भोजन करने में से देवे तो नही लेवे; तीन, चार, पांच आदि भोजन करने को बैठे हुवे हों उसमें से देवे तो न लेवे, गर्भवती निमित्त उत्पन्न किया होवे वह न लेवे तथा नवप्रसूती का आहार नही लेवे, बालक को दूध

पिलाते होवे उसके हाथ से नही लेवे, तथा एक पांव डेवडी के बाहर और एक पांव डेवडी के अन्दर रख कर वहेरावे, नही लेवे ।

३ प्रतिमा धारी साधु को तीन काल गौचरी के कहे है—आदिम, मध्यम, चरम (अन्त का) चरम अर्थात् एक दिन के तीन भाग करे पहले भाग में गौचरी जावे तो दूसरे दो भाग मे नही जावे इसी प्रकार तीनो मे जानना ।

४ प्रतिमा धारी साधु को छ· प्रकार की गौचरी करना कही है १ सन्दूक के आकार समान (चौखुनी) २ अर्द्ध सन्दूक के आकार (दो पंक्ति) ३ बलद के मूत्र आकार ४ पतंग टीड उड़े उस समान अन्तर २ से करे ५ शख के आवर्त्तन के समान गौचरी करे ६ जावता तथा आवता गौचरी करे ।

५ प्रतिमाधारी साधु जिस गांव में जावे वहां यदि यह जानते होवे कि यह प्रतिमा धारी साधु है तो एक रात्रि रहे और न जानते होवे तो दो रात्रि रहे इस के उपरान्त रहे तो छेद तथा परिहार तप जितनी रात्रि तक रहे उतने दिन का प्रायश्चित करे ।

६ प्रतिमाधारी चार प्रकार से बोले १ याचना करने के समय २ पथ प्रमुख पूछने के समय ३ आज्ञा मांगने के समय ४ प्रश्नादिक का उत्तर देते समय ।

७ प्रतिमाधारी साधु को तीन प्रकार के स्थानक पर ठहरना अथवा प्रतिलेखन करना कल्पे-बगीचे का बगला २ श्मशान की छतरी ३ वृक्ष के नीचे ।

८ प्रतिमाधारी साधु तीन स्थान पर याचना करे ।

९ इन तीन प्रकार के स्थानक के अन्दर वास करे ।

१० प्रतिमा धारी साधु को तीन प्रकार की शय्या कल्पे १ पृथ्वी (शिला) रूप २ काष्ट रूप ३ तृण रूप ।

११ इन तीन प्रकार की शय्या की याचना करना कल्पे।

१२ इन तीन प्रकार की शय्या का भोग करना कल्पे।

१३ प्रतिमाधारी साधु जिस स्थानक में रहते होवे उस में यदि कोई स्त्री प्रमुख आवे तो स्त्री के भय से बाहर निकले नही, यदि कोई दूसरा बाहर निकाले तो स्वयं इर्यासमिति शोध कर निकले।

१४ प्रतिमाधारी साधु जिस घर में रहते होवे वहाँ यदि कोई अग्नि लगावे तो भय से बाहर निकले नही, यदि कोई दूसरा निकालने का प्रयास करे तो स्वयं इर्यासमिति शोध कर निकले।

१५ प्रतिमाधारी साधु के पांव में यदि कंटक प्रमुख लगा होवे तो उन्हे निकालना नही कल्पे।

१६ प्रतिमाधारी साधु के आंख में छोटे जीव तथा नाना बीज व रज प्रमुख गिरे तो उन्हे निकालना नहीं कल्पे, इर्यासमिति से चलना कल्पे।

१७ प्रतिमाधारी साधु को सूर्यास्त होने के बाद एक पांव भी आगे चलना नही कल्पे अर्थात प्रति लेखन करने के समय तक विहार करे।

१८ प्रतिमाधारी साधु को सचित्त पृथ्वी पर सोना बैठना व थोड़ी निद्रा भी निकालना नही कल्पे, और पहिले देखे हुए स्थानक पर उच्चार प्रमुख परिठवना कल्पे।

१९ सचित्त रज से यदि पांव प्रमुख भरे हुवे हो तो ऐसे शरीर से गृहस्थ के घर पर गौचरी जाना नही कल्पे।

२० प्रतिमा धारी साधु को प्रासुक शीतल तथा ऊष्ण जल से हाथ, पांव, कान, नाक, आंख प्रमुख एक बार धोना, बारंबार धोना नहीं कल्पे, केवल अशुचि से भरे हुवे तथा भोजन से भरे हुए शरीर के अङ्ग धोना कल्पे अधिक नही।

२१ प्रतिमाधारी साधु घोडा, वृषभ, हाथी, पाडा, वराह (सूअर), श्वान, बाघ इत्यादिक दुष्ट जीव सामने आते हो तो डर कर एक पाव भी पीछे धरे नही परन्तु खुवाला (सीधा) भद्र जीव सामने आता हो तो दया के कारण यत्ना के निमित्त पांव पीछे फिरे।

२२ प्रतिमाधारी साधु धूप से छांया मे नही जावे और छांया से धूप में नही जावे, शीत और ताप सम परिणाम पूर्वक सहन करे।

२ दूसरी प्रतिमा एक मास की। इसमे दो दाति आहार की और दो दाति जल की लेवे।

३ तीसरी प्रतिमा एक माह की। इसमे तीन दाति आहार की और तीन दाति जल की लेना कल्पे।

४ चोथी प्रतिमा एक माह की। इसमे चार दाति आहार की और चार दाति जल की लेना कल्पे।

५ पाचवी प्रतिमा एक माह की। इसमे पांच दाति आहार की और पांच दाति जल की लेना कल्पे।

६ छट्ठी प्रतिमा एक माह की। इसमें ६ दाति आहार की और ६ दाति जल की लेना कल्पे।

७ सातवी प्रतिमा एक माह की। इस मे सात दाति आहार की और सात दाति जल की लेना कल्पे।

८. आठवी प्रतिमा सात अहोरात्रि की। इसमे जल बिना एकान्तर उपवास करे। ग्राम, नगर, राजधानी आदि के बाहर स्थानक करे, तीन आसन से बैठे, चित्ता सोवे, करवट से सोवे, पलाठी मारकर सोवे। परन्तु किसी भी परिषह से डरे नही।

९. नववी प्रतिमा-सात अहोरात्रि की। ऊपर समान, विशेष तीन में से एक आसन करे, दण्ड आसन, लगड़ आसन और उत्कट आसन।

१०. दसवी प्रतिमा सात अहोरात्रि की। ऊपर समान, विशेष तीन में से एक आसन करे, गोदूह आसन, वीरासन और अम्बुज आसन।

११. ग्यारहवी प्रतिमा एक आहोरात्रि की। जल बिना छट्ठ भक्त करे, ग्राम बाहर दो पांव संकोच कर हाथ लम्बे कर कायोत्सर्ग करे।

१२. बारहवी प्रतिमा एक रात्रि की। जल बिना अठम भक्त करे। ग्राम नगर वाहन शरीर तज कर व आँखो की पलक नही मारते हुवे एक पुद्गल ऊपर स्थिर दृष्टि करके, तमाम इन्द्रियो गोप करके, दोनों पाँव एकत्र करके और दोनों हाथ लम्बे करके दृढासन से रहे। इस समय देव, मनुष्य, व तिर्यंच द्वारा कोई उपसर्ग होवे तो सहन करे। सम्यक् प्रकार से आराधन होवे तो अवधिज्ञान, मनः पर्यव ज्ञान तथा केवलज्ञान प्राप्त होवे यदि चलित होवे तो उन्माद पावे, दीर्घ कालिक रोग होवे और केवली प्रणित धर्म से भ्रष्ट होवे। एवं इन सब प्रतिमा में आठ माह लगते है।

१३ तेरह प्रकार का क्रिया स्थानक :

(१) अर्थ दण्ड—अपने लिये हिसा करे।

(२) अनर्थ दण्ड—दूसरो के लिये हिसा करे।

(३) हिसा दण्ड—यह मुझे मारता है, मारा था व मारेगा ऐसा संकल्प करके मारे।

(४) अकस्मात् दण्ड—एक को मारने जाते समय अचानक दूसरे की घात होवे।

(५) दृष्टि विपर्यास दण्ड—शत्रु समझ कर मित्र को मारे।

(६) मृषावाद दण्ड—असत्य बोल कर दण्ड पावे।

(७) अदत्तादान दण्ड—चोरी करके दण्ड पावे।

(८) अभ्यस्थ दण्ड—मन में दुष्ट, अनिष्ट कल्पना करे।

(९) मान दण्ड—अभिमान करे।

(१०) मित्र दोष दण्ड—माता, पिता तथा मित्र वर्ग को अल्प अपराध के लिये भारी दण्ड करे।

(११) माया दण्ड—कपट करे।

(१२) लोभ दण्ड—लालच तृष्णा करे।

(१३) इर्यापथिक दण्ड—मार्ग में चलने से होने वाली हिंसा।

१४ चौदह प्रकार के जीव :

(१) सूक्ष्म एकेन्द्रिय अपर्याप्त (२) सूक्ष्म एकेन्द्रिय पर्याप्त (३) बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्त (४) बादर एकेन्द्रिय पर्याप्त (५) बे इन्द्रिय अपर्याप्त (६) बे इद्रिय पर्याप्त (७) त्रि इन्द्रिय अपर्याप्त (८) त्रि इन्द्रिय पर्याप्त (९) चौरिन्द्रिय अपर्याप्त (१०) चौरिन्द्रिय पर्याप्त (११) असज्ञी पचेन्द्रिय अपर्याप्त (१२) असंज्ञी पचेन्द्रिय पर्याप्त (१३) संज्ञी पचेन्द्रिय अपर्याप्त (१४) सज्ञी पचेन्द्रिय पर्याप्त।

१५ पन्द्रह प्रकार के परमाधामी देव :

(१) आम्र २ आम्र रस ३ शाम ४ सबल ५ रुद्र ६ वैरुद्र ७ काल ८ महाकाल। ९ असिपत्र १० धनुष्य ११ कुंभ १२ वालु (क) १३ वैतरणी १४ खरस्वर १५ महाघोष।

१६ सोलवे सूत्रकृत का प्रथम श्रुतस्कन्ध के सोलह अध्ययन:

१ स्वसमय परसमय २ वैदारिक ३ उपसर्ग प्रज्ञा ४ स्त्री प्रज्ञा ५ नरक विभक्ति ६ वीर स्तुति ७ कुशील परिभाषा ८ वीर्याध्ययन ९ धर्मध्यान १० समाधि ११ मोक्ष मार्ग १२ समवसरण १३ यथातथ्य १४ ग्रंथी १५ यमतिथि १६ गाथा।

१७ सत्तरह प्रकार का संयम :

१ पृथ्वी काय सयम २ अप्काय सयम ३ तेजस् काय सयम ४ वायु काय सयम ५ वनस्पति काय सयम ६ बे इन्द्रिय काय संयम

७ त्रि इन्द्रिय काय संयम ८ चौरिन्द्रिय काय संयम ६ पंचेन्द्रिय काय संयम १० अजीव काय संयम ११ प्रेक्षा संयम १२ उत्प्रेक्षा संयम १३ अपहृत्य संयम १४ प्रमार्जना संयम १५ मन संयम १६ वचन संयम १७ काय संयम ।

१८ अठारह प्रकार का ब्रह्मचर्य :

औदारिक शरीर सम्बन्धी भोग १ मन से, २ वचन से, ३ काया से सेवे नही, ३, सेवावे नही, ६, सेवता प्रति अनुमोदन करे नही, ९ इसी प्रकार वैक्रिय शरीर सम्बन्धी ९ ।

१९ उन्नीस प्रकार का ज्ञातासूत्र के अध्ययन :

१ उत्क्षिप्त—मेघकुमार का २ धन्य सार्थवाह और विजय चोर का ३ मयूर ईडा का ४ कूर्म (काचबा) का ५ शैलक राजर्षि का ६ तुम्बे का ७ धन्य सार्थवाह और चार बहुओ का ८ मल्ली भगवती का ९ जिनपाल जिन रक्षित का १० चन्द्र की कला का ११ दावानल का १२ जित शत्रु राजा और सुबुद्धि प्रधान का १३ नन्द मणियार का १४ तेतलिपुत्र प्रधान और पोटीला - सोनार पुत्री का १५ नन्दफल का १६ अवरकंका का १७ समुद्र अश्व का १८ सुसीमा दारिका का १९ पुंडरीक कंडरीक का ।

बीस प्रकार के असमाधिक स्थान :

१ उतावला उतावला चाले २ पूंज्या बिना चाले ३ दुष्ट रीति से पूंजे ४ पाट-पाटला, शय्या आदि अधिक रक्खे ५ रत्नाधिक के (बड़ो के) सामने बोले ६ स्थविर, वृद्ध गुरु आचार्यजी का उपघात [नाश] करे ७ एकेन्द्रियादि जीव को साता, रस, विभूषा निमित्त मारे ८ क्षण क्षण प्रति क्रोध में हमेशा प्रदीप्त रहे १० पृष्ट मांस खावे अर्थात् दूसरों की पीछे से निन्दा बोले ११ निश्चय वाली भाषा बोले १२ नया क्लेश [झगड़ा] उत्पन्न करे १३ जो झगड़ा बन्द हो

गया हो उसे पुनः जागृत करे १४ अकाले स्वाध्याय करे १५ सचित्त पृथ्वी से हाथ पाँव भरे हुवे होने पर भी आहारादि लेने जावे १६ शान्ति के समय तथा प्रहर रात्रि बीत जाने पर जोर २ से आवाज करे १७ गच्छ मे भेद उत्पन्न करे १८ गच्छ मे क्लेश उत्पन्न कर के परस्पर दुख उत्पन्न करे १९ सूर्योदय से लगाकर सूर्योस्त तक अशनादि भोजन लेता ही रहे २० अनेषणिक अप्रासुक आहार लेवे।

२१ इकवीस प्रकार के शबल कर्म :

१ हस्तकर्म २ मैथुन सेवे ३ रात्रि भोजन करे ४ आधा कर्मी भोगवे ५ राज पिंड जिमे ६ पांच बोल सेवे—१ खरीद कर देवे तथा लेवे २ उधार देवे तथा लेवे ३ बलात्कार से देवे तथा लेवे ४ स्वामी की आज्ञा बिना देवे तथा लेवे ५ स्थानक मे सामा जाकर देवे तथा लेवे ७ बारबार प्रत्याख्यान करके भोगवे ८ महीने के अन्दर तीन उदक लेप करे (नदी उतरे खडा रहे) ९ छः माह से पहले एक गण से दूसरे गण मे जावे १० एक माह के अन्दर तीन माया का स्थान भोगवे ११ शय्यातर का आहार करे १२ इरादा पूर्वक हिंसा करे १३ इरादा पूर्वक असत्य बोले १४ इरादा पूर्वक चोरी करे १५ इरादा पूर्वक सचित्त पृथ्वी पर शय्या व बैठक करे १६ इरादा पूर्वक सचित्त मिश्र पृथ्वी पर शय्यादिक करे १७ सचित्त शिला, पत्थर, सूक्ष्म जीव जन्तु रहे ऐसा काष्ट तथा अड प्राणी बीज, हरित आदि जीव वाले स्थानक पर आश्रय, बैठक, शय्या करे १८ इरादा पूर्वक मूल, कन्द, स्कन्ध त्वचा, शाखा, प्रवाल, पत्र, पुष्प, फल, बीज इन १० सचित्त का आहार करे १९ एक वर्ष के अन्दर दश उदक लेप करे (नदी उतरे) २० एक वर्ष के अन्दर दश माया का स्थानक सेवे २१ जल से हाथ पात्र, भाजन आदि गीले करके अशनादि देवे तथा लेकर इरादा पूर्वक भोगवे।

२२ बावीस प्रकार का परिषह :

१ क्षुधा २ तृषा ३ शीत ४ ताप ५ डांस-मत्सर ६ अचेल (वस्त्र रहित) ७ अरति ८ स्त्री ९ चलन १० एक आसन पर बैठना ११ उपाश्रय १२ आक्रोश १३ वध १४ याचना १५ अलाभ १६ रोग १७ तृण स्पर्श १८ जल (मेल) १९ सत्कार, पुरस्कार २० प्रज्ञा २१ अज्ञान २२ दर्शन ।

२३ तेवीस प्रकार के सूत्रकृत सूत्र के अध्ययन :

सोलहवें बोल में कहे हुवे सोलह अध्ययन और सात नीचे लिखे हुवे—१ पुंडरीक कमल २ क्रिया स्थानक ३ आहार प्रतिज्ञा ४ प्रत्याख्यान क्रिया ५ अणगार सुत ६ आर्द्र कुमार ७ उदक (पेढाल सुत) ।

२४ चोबीस प्रकार के देव :

१ दश भवनपति, २ आठ वाणव्यन्तर ३ पांच ज्योतिषी, ४ एक वैमानिक ।

२५ पच्चीस प्रकारे पांच महाव्रत की भावना :

पहले महाव्रत की पांच भावना :—१ इर्या समिति भावना २ मन समिति भावना ३ वचन समिति भावना ४ एषणा समिति भावना ५ आदान-भड-मात्र निक्षेपन समिति भावना ।

दूसरे महाव्रत की पांच भावना :

१ विचारे विना बोलना नही २ क्रोध से बोलना नही ३ लोभ से बोलना नही ४ भय से बोलना नही ५ हास्य से बोलना नही ।

तीसरे महाव्रत की पाच भावना :

१ निर्दोष स्थानक याच कर लेना २ तृण-प्रमुख याच कर लेना

३ स्थानक आदि सुधारना नही ४ स्वधर्मी का अदत्त लेना नही ५ स्वधर्मी की वैयावच्च करना ।

चौथे महाव्रत की पॉच भावना :

१ स्त्री, पशु पडक वाला स्थानक सेवना नही २ स्त्री के साथ विषय-सम्बन्धी कथा वार्ता करनी नही ३ राग-दृष्टि से विषय उत्पन्न करने वाले स्त्री के अग अवयव देखना नही ४ पूर्व गत सुरत क्रीडा का स्मरण करना नही ५ स्वादिष्ट व पौष्टिक आहार नित्य करना नही ।

पाचवे महाव्रत की पॉच भावना :

१ मधुर शब्दो पर राग करना नही और कठोर शब्दो पर द्वेष करना नही २ सुन्दर रूप पर राग और खराब रूप पर द्वेष करना नही ३ सुगन्ध पर राग और दुर्गन्ध पर द्वेष करना नही ४ स्वादिष्ट रस पर राग और खराब (कडवा आदि) रस पर द्वेष करना नही ५ कोमल (सुंवाला) स्पर्श पर राग और कठोर स्पर्श पर द्वेष करना नही ।

२६ छवीश प्रकार के

दशाश्रुतस्कन्ध, वृहत्कल्प और व्यवहारसूत्र के अध्ययन

(१) १० दशाश्रुतस्कन्ध के (२) ६ वृहत्कल्प के और (३) १० व्यवहार के स्कन्ध ।

२७ सत्तावीस प्रकार के अणगार (साधु) के गुण:

१ सर्व प्राणतिपात वेरमण २ सर्व मृषावाद वेरमणं ३ सर्व अदत्तादान वेरमण ४ सर्व मैथुन वेरमण ५ सर्व परिग्रह वेरमण ६ श्रोत्रेन्द्रिय निग्रह ७ चक्षु इन्द्रिय निग्रह ८ घ्राणेन्द्रिय निग्रह ९ रस-

नेन्द्रिय निग्रह १० स्पर्शेन्द्रिय निग्रह ११ क्रोध विजय १२ मान विजय १३ माया विजय १४ लोभ विजय १५ भाव सत्य १६ करण सत्य १७ योग सत्य १८ क्षमा १९ वैराग्य २० मनसमाधारणा २१ वचन समाधारणा २२ कायसमाधारणा २३ ज्ञान २४ दर्शन २५ चारित्र २६ वेदना-सहिष्णुता २७ मरण सहिष्णुता ।

२८ अठावीस प्रकार का आचार कल्प :

१ माह (मासिक) प्रायश्चित २ माह और पांच दिन ३ माह और दश दिन ४ माह और पन्द्रह दिन ५ माह और वीस दिन ६ माह और पच्चीस दिन ७ दो माह ८ दो माह और पांच दिन ९ दो माह और दश दिन १० दो माह और पन्द्रह दिन ११ दो माह और वीस दिन १२ दो माह और पच्चीस दिन १३ तीन माह १४ तीन माह और पांच दिन १५ तीन माह और दश दिन १६ तीन माह और पन्द्रह दिन १७ तीन माह और वीस दिन १८ तीन माह और पच्चीस दिन १९ चार माह २० चार माह और पांच दिन २१ चार माह और दश दिन २२ चार माह और पन्द्रह दिन २३ चार माह और वीस दिन २४ चार माह और पच्चीस दिन २५ पांच माह ये पच्चीस उपघातिक २६ अनुघातिकारोपण २७ कृत्स्न (सम्पूर्ण) २८ अकृत्स्न (असम्पूर्ण) ।

२९ उन्तीस प्रकार का पाप सूत्र :

१ भूमिकंप शास्त्र २ उत्पात शास्त्र ३ स्वप्न शास्त्र ४ अतरीक्ष शास्त्र ५ अगस्फुरण शास्त्र ५ स्वर शास्त्र ७ व्यंजन शास्त्र (मसा तिल सम्बन्धी) ८ लक्षण शास्त्र ये आठ सूत्र से, आठ वृत्ति से और आठ वार्तिक से एव २४, २५ विकथा अनुयोग २६ विद्या अनुयोग २७ मंत्र अनुयोग २८ योग अनुयोग २९ अन्य तीर्थिक प्रवृत्त अनुयोग ।

३० तीस प्रकार के मोहनीय के स्थानक :

१ स्त्री, पुरुष, नपुंसक को अथवा किसी त्रस प्राणी को जल मे बैठा कर जलरूप शस्त्र से मारे तो महामोहनीय कर्म बांधे ।

२ हाथ से प्राणी का मुख प्रमुख बाधकर व श्वांस रुंधकर जीव को मारे तो महामोहनीय।

३ अग्नि प्रज्वलित कर, वाडादिक में प्राणी रोक कर धुंवे से आकुल-व्याकुल कर मारे तो महामोहनीय।

४ उत्तमाग मस्तक को खड्ग आदि से भेदे-छेदे, फाड़े-काटे तो महामोहनीय।

५ चमडे के प्रमुख मे मस्तकादि शरीर को तान कर बाधे और वारम्बार अशुभ परिणाम से कदर्थना करे तो महामोहनीय।

६ विश्वासकारी वेष बनाकर मार्ग प्रमुख के अन्दर जीव को मारे व लोक मे आनन्द माने तो महामोहनीय।

७ कपटपूर्वक अपने आचार को गोपवे तथा अपनी माया द्वारा अन्य को पाश (जाल) में फसावे तथा शुद्ध सूत्रार्थ गोपवे तो महामोहनीय।

८ खुदने अनेक चोर कर्म बालघात (अन्याय) प्रमुख कर्म किये हुए हो तो उनके दोष अन्य निर्दोषी पुरुष पर डाले तथा यशस्वी का यश घटावे व अछता (झूठा) आल (कलङ्क) लगावे तो महामोहनीय।

९ दूसरो को खुश करने के लिए द्रव्यभाव से झगडा (क्लेश) बढाने के लिये जानता हुआ भी सभा मे सत्य-मृषा (मिश्र) भाषा बोले तो महामोहनीय।

१० राजा का भन्डारी प्रमुख, राजा, प्रधान तथा समर्थ किसी पुरुष की लक्ष्मो प्रमुख लेना चाहे तथा उस पुरुष की स्त्री का सतीत्व नष्ट करना चाहे तथा उसके रागी पुरुषो का (हितैषी-मित्र आदि) दिल फेरे तथा राजा को राज्य कर्तव्य से च्युत करे तो महामोहनीय।

११ स्त्री आदि गृद्ध होकर विवाहित होने पर भी (मैं कुवारा हूँ), कुमारपने का विरुद धरावे तो महामोहनीय।

१२ गायों (गौवे) के अन्दर "गर्दभ समान स्त्री के विषय में गृद्ध होकर आत्मा का अहित करने वाला माया मृषा वोले, अब्रह्मचारी होने पर भी ब्रह्मचारी का विरुद (रूप) धरावे तो महा मोहनीय (कारण लोक में धर्म पर अविश्वास होवे, धर्मी पर प्रतीत न रहे)।

१३ जिसके आश्रय से आजीविका करे, उसी आश्रयदाता की लक्ष्मी में लुब्ध होकर उसकी लक्ष्मी लटे तथा अन्य से लुटावे तो महामोहनीय ।

१४ जिसकी दरिद्रता दूर करके ऊंच पद पर जिसको किया वह पुरुष ऊँच पद पाकर पश्चात् ईर्ष्या-द्वेष व कलुषित चित्त से उपकारी पुरुष पर विपत्ति डाले तथा धन प्रमुख की आमद में अन्तराय डाले तो महा मोहनीय ।

१५ अपना पालन-पोषण करने वाले राजा, प्रधान, प्रमुख तथा ज्ञानादि देने वाले गुरु आदि को मारे तो महामोहनीय ।

१६ देश का राजा, व्यापारी वृन्द का प्रवर्त्तक (व्यवहारिया) तथा नगर सेठ ये तीनो अत्यन्त यशस्वी है, अतः इनकी घात करे तो महामोहनीय ।

१७ अनेक पुरुषो के आश्रय दाता—आधारभूत (समुद्र मे द्वीप समान) को मारे तो महामोहनीय ।

१८ सयम लेने वाले को तथा जिसने संयम ले लिया, हो, उसे धर्म से भ्रष्ट करे तो महामोहनीय ।

१९ अनन्त ज्ञानी व अनन्त दर्शी ऐसे तीर्थंकर देव का अवर्णवाद (निन्दा। बोले तो महामोहनीय ।

२० तीर्थंकर देव के प्ररूपित न्याय मार्ग का द्वेषी बन कर अवर्णवाद बोले, निन्दा करे और शुद्ध मार्ग से लोगो का मन फेरे तो महामोहनीय ।

२१ आचार्य उपाध्याय जो सूत्र प्रमुख विनय सीखते है व सिखाते है उनकी हिलना-निन्दा करे तो महामोहनीय ।

२२ आचार्य उपाध्याय को सच्चे मन से नही आराधे तथा अहङ्कार से भक्ति सेवा नही करे तो महामोहनीय ।

२३ अल्प सूत्री होकर भी शास्त्रार्थ करके अपनी श्लाघा करे, स्वाध्याय का वाद करे तो महामोहनीय ।

२४ अतपस्वी होकर भी तपस्वी होने का ढोंग रचे (लोगो को ठगने के लिये) तो महामोहनीय ।

२५ उपकारार्थ गुरु आदि का तथा स्थविर, ग्लान प्रमुख का शक्ति होने पर भी विनय-वैयावच्च नही करे (कहे कि इन्होने मेरी सेवा पहले नही की इस प्रकार वह धूर्त मायावी मलिन चित्त वाला अपना बोध बीज का नाश करने वाला अनुकम्पा रहित होता है) तो महामोहनीय ।

२६ चार तीर्थ के अन्दर फूट पडे ऐसी कथा वार्ता प्रमुख (क्लेश रूप शस्त्रादिक) का प्रयोग करे तो महा मोहनीय ।

२७ अपनी श्लाघा करवाने तथा मित्रता करने के लिये अधर्म योग वशीकरण निमित्त मन्त्र प्रमुख का प्रयोग करे तो महामोहनीय।

२८ मनुष्य सम्वन्धी भोग तथा देव सम्वन्धी भोग का अतृप्तपने गाढ परिणाम से आसक्त होकर आस्वादन करे तो महामोहनीय ।

२९ महर्द्धिक महाज्योतिवान् महायशस्वो देवो के ब्रल वीर्य प्रमुख का अवर्णवाद बोले तो महामोहनीय।

३० अज्ञानी होकर लोक मे पूजा-श्लाघा निमित्त व्यन्तर प्रमुख देव को नही देखता हुआ भी कहे कि 'मै देखता हूँ' ऐसा कहे तो महामोहनीय ।

३१ इकतीस प्रकार के सिद्ध आदि के गुण :

आठ कर्म की ३१ प्रकृति का विजय से ३१ गुण ।

३१ प्रकृति नीचे लिखे अनुसार :—

१—ज्ञानावरणीय कर्म की पाँच प्रकृति—१ मतिज्ञानावरणीय, २ श्रुतज्ञानावरणीय, ३ अवधिज्ञानावरणीय, ४ मन पर्यय ज्ञानावरणीय, ५ केवलज्ञानावरणीय।

२—दर्शनावरणीय कर्म की नव प्रकृति- १ निद्रा, २ निद्रा निद्रा, ३ प्रचला, ४ प्रचला प्रचला, ५ थीणाद्धि (स्त्यानर्द्धि), ६ चक्षुदर्शनावरणीय, ७ अचक्षुदर्शनावरणीय, ८ अवधि दर्शनावरणीय, ९ केवलदर्शनावरणीय।

३—वेदनीय कर्म की दो प्रकृति—१ साता वेदनीय २ असाता वेदनीय।

४—मोहनीय कर्म की दो प्रकृति—१ दर्शनमोहनीय २ चारित्र मोहनीय।

५—आयुष्य कर्म की चार प्रकृति—१ नरक आयुष्य २ तिर्यच आयुष्य ३ मनुष्य आयुष्य ४ देव आयुष्य।

६—नाम कर्म की दो प्रकृति—१ शुभ नाम २ अशुभ नाम।

७—गोत्र कर्म की दो प्रकृति—१ ऊँच गोत्र २ नीच गोत्र।

८—अन्तराय कर्म की पांच प्रकृति—१ दानान्तराय २ लाभान्तराय ३ भोगान्तराय ४ उपभोगान्तराय ५ वीर्यान्तराय।

३२ बत्तीस प्रकार का योग संग्रह :

१ जो कोई पाप लगा होवे उसका प्रायाश्चित लेने का संग्रह करना, २ जो कोई प्रायाश्चित ले उसको दूसरे के प्रति नही करने का संग्रह करना, ३ विपत्ति आने पर धर्म के अन्दर दृढ रहने का सग्रह करना, ४ निश्रा रहित तप करने का संग्रह करना, ५ सूत्रार्थ ग्रहण करने का संग्रह करना, ६ सुश्रूषा टालने का संग्रह करना. ७ अज्ञात कुल की गौचरी करने का संग्रह करना, ८ निर्लोभी होने का संग्रह करना,

९ बावीस परिषह सहन करने का सग्रह करना, १० सरल निर्मल (पवित्र) स्वभाव रखने का सग्रह करना, ११ सत्य संयम रखने का सग्रह करना, १२ समकित निर्मल रखने का सग्रह करना, १३ समाधि से रहने का सग्रह करना, १४ पांच आचार पालने का सग्रह करना, १५ विनय करने का संग्रह करना, १८ शरीर को स्थिर रखने का संग्रह करना, १९ सुविधि-अच्छे अनुष्ठान का संग्रह करना, २० आश्रव रोकने का सग्रह करना, २१ आत्मा के दोष टालने का सग्रह करना, २२ सर्व विषयो से विमुख रहने का संग्रह करना, २३ प्रत्याख्यान करने का सग्रह करना, २४ द्रव्य से उपाधि त्याग, भाव से गर्वादिक का त्याग करने का संग्रह करना, २५ अप्रमादी होने का सग्रह करना २६ समय समय पर क्रिया करने का संग्रह करना, २७ धर्मध्यान का सग्रह करना, २८ सवर योग का सग्रह करना, २९ मरण आतङ्क (रोग) उत्पन्न होने पर मन में क्षोभ न करने का संग्रह करना, ३० स्वजनादि का त्याग करने का संग्रह करना, ३१ प्रायश्चित जो लिया हो उसे करने का सग्रह करना, ३२ आराधिक-पडित की मृत्यु होवे इसकी आराधना करने का सग्रह करना।

३३ तेतीस प्रकार की अशातना :

(१(शिष्य गुरु आदि के आगे अविनय से चले तो अशातना (२) शिष्य गुरु आदि के बराबर चले तो अशातना (३) शिष्य गुरु आदि के पीछे अविनय से चले तो अशातना (४) (५) (६) इस प्रकार गुरु आदि के आगे, बराबर, पीछे अविनय से खडा रहे तो अशातना (७' (८) (९) इस तरह गुरु आदि के आगे, बराबर, पीछे अविनय से बैठे तो अशातना (१०) शिष्य गुरु आदि के साथ बाहिर भूमि जावे और उनके पहले ही शुचि निवृत्त होकर आगे आवे तो अशा०। (११) गुरु आदि के साथ विहार भूमि जाकर व वहॉ से आकर इरियापथिका पहले ही प्रतिक्रमे तो अशा०। (१२) किसी पुरुष के साथ

कि जिसके साथ गुरु आदि को बोलना योग्य, स्वयं बोले व गुरु आदि बाद में बोले तो—अशा० । (१३) रात्रि को गुरु आदि पूछे कि 'अहो आर्य ! कौन निद्रा में है और कौन जाग्रत है ?' ऐसा सुनकर भी इसका उत्तर नही देवे तो अशा० । (१४) अशनादि वहेर कर लावे तव प्रथम अन्य शिष्यादि के आगे कहे और गुरु आदि को बाद में कहे तो अशा० । (१५) अशनादि लाकर प्रथम अन्य शिष्यादि को बतावे और बाद में गुरु को बतावे तो अशा० । (१६) अशनादि लाकर प्रथम अन्य शिष्यादि को निमन्त्रण करे और बाद मे गुरु कोकरे तो अशा० । (१७) गुरु आदि के साथ अथवा अन्य साधु के साथ अन्नादि वेहर कर लावे और गुरु व वृद्ध आदि को पूछे बिना जिस पर अपना प्रेम है, उसे थोड़ा थोड़ा देवे तो अशा० । (१८) गुरु आदि के साथ आहार करते समय अच्छे २ पत्र, शाक, रस, सहित मनोज्ञ भोजन जल्दी से करे तो अशा० । (१९) बडों के बुलाने पर सुनते हुए भी चुप रहे तो अशा० । (२०) बडो के बुलाने पर अपने आसन पर बैठा हुआ 'हा' कहे, परन्तु काम क्या कहेगे इस भय से बड़ो के पास जावे नही तो अशा० । (२१) बडों के बुलाने पर आवे और आकर कहे कि 'क्या कहते हो' इस प्रकार बडों के साथ अविनय से बोले तो अशातना । (२२) बड़े कहे कि यह काम करो तुम्हे लाभ होगा। तब शिष्य कहे कि आप ही करो, आपको लाभ होगा तो अशातना। (२३ शिष्य बडो को कठोर, कर्कश भाषा बोले तो अशातना। (२४) शिष्य गुरु आदि बड़ों से जिस प्रकार बड़े बोले वैसे ही शब्दो से वार्तालाप करे तो अशातना । (२५) गुरु आदि धार्मिक व्याख्यान बांचते हो उस समय सभा मे जाकर कहे कि 'आप जो कहते है वह कहां लिखा है ।" इस प्रकार कहे तो अशा० । (२६) गुरु आदि व्याख्यान देते हो' उस समय उन्हे कहे कि आप बिलकुल भूल गये हो तो अशा० । (२७) गुरु आदि व्याख्यान देते हो, उस समय शिष्य ठीक २ नही समझने पर खुश न रहे तो अशा० । (२८) बड़े व्याख्यान

देते हो, उस समय सभा में गडबड पड़े ऐसी उच्च आवाज से कहे कि समय हो गया है, आहारादि लेने को जाना है आदि तो अशा०। (२९) गुरु आदि के व्याख्यान देते समय श्रोताओ के मन को अप्रसन्नता उत्पन्न करे तो अशा०। (३०) गुरु आदि का व्याख्यान बन्द न हुआ तो भी स्वयं व्याख्यान शुरू करे तो अशा०। (३१) गुरु आदि की शय्या पाव से सरकावे तथा हाथ से ऊंची-नीची करे तो अशातना। (३२) गुरु आदि की शय्या, पथारी पर खडा रहे, बैठे, सोवे तो अशातना। (३३) बड़ो से ऊंचे आसन पर तथा बराबर बैठे, खडा रहे, सोवे आदि तो अशातना।

नन्दीसूत्र में ५ ज्ञान का विवेचन

१, ज्ञेय, २ ज्ञान ३ ज्ञानी का अर्थ :

१ ज्ञेय—जानने योग्य पदार्थ, २ ज्ञान—जीव का उपयोग, जीव का लक्षण, जीव के गुण का जानपना वह ज्ञान ३ ज्ञानी—जो जाने-जानने वाला जीव—असंख्यात प्रदेशी आत्मा, वह ज्ञानी।

ज्ञान का विशेष अर्थ :

१ जिससे वस्तु का जानपना होवे।
२ जिसके द्वारा वस्तु की जानकारी होवे।
३ जिसकी सहायता से वस्तु की जानकारी होवे।
४ जानना सो ज्ञान।

ज्ञान के भेद :

ज्ञान के पांच भेद—१ मति ज्ञान, २ श्रुत ज्ञान, ३ अवधि ज्ञान, ४ मन: पर्यय ज्ञान, ५ केवल ज्ञान।

मति ज्ञान के दो भेद :

१ सामान्य, २ विशेष—१ सामान्य प्रकार का ज्ञान सो मति, २ विशेष प्रकार का ज्ञान सो मतिज्ञान और विशेष प्रकार का अज्ञान सो मति अज्ञान। सम्यक् दृष्टि की मति वह मतिज्ञान और मिथ्या दृष्टि की मति सो मतिअज्ञान।

२ श्रुत ज्ञान के दो भेद :

१ सामान्य, २ विशेष :—सामान्य प्रकार का श्रुत सो श्रुत कहलाता है और २ विशेष प्रकार का श्रुत सो श्रुत ज्ञान या श्रुत

अज्ञान । सम्यक् दृष्टि का श्रुत सो श्रुत ज्ञान और मिथ्यादृष्टि का श्रुत सो श्रुत अज्ञान । १ मति ज्ञान, २ श्रुत ज्ञान ये दोनो ज्ञान अन्योन्य-परस्पर एक दूसरे में क्षीर नीर समान मिले रहते है । जीव और आभ्यन्तर शरीर के समान दोनो ज्ञान जब साथ होते है, तव भी पहलें मतिज्ञान और फिर श्रुत ज्ञान होता है । जीव मति के द्वारा जाने सो मति ज्ञान और श्रुत के द्वारा जाने सो श्रुत ज्ञान ।

मति ज्ञान का वर्णन

मति ज्ञान के दो भेद :

१ श्रुत निश्रीत—सुने हुए वचनो के अनुसार मति फैलावे ।

२ अश्रुत निश्रीत—जो नही सुना व नही देखा हो तो भी उसमे अपनी मति (बुद्धि) फैलावे ।

अश्रुत निश्रीत के चार भेद :

१ औत्पातिका, २ वैनयिका, ३ कार्मिका, ४ परिणामिका ।

औत्पातिका बुद्धि—जो पहले नही देखा हो व सुना हो, उसमे एकदम विशुद्ध अर्थग्राही बुद्धि उत्पन्न हो व जो बुद्धि फल को उत्पन्न करे उसे औत्पातिका बुद्धि कहते है ।

वैनयिका बुद्धि—गुरु आदि की विनय भक्ति से जो बुद्धि उत्पन्न हो व शास्त्र का अर्थ रहस्य समझे वह वैनयिका बुद्धि ।

कार्मिका (कामीया) बुद्धि—देखते, लिखते, चितरते, पढते सुनते, सीखते आदि अनेक शिल्प कला आदि का अभ्यास करते करते इनमे कुशलता प्राप्त करे वह कार्मिका बुद्धि ।

पारिणामिका बुद्धि—जैसे जैसे वय (उम्र) की वृद्धि होती जाती है, वैसे वैसे बुद्धि बढती जाती है तथा बहुसूत्री स्थविर प्रत्येक वृद्धादि प्रमुख का आलोचना करता बुद्धि की वृद्धि हो, जातिस्मरणादि ज्ञान उत्पन्न हो वह परिणामिका बुद्धि ।

श्रुत निश्रीत मति ज्ञान के चार भेद :

१ अवग्रह, २ इहा, ३ अवाय, ४ धारणा।

आग्रह के भेद :

अवग्रह के दो भेद :—१ अर्थावग्रह, २ व्यञ्जनावग्रह।

व्यञ्जनावग्रह के चार भेद :—१ श्रोत्रेन्द्रिय व्यञ्जनावग्रह, २ घ्राणेन्द्रिय व्यञ्जना० ३ रसनेन्द्रिय व्यञ्ज० ४ स्पर्शेन्द्रिय व्यञ्ज०।

व्यञ्जनावग्रह—जो पुद्गल इन्द्रियों के सामने होवे उन्हे वे इन्द्रिये ग्रहण करे—सरावले के दृष्टान्त समान वह व्यञ्जनावग्रह कहलाता है।

चक्षु इन्द्रिय और मन ये दो रूपादि पुद्गल के सामने जाकर उन्हे ग्रहण करे इसलिये चक्षुइन्द्रिय और मन इन दो के व्यञ्जनावग्रह नही होते है, शेष चार इन्द्रियो का व्यञ्जनावग्रह होता है।

श्रोत्रेन्द्रिय व्यञ्जना०—जो कान के द्वारा शब्द के पुद्गल ग्रहण करे।

घ्राणेन्द्रिय व्यञ्जना०—जो नासिका से गन्ध के पुद्गल ग्रहण करे।

रसनेन्द्रिय व्यञ्जना०—जो जिह्वा के द्वारा रस के पुद्गल ग्रहण करे।

स्पर्शेन्द्रिय व्यञ्जना०—जो शरीर के द्वारा स्पर्श के पुद्गल ग्रहण करे।

व्यञ्जना० को समझाने के लिये दो दृष्टान्त :—

(१) पडिबोहग दिठंतेण, (२) मल्लग दिठंतेणं।

पडिबोहग दिठंतेण .—प्रतिबोधक (जगाने का) दृष्टान्त, जैसे किसी सोते हुए पुरुष को कोई अन्य पुरुष बुलाकर आवाज देवे 'हे देवदत्त'! यह सुनकर वह जाग उठता है और जाग कर 'हू' जवाब

देता है। तब शिष्य शङ्का उत्पन्न होने पर पूछता है, 'हे स्वामिन्! उस पुरुष ने हु कारा दिया तो क्या उसने एक समय के, दो समय के, तीन समय के, चार समय के यावत् सख्यात समय के या असख्यात समय के प्रवेश किये हुए शब्द पुद्गल ग्रहण किये है ?' गुरु ने जवाब दिया— एक समय के नही, दो समय के नही, तीन-चार यावत् सख्यात समय के नही, परन्तु असख्यात समय के प्रवेश किये हुए शब्द पुद्गल ग्रहण किये है। इस प्रकार गुरु के कहने पर भी शिष्य के समझ मे नही आया।

इस पर मल्लक (सरावला) का दूसरा दृष्टान्त कहते है :— कुम्हार के नीभाडे में से अभी का निकला हुआ कोरा सरावला हो और उसमें एक जल बिन्दु डाले, परन्तु वह जल बिन्दु दिखाई नही देवे। इस प्रकार दो, तीन, चार यावत् अनेक जल बिन्दु डालने पर जब तक वह भीजे नही, वहा तक वह जल बिन्दु दिखाई नही देवे, परन्तु भीजने के बाद वह जल बिन्दु सरावले मे ठहर जाता है। ऐसा करते करते वह सरावला प्रथम पाव, आधा करते करते पूर्ण भर जाता है और पश्चात् जल बिन्दु के गिरने से सरावले मे से पानी निकलने लग जाता है, वैसे ही कान मे एक समय का प्रवेश किया हुआ पुद्गल ग्रहण नही हो सके, जैसे एक जल बिन्दु सरावले मे दिखाई नही देवे, वैसे ही दो, तीन, चार सख्यात समय के पुद्गल ग्रहण नही हो सके, अर्थ को पकड सके, समझ सके इसमे असख्यात समय चाहिये और वह असख्यात समय के प्रवेश किये हुए पुद्गल जब कान मे जावे और (सरावले मे जल के समान) उभरने (बाहर) निकलने) लगे तब "हूँ" इस प्रकार बोल सके, परन्तु समझ नही सके, इसे व्यञ्जना० कहते है।

अर्थावग्रह के ६ भेद :

१ श्रोत्रेन्द्रिय अर्थाव०, २ चक्षुइन्द्रिय अर्थाव०, ३ घ्राणेन्द्रिय

अर्थाव०, ४ रसनेन्द्रिय अर्थाव०, ५ स्पर्शेन्द्रिय अर्थाव०, ६ नोइन्द्रिय (मन) अर्थाव० ।

श्रोत्रेन्द्रिय अर्थाव०—जो कान के द्वारा शब्द का अर्थ ग्रहण करे।

चक्षुन्द्रिय अर्थाव०—जो चक्षु के द्वारा रूप का अर्थ ग्रहण करे।

घ्राणेन्द्रिय अर्थावग्रह—जो नासिका के द्वारा गध का अर्थ ग्रहण करे ।

रसनेन्द्रिय अर्थावग्रह—जो जिह्वा के द्वारा रस का अर्थ ग्रहण करे ।

स्पर्शेन्द्रिय अर्थावग्रह—जो शरीर के द्वारा स्पर्श का अर्थ ग्रहण करे।

नोइन्द्रिय अर्थावग्रह—जो मन द्वारा हरेक पदार्थ का अर्थ ग्रहण करे ।

व्यजनावग्रह के चार भेद और अर्था० के ६ भेद एव दोनो मिल कर अव० के दश भेद हुवे । अव० के द्वारा सामान्य रीति से अर्थ का ग्रहण होवे परन्तु जाने नही कि यह किस का शब्द व गन्ध प्रमुख है । बाद मे वहाँ से इहा मतिज्ञान मे प्रवेश करे। इहा जो विचारे कि यह अमुक का शब्द व गन्ध प्रमुख है परन्तु निश्चय नही होवे पश्चात् अवाय मति ज्ञान मे प्रवेश करे। अवाय जिससे यह निश्चय हो कि यह अमुक का ही शब्द व गन्ध है पश्चात् धारणा मति ज्ञान मे प्रवेश करे। धारणा जो धार राखे कि अमुक शब्द व गन्ध इस प्रकार का था ।

एवं इहा के ६ भेद—श्रोत्रेन्द्रिय इहा, यावत् नो इन्द्रिय इहा। एव अवाय के ६ भेद श्रोत्रेन्द्रिय, यावत् नोइन्द्रिय अवाय। एव धारणा के ६ भेद श्रोत्रेन्द्रिय धारणा यावत् नो इन्द्रिय धारणा।

इनका काल कहते है—अव० का काल एक समय से असंख्यात

समय तक। प्रवेश किये हुवे पुद्गलो को अन्त समय जाने कि मुझे कोई बुला रहा है।

इहा का काल, अन्तर्मुहूर्त। विचार हुवा करे कि जो मुझे बुला रहा है वह यह है अथवा वह।

अवाय का काल—अन्तर्मुहूर्त-निश्चय करने का कि मुझे अमुक पुरुष ही बुला रहा है। शब्द के ऊपर से निश्चय करे।

धारणा का काल सख्यात वर्ष अथवा असख्यात वर्ष तक धार राखे कि अमुक समय मैने जो शब्द सुना वह इस प्रकार है।

अव० के दश भेद, इहा के ६ भेद, अवाय के ६ भेद, धारणा के ६ भेद एव सर्व मिलकर श्रुत निश्रीत मति ज्ञान के २८ भेद हुवे। मति ज्ञान समुच्चय चार प्रकार का—१ द्रव्य से २ क्षेत्र से ३ काल से ४ भाव से १ द्रव्य से मति ज्ञानी सामान्य से उपदेश द्वारा सर्व द्रव्य जाने परन्तु देखे नही। २ क्षेत्र से मति ज्ञानी सामान्य से उपदेश के द्वारा सर्व क्षेत्र की बात जाने परन्तु देखे नही। ३ काल से मतिज्ञानी सामान्य से उपदेश के द्वारा सर्व काल की बात जाने परन्तु देखे नही। ४ भाव से सामान्य से उपदेश के द्वारा सर्व भाव की बात जाने परन्तु देखे नही। नही देखने का कारण यह है कि मति ज्ञान को दर्शन नही है। भगवती सूत्र मे पासइ पाठ है वह भी श्रद्धा के विषय मे है परन्तु देखे ऐसा नही।

श्रुत (सूत्र) ज्ञान का वर्णन :

श्रुत ज्ञान के १४ भेद—१ अक्षर श्रुत २ अनक्षरश्रुत ३ सज्ञी श्रुत ४ असज्ञी श्रुत ५ सम्यक् श्रुत ६ मिथ्या श्रुत ७ सादिक श्रुत ७ अनादिक श्रुत ९ सपर्यवसित श्रुत १० अपर्यवसित श्रुत ११ गमिक श्रुत १२ अगमिक श्रुत १३ अगप्रविष्ट श्रुत १४ अनग प्रविष्ट श्रुत।

१ अक्षर श्रुत—इसके तीन भेद—१ सज्ञा अक्षर २ व्यजन अक्षर ३ लब्धि अक्षर।

१ सज्ञा अक्षर श्रुत—अक्षर के आकार के ज्ञान को कहते है। जैसे क, ख, ग प्रमुख सर्व अक्षर की सज्ञा का ज्ञान, क अक्षर के आकार को देख कर कहे कि यह ख नही, ग नही इस तरह से सर्व अक्षरो का ना कह कर कहे कि यह तो क ही है। एवं संस्कृत, प्राकृत, गोडी, फारिसी, द्राविडी, हिन्दी आदि के अनेक प्रकार की लिपियो मे अनेक प्रकार के अक्षरो का आकार है, इनका जो ज्ञान होवे उसे सज्ञाअक्षर श्रुत ज्ञान कहते है।

२ व्यजन अक्षर श्रुत—ह्रस्व, दीर्घ, काना; मात्रा, अनुस्वार प्रमुख की सयोजना करके बोलना व्यंजनाक्षर श्रुत।

३ लब्धिअक्षरश्रुत—इन्द्रियार्थ के जानपने की लब्धि अक्षर श्रुत इसके ६ भेद—

१ श्रोत्रेन्द्रिय लब्धि अक्षर श्रुत—कान से भेरी प्रमुख का शब्द सुनकर कहे कि यह भेरी प्रमुख का शब्द है अतः भेरी प्रमुख अक्षर का ज्ञान श्रोत्रेन्द्रिय लब्धि से हुवा इसलिये इसे श्रोत्रेन्द्रिय लब्धि श्रुत कहते है।

२ चक्षुइन्द्रिय अक्षर श्रुत—ऑख से आम प्रमुख का रूप देख कर कहे कि यह आम प्रमुख का रूप है अतः आम प्रमुख अक्षर का ज्ञान चक्षु इन्द्रिय लब्धि से हुवा इस लिये इसे चक्षुइन्द्रिय लब्धि श्रुत कहते है।

३ घ्राणेन्द्रिय लब्धि अक्षर श्रुत—नासिका से केतकी प्रमुख की सुगन्ध सूघ कर कहे कि यह केतकी प्रमुख की सुगन्ध है अत केतकी प्रमुख अक्षर का ज्ञान घ्राणन्द्रिय लब्धि श्रुत से हुवा इस लिये इसे घ्राणेन्द्रिय लब्धि श्रुत कहते है।

४ रसनेन्द्रिय लब्धि अक्षर श्रुत :—जिह्वा से शक्कर प्रमुख का स्वाद जान कर कहे कि यह शक्कर प्रमुख का स्वाद है, अतः इस अक्षर का ज्ञान रसनेन्द्रिय से हुआ इसलिये इसे लब्धि अक्षर श्रुत कहते है।

५ स्पर्शेन्दिय लब्धि अक्षर श्रुत :—शीत, ऊष्ण आदि का स्पर्श होने से जाने कि यह शीत व ऊष्ण है। अत: इस अक्षर का ज्ञान स्पर्शेंद्रिय से हुआ। इसलिये इसे स्पर्शे० लब्धि अक्षर श्रुत कहते है।

६ नोइन्द्रिय लब्धि अक्षर श्रुत —मन में चिन्ता व विचार करते हुए स्मरण हुआ कि मैने अमुक सोचा व विचारा अत इस स्मरण के अक्षर का ज्ञान मन से हुआ, इसलिए इसे नोइन्द्रिय लब्धि अक्षर श्रुत कहते है।

२ अनक्षर श्रुत .—इसके अनेक भेद है। अक्षर का उच्चारण किये बिना शब्द, छीक, उधरस, उछ्वास, नि श्वास, बगासी, नाक निषीक तथा नगारे प्रमुख का शब्द अनक्षरी वाणी द्वारा जान लेना इसे अनक्षर श्रुत कहते है।

३ सज्ञी श्रुत .—इसके तीन भेद · १ सज्ञी कालिकोपदेश, २ सज्ञी हेतूपदेश, ३ सज्ञी दृष्टिवादोपदेश।

१ सज्ञी कालिकोपदेश :—श्रुत सुनकर १ विचारना, २ निश्चय करना, ३ समुच्चय अर्थ की गवेषणा करना, ४ विशेष अर्थ की गवेषणा करना, ५ सोचना (चिता करना), ६ निश्चय करके पुन विचार करना ये ६ बोल सज्ञी जीव के होते है। इसलिये इसे सज्ञी कालिकोपदेश श्रुत कहते है।

२ सज्ञी हेतूपदेश —जो सज्ञी धारण कर रक्खे।

३ सज्ञी दृष्टि वादोपदेश —जो क्षयोपशम भाव से सुने। अर्थात् शास्त्र को हेतु सहित, द्रव्य अर्थ सहित, कारण युक्ति सहित, उपयोग सहित, पूर्वापर विचार सहित जो पढे, पढावे, सुने उसे सज्ञी श्रुत कहते है।

असंज्ञी श्रुत के तीन भेद .—१ असज्ञी कालिकोपदेश २ असज्ञी हेतूपदेश, ३ असज्ञी दृष्टिवादोपदेश।

(१) असंज्ञी कालिकोपदेश श्रुत—जो सुने, परन्तु विचारे नही। सज्ञी के जो ६ बोल होते है वो असंज्ञी के नही।

(२) असंज्ञी हेतूपदेश श्रुत—जो सुनकर धारण नही करे।

(३) असंज्ञी दृष्टिवादोपदेश—क्षयोपशम भाव से जो नही सुने एवं ये तीन बोल असज्ञी आश्री कहे अर्थात् असंज्ञी श्रुत—जो भावार्थ रहित, विचार तथा उपयोग शून्य पूर्वक आलोचना रहित, निर्णय रहित, ओघ संज्ञा से पढ़े तथा पढ़ावे व सुने उसे असज्ञी श्रुत कहते है

५ सम्यक् श्रुत—अरिहन्त, तीर्थंकर, केवल ज्ञानी, केवल दर्शनी, द्वादश गुण सहित, अट्ठारह दोष रहित, चौतीश अतिशय प्रमुख अनन्त गुण के धारक, इनसे प्ररूपित बारह अंग अर्थ रूप आगम तथा गणधर परुषो से गुंफित श्रुत रूप (मूल रूप) बारह आगम तथा चौदह पूवधारी जो श्रुत तथा अर्थरूप वाणी का प्रकाश किया है वह सम्यक् श्रुत दश पूर्व से न्यून ज्ञान धारी द्वारा प्रकाशित किये हुए आगम समश्रुत व मिथ्या श्रुत होते है।

(६) मिथ्या श्रुत—पूर्वोक्तगुण रहित, रागद्वेष सहित पुरुषो के द्वारा स्वमति अनुसार कल्पना करके मिथ्यात्व दृष्टि से रचे हुवे ग्रन्थ —जैसे महाभारत्त, रामायण, वैद्यक, ज्योतिष तथा २९ जाति के पाप शास्त्र प्रमुख-मिथ्याश्रुत कहलाते है। ये मिथ्याश्रुत मिथ्या दृष्टि को मिथ्या श्रुत पने परिणमे (सत्य मानकर पढ़े इसलिये) परन्तु जो सम्यक श्रुत का सम्पर्क होने से झूंठे जानकर छोड़ देवे तो सम्यक् श्रुत पने परिणमे इस मिथ्याश्रुत सम्यक्त्ववान पुरुष को सम्यक् बुद्धि से वांचते हुवे सम्यक्त्व रस से परिणमे तो बुद्धि का प्रभाव जानकर आचारांगादिक सम्यक् शास्त्र भी सम्यक्त्व वान् पुरुष को सम्यक् होकर परिणमते है और मिथ्या दृष्टि पुरुष को वे ही शास्त्र मिथ्या पने परिणमते है।

७ सादिक श्रुत ८ अनादिक श्रुत ९ सपर्यवसित श्रुत १० अपर्यवसित श्रुत—इन चार प्रकार के श्रुत का भावार्थ साथ

२ दिया जाता है। वारह अग व्यवच्छेद होने आश्री अन्त सहित और व्यवच्छेद न होने आश्री आदिक अन्त रहित। समुच्चय से चार प्रकार के होते है। द्रव्य से एक पुरुष ने पढना शुरू किया उसे सादिक सपर्यवसित कहते है और अनेक पुरुष परम्परा आश्री अनादिक अपर्यवसित कहते है। क्षेत्र से ५ भरत ५ एरावत, दश क्षेत्र आश्री सादिक सपर्यवसित, ५ महाविदेह आश्री अनादिक अपर्यवसित। काल से उत्सर्पिणी अवसर्पिणी आश्री सादिक सपर्यवसित। नोउत्सर्पिणी नोअवसर्पिणी आश्री अनादिक अपर्यवसित। भाव से तीर्थकरो ने भाव प्रकाशित किया इस आश्री सादिक सपर्यवसित। क्षयोपशम भाव आश्री अनादिक अपर्यवसित, अथवा भव्य का श्रुत आदिक अन्त सहित अभव्य का श्रुत आदि अन्त रहित। इस पर दृष्टान्त-सर्व आकाश के अनन्त प्रदेश है व एक आकाश प्रदेश मे अनन्त पर्याय है। उन सर्व पर्याय से अनन्त गुणे अधिक एक अगुरुलघु पर्याय अक्षर होता है जो क्षरे नही, व अप्रतिहत, प्रधान, ज्ञान, दर्शन जानना सो अक्षर, अक्षर केवल सम्पूर्ण ज्ञान जाना इसमे से सर्व जीव को सर्व प्रदेश के अनन्तवें भाग जानपना सदाकाल रहता है। शिष्य पूछने लगा हे स्वामिन्! यदि इतना जानपना जीव को न रहे तो क्या होवे? तब गुरु ने उत्तर दिया कि यदि इतना जानपना न रहे तो जीवपना मिट कर अजीव हो जाता है व चैतन्य मिट कर जडपना (जडत्व) हो जाता है। अत हे शिष्य! जीव को सर्व प्रदेशे अक्षर का अनन्तवे भाग ज्ञान सदा रहता है। जैसे वर्षा ऋतु मे चन्द्र तथा सूर्य ढके हुवे रहने पर भी सर्वथा चन्द्र तथा सूर्य की प्रभा छिप नही सकती है वैसे ही ज्ञानावरणीय कर्म के आवरण के उदय से भी चैतन्यत्व सर्वथा छिप नही सकता। निगोद के जीवो को भी अक्षर के अनन्तवे भाग सदा ज्ञान रहता है।

११ गमिक श्रुत—बारहवां अंग दृष्टिवाद अनेक बार समान पाठ आने से।

१२ अगमिक श्रुत—कालिक श्रुत ११ अग आचारांग प्रमुख।

१३ अंग[1] प्रविष्ट—बारह अग (आचारांगादि से दृष्टिवाद पर्यन्त) सूत्र में इसका विस्तार बहुत है अतः वहाँ से जानो।

१४ अनंगप्रविष्ट—समुच्चय दो प्रकार का १ आवश्यक २ आवश्यक व्यतिरिक्त। १ आवश्यक के ६ अध्ययन सामायिक प्रमुख २ आवश्यक व्यतिरिक्त के दो भेद १ कालिक श्रुत २ उत्कालिक श्रुत।

१ कालिकश्रुत[2] इसके अनेक भेद है—उत्तराध्ययन, दशाश्रुत स्कन्ध, वृहत् कल्प, व्यवहार प्रमुख इकतीस सूत्र कालिक के नाम नदि सूत्र में आये है। तथा जिन २ तीर्थकर के जितने शिष्य (जिनके चार बुद्धि होवे) होवे उतने पइन्ना सिद्धान्त जानना जैसे ऋषभ देव के ८४ लाख पइन्ना तथा २२ तीर्थकर के सख्याता हजार पइन्ना तथा महावीर स्वामी के १४ हजार पइन्ना तथा सर्व गणधर के पइन्ना व प्रत्येक बुद्ध के बनाए हुए पइन्ना ये सर्व कालिक जानना एवं कालिक श्रुत।

२ उत्कालिक श्रुत—यह अनेक प्रकार का है। दशवैकालिक प्रमुख २९ प्रकार के शास्त्रो के नाम नदि-सूत्र में आये है। ये और इनके सिवाय और भी अनेक प्रकार के शास्त्र है परन्तु वर्तमान में अनेक शास्त्र विच्छेद हो गये है।

द्वादशांग सिद्धान्त आचार्य की सन्दूक समान, गत काल में अनन्त जीव आज्ञा का आराधन करके संसार दुख से मुक्त हुवे है वर्तमान

---

१ अथवा समुच्चय दो प्रकार के श्रुत कहे हैं। अंग पविट्ठं च (अग प्रविष्ट) तथा अंग बाहिरं (अनंग प्रविष्ट) गमिक तथा अगमिक के भेद मे समावेश सूत्रकार ने किए है। मूल मे अलग २ भी नाम आये है।

२ पहले प्रहर तथा चौथे प्रहर जिसकी स्वाध्याय होती है वह कालिक श्रुत कहलाता है।

काल में संख्यात जीव दुख से मुक्त हो रहे है। व भविष्य में आज्ञा का आराधन करके अनन्त जीव दुख से मुक्त होवेगे। इसी प्रकार सूत्र की विराधना करने से तीनो काल में संसार के अन्दर भ्रमण करने का (ऊपर समान) जानना। श्रुतज्ञान (द्वादशागरूप) सदा काल लोक आश्री है।

श्रुत ज्ञान—समुच्चय चार प्रकार का है-द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से, भाव से।

द्रव्य से—श्रुतज्ञानी उपयोग द्वारा सर्व द्रव्य जाने व देखे। (श्रद्धा द्वारा व स्वरूप चितवन करने से)

क्षेत्र से—श्रुतज्ञानी उपयोग द्वारा सर्व क्षेत्र की बात जाने व देखे (पूर्व वत्)

काल से—श्रुतज्ञानी उपयोग द्वारा सर्व काल की बात जाने व देखे (पूर्ववत्)

भाव से—श्रुतज्ञानी उपयोग द्वारा सर्व भाव जाने व देखे।

अवधिज्ञान का वर्णन

१ अवधि ज्ञान के मुख्य दो भेद—१ भवप्रत्ययिक २ क्षायोपशमिक। १ भवप्रत्ययिक के दो भेद —१ नेरियो को व २ देवो (चार प्रकार के) को जो होता है वह भव सम्बन्धी। यह ज्ञान उत्पन्न होने के समय से लगा कर भव के अन्त समय तक रहता है २ क्षायोपशमिक के दो भेद :—१ सज्ञी मनुष्य को व २ संज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय को होता है। क्षयोपशम भाव से जो उत्पन्न होता है व क्षमादिक गुणो के साथ अणगार को जो उत्पन्न होता है वह क्षायोपशमिक।

अवधिज्ञान के (सक्षेप मे) छ भेद—१ अनुगामिक, अनानुगामिक, ३ वर्धमानक, ४ हीयमानक, ५ प्रतिपाति, ६ अप्रतिपाति।

(१) अनुगामिक—जहां जावे वहां साथ आवे (रहे) यह दो प्रकार का—१ अन्त:गत, २ मध्यगत।

अन्त:गत अवधिज्ञान के ३ भेद—१ पुरतः अन्त गत (पुरओ अन्तगत) शरीर के आगे के भाग के क्षेत्र में जाने व देखे।

२ मार्गतः अन्तः गत (मग्गओ अन्तगत) शरीर के पृष्ट भाग के क्षेत्र में जाने व देखे।

३ पार्श्वतः अन्त:गत—शरीर के दो पार्श्व भाग के क्षेत्र में जाने व देखे।

अन्त:गत अविधज्ञान पर दृष्टान्त :—जैसे कोई पुरुष दीप प्रमुख अग्नि का भाजन व मणि प्रमुख हाथ में लेकर आगे करता हुआ चले तो आगे देखे, पीछे रख कर चले तो पीछे देखे और दोनो तरफ रख कर चले तो दोनों तरफ देखे व जिस तरफ रक्खे उधर देखे दूसरी तरफ नही, ऐसा अवधिज्ञानका जानना। जिस तरफ देखे जाने उस तरफ सख्याता, असंख्याता योजन तक जाने देखे।

२ मध्य गत—यह सर्व दिशा व विदिशाओं में (चारो तरफ) संख्याता योजन तक जाने देखे। पूर्वोक्त दीप प्रमुख भाजन मस्तक पर रख कर चलने से जैसे चारों ओर दिखाई दे उसी प्रकार इस ज्ञान से भी चारों ओर देखे जाने।

(२) अनानुगामिक अवधि ज्ञान—जिस स्थान पर अवधि ज्ञान उत्पन्न हुआ हो, उसी स्थान पर रहकर जाने व देखे, अन्यत्र यदि वह पुरुष चला जावे तो नही देखे जाने। यह चारो दिशाओ में संख्यात असंख्यात योजन संलग्न तथा असंलग्न रह कर जाने देखे, जैसे किसी पुरुष ने दीप प्रमुख अग्नि का भाजन व मणि प्रमुख किसी स्थानपर रक्खा होवे तो केवल उसी स्थान के प्रति चारों तरफ देखे परन्तु अन्यत्र न देखे उसी प्रकार अनानुगामिक अवधि जानना।

(३) वर्द्धमानक अवधि ज्ञान—प्रशंस्त लेश्या के अध्यवसाय के कारण व विशुद्ध चारित्र के परिणाम द्वारा सर्व प्रकार अवधि० की वृद्धि होवे उसे वर्धमानक अवधि० कहते है। जघन्य से सूक्ष्म निगोदिया जीव तीन समय उत्पन्न होने में शरीर की जो अवगाहना बांधी होवे उतना ही क्षेत्र जाने उत्कृष्ट सर्व अग्नि का जीव, सूक्ष्म, बादर, पर्याप्त, अपर्याप्त, एवं चार जाति के जीव। इनमें वे भी जिस समय में उत्कृष्ट होवे उन अग्नि के जीवो को एकेक आकाश प्रदेश मे अन्तर रहित रखने से जितने अलोक मे लोक के बराबर असंख्यात खण्ड (भाग विकल्प) भराय उतना क्षेत्र सर्व दिशा व विदिशाओ (चारो ओर) से देखे। अवधि० रूपी पदार्थ देखे। मध्यम अनेक भेद है। वृद्धि चार प्रकार से होवे :—

१ द्रव्य से, २ क्षेत्र से, ३ काल से, ४ भाव से।

१ काल से ज्ञान की वृद्धि होवे तब तीन बोल का ज्ञान बढे।

२ क्षेत्र से ज्ञान बढे तब काल की भजना व द्रव्यभाव का ज्ञान बढे।

३ द्रव्य से ज्ञान बढे तब काल का तथा क्षेत्र की भजना व भाव को वृद्धि।

४ भाव से ज्ञान बढे तो शेष तीन वोल की भजना इसका विस्तार पूर्वक वर्णन '—सर्व वस्तुओ में काल का ज्ञान सूक्ष्म है। जैसे चौथे आरे में जन्मा हुआ निरोगी बलिष्ठ शरीर व वज्रऋषभनाराच संहनन वाला पुरुष तीक्ष्ण सूई लेकर ४९ पान की बीडी वीधे, वीधते समय एक पान से दूसरे पान में सूई को जाने मे असख्याता समय लग जाता है। काल ऐसा सूक्ष्म होता है। इससे क्षेत्र असख्यात गुण सूक्ष्म है। जैसे एक अगुल जितने क्षेत्र मे असख्यात श्रेणिये है। एक एक समय में एक एक आकाश प्रदेश का यदि अपहरण होवे तो इतने मे असख्यात कालचक्र बीत जाते है तो भी एक श्रेणी परी (पूर्ण) न

होवे। इस प्रकार क्षेत्र सूक्ष्म है। इससे द्रव्य अनन्त गुणा सूक्ष्म है। एक अंगुल प्रमाण क्षेत्र में असंख्यात श्रेणियां है। अगुल प्रमाण लम्बी व एक प्रदेश प्रमाण जाडी में असंख्यात आकाश प्रदेश है। एक एक आकाश प्रदेश ऊपर अनन्त परमाणु तथा द्विप्रदेशी, त्रिप्रदेशी, अनन्त प्रदेशी यावत् स्कन्ध प्रमुख द्रव्य है। इन द्रव्यो में से समय समय पर एक एक द्रव्य का अपहरण करने में अनन्त कालचक्र लग जाते है तो भी द्रव्य खतम नही होते। द्रव्य से भाव अनन्त गुणा सूक्ष्म है।

पूर्वोक्त श्रेणी में जो द्रव्य कहे है, उनमें से एक एक द्रव्य में अनन्त पर्यव (भाव) है। एक परमाणु में एक वर्ण, एक गन्ध, एक रस, दो स्पर्श है। जिनमें एक वर्ण में अनन्त पर्याय है। यह एक गुण काला, द्विगुण काला, त्रिगुण काला यावत् अनन्त गुण काला है। इस प्रकार पांचों बोल में अनन्त पर्याय है। द्विप्रदेशी स्कन्ध में २ वर्ण, २ गन्ध, २ रस, ४ स्पर्श है। इन दश भेदों में भी पूर्वोक्त रीति से अनन्त पर्याय है। इस प्रकार सर्व द्रव्य में पर्याय की भावना करना एवं सर्व द्रव्य के पर्याय इकट्ठे करके समय समय एक पर्याय का अपहरण करने में अनन्त कालचक्र (उत्सर्पिणी अवसर्पिणी) बीत जाने पर परमाणु द्रव्य के पर्याय पूरे होते है एवं द्विप्रदेषी स्कन्धो के पर्याय, त्रिप्रदेशी स्कन्धो के पर्याय यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्धों के पर्याय का अपहरण करने मे अनन्त कालचक्र लग जाते है तो भी खूटे नही। इस प्रकार द्रव्य से भाव सूक्ष्म होते है। काल को चने की ओपमा, क्षेत्र को ज्वार की ओपमा, द्रव्य को तिल की ओपमा और भाव को खसखस की ओपमा दी गई है।

पूर्व चार प्रकार की वृद्धि की जो रीति कही गई है, उनमें से क्षेत्र से व काल से किस प्रकार वर्धमान होता है उसका वर्णन :—

१ क्षेत्र से अंगुल का असंख्यातवें भाग जाने देखे व काल से आवलिका के असंख्यातवे भाग की बात गत काल व भविष्य काल की जाने देखे।

२ क्षेत्र से अगुल के संख्यातवे भाग जाने देखे व काल से आवलिका के संख्यातवे भाग की बात गत व भविष्यकाल की जाने देखे।

३ क्षेत्र से एक अगुल मात्र क्षेत्र जाने देखे व काल से आवलिका से कुछ न्यून जाने देखे।

४ क्षेत्रसे पृथक् (दो से नव तक) अंगुल की बात जाने देखे व काल से आवलिका सम्पूर्ण काल की बात गत काल व भविष्य काल की जाने देखे।

५ क्षेत्र से एक हाथ प्रमाण क्षेत्र जाने देखे व काल से अन्तर्मुहूर्त (मुहूर्त मे न्यून) काल की बात गतकाल व भविष्य काल की जाने देखे।

६ क्षेत्र से धनुष्य प्रमाण क्षेत्र जाने देखे व काल से प्रत्येक मुहूर्त की बात जाने देखे।

७ क्षेत्र से गाउ (कोस) प्रमाण क्षेत्र जाने देखे व काल से एक दिवस मे कुछ न्यून की बात जाने देखे।

८ क्षेत्र से एक योजन प्रमाण क्षेत्र जाने देखे व काल से प्रत्येक दिवस की बात जाने देखे।

९ क्षेत्र से पच्चीस योजन क्षेत्र के भाव जाने देखे व काल से पक्ष मे न्यून की बात जाने देखे।

१० क्षेत्र से भरत क्षेत्र प्रमाण क्षेत्र के भाव जाने देखे व काल से पक्ष पूर्ण की जात जाने देखे।

११ क्षेत्र से जम्बू द्वीप प्रमाण क्षेत्र की बात जाने देखे व काल से एक माह जाजेरी की बात जाने देखे।

१२ क्षेत्र से अढाई द्वीप की बात जाने देखे व काल से एक वर्ष की वात जाने देखे।

१३ क्षेत्र से पन्द्रहवाँ रुचक द्वीप तक जाने देखे व काल से पृथक् वर्ष की बात जाने देखे।

१४ क्षेत्र से संख्याता द्वीप समुद्र की बात जाने देखे व काल से संख्याता काल की बात जाने देखे।

१५ क्षेत्र से संख्याता तथा असंख्याता द्वीप समुद्र की बात जाने देखे व काल से असंख्याता काल की बात जाने देखे। इस प्रकार उर्ध्व लोक, अधो लोक तिर्यक् लोक इन तीन लोकों मे बढते वर्धमान परिणाम से अलोक में असंख्याता लोक प्रमाण खण्ड जानने की शक्ति प्रकट होवे।

४ हीयमानक अवधिज्ञान

अप्रशस्त लेश्या के परिणाम के कारण अशुभ ध्यान से व अविशुद्ध चारित्र परिणाम से (चारित्र की मलिनता से) अवधिज्ञान की हानि होती है व कुछ कुछ घटता जाता है। इसे हीयमानक अवधि ज्ञान कहते है।

५ प्रतिपाति अवधि ज्ञान

जो अवधिज्ञान प्राप्त हो गया है वह एक समय ही नष्ट हो जाता है। वह जघन्य १ आंगुल के असंख्यातवे भाग, २ आंगुल के संख्यातवें भाग, ३ वालाग्र ४ पृथक् वालाग्र, ५ लिम्ब, ६ पृथक् लिम्ब, ७ यूका (जू), ८ पृथक् जू, ९ जव, १० पृथक् जव, ११ आंगुल, १२ पृथक् आंगुल, १३ पॉव, १४ पृथक् पांव, १५ वेहेत, १६ पृथक् वेहेत, १७ हाथ, १८ पृथक् हाथ, १९ कुक्षि (दो हाथ), २० पृथक् कुक्षि, २१ धनुष्य, २२ पृथक् धनुष्य, २३ गाउ, २४ पृथक् गाउ, २५ योजन, २६ पृथक योजन, २७ सौ योजन, २८ पृथक् सौ योजन, २९ सहस्र योजन, ३० पृथक् सहस्र योजन, ३१ लक्ष योजन, ३२ पृथक् लक्ष योजन, ३३ करोड योजन, ३४ पृथक् करोड योजन, ३५ करोडाकरोड़ योजन,

३६ पृथक करोडाकरोड योजन । इस प्रकार क्षेत्र ”वधि ज्ञान से देखे पश्चात् नष्ट हो जावे । उत्कृष्ट लोक प्रमाण क्षेत्र देखने बाद नष्ट होवे जैसे दीप पवन के योग से बुझ जाता है वैसे ही यह प्रतिपाति अवधि ज्ञान नष्ट हो जाता है ।

६ अप्रतिपाति (अपडिवाई) अवधिज्ञान

जो आकर पुन. जावे नही यह सम्पूर्ण चौदह राजूलोक जाने देखे व अलोक मे एक आकाश प्रदेश मात्र क्षेत्र की बात जाने देखे तो भी पडे नही एवं दो प्रदेश तथा तीन प्रदेश यावत् लोक प्रमाण असंख्यात खण्ड जानने की शक्ति होवे उसे अप्रति पाति अवधिज्ञान कहते है । अलोक मे रूपी पदार्थ नही यदि यहा रूपी पदार्थ होवे तो देखे इतनी जानने की शक्ति होती है । ज्ञान तीर्थंकर प्रमुख को बचपन से ही होता है । केवल ज्ञान होने बाद यह उपयोगी नही होता है एव ६ भेद अवधिज्ञान के हुए ।

समुच्चय अवधि ज्ञान के चार भेद होते है .—१ द्रव्य से अवधि ज्ञानी जघन्य अनन्त रूपी पदार्थ जाने देखे, उत्कृष्ट सर्व रूपी द्रव्य जाने देखे । २ क्षेत्र से अवधिज्ञानी जघन्य आंगुल के असख्यातवे भाग क्षेत्रा जाने देखे, उत्कृष्ट लोक प्रमाण अस० खण्ड अलोक मे देखे । ३ काल से अवधिज्ञानी जघन्य आवलिका के असख्यातवे भाग की बात जाने देखे उत्कृष्ट अस० उत्सर्पिणी, अवसर्पिणी, अतीत (गत) अनागत (भविष्य काल की बात जाने देखे । ४ भाव से जघन्य अनन्त भाव को जाने उत्कृष्ट सर्व भाव के अनन्तवे भाग को जाने देखे (वर्णादिक पर्याय को)

अवधि ज्ञान का विषय (देखने की शक्ति)

नक्सा नं० १

	१	२	३	४	५	६	७
विषय	रत्नप्रभा	शर्करा प्रभा	बालु प्रभा	पंक प्रभा	धूमप्रभा	तमः प्रभा	तमतमः प्रभा
ज.क्षेत्र	३। गाउ	३ गाउ	२॥ गाउ	२ गाउ	१॥ गाउ	१ गाउ	०॥ गाउ
उ.क्षेत्र	४ गाउ	३॥ गाउ	३ गाउ	२॥ गाउ	२ गाउ	१॥ गाउ	१ गाउ

नक्सा नं० २

विषय	असुर कुमार	९ निकाय व्यन्तर	तिर्यंच पंचेन्द्रिय संज्ञी	संज्ञी मनुष्य	ज्योतिषी	देवलोक १-२	देवलोक ३-४
ज देखे	२५ योजन	२५ योजन	आंगुल के अ. भाग	आंगुल के अ. भाग	संख्याता द्वीप समुद्र	आंगुल के अ. भाग	आंगुल के अ. भाग
उ. देखे	असंख्यात द्वीप समुद्र	संख्यात द्वीप समुद्र	असंख्यात द्वीप समुद्र	अलोक में अ. खण्ड	असंख्याता द्वीप समुद्र	रत्न प्रभा के नीचे का तला (चरमान्त)	शर्करा प्र. के नीचे का तला, च.

नक्सा नं० ३

विषय	देव लोक ५-६	देवलोक ७-८	देवलोक ९,१०,११,१२	पहली से छट्ठी ग्रैवेयक	ग्रैवेयक ७,८,९	५ अनुत्तर विमान
जघन्य देखे	आंगुल के अ. भाग	आंगुल के अ. भाग	आगुल के अ भाग	आगुल के अ. भाग	आगुल के अ भाग	चौदह राजू से कुछ न्यून
उत्कृष्ट देखे	ती. न. के नीचे का चर०	चो. न. के नी. का चर०	पां न. के नीचे का चर०	छ. न. के नीचे का चरमान्त	सा. न. के नीचे का चर०	,,

वैमानिक ऊँचा अपने २ विमान की ध्वजा तक देखे। तिर्छे लोक मे असख्यात द्वीप समुद्र देखे। यन्त्र में अधोलोक आश्री कहा है।

१ अवधि ज्ञान	आभ्यन्तर	बाह्य	२ अवधि ज्ञान	देश से	सर्व से
नारकी देवता को	होता है	०	नारकी देवता	होता है	०
तिर्यञ्च मे	०	होता है	तिर्यञ्च	होता है	०
मनुष्य मे	होता है	होता है	मनुष्य	होता है	होता है

१ अवधि ज्ञान आभ्यन्तर बाह्य से जानना। २ अवधि ज्ञान देश थकी सर्व थकी यन्त्र से जानना॥

अवधिज्ञान देखने का सस्थान आकार :—१ नेरियो का अवधि-ज्ञान त्रापा (त्रिपाई) के आकार २ भवन पति का पाला के आकार ३ तिर्यंच का तथा मनुष्य का अनेक प्रकार का है ४ व्यन्तर का पटह वाजिन्त्र के आकार ५ ज्योतिषी का झालर के आकार ६ बारह देवलोक का ऊर्ध्व मृदंग आकार ७ नव ग्रैयवेक का फूलो की चगेरी के आकार ८ पांच अनुत्तर विमान का अवधि ज्ञान कचुकी के आकार होता है।

नारकी देव का अवधि ज्ञान—१ अनुगामिक २ अप्रतिपाति ३ अवस्थित एवं तीन प्रकार का।

मनुष्य और तिर्यच का—१ अनुगामिक २ अनानुगामिक ३ वर्धमानक ४ हीयमानक ५ प्रतिपाति ६ अप्रतिपाति ७ अवस्थित होता है। यह विषय द्वार प्रमुख प्रज्ञापना सूत्र के ३३ वे पद से लिखा है। नदिसूत्रि में संक्षेप मे लिखा हुआ है।

मनः पर्याय ज्ञान का विस्तार

मनः पर्याय ज्ञान के चार भेद :—१ लब्धि मन—यह अनुत्तर वासो देवों के होता है।

२ सज्ञा मन—यह संज्ञी मनुष्य व सज्ञी तिर्यच को होता है।

३ वर्गणा मन—यह नारकी व अनुत्तर विमान वासी देवो के सिवाय दूसरे देवो को होता है।

४ पर्याय मन—यह मनः पर्याय ज्ञानी को होता है।

मनः पर्याय ज्ञान किस को उत्पन्न होता है ?

१ मनुष्य को उत्पन्न होवे अमनुष्य को नही।

२ संज्ञी मनुष्य को उत्पन्न होवे असंज्ञी मनुष्य को नही।

३ कर्मभूमि संज्ञी मनुष्य को उत्पन्न होवे अकर्म भूमि संज्ञी मनुष्य को नही।

४ कर्मभूमि मे सख्याता वर्ष का आयुष्य वाला को उत्पन्न होवे परन्तु असख्याता वर्ष का आयुष्य वाला को उत्पन्न नही होवे ।

५ सख्याता वर्ष का आयुष्य मे पर्याप्त को उत्पन्न होवे अपर्याप्त को नही ।

६ पर्याप्त मे भी समदृष्टि को उत्पन्न होवे मिथ्या-दृष्टि मिश्र दृष्टि को नही होवे ।

७ सम दृष्टि मे भी सयति को उत्पन्न होवे परन्तु अव्रती समदृष्टि व देशव्रती वाले को नही उत्पन्न होवे ।

८ सयति मे भी अप्रमत्त सयति को उत्पन्न होवे प्रमत्त सयति को नही होवे ।

९ अप्रमत सयति मे भी लब्धिवान् को उत्पन्न होवे अलब्धिवान को नही ।

मन. पर्याय ज्ञान के दो भेद—१ ऋजुमति मन. पर्याय ज्ञान २ विपुलमति मन पर्याय ज्ञान ।

ऋजुमति—सामान्य प्रकार से जाने सो ऋजुमति और विशेष प्रकार से जाने सो विपुलमति मन. पर्याय ज्ञान ।

मनः पर्याय ज्ञान के समुच्चये चार भेद है—१ द्रव्य से २ क्षेत्र से ३ काल से ४ भाव से । द्रव्य से ऋजुमति अनन्त प्रदेशी स्कन्ध जाने देखे (सामान्य से विपुल मति इससे अधिक स्पष्टता से व निर्णय सहित जाने देखे)

२ क्षेत्र से ऋजुमति जघन्य अगुल के असख्यातवे भाग उत्कृष्ट नीचे रत्न प्रभा का प्रथम काण्ड के ऊपर का छोटे प्रतर का नीचला तला तक अर्थात् समभूतल पृथ्वी से १००० योजन नीचे देखे, ऊर्ध्व ज्योतिपी के ऊपर का तल तक देखे अर्थात् समभूतल से ९०० योजन का ऊँचा देखे, तिर्यक् देखे तो मनुष्य क्षेत्र मे अढाई द्वीप तथा दो समुद्र के अन्दर सज्ञी पचेन्द्रिय पर्याप्त के मनोगत भाव जाने देखे. विपुलमति ऋजु मति से अढाई अंगुल अधिक विशेष स्पष्ट निर्णय सहित जाने देखे ।

३ काल से ऋजुमति जघन्य पल्योपम के असख्यातवे भाग की बात जाने देखे उत्कृष्ट पल्योपम के असंख्यातवे भाग की अतीत अनागत काल की बात जाने देखे, विपुलमति ऋजु मति से विशेष, स्पष्ट निर्णय सहित जाने देखे ।

४ भाव से ऋजुमति जघन्य अनन्त द्रव्य के भाव (वर्णादि पर्याय) जाने देखे उत्कृष्ट सर्व भावो के अनंतवे भाग जाने देखे, विपुलमति इस से स्पष्ट निर्णय सहित विशेष अधिक जाने देखे ।

मनः पर्याय ज्ञानी अढाई द्वीप में रहे हुवे संज्ञी पचेन्द्रिय के मनोगत भाव जाने देखे अनुमान से जैसे धूंवा देख कर अग्नि का निश्चय हाता है वैसे ही मनोगत भाव से देखते है ।

केवलज्ञान का वर्णन

केवलज्ञान के दो भेद–१ भवस्थ केवल ज्ञान २ सिद्ध केवल ज्ञान । भवस्थ केवल ज्ञान के दो भेद १ सयोगी भवस्थ केवलज्ञान २ अयोगी भवस्थ केवलज्ञान, इनका विस्तार सूत्र से जानना । सिद्ध केवलज्ञान के दो भेद—१ अनन्तर सिद्ध केवलज्ञान २ परंपर सिद्ध केवलज्ञान । विस्तार सूत्र से जानना । ज्ञान समुच्चय चार प्रकार का—१ द्रव्य से २ क्षेत्र से ३ काल से ४ भाव से ।

१ द्रव्य से केवलज्ञानी सर्व रूपी-अरूपी द्रव्य जाने देखे ।

२ क्षेत्र से केवल ज्ञानी सर्व क्षेत्र (लोकालोक) की बात जाने देखे ।

३ क्षेत्र से केवलज्ञानी सर्व काल की—भूत, भविष्य, वर्तमान—बात जाने देखे ।

४ भाव से केवलज्ञानी सर्व रूपी अरूपी द्रव्य के भाव के अनन्त भाव सर्व प्रकार से जाने देखे ।

केवल ज्ञान आवरण रहित विशुद्ध लोकालोक प्रकाशक एक ही प्रकार का सर्व केवलियों को होता है ।

तेईस पदवी

नव उत्तम पदवी, सात एकेन्द्रिय रत्न की पदवी और सात पंचेन्द्रिय रत्न की पदवी।

प्रथम नव उत्तम पदवी के नाम

१ तीर्थंकर की पदवी २ चक्रवर्ती की पदवी ३ वासुदेव की पदवी ४ बलदेव की पदवी ५ माडलिक की पदवी ६ केवली की पदवी ७ साधु की पदवी ८ श्रावक की पदवी ९ समकित की पदवी।

सात ऐकेन्द्रिय रत्न के नाम :

१ चक्र रत्न २ छत्र रत्न ३ चर्म रत्न ४ दड रत्न ५ खड्ग रत्न ६ मणि रत्न ७ काकण्य रत्न।

सात पचेन्द्रिय रत्न के नाम :

१ सेनापति रत्न २ गाथापति रत्न ३ वार्धिक (बढई) रत्न ४ पुरोहित रत्न ५ स्त्रीरत्न ६ गज रत्न ७ अश्व रत्न। ये चौदह रत्न चक्रवर्ती के होते है।

ये चौदह रत्न चक्रवर्ती के जो जो कार्य करते है उनका विवेचन।

प्रथम सात एकेन्द्रिय रत्न : चक्र रत्न—छ. खण्ड साधने का रास्ता बताता है २ छत्र रत्न—सेना के ऊपर १२ योजन (४८ कोस) तक छत्र रूप बन जाता है। ३ चर्म रत्न नदी आदि जलाशयो के

अन्दर नाव रूप हो जाता है ४ दण्ड रत्न—वैताढ्य पर्वत के दोनो गुफाओ के द्वार खोलता है ५ खड्ग रत्न—शत्रु को मारता है ६ मणि रत्न—हस्ति रत्न के मस्तक पर रखने से प्रकाश करता है ७ काकण्य (कांगनी) रत्न—गुफाओ में एक २ योजन के अन्तर पर धनुष्य के गोलाकार घिसने से सूर्य समान प्रकाश करता है।

सात पचेन्द्रिय रत्न : १ सेनापति रत्न—देशो को विजय करते है २ गाथापति रत्न—चौवीश प्रकार का धान्य उत्पन्न करते है, ३ वार्धिक (बढ़ई) रत्न—४२ भूमि, महल, सड़क पुल आदि निर्माण करते है ४ पुरोहित रत्न—लगे हुए घावों को ठीक करते है विघ्न को दूर करते, शांति पाठ पढ़ते व कथा सुनाते है ५ स्त्री रत्न विषय के उपभोग मे काम आती ६—७ गज रत्न व अश्व रत्न—ये दोनो सवारी मे काम आते है ।

चौदह रत्नों के उत्पति स्थान :

१ चक्र रत्न २ छत्र रत्न ३ दण्ड रत्न ४ खड्ग रत्न ये चार रत्न चक्रवर्ती की आयुध शाला मे उत्पन्न होते है।

१ चर्म रत्न २ मणि रत्न ३ काकण्य (कांगनी) ये तीन रत्न लक्ष्मी के भण्डार में उत्पन्न होते है।

१ सेनापति रत्न २ गाथापति रत्न ३ वार्धिक रत्न ४ पुरोहित रत्न चक्रवर्ती के नगर में उत्पन्न होते है !

१ स्त्रीरत्न विद्याधरों की श्रेणी में उत्पन्न होती है।

१ गज रत्न, २ अश्व रत्न ये दोनो रत्न वैताढ्य पर्वत के मूल में उत्पन्न होते है।

चौदह रत्नो की अवगाहना

१ चक्र रत्न, २ छत्र रत्न ३ दण्ड रत्न ये तीन रत्न की अवगाहना एक धनुष्य प्रमाण, चर्म रत्न की दो हाथ की, खड्ग रत्न पचास

अंगुल लम्बा १६ अंगुल चौड़ा और आधा अंगुल जाड़ा होता है और चार अंगुल की मुष्टि होती है। मणि रत्न चार अंगुल लम्बा और दो अंगुल चौडा व तीन कोने वाला होता है। काकण्य रत्न चार अ० लम्बा चार अ० चौड़ा चार अ० ऊँचा होता है। इसके छः तले, आठ कोण, बारह हासे वाला आठ सोनैया जितना वजन मे व सोनार के एरण समान आकार मे होता है।

सात पचेन्द्रिय रत्न की अवगाहना :

१ सेनापति, २ गाथापति, ३ वार्धिक, ४ पुरोहित। इन चार रत्नो की अवगाहना चक्रवर्ती समान। स्त्रीरत्न चक्रवर्ती से चार अगुल छोटी होती है।

गज रत्न चक्रवर्ती से दुगुना होता है। अश्वरत्न पूंछ से मुख तक १०८ अ० लम्बा, खुर से कान तक ८० अ० ऊचा, सोलह अगुल की जङ्घा, वीस अंगुल की भुजा, चार अंगुल का घुटना, चार अगुल के खुर और ३२ अंगुल का मुख होता है व ९९ अगुल की परिधि (घेराव) है।

एव २३ पदवी का नाम तथा चक्रवर्ती के चौदह रत्नो का विवेचन कहा।

नरकादिक चार गति मे से निकले हुए जीव २३ पदवियो मे की कौन-कौन सी पदवी पावे। इस पर पन्द्रह बोल।

१ पहली नरक से निकले हुए जीव १६ पदवी पावे। सात एकेन्द्रिय रत्न छोड़ कर।

२ दूसरी नरक से निकले हुए जीव २३ पदवी मे से १५ पदवी पावे। सात एकेन्द्रिय रत्न और एक चक्रवर्ती एव आठ नही पावे।

३ तीसरी नरक से निकले हुए जीव १३ पदवा पावे। सात एकेन्द्रिय रत्न, चक्रवर्ती, वासुदेव एव दश पदवी नही पावे।

४ चौथी नरक से निकले हुए जीव १२ पदवी पावे। दश तो ऊपर की और एक तीर्थकर एवं ११ नही पावे।

५ पाँचवी नरक से निकले हुए जीव ११ पदवी पावे। ११ तो ऊपर की और बारहवी केवली की नही पावे।

६ छठ्ठी नरक से निकले हुए जीव दश पदवी पावे। ऊपर की बारह और एक साधु की एवं तेरह नही।

७ सातवी नरक से निकले हुए जीव तीन पदवी पावे। १ गज, २ अश्व, ३ समकिती (समकित पावे तो तिर्यच में, मनुष्य नही हो सकते)।

८ भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी से निकले हुए जीव २१ पदवी पावे। तीर्थकर, वासुदेव ये दो नही पावे।

९ पहला दूसरा देव लोक से निकले हुए जीव २३ पदवी पावे।

१० तीसरे से आठवे देवलोक तक से निकले हुए जीव १६ पदवी पावे। सात एकेन्द्रिय रत्न नही।

११ नववे देवलोक से नववी ग्रैवेयक तक से निकले हुए १४ पदवी पावे। सात एकेन्द्रिय रत्न, गज और अश्व ये नव नही।

१२ पाँच अनुत्तर विमान से निकले हुए जीव आठ पदवी पावे। ७ एकेन्द्रिय रत्न, ७ पंचेन्द्रिय रत्न और १ वासुदेव ये १५ नही पावे।

१३ पृथ्वी, अप, वनस्पति मनुष्य, तिर्यञ्च-पचेन्द्रिय से निकले हुए जीव १९ पदवी पावे। तीर्थङ्कर, चक्रवर्ती, वासुदेव, बलदेव ये चार नही पावे।

१४ तेजस् वायु से निकले हुए जीव नव पदवी पावे। सात एके० रत्न, गज और अश्व ये नव पावे।

१५ तीन विकलेन्द्रिय से निकले हुए जीव १८ पदवी पावे। तीर्थङ्कर, चक्रवर्ती, वासुदेव, बलदेव, केवली ये ५ नही पावे।

कौन २ सी पदवी वाले किस-किस गति मे जावे ?

१ पहली, दूसरी, तीसरी, चौथी इन चार नरक मे ११ पदवी वाला जावे ७ पचे० रत्न, ८ चक्रवर्ती, ९ वासुदेव, १० समकित दृष्टि, ११ मांडलिक राजा एव ११।

२ पांचवी छठ्ठी नरक मे नव पदवी का जावे। गज और अश्व ये छोड़ कर शेष पाच पंचे० रत्न, ६ चक्रवर्ती, ७ वासुदेव, ८ सम्यक्त्वी, ९ माडलिक राजा एव नव पदवी।

३ सातवी नरक मे सात पदवी का जावे। गज, अश्व और स्त्री छोड शेष चार पचे० ५चक्रवर्ती,६वासुदव, ७माडलिक राजा एव सात।

४ भवनपति, वाण व्यन्तर, ज्योतिषी और 'पहले से आठवे देव-लोक तक दश पदवी का जावे। सात पचे० रत्न मे से स्त्री रत्न छोड शेष ६ रत्न, ७ साधु, ८ श्रावक, ९ सम्यक्त्वी, १० माडलिक राजा एव दश।

५ नववे से बारहवे देवलोक तक आठ पदवी का जावे। स्त्री, गज, अश्व छोड शेष चार पचे० रत्न, ५ साधु, ६ श्रावक, ७ सम्यक्त्वी, ८ माडलिक राजा एव आठ।

६ नव ग्रैवयेक मे सात पदवी का जावे। ऊपर की आठ पदवी में से श्रावक को छोड शेष सात पदवी।

७ पाच अनुत्तर विमान मे दो पदवी का जावे—साधु और सम्यक्त्वी।

८ पाच स्थावर में चौदह पदवी का जावे। सात एकेन्द्रिय रत्न, स्त्री छोड शेष ६ पचेन्द्रिय रत्न और माडलिक राजा।

९ तीन विकलेन्द्रिय, तिर्यंच पचेन्द्रिय और मनुष्य मे पन्द्रह पदवी का जावे। ऊपर की चौदह पदवी और १ समदृष्टि एवं १५

संज्ञी, असंज्ञी तीर्थंकर, चक्रवर्ती आदि में २३ पदवियों में की जो-जो पदवी मिले उस पर ५५ बोल।

१ संज्ञी में १५ पदवी मिले, सात एकेन्द्रिय रत्न और १ केवली नही मिले।

२ असंज्ञी में आठ पदवी मिले, सात एकेन्द्रिय रत्न और १ समकित एवं आठ।

३ तीर्थंकर में ६ पदवी पावे—१ तीर्थंकर २ चक्रवर्ती ३ केवली ४ साधु ५ समकित ६ मांडलिक राजा।

४ चक्रवर्ती में ६ पदवी पावे—तीर्थंकर के समान।

५ वासुदेव मे ३ पदवी पावे—१ वासुदेव २ मांडलिक ३ समकित।

६ बलदेव में ५ पदवी पावे—१ बलदेव २ केवली ३ साधु ४ समकित ५ मांडलिक।

७ मांडलिक मे ६ पदवी पावे—नव उत्तम पदवी।

८ मनुष्य में १३ पदवी पावे—नव उत्तम पदवी १० सेनापति ११ गाथापति १२ वार्धिक १३ पुरोहित एव १३ पदवी।

६ मनुष्यणी मे ५ पदवी पावे १ स्त्री रत्न २ श्राविका ३ समकित ४ साध्वी ५ केवली।

१० तिर्यंच में ११ पदवी पावे—सात एकेन्द्रिय रत्न ८ गज ६ अश्व १० श्रावक ११ समकित।

११ तिर्यचणी मे २ पदवी पावे—१ समकित २ श्रावक।

१२ सवेदी मे २२ पदवी पावे—केवली नही।

१३ स्त्री वेद में चार पदवी पावे—१ स्त्री रत्न २ श्राविका ३ समकित ४ साध्वी।

१४ पुरुष वेद में १४ पदवी पावे—सात एकेन्द्रिय रत्न केवली और स्त्री रत्न ये नव छोड शेप (२३-९) १४ पदवी।

१५ अवेदी मे ४ पदवी पावे—१ तीर्थंकर २ केवली ३ साधु ४ समकित।

१६ नरक गति में एक पदवी पावे—समकित की।

१७ तिर्यंच गति मे ११ पदवी पावे—सात एकेन्द्रिय रत्न ८ गज ९ अश्व १० श्रावक ११ समकित।

१८ मनुष्य गति में १४ पदवी पावे—नव उत्तम पदवी और सात पंचेन्द्रिय रत्न में से गज अश्व छोड शेष ५ एव (९+५) १४ पदवी।

१९ देवगति में एक पदवी पावे—समकित की।

२० आठ कर्म वेदक मे २१ पदवी पावे—तीर्थंकर और केवली ये दो नही।

२१ सात कर्म वेदक मे २ पदवी पावे—साधु और श्रावक।

२२ चार कर्म वेदक मे चार पदवी पावे—१ तीर्थंकर २ केवली ३ साधु ४ समकित।

२३ जघन्य अवगाहना मे १ पदवी पावे—समकित की।

२४ मध्यम अवगाहना मे १४ पदवी पावे—नव उत्तम पुरुष, पाच पचेन्द्रिय रत्न-गज अश्व छोड कर एवं ९+५१४ पदवी पावे।

२५ उत्कृष्ट अवगाहना मे एक पदवी पावे—समकित।

२६ अढाई द्वीप मे २३ पदवी पावे।

२७ अढाई द्वीप के बाहर ४ पदवी पावे—१ केवली २ साधु ३ श्रावक ४ समकित।

२८ भरत क्षेत्र मे मध्यम पदवी ८ पावे—उत्तम पदवी में से चक्रवर्ती छोड़ शेष ८ पदवी।

२९ भरत क्षेत्र में उत्कृष्ट २१ पदवी पावे—वासुदेव, वलदेव नही।

३० उर्ध्व लोक में ५ पदवी पावे—१ केवली २ साधु ३ श्रावक ४ समकित ५ मांडलिक राजा।

३१ अधः लोक तथा तिर्यक् (तिर्छे) लोक में २३ पदवी पावे।

३२ स्व लिङ्ग मे ४ पदवी पावे—१ तीर्थंकर २ केवली ३ साधु ४ श्रावक।

३३ अन्य लिङ्ग में ४ पदवी पावे—१ केवली २ साधु ३ श्रावक ४ समकित।

३४ गृहस्थ लिङ्ग मनुष्य में १४ पदवी पावे—नव उत्तम पदवी, और सात पंचेन्द्रिय रत्न में से गज अश्व को छोड़ शेष पाँच एवं (९+५) १४ पदवी।

३५ संमूर्छिम में ८ पदवी पावे—सात एकेन्द्रिय रत्न और एक समकित।

३६ गर्भज में १६ पदवी पावे—२३ में से सात एकेन्द्रिय रत्न छोड़ शेष १६ पदवी।

३७ अगर्भज में ८ पदवी पावे—समूर्छिम समान।

३८ एकेन्द्रिय में ७ पदवी पावे—सात एकेन्द्रिय रत्न।

३९ तीन विकलेन्द्रिय में १ पदवी पावे—समकित।

४० पंचेन्द्रिय में १५ पदवी पावे—२३ में से सात एकेन्द्रिय रत्न और केवली—ये आठ नही।

४१ अनिन्द्रिय में ४ पदवी पावे—१ तीर्थंकर २ केवली ३ साधु ४ समकित।

४२ संयति में ४ पदवी पावे—अनिन्द्रिय समान।

४३ असंयति में २० पदवी पावे—२३ में से १ केवली २ साधु ३ श्रावक ये तीन छोड़ शेष २० पदवी।

४४ सयतासयति मे १० पदवी पावे—स्त्री को छोड़ शेष ६ पचेन्द्रिय रत्न ७ वलदेव ८ श्रावक ९ समकित १० मांडलिक।

४५ समकित दृष्टि में १५ पदवी पावे—२३ में से सात एकेन्द्रिय रत्न और स्त्री छोड़ शेष १५ पदवी।

४६ मिथ्या दृष्टि में १७ पदवी पावे—सात एकेन्द्रिय रत्न, सात पंचेन्द्रिय रत्न, १४, १५ चक्रवर्ती १६ वासुदेव १७ माडलिक।

४७ मति, श्रुत और अवधि ज्ञान मे १४ पदवी पावे—केवली छोड शेष ८ उत्तम पदवी, स्त्री को छोड़ शेष ६ पचेन्द्रिय रत्न एवं (८+६) १४ पदवी।

४८ मन. पर्यायज्ञान मे ३ पदवी पावे—१ तीर्थकर ३ साधु ३ समकित।

४९ केवलज्ञान केवलदर्शन मे ४ पदवी पावे—१ तीर्थकर २ केवली ३ साधु ४ समकित।

५० मति श्रुत अज्ञान मे १७ पदवी पावे—सात एकेन्द्रिय रत्न, सात पचेन्द्रिय रत्न, १४; १५ चक्रवर्ती १६ वासुदेव १७ मांडलिक।

५१ विभङ्ग ज्ञान मे ९ पदवी पावे—स्त्री को छोड शेष ५ पचेन्द्रिय रत्न, ७ चक्रवर्ती ८ वासुदेव ९ माडलिक।

५२ चक्षुदर्शन में १५ पदवी पावे—केवली को छोड शेष ८ उत्तम पदवी और सात पचेन्द्रिय रत्न एवं १५ पदवी।

५३ अचक्षु दर्शन में २२ पदवी पावे—केवली नही।

५४ अवधि दर्शन मे १४ पदवी पावे—केवली को छोड शेष ८ उत्तम पदवी, और स्त्री को छोड शेष ६ पचेन्द्रिय रत्न एवं सर्व १४ पदवी।

५५ नपुंसक लिङ्ग मे ५ पदवी पावे—१ केवली २ साधु ३ श्रावक ४ समकित ५ मांडलिक।

पांच शरीर

श्री प्रज्ञापना (पन्नवरणा) सूत्र के २१ वें पद में वर्णित पांच शरीर का विवेचन ।

सोलह द्वार

१ नाम द्वार २ अर्थ द्वार ३ संस्थान द्वार ४ स्वामी द्वार ५ अवगाहना द्वार ६ पुद्गल चयन द्वार ७ संयोजन द्वार ८ द्रव्यार्थ द्वार ९ प्रदेशार्थक द्वार १० द्रव्यार्थक प्रदेशार्थक द्वार ११ सूक्ष्म द्वार १२ अवगाहना अल्प बहुत्व द्वार १३ प्रयोजन द्वार १४ विषय द्वार १५ स्थिति द्वार १६ अन्तर द्वार ।

१ नाम द्वार

१ औदारिक शरीर २ वैक्रिय शरीर ३ आहारक शरीर ४ तेजस् शरीर ५ कार्माण शरीर ।

२ अर्थ द्वार

१ उदार—अर्थात् सब शरीरों से प्रधान, तीर्थंकर, गणधर आदि पुरुषों को मुक्ति पद प्राप्त कराने में सहायीभूत, उदार कहेता सहस्र योजन मान शरीर; इससे इसे औदारिक शरीर कहते है ।

२ वैक्रिय—जिसमें रूप परिवर्तन करने की शक्ति तथा एक के अनेक छोटे बडे खेचर भूचर दृश्य अदृश्य आदि विविध रूप विविध क्रिया से बनावे उसे वैक्रिय शरीर कहते है इसके दो भेद ।

१ भवप्रत्ययिक—जो देवता व नेरियो के स्वाभाविक ही होता है ।

२ लब्धिप्रत्ययिक—जो मनुष्य तिर्यच को प्रयत्न से प्राप्त होवे ।

३ आहारक शरीर—जो चौदह पूर्वधारी महात्माओ को तपश्चर्यादिक योग द्वारा जब लब्धि उत्पन्न होवे तो तीर्थङ्कर देवाधिदेव की ऋद्धि देखने को व मन की शङ्का निवारण करने को, उत्तम पुद्गलो का आहार लेकर, जघन्य पौन हाथ का व उत्कृष्ट एक हाथ का, स्फटिक समान सफेद व कोई न देख सके ऐसा शरीर बनाते है —जिससे इसे आहारक शरीर कहते है ।

४ तेजस् शरीर—जो तेज के पुद्गलो से अदृश्य और भुक्त (खाये हुए) आहार को पचावे तथा लब्धिवत तेजोलेश्ला छोड़े उसे तेजस् शरीर कहते है ।

५ कार्मण शरीर—कर्म के पुद्गल से उत्पन्न होने वाला व जिसके उदय से जीव पुद्गल ग्रहण करके कर्मादि रूप मे परिणमावे तथा आहार को खेचे उसे कार्मण शरीर कहते है ।

३ संस्थान द्वार

औदारिक शरीर में संस्थान ६—१ समचतुरस्र सस्थान २ न्यग्रोधपरिमण्डल सस्थान, ३ सादिक सस्थान, ४ वामन सस्थान, ५ कुब्ज सस्थान, ६ हुडक सस्थान ।

२ वैक्रिय शरीर मे—(भवप्रत्ययिक मे)दे व मे समचतुरस्र सस्थान व नेरियो मे हुडक सस्थान (लब्धि प्रत्ययिक मे) मनुष्य मे व तिर्यञ्च मे समचतुरस्र सस्थान व अनेक प्रकार का—वायु मे हुडक सस्थान ।

३ आहारक शरीर मे—समचतुरस्र सस्थान ।

४-५ तेजस् व कार्मण मे ६ संस्थान ।

४ स्वामी द्वार

१ औदारिक शरीर का स्वामी—मनुष्य व तिर्यञ्च ।
२ वैक्रिय शरीर का स्वामी—चार ही गति के जीव ।
३ आहारक शरीर का स्वामी—चौदह पूर्वधारी मुनि ।
४-५ तेजस् कार्मण शरीर के स्वामी—सर्व संसारी जीव ।

५ अवगाहना द्वार

१ औदारिक शरीर की अवगाहना—जघन्य आंगुल के असंख्यातवे भाग उत्कृष्ट हजार योजन की ।

२ वैक्रिय शरीर की अवगाहना—जघन्य आंगुल के असख्यातवे भाग उत्कृष्ट ५०० धनुष्य । उत्तर वैक्रिय करे तो ज० आंगुल के असंख्यातवे भाग उ० लक्ष योजन जाजेरी (अधिक)।

३ आहारक शरीर की अवगाहना—जघन्य एक हाथ न्यून उत्कृष्ट एक हाथ की ।

४-५ तेजस् कार्मण शरीर की अवगाहना--जघन्य आंगुल के असंख्यातवे भाग उ० चौदह राजू लोक प्रमाण ।

६ पुद्गल चयन द्वार

(आहार कितनी दिशाओ का लेवे)

औदारिक, तेजस्, कार्मण शरीर वाला तीन, चार, पॉच यावत छः दिशाओ का आहार लेवे ।

वैक्रिय और आहारक शरीर वाला छः दिशाओं का लेवे ।

७ संयोजन द्वार

१ औदारिक शरीर मे आहारक वैक्रिय की भजना (होवे और नही भी होवे), तेजस् कार्मण की नियमा (जरूर) होवे ।

२ वैक्रिय शरीर मे औदारिक की भजना, आहारक नही होवे व तेजस् कार्मण की नियमा।

३ आहारक शरीर मे वैक्रिय नही होवे । औदारिक, तेजस्, कार्मण होवे।

४ तेजस् शरीर मे औदारिक, वैक्रिय आहारक की भजना, तेजस् की नियमा।

५ कार्म णशरीर मे औदारिक, वैक्रिय आहारक की भजना, तेजस् की नियमा ।

८ द्रव्यार्थक द्वार

१ सब से थोडा आहारक का द्रव्य जघन्य १, २, ३ उत्कृष्ट पृथक हजार। इससे वैक्रिय द्रव्य असख्यात गुणा, इससे औदारिक के द्रव्य असंख्यात गुणा, इससे तेजस् कार्मण के द्रव्य ये दोनो परस्पर बराबर व औदारिक से अनन्तगुणा अधिक।

९ प्रदेशार्थक द्वार

१ सब से [थोड़ा आहारक का प्रदेश इससे वैक्रिय का प्रदेश असंख्यात गुणा इससे औदारिक का असंख्यात गुणा, इससे तेजस् का अनन्त गुणा व इससे कार्मण का अनन्त गुणा अधिक।

१० द्रव्यार्थक प्रदेशार्थक द्वार

सबसे थोडा आहारक का द्रव्यार्थ इससे वैक्रिय का द्रव्यार्थ असंख्यात गुणा इससे औदारिक का द्रव्यार्थ असख्यात गुणा, इससे आहारिक का प्रदेश असख्यात गुणा, इससे वैक्रिय का प्रदेश असख्यात गुणा, इससे औदारिक का प्रदेश असख्यात गुणा । इससे तेजस् कार्मण इन दोनो का द्रव्यार्थ परस्पर समान व औदारिक से अनत गुणा अधिक, इससे तेजस् का प्रदेश अनन्त गुणा अधिक इससे कार्मण का प्रदेश अनन्त गुणा अधिक।

११ सूक्ष्म द्वार

सबसे स्थूल (मोटे) औदारिक शरीर के पुद्गल, इससे वैक्रिय शरीर के पुद्गल सूक्ष्म, इससे आहारक शरीर के पुद्गल सूक्ष्म, इससे तेजस् शरीर के पुद्गल सूक्ष्म व इससे कार्मण शरीर के पुद्गल सूक्ष्म ।

१२ अवगाहना का अल्पबहुत्व द्वार

सबसे जघन्य औदारिक शरीर की जघन्य अवगाहना इससे, तेजस् कार्मण की जघन्य अवगाहना परस्पर बराबर व औदारिक से विशेष। वैक्रिय की जघन्य अवगाहना अ० गुणी, इससे आहारक की उत्कृष्ट अवगाहना विशेष, इससे औदारिक की उ० अवगाहना सख्यात गुणी, इससे वैक्रिय की उत्कृष्ट अवगाहना सख्यात गुणी, इससे तेजस् कार्माण उ० अवगाहना परस्पर बराबर व वैक्रिय से असख्यात गुणी अधिक ।

१३ प्रयोजन द्वार

१ औदारिक शरीर का प्रयोजन मोक्ष प्राप्ति मे सहायीभूत होना, १ वैक्रिय शरीर का प्रयोजन विविध रूप बनाना, ३ आहारक शरीर का प्रयोजन संशय निवारण करना, ४ तेजस् शरीर का प्रयोजन पुद्गलो का पाचन करना, ५ कार्मण शरीर का प्रयोजन आहार तथा कर्मो को आकर्षण (खीचना) करना ।

१४ विषय (शक्ति) द्वार

औदारिक शरीर का विषय पन्द्रहवा रूचक नामक द्वीप तक जाने का (गमन करने का), २ वैक्रिय शरीर का विपय असंख्य द्वीप समुद्र तक जाने का, ३ आहारक शरीर का विषय अढाई द्वीप समुद्र तक जाने का, ४ तेजस् कार्मण का विपय सर्व लोक मे जाने का ।

१५ स्थिति द्वार

औदारिक शरीर की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट तीन पल्योपम की २ वैक्रिय शरीर की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट ३३ सागरोपम की, ३ आहारक शरीर की अन्तर्मुहूर्त की, ४ तेजस् कार्मण शरीर की स्थिति दो प्रकार की—अभव्य आश्री आदि अन्त रहित, २ मोक्ष गामी आश्री अनादि सान्त (आदि नही, परन्तु अन्त है)।

१६ अन्तर द्वार

औदारिक शरीर छोड कर फिर औदारिक शरीर प्राप्त करने मे अन्तर पडे तो जघन्य अन्तर्मुहूर्त व उत्कृष्ट ३३ सागरोपम २ वैक्रिय शरीर छोडकर फिर वैक्रिय शरीर पाने मे अन्तर पड़े तो जघन्य अन्तर्मुहूर्त उ० अनन्त काल, ३ आहारक शरीर मे अन्तर पड़े तो जघन्य अन्तर्मुहूर्त उ० अर्ध पुद्गल परावर्तन काल से कुछ न्यून, ४-५ तेजस् कार्मण शरीर मे अन्तर नही पडे। अन्तर द्वार का दूसरा अर्थ आहारक शरीर को छोड शेष शरीर लोक मे सदा पावे। आहारक शरीर की भजना (होवे और नही भी होवे) नही होवे तो उत्कृष्ट ६ माह का अन्तर पड़े।

पांच इन्द्रिय

श्री प्रज्ञापना सूत्र के पन्द्रहवे पद के प्रथम उद्देशो में पॉच इन्द्रिय का विस्तार ११ द्वार के साथ कहा है।

गाथा :

१ संठाण १ बाहुल्लं २ पोहत्तं ३ कइपएस ४ उगाढे ५।
अप्पबहु ६ पुठ ७ पविठे ८ विसय ९ अणगार १० आहारे ११॥

पांच इन्द्रिय

१ श्रोत्रेन्द्रिय २ चक्षु इन्द्रिय, ३ घ्राणेन्द्रिय, ४ रसनेन्द्रिय, ५ स्पर्शेन्द्रिय।

१ संस्थान द्वार

१ श्रोत्रेन्द्रिय का सस्थान (आकार) कदम्ब वृक्ष के फूल समान, २ चक्षु इन्द्रिय का संस्थान मसूर की दाल समान, ३ घ्राणेन्द्रिय का संस्थान धमण समान, ४ रसनेन्द्रिय का सस्थान छरपला की धार समान, ५ स्पर्शेन्द्रिय का सस्थान नाना प्रकार का।

२ बाहुल्य (जाड़पना) द्वार

पाँच इन्द्रिय का बाहुल्य जघन्य उत्कृष्ट आंगुल के असख्यातवे भाग का।

३ पृथुत्व (लम्बाई) द्वार

१ श्रोत्र, २ चक्षु और ३ घ्राण। इन तीन इन्द्रियों की लम्बाई जघन्य उत्कृष्ट आंगुल के असख्यातवे भाग की। ४ रसनेन्द्रिय की

लम्बाई जघन्य आंगुल के असंख्यातवे भाग उत्कृष्ट पृथक् (२ से ६) आंगुल की। ५ स्पर्श० की लम्बाई जघन्य आंगुल के अस० भाग उ० हजार योजन से कुछ विशेष।

४ प्रदेश द्वार

पाच इन्द्रिय के अनन्त प्रदेश होते है।

५ अवगाहना द्वार

पाँच इन्द्रियो मे से प्रत्येक इन्द्रिय मे आकाश प्रदेश असंख्यात असंख्यात अवगाह्य है।

प्रत्येक इन्द्रिय का अनन्त २ कर्कश व भारी स्पर्श है व वैसे ही अनन्त २ हलका व मृदु स्पर्श है।

६ अल्पबहुत्व द्वार

सब से कम चक्षु इन्द्रिय के प्रदेश, इससे श्रोत्रे० के प्रदेश सख्यात गुणे, इससे घ्राणे० के प्रदेश संख्यात गुणे इससे रसे० के प्रदेश असंख्यात गुणे व इससे स्पर्शे० के प्रदेश सख्यात गुणे।

आकाश प्रदेश अवगाहना का अल्पबहुत्व—सब से कम चक्षु० का अवगाह्या आकाश प्रदेश, इससे श्रोत्रे० का अवगाह्या आकाश प्रदेश सख्यात गुणा, इससे घ्राणे०का अवगाह्या आकाश प्रदेश सख्यात गुणा, इससे रसे० का अवगाह्या आकाश प्रदेश अस० गुणा व स्पर्शे० का अवगाह्या आकाश प्रदेश सख्यात गुणा।

प्रदेश और अवगाह्य दोनो का अल्पबहुत्व—सव से कम चक्षु० का अवगाह्य आकाश प्रदेश। इससे श्रोत्रे० का सख्यात गुणा, इससे घ्राणे० का अवगाह्य सख्यात गुणा, इससे रसे० का अवगाह्य अस-

ख्यात गणा, इससे स्पर्शे० का अवगाह्य संख्यात गुणा। इससे चक्षु० का प्रदेश अनन्त गुणा, इससे श्रोत्रे० का प्रदेश संख्यात गुणा, इससे घ्राणे० का प्रदेश संख्यात गुणा, इससे रसे० का प्रदेश असख्यात गुणा व इससे स्पर्शे० का प्रदेश असख्यात गुणा।

कर्कश व भारी स्पर्श का अल्पबहुत्व :—सबसे कम चक्षु इन्द्रिय का कर्कश व भारी स्पर्श, इससे श्रोत्रे० का अनन्त गुणा, इससे घ्राणे० का अनन्त गुणा, इससे रसनेन्द्रिय का अनन्त गुणा, इससे स्पर्शे० का अनन्त गुणा।

हलका व मृदु स्पर्श का अल्पबहुत्व:—सब से कम स्पर्शे० का हलका व मृदु स्पर्श, इससे रसे० का हलका मृदु स्पर्श अनत गुणा, इससे घ्राणे० का अनंत गुणा, इससे श्रोत्रे० का अनंत गुणा व इससे चक्षु० का अनंत गुणा।

कर्कश भारी, लघु (हलका) मृदु स्पर्श का एक साथ अल्पवहुत्व :— सबसे कम चक्षु० का कर्कश भारी स्पर्श, इससे श्रोत्रे० का कर्कश भारी स्पर्श अनंत गुणा, इससे घ्राणे० का अनत गुणा, इससे रसे० का अनंत गुणा, इससे स्पर्शे० का अनत गुणा, इससे स्पर्शे० का हलका मृदु स्पर्श अनंत गुणा, इससे रसे० का हलका मृदु स्पर्श अनत गुणा, इससे घ्राणे० का हलका मृदु स्पर्श अनंत गुणा, इससे श्रोत्रे० का हलका मृदु स्पर्श अनंत गुणा व इससे चक्षु० का हलका मृदु स्पर्श अनंत गुणा।

७ पृष्ट द्वार

जो पुद्‌गल इन्द्रियों को आकर स्पर्श करते है, उन पुद्‌गलो को इन्द्रिये ग्रहण करती है। पांच इन्द्रिय मे से चक्षु इन्द्रिय को छोड़ शेप चार इन्द्रियो को पुद्‌गल आकर स्पर्श करते है। चक्षु इन्द्रिय को आकर नही स्पर्श करते है।

८ प्रविष्ट द्वार

जिन इन्द्रियो के अन्दर अभिमुख (सामा) पुद्गल आकर प्रवेश करते है उसे प्रविष्ट कहते है। पाच इन्द्रियों में से चक्षु इन्द्रिय को छोड शेष चार इन्द्रिय प्रविष्ट है। और चक्षु इन्द्रिय अप्रविष्ट है।

९ विषय द्वार (शक्ति द्वार)

प्रत्येक जाति की प्रत्येक इन्द्रिय का विषय जघन्य आगुल के असख्यातवे भाग उत्कृष्ट नीचे अनुसार :—

जाति पांच—	श्रोत्रेन्द्रिय	चक्षुइद्रिय	घ्राणेन्द्रिय	रसनेन्द्रिय	स्पर्शेन्द्रिय
एकेन्द्रिय	०	०	०	०	४०० ध०
बे इद्रिय	०	०	०	६४ ध०	८०० ध०
त्रि इद्रिय	०	०	१०० ध०	१२८ ध०	१६०० ध०
चोरिन्द्रिय	०	२९५४ यो.	२ ० ध०	२५६ ध०	३२०० ध०
असज्ञी प०	१ योजन	५९०८ यो.	४०० ध०	५१२ ध०	६४०० ध०
सज्ञी प०	१२ योजन	१ ला. यो. जा.	९ यो.	९ यो	९ योजन

१० अनाकार द्वार (उपयोग)

जघन्य उपयोग काल का अल्पबहुत्व :—सब से कम चक्षुइन्द्रिय का जघन्य उपयोग काल, इससे श्रोत्रे० का जघन्य उपयोग काल विशेष, इससे घ्राणे० का जघन्य उपयोग काल विशेष, इससे रसे० का जघन्य उपयोग काल विशेष, इससे स्पर्शे० का जघन्य उपयोग काल विशेष।

उत्कृष्ट उपयोग काल का अल्पबहुत्व .—सबसे कम चक्षु० का उत्कृष्ट उपयोग काल, इससे श्रोत्रे० का उत्कृष्ट उपयोग काल विशेष, इससे घ्राणे० का उ० उपयोग काल विशेष, इससे रसेन्द्रिय का उ० उपयोग काल विशेष, इससे स्पर्शे० का उ० उपयोग काल विशेष।

उपयोग जघन्य उत्कृष्ट दोनों का एक साथ अल्पबहुत्व :—सबसे कम चक्षु० का जघन्य उपयोग काल, इससे श्रोत्रे० का जघन्य उपयोग काल विशेष, इससे घ्राणे० का जघन्य उपयोग काल विशेष, इससे रसे० का जघन्य उपयोग काल विशेष, इससे स्पर्शे० का जघन्य उपयोग काल विशेष, इससे चक्षु० का उत्कृष्ट उपयोग काल विशेष, इससे श्रोत्रे० का उत्कृष्ट उपयोग काल विशेष, इससे रसे० का उत्कृष्ट उपयोग काल विशेष, इससे स्पर्शे० का उत्कृष्ट उपयोग काल विशेष।

११ वाँ आहार द्वार सूत्र श्री प्रज्ञापना में से जानना।

जैसा कि निम्न प्रकार से है :—

(१) पांच स्थावर काय के जीव कम से कम ३ दिशाओ का और अधिक से अधिक छह ही दिशाओ का आहार लेते है। ओज व रोम आहार लेते है तथा सचित्त, अचित्त और मिश्र तीनों प्रकार का लेते है।

(२) विकलेन्द्रिय जीव छह ही दिशाओं का और ओज, रोम, कवल लेते है। सचित्त, अचित्त और मिश्र का लेते है।

(३) सन्नी असन्नी तिर्यंच छह ही दिशाओं का ओज, रोम, कवल लेते है। सचित्त-अचित्त और मिश्र तीनों प्रकार का लेते है।

(४) कर्मभूमि, अकर्मभूमि और अन्तर्द्वीप के मनुष्य छह ही दिशाओ का ओज, रोम, कवल लेते है तथा सचित्त, अचित्त मिश्र तीनों प्रकार का लेते हैं।

(५) नारकी तथा चारों प्रकार के देव ओज व रोम आहार लेते हैं। अचित्त पुद्गलो का आहार लेते है और छह ही दिशाओं का लेते है।

रूपी अरूपी के बोल

गाथा =कम्मठ पावठाणा य, मण वय जोगा य कम्म देहे ।
सुहुमप्पएसी खन्धे, ए सव्वे चउफासा ।। १ ।।

अर्थ—कर्म (१ ज्ञानावरणीय २ दर्शनावरणीय ३ वेदनीय ४ मोहनीय ५ आयुष्य ६ नाम ७ गोत्र ८ अन्तराय) आठ ८ । पाप स्थानक (१ प्राणातिपात २ मृषावाद ३ अदत्तादान ४ मैथुन ५ परिग्रह ६ क्रोध ७ मान ८ माया ६ लोभ १० राग ११ द्वेष १२ क्लेश १३ अभ्याख्यान १४ पिशुन २५ परपरिवाद १६ रति अरित १७ मायामृषा १८ मिथ्यादर्शनशल्य) अट्ठारह, २६; २७ मनयोग २८ वचन योग २६ कार्मण शरीर और ३० सूक्ष्म प्रदेशी स्कन्ध । एवं सर्व तीस बोल रूपी चउ स्पर्शी है। इनमे सोलह सोलह बोल पावे । पाच वर्ण (१कृष्ण २ नील ३ रक्त ४ पीत ५ श्वेत), दो गन्ध (६ सुरभि गन्ध ७ दुरभि गन्ध), पाच रस (८ तीक्ष्ण ६ कटु १० कषायला ११ खट्टा १२ मीठा), चार स्पर्श (१३ शीत १४ उष्ण १५ रूक्ष १६ स्निग्ध) ।

गाथा :=घण तण वाय, घनोदहि, पुढविसतेव सतनिरीयाणं ।
असंखेज्ज दिव, समुदा, कप्पा, गेवीजा अणुत्तरा सिद्धि ।।२।।

अर्थ—१ घनवात २ तनुवात ३ घनोदधि पृथ्वी सात-१०, ११ असंख्यात द्वीप १२ असख्यात समुद्र, बारह देव लोक २४, नव ग्रैवेयक ३३, पांच अनुत्तर विमान ३८, सिद्धि शिला-३९ ।

गाथा =उरालिया चउदेहा, पोगल काय छ दव्व लेस्सा य ।
तहेव काय जोगेण ए सव्वेण अट्ठ फासा ।। ३ ।।

अर्थ—४० औदारिक शरीर ४१ वैक्रिय शरीर ४२ आहारक शरीर

४३ तैजस् शरीर एवं चार देह—४४ पुद्गलास्ति काय का वादर स्कंध, ६ द्रव्य लेश्या (१ कृष्ण, २ नील ३ कापोत ४ तेजो ५ पद्म ६ शुक्ल) ५०, ५१ काय योग एवं सर्व ५१ बोल रूपी आठ स्पर्श है। इनमें बीस-बीस बोल पावे। पांच वर्ण, दो गन्ध ७, पांच रस-१२, आठ स्पर्श-१३ शीत १४ ऊष्ण १५ लूखा (रूक्ष) १६ स्निग्ध १७ गुरु (भारी) १८ लघु (हलका) १९ खरखरा २० सुवांला (मृदु-कोमल)।

गाथा :—पाव ठाणा विरइ, चउ चउ बुद्धि उग्गहे।
सन्ना धम्मत्थी पंच उठाणं, भाव लेस्साति दिठीय ॥४॥

अर्थ :—अठारह पाप स्थानक की विरति (पाप स्थानक से निवर्त होना) १८, चार बुद्धि—१९ औत्पातिकी २० (कार्मिका) कामीया २१ विनया २२ परिणामिया; चार मति २३ अवग्रह २४ इहा २५ अवाय २६ धारणा; चार संज्ञा—२७ आहार संज्ञा २८ भय संज्ञा २९ मैथुन संज्ञा ३० परिग्रह संज्ञा; पंचास्तिकाय—३१ धर्मास्ति काय ३२ अध-र्मास्ति काय ३३ आकाशास्ति काय ३४ काल और ३५ जीवास्ति काय, पांच उत्थान–३६ उत्थान ३७ कर्म ३८ वीर्य ३९ बल और ४० पुरुषाकार पराक्रम ६ भाव लेश्या—४६, और तीन दृष्टि—४७ समकित दृष्टि ४८ मिथ्या दृष्टि ४९ मिश्र दृष्टि।

गाथा :—दसण नाण सागरा अणागारा चउवीसे दंडगा जीव;
ए सव्वे अवन्ना अरूवी अकासगा चेव ॥ ५ ॥

अर्थ—दर्शन चार-५० चक्षुदर्शन ५१ अचक्षु दर्शन ५२ अवधि दर्शन ५३ केवल दर्शन, ज्ञान पांच—५४ मति ज्ञान ५५ श्रुतज्ञान ५६ अवधि ज्ञान ५७ मन:पर्यय ज्ञान ५८ केवल ज्ञान ५९ ज्ञान का उपयोग सो साकार उपयोग ६० दर्शन का उपयोग सो अनाकार उपयोग ६१ चउवीस ही दण्डक के जीव।

एवं सर्व ६१ वोल में वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श कुछ नही पावे कारण कि ये सर्व वोल अरूपी के है।

बड़ा बासठिया

गाथा—जीव गई इन्दिय काय जोग वेदेय कसाय लेस्सा ;
सम्मत्त नाण दंसण संजय उवओग आहारे १
भासग परित्त पज्जत्त सुहुम सन्न भवत्थिय ;
चरिम तेसिं पयाणं, बासठीय होई नायव्वा २

२१ द्वार की उपरोक्त गाथाओं का विस्तार :-

१ समुच्चय जीव द्वार का एक भेद :—२ गति द्वार के आठ भेद १ नरक की गति २ तिर्यंच की गति ३ तिर्यंचनी की गति ४ मनुष्य की गति ५ मनुष्यानी की गति ६ देव की गति ७ देवाङ्गना की गति ८ सिद्ध की गति।

३ इन्द्रिय द्वार के सात भेद . १ सइन्द्रिय २ एकेन्द्रि ३ बेइन्द्रिय ४ त्रीइन्द्रिय ५ चौरिन्द्रिय ६ पंचेन्द्रिय ७ अनिन्द्रिय।

४ काय द्वार के आठ बोल · १ सकाय २ पृथ्वी काय ३ अपकाय ४ तेजस् काय ५ वायुकाय ६ वनस्पति काय ७ त्रस काय ८ अकाय।

५ योग द्वार के पांच बोल : १ सयोग २ मनयोग ३ वचन योग ४ काय योग ५ अयोग।

६ वेद द्वार के पाच बोल : १ सवेद २ स्त्री वेद ३ पुरुष वेद ४ नपुंसक वेद ५ अवेद।

७ कषाय द्वार के छः बोल : १ सकषाय २ क्रोध कषाय ३ मान कषाय ४ माया कषाय ५ लोभ कषाय ६ अकषाय।

८ लेश्या द्वार के आठ बोल : १ सलेश्या २ कृष्ण लेश्या ३ नील लेश्या ४ कापोत लेश्या ५ तेजो लेश्या ६ पद्म लेश्या ७ शुक्ल लेश्या ८ अलेश्या ।

९ समकित द्वार के तीन वोल : १ समकित २ मिथ्यात्व ३ सममिथ्यात्व (मिश्र)

१० ज्ञान द्वार के दश बोल : १ समुच्चय ज्ञान २ मति ज्ञान ३ श्रुत ज्ञान ४ अवधि ज्ञान ५ मनःपर्यय ज्ञान ६ केवलज्ञान ७ समुच्चय अज्ञान ८ मति अज्ञान ९ श्रुत अज्ञान १० विभंग ज्ञान ।

११ दर्शन द्वार के चार वोल : १ चक्षु दर्शन २ अचक्षु दर्शन ३ अवधि दर्शन ४ केवल दर्शन ।

१२ संयति द्वार के नव बोल : १ समुच्चय संयति २ सामायिक चारित्र ३ छेदोपस्थानिक चारित्र ४ परिहार विशुद्ध चारित्र ५ सूक्ष्म संपराय चारित्र ६ यथाख्यात चारित्र ७ संयतासंयति ८ असयति ९ नो संयति नो असंयति नो सयतासंयति ।

१३ उपयोग द्वार के दो बोल : १ साकार उपयोग (साकार ज्ञानोपयोग) २ अनाकार उपयोग (अनाकार दर्शनोपयोग) ।

१४ आहार द्वार के दो वोल : १ आहारक २ अनाहारक ।

१५ भाषक द्वार के दो वोल. १ भाषक २ अभापक ।

१६ परित द्वार के तीन बोल. १ परित २ अपरित ३ नोपरित नोअपरित ।

१७ पर्याप्त द्वार के तीन वोल. १पर्याप्त २ अपर्याप्त ३ नो पर्याप्त नो अपर्याप्त ।

१८ सूक्ष्म द्वार के तीन वोल : १ सूक्ष्म २ वादर ३ नोसूक्ष्म नो वादर ।

१९ सज्ञी द्वार के तीन वोल. १ सज्ञी २ असज्ञी ३ नो संज्ञो नो नो असज्ञी ।

२० भव्य द्वार के तीन बोल . १ भव्य २ अभव्य ३ नो भव्य नो अभव्य ।

२१ चरिम द्वार के दो बोल: १ चरम २ अचरम ।

एव २१ द्वार के बोल पर वासठ बोल उतारे है ।

बासठ बोल की विगत —जीव के १४ भेद, गुण स्थानक १४,योग १५, उपयोग १२, लेश्या ६ एव सब मिलकर ६१ बोल और एक अल्प बहुत्व का एव ६२ बोल ।

१. समुच्चय जीव का द्वार '—१ समुच्चय जीव मे— जीव के १४ भेद, गुणस्थानक १४, योग १५, उपयोग १२, लेश्या ६ ।

२. गति द्वार =१ नरक गति मे–जीव के ३ भेद, सज्ञी का अपर्याप्त और पर्याप्त व असज्ञी पचेन्द्रिय का अपर्याप्त । गुण स्थानक ४ प्रथम के, योग ग्यारह—४ मन के, ४ वचन के, १ वैक्रिय, १ वैक्रिय मिश्र, १ कार्मण काय एव ११ उपयोग ९—३ ज्ञान, ३ अज्ञान ३ दर्शन, लेश्या— ३ प्रथम ।

२ तिर्यञ्च गति मे—जीव के भेद १४, गुणस्थानक ५ प्रथम, योग १३ आहारक के दो छोड कर । उपयोग ९-३ ज्ञान, ३ अज्ञान, ६ दर्शन लेश्या ६ ।

३ तिर्यञ्चनी मे—जीव के भेद २, सज्ञी का । गुणस्थानक ५ प्रथम, योग १३ आहारक के दो छोड़ कर । उपयोग ९-३ ज्ञान, ३ अज्ञान, ३ दर्शन ; लेश्या ६ ।

४ मनुष्य गति मे—जीव के भेद ३, सज्ञी के २ और १ असंज्ञी पचेन्द्रिय का अपर्याप्त एव ३ गुणस्थानक १४, योग १५, उपयोग १२, लेश्या ६ ।

५ मनुष्यनी में—जीव के भेद २, सञ्ज्ञी का। गुण० १४, योग १३ आहारक के दो छोड़ कर। उपयोग १२ लेश्या ६।

६ देव गति में—जीव के भेद तीन, दो संज्ञी के और १ अ० पंचेन्द्रिय का अपर्याप्त एवं ३, गुण० ४ प्रथम, योग ११—४ मन के ४ वचन के, २ वैक्रिय के और १ कार्मण काय एवं ११, उपयोग ६—३ ज्ञान, ३ अज्ञान, ३ दर्शन एवं ९, लेश्या ६।

७ देवाङ्गना में—जीव के भेद २, संज्ञी का, गुणस्थानक ४ प्रथम, योग ११—४ मन का, ४ वचन का, २ वैक्रिय का, १ कार्मण काय, उपयोग ९—३ ज्ञान, ३ अ०, ३ दर्शन एवं ९, लेश्या ४ प्रथम।

८ सिद्ध गति में—जीव का भेद नहीं, गुण० नही, योग नही। उपयोग २—केवल ज्ञान और केवल दर्शन, लेश्या नही।

नरक गति प्रमुख आठ बोल में रहे हुए जीवों का अल्पवहुत्व = सब से कम मनुष्यनी, उससे मनुष्य असंख्यात गुणा (संमूर्छिम के मिलने से), उससे नेरिये असं० गुणा, उससे तिर्यञ्चनी असं० गुणी, उससे देव असं० गुणा, उससे देवाङ्गना संख्यात गुणी व उससे सिद्ध अनन्त गुणा व उससे तिर्यञ्च अनन्त गुणा। (साधारण वनस्पति के मिलने से।)

३ इन्द्रिय द्वार : सइन्द्रिय में जीव के भेद १४, गुण० १२ प्रथम, योग १५, उपयोग १० केवल के दो छोड कर। लेश्या ६।

एकेन्द्रिय में—जीव के भेद ४ प्रथम, गुण० १ प्रथम, योग ५—२ औदारिक का, २ वैक्रिय का १ कार्मण काय। उपयोग ३—२ अज्ञान का और १ अचक्षु दर्शन, लेश्या ४ प्रथम।

वेइन्द्रिय, त्रिइन्द्रिय, चौरिन्द्रिय—इनमें जीव के भेद दो-दो, अपर्याप्त और पर्याप्त। गुण० २ प्रथम। योग ४—२ औदारिक का, १ कार्मण काय, १ व्यवहार वचन। उपयोग—वेइन्द्रिय मे पांच

उपयोग—२ ज्ञान, २ अज्ञान, दर्शन—चक्षु दर्शन और अचक्षु दर्शन, लेश्या ३ प्रथम ।

पंचेंन्द्रिय में—जीव के भेद : ४—संज्ञी पंचेन्द्रिय और असंज्ञी पचेन्द्रिय इन दो का अपर्याप्त और पर्याप्त । गुण० १२ प्रथम, योग १५, उपयोग १० केवल के दो छोड कर, लेश्या ६ ।

अनिन्द्रिय में—जीव का भेद १ संज्ञी का पर्याप्त । गुण० २ (१३ वा और १४ वां), योग ७—१ सत्यमन, २ व्यवहार मन, ३ सत्य वचन, ४ व्यवहार वचन, ५ औदारिक, ६ औदारिक मिश्र, ७ कार्मण काय । उपयोग २—केवल ज्ञान व दर्शन लेश्या १ शुक्ल ।

सइन्द्रिय प्रमुख सात बोल में रहे हुए जीवो का अल्प बहुत्व :—१ सब से कम पचेन्द्रिय, २ इससे चौरिन्द्रिय विशेषाधिक, ३ इससे त्रिइन्द्रिय विशेषाधिक ४ इससे बेइन्द्रिय विशेषाधिक, ५ इससे अनिन्द्रिय अनन्त गुणे (सिद्ध आश्री), ६ इससे एकेन्द्रिय अनन्त गुणे (वनस्पति आश्री), ७ इससे सइन्द्रि विशेषाधिक ।

४ काय द्वार : १ सकाय में—जीव के भेद १४, गुण० १४, योग १५, उपयोग १२, लेश्या ६ ।

२. ३, ४ पृथ्वी काय, अप्काय वनस्पति काय :—इन तीनो में जीव के भेद ४, सूक्ष्म एकेन्द्रिय व वादर एकेन्द्रिय का अपर्याप्त और पर्याप्त एवं ४ गुणस्थानक १ प्रथम, योग ३ दो औदारिक का और १ कार्मण काय । उपयोग ३—२ अज्ञान और १ अचक्षु दर्शन, लेश्या ४ प्रथम ।

५-६ तेजस् काय, वायु काय मे—जीव के भेद ४ पृथ्वीवत्, गुणस्थानक १ प्रथम, योग तेजस् में ३ पृथवीवत् वायु मे ५—दो औदारिक का और दो वैक्रिय का, एक कार्मण, उपयोग ३ पृथ्वीवत्, लेश्या ३ प्रथम ।

७ त्रस काय में—जीव के भेद १०-एकेन्द्रिय के चार छोड़ कर। गुण स्थानक १४, योग १५, उपयोग १२, लेश्या ६।

८ अकाय में—जीव के भेद नही, गुणस्थानक नही, योग नहीं, उपयोग २ केवल के, लेश्या नही।

सकाय प्रमुख आठ बोल में रहे हुए जीवो का अल्पबहुत्व. १ सर्व से कम त्रस काय २ इससे तैजस् काय असंख्यात गुणा ३ इससे पृथ्वी काय विशेषाधिक ४ इससे अप्काय विशेषाधिक ५ इससे वायु काय विशेषाधिक ६ इससे अकाय अनन्त गुणा ७ इससे वनस्पतिकाय अनत गुणा ८ इससे सकाय विशेषाधिक।

५ योग द्वार :—सयोग में—जीव के भेद १४, गुणस्थानक १३ प्रथम, योग १५, उपयोग १२, लेश्या ६।

मन योग मे—जीव का भेद १ संज्ञी का पर्याप्त, गुण स्थानक १३, योग १४, कार्मण को छोड़ कर, उपयोग १२, लेश्या ६।

वचन योग मे जीव के भेद ५ बेइन्द्रिय, त्रिइन्द्रिय, चौरिन्द्रिय, असज्ञी पचेन्द्रिय, संज्ञी पचेन्द्रिय एवं ५ का पर्याप्त, गुण स्थान १३, योग १४ कार्मण छोड़, उपयोग १२, लेश्या ६।

काय योग मे—जीव के भेद १४, गुणस्थानक १३, योग १५ लेश्या ६।

अयोग में—जीव का भेद १ संज्ञी का पर्याप्त, गुणस्थानक १ चौदहवाँ, योग नही, उपयोग २ केवल के, लेश्या नही।

सयोग प्रमुख पाँच बोल मे रहे हुए जीवो का अल्पबहुत्व: १ सर्व से कम मन योगी २ इस से वचन योगी असंख्यात गुणे ३ इस से अयोगी अनन्त गुणे ४ इस से काययोगी अनन्त गुणे ५ इस से सयोगी विशेषाधिक।

६ वेद द्वार :—१ सवेद में-जीव के भेद १४, गुणस्थानक ६— प्रथम, योग १५, उपयोग १० केवल के दो छोड कर, लेश्या ६।

२ स्त्री वेद मे—जीव के भेद २-सञ्ज्ञी का, गुणस्थानक ६ प्रथम, योग १३ आहारक के दो छोड़ कर, उपयोग १० केवल के दो छोड़ कर, लेश्या ६।

३ पुरुष वेद में—जीव के भेद २ सञ्ज्ञी के, गुणस्थानक ६ प्रथम, योग १५, उपयोग १० केवल के दो छोड़ कर, लेश्या ६।

४ नपुंसक वेद मे—जीव के भेद १४, गुणस्थानक ६ प्रथम, योग १५, उपयोग १०-केवल के दो छोड कर, लेश्या ६।

अवेद में—जीव का भेद १-सञ्ज्ञी का पर्याप्त, गुणस्थानक ६ नववे से चौदहवे तक, योग ११-४ मन के ४वचन के २ औदारिक के, १ कार्मण; उपयोग ६-पांच ज्ञान का और ४ दर्शन का, लेश्या १ शुक्ल।

सवेद प्रमुख पांच बोल मे रहे हुए जीवो का अल्पबहुत्व :—१ सब से कम पुरुष वेदी २ इस से स्त्री वेदी सख्यात गुणा ३ इस से अवेदी अनन्त गुणा ४ इससे नपुंसक वेदी अनन्त गुणा ५ इस से सवेदी विशेषाधिक।

कषाय द्वार —१ सकषाय में—जीव के भेद १४, गुणस्थानक १० प्रथम। योग १५, उपयोग १० केवल के दो छोड कर, लेश्या ६।

२-३-४ क्रोध, मान और माया कषाय मे—जीव के भेद १४, गुणस्थानक ६ प्रथम। योग १५, उपयोग १०, लेश्या ६।

५ लोभ कषाय मे—जीव के भेद १४, गुणस्थानक १०, योग १५, उपयोग १०, लेश्या ६।

६ अकषाय मे—जीव का भेद १ सञ्ज्ञी का पर्याप्त, गुणस्थानक ४ अंतिम, योग ११, ४ मन के ४ वचन के २ औदारिक के १ कार्मण का। उपयोग ६ पाँच ज्ञान का और ४ दर्शन का, लेश्या १ शुक्ल।

७ सकपाय प्रमुख ६ बोल में रहे हुवे जीवों का अल्पवहुत्व:-१ सब से कम अकषायी २ इससे मान कषायी अनन्त गुणा ३ इससे क्रोध कषायी विशेषाधिक ४ इससे माया कषायी विशेषाधिक ५ लोभ कपायी विशेषाधिक ६ सकषायो विशेषाधिक ।

८ लेश्या द्वार :—१ सलेश्या मे—जीव के भेद १४, गुणस्थानक १३ प्रथम, योग १५, उपयोग १२, लेश्या ६ ।

२-३-४ कृष्ण, नील कापोत लेश्या में जीव के भेद १४, गुणस्थानक ६ प्रथम । योग १५,उपयोग १० केवल के दो छोड़कर, लेश्या १ अपनी२।

५ तेजो लेश्या में—जीव का भेद ३-दो सज्ञी के और एक बादर एकेन्द्रिय का अपर्याप्त ; गुणस्थानक ७ प्रथम, योग १५, उपयोग १०, लेश्या १ अपने खुद की ।

६ पद्म लेश्या में जीव का भेद २ संज्ञी का, गुणस्थानक ७ प्रथम, योग १५, उपयोग १०, लेश्या १ अपनी ।

७ शुक्ल लेश्या में—जीव के भेद २ सज्ञी के, गुणस्थानक १३ प्रथम, योग १५ उपयोग १२, लेश्या १ अपनी ।

८ अलेश्या मे—जीव का भेद नही, गुणस्थानक १ चौदहवा, योग नही, उपयोग २ केवल के, लेश्या नही ।

सलेश्या प्रमुख आठ बोल मे रहे हुए जीवो का अल्पवहुत्व:—१ सब से कम शुक्ल लेश्यी २ इस से पद्मलेश्यी संख्यात गुणा ३ इससे तेजोलेश्यी संख्यात गुणा ४ इस से अलेश्यी अनन्त गुणा ५ इससे कापोतलेश्यी अनन्त गुणा ६ इससे नील लेश्यी विशेषाधिक ७ इससे कृष्ण लेश्यी विशेषाधिक ८ इस से सलेश्यी विशेषाधिक ।

९ समकित द्वार:—१ सम्यक् दृष्टि में जीव का भेद ६—बेइन्द्रिय, त्रिइन्द्रिय, चौरिन्द्रिय, असज्ञी पचेन्द्रिय एवं चार का अपर्याप्त और सज्ञी पंचेन्द्रिय का अपर्याप्त व पर्याप्त एवं ६, गुणस्थानक १२ पहेला

और तीसरा छोड़कर, योग १५, उपयोग ९-पांच ज्ञान और चार दर्शन, लेश्या ६।

२ मिथ्यादृष्टि मे—जीव का भेद १४, गुणस्थानक १, योग १३ आहारक के दो छोड़कर, उपयोग ६-३ अज्ञान और ३ दर्शन, लेश्या ६।

सम्यक् दृष्टि प्रमुख बोल मे रहे हुवे जीवो का अल्पबहुत्व—१ सब से कम मिश्र दृष्टि २ इस से सम्यक् दृष्टि अनन्त गुणा ३ इस से मिथ्या दृष्टि अनन्त गुणा।

१० ज्ञान द्वार —१ समुच्चय ज्ञान मे—जीव का भेद ६ सम्यक् दृष्टि वत्, गुणस्थानक १२, योग १५, उपयोग ९, लेश्या ६ सम्यक् दृष्टि वत्।

२-३ मति ज्ञान श्रुत ज्ञान मे—जीव का भेद ६ सम्यक् दृष्टि वत्, गुणस्थानक १० पहेला, तीसरा, तेरहवा, चौदहवां छोड़कर, योग १५, उपयोग ७, ४ ज्ञान और ३ दर्शन, लेश्या ६।

४ अवधि ज्ञान मे—जीव का भेद २ सज्ञी का, गुणस्थानक १० मति ज्ञानवत्, योग १५, उपयोग ७, लेश्या ६।

५ मन : पर्यव ज्ञान मे—जीव का भेद १ सज्ञी का पर्याप्त, गुणस्थानक ७ छट्ठे से बारहवे तक, योग १४ कार्मण को छोडकर, उपयोग ७, लेश्या ६।

६ केवल ज्ञान मे—जीव का भेद १ संज्ञी पर्याप्त, गुणस्थानक २-तेरहवां चौदहवां, योग ७-सत्य मन, सत्य वचन व्यवहार मन, व्यवहार वचन, दो औदारिक का, एक कार्मण एवं ७, उपयोग दो-केवल के, लेश्या १ शुक्ल।

७-८-९ समुच्चय अज्ञान, मति अज्ञान, श्रुत अज्ञान—इन तीन मे जीव का भेद १४, गुणस्थान २-पहला और तीसरा, योग १३-आहारक के दो छोड़-कर, उपयोग ६-तीन अज्ञान तीन दर्शन, लेश्या ६।

१० विभंग ज्ञान में—जीव का भेद २ संज्ञी का, गुणस्थानक २-पहला और तीसरा, योग १३, उपयोग ६, लेश्या ६।

समुच्चय ज्ञान प्रमुख दश बोल में रहे हुए जीवो का अल्पबहुत्व—१ सब से कम मन पर्यव ज्ञानी, २ इससे अवधिज्ञानी असख्यात गुणा ३ इससे मति ज्ञानी व ४ श्रुत ज्ञानी परस्पर बराबर व पूर्व से विशेषाधिक ५ इससे विभग ज्ञानी असंख्यात गुणा ६ इससे केवलज्ञानी अनन्त गुणा ७ इससे समुच्चय ज्ञानी विशेषाधिक ८ इससे मति अज्ञानी व ६ श्रुत अज्ञानी परस्पर वराबर व पूर्व से अनन्त गुणे। १० इससे समुच्चय अज्ञानी विशेषाधिक।

११ दर्शन द्वार :—१ चक्षु दर्शन में—जीव का भेद ६-चौरिन्द्रिय, असज्ञी पंचेन्द्रिय, सज्ञी पंचेन्द्रिय इन तीन का अपर्याप्त और पर्याप्त; गुणस्थानक १२ प्रथम; योग १४-कार्मण को छोड़कर, उपयोग १०-केवल के दो छोड़कर; लेश्या ६।

२ अचक्षु दर्शन में—जीव का भेद १४, गुणस्थानक १२, योग १५, उपयोग १०, लेश्या ६।

३ अवधि दर्शन में—जीव का भेद २—संज्ञी का, गुणस्थानक १२, योग १५, उपयोग १०, लेश्या ६।

४ केवल दर्शन में—जीव का भेद १संज्ञी पर्याप्त, गुणस्थानक २-१३ वां, १४ वा, योग ७ केवल ज्ञानवत्, उपयोग २-केवल का, लेश्या १ शुक्ल।

चक्षु दर्शन प्रमुख चार बोल में रहे हुए जीवों का अल्पबहुत्व :—१ सबसे कम अवधि दर्शनी २ इससे चक्षु दर्शनी असंख्यात गुणा ३ इससे केवलदर्शनी अनन्त गुणा १ इससे अचक्षु दर्शनी अनन्त गुणा।

१२ संयत द्वार:—१ सयत (समुच्चय संयम) में – जीव का भेद १ सज्ञी का पर्याप्त, गुणस्थानक ९-छट्ठे से चौदहवे तक, योग १५, उपयोग ९-तीन अज्ञान के छोड़कर; लेश्या ६।

२-३ सामायिक व छेदोपस्थानिक में—जीव का भेद १ संज्ञी का पर्याप्त, गुणस्थानक ४—छट्ठे से नववे तक, योग १४ कार्मण को छोडकर, उपयोग ७। चार ज्ञान प्रथम व तीन दर्शन, लेश्या ६।

४ परिहार विशुद्ध में—जीव का भेद १ सज्ञी का पर्याप्त, गुणस्थानक २-छट्ठा व सातवा, योग ६—४ मन के ४ वचन के १ औदारिक का, उपयोग ७—४ ज्ञान का ३ दर्शन का, लेश्या ३ (ऊपर की)।

५ सूक्ष्म सम्पराय मे—जीव का भेद १ सज्ञी का पर्याप्त, गुणस्थानक १–दशवॉ, योग ६, उपयोग ७ लेश्या १–शुक्ल।

६ यथाख्यात में—जीव का भेद १ सज्ञी का पर्याप्त, गुणस्थानक ४ ऊपर के, योग ११—४ मन के ४ वचन के २ औदारिक के व १ कार्मण का, उपयोग ६—तीन अज्ञान के छोडकर, लेश्या १ शुक्ल।

७ सयतासंयत मे—जीव का भेद १ संज्ञी का पर्याप्त, गुणस्थानक १ पाचवॉ, योग १२—२ आहारक का व एक कार्मण का एव तीन छोड़कर, उपयोग ६–तीन ज्ञान -दर्शन, लेश्या ६।

८ असयत मे—जीव का भेद १४, गुणस्थानक ४ प्रथम के, योग १३—आहारक का २ छोडकर, उपयोग ६—३ ज्ञान के, ३ दर्शन के, लेश्या ६।

नोसयत नो असंयत नो सयतासयत में—जीव का भेद नही, गुणस्थानक नही, योग नही, उपयोग २ केवल का, लेश्या नही।

सयत प्रमुख नव बोल मे रहे हुए जीवो का अल्पवहुत्व—१ सब से कम सूक्ष्मसपरायचारित्री २ इससे परिहार विशुद्धिकचारित्री सख्यात गुणा ३ इससे यथाख्यातचारित्री सख्यात गुणा ४ इससे छेदोपस्थापनिकचारित्रो सख्यात गुणा ५ इससे सामायिक चारित्री

सख्यात गुणा ६ इससे सयति विशेषाधिक ७ संयतासंयती असख्यात गुणा ८ इससे नोसंयतासंयति अनन्त गुणा ९ इससे असयती अनन्त गुणा ।

१३ उपयोग द्वार : १ साकार उपयोग में—जीव का भेद १४, गुणस्थानक १४, योग १५, उपयोग १२, लेश्या ६ ।

२ अनाकार उपयोग में—जीव का भेद १४, गुणस्थानक १३ दशवॉ छोड़ कर, योग १५, उपयोग १२, लेश्या ६ ।

साकार प्रमुख दो बोल में रहे हुए जीवो का अल्पबहुत्व--१ सब से कम अनाकार उपयोगी २ इससे साकार उपयोगी संख्यात गुणा ।

१४ आहार द्वार : आहारक मे—जीव का भेद १४, गुणस्थानक १३ प्रथम, योग १४ कार्मण का छोड़ कर, उपयोग १२ लेश्या ६ ।

अनाहारक में—जीव का भेद ८ सात अपर्याप्त और संज्ञी का पर्याप्त, गुणस्थानक ५—१, २, ४, १३, १४, योग १ कार्मण का, उपयोग १०—मनःपर्यय ज्ञान व चक्षु दर्शन छोड़ कर, लेश्या ६ ।

आहारक प्रमुख दो बोल में रहे हुए जीवो का अल्पबहुत्व १ सब से कम अनाहारक इससे २ आहारक असख्यात गुणा ।

१५ भाषक द्वार : भाषक में—जीव का भेद ५, बेइन्द्रिय, त्रिइन्द्रिय, चौरिन्द्रिय, असज्ञी पंचेन्द्रिय, संज्ञी पचेन्द्रिय एव ५ का पर्याप्त, गुणस्थानक १३ प्रथम का, योग १४ कार्मण का छोड़ कर; उपयोग १२, लेश्या ६ ।

अभाषक में—जीव का भेद १० बेइन्द्रिय, त्रिइन्द्रिय चौरिन्द्रिय, असंज्ञी पचेन्द्रिय एवं चार के पर्याप्त छोड़ कर, गुणस्थानक ५—१, २, ४, १३, १४, योग ५—२ औदारिक का २ वैक्रिय का, १ कार्मण का, उपयोग ११ मनःपर्यय ज्ञान का छोड़ कर, लेश्या ६ ।

१६ परित द्वार . परितमे—जीव के भेद १४, गुणस्थानक १४, योग १५, उपयोग १२ लेश्या ६ ।

२ अपरित मे—जीव का भेद १४, गुणस्थानक १ पहला, योग १३ आहारक के दो छोड कर, उपयोग ६--३ अज्ञान ३ दर्शन, लेश्या ६ ।

३-नो परित नोअपरित मे जीव का भेद नही, गुणस्थानक नही, योग नही, उपयोग २ केवल के, लेश्या नही ।

परित प्रमुख तीन बोल मे रहे हुए जीवो का अल्पबहुत्व

१ सब से कम परित २ इससे नो परित नो अपरित अनन्त गुणा ३ इससे अपरित अनन्त गुणा ।

१७ पर्याप्त द्वार १ पर्याप्त मे—जीव का भेद ७, गुणस्थानक १४ योग १५, उपयोग १२, लेश्या ६ ।

२ अपर्याप्त मे—जीव का भेद ७, गुणस्थानक ३—१, २, ४, योग ५—२ औदारिक का, २ वैक्रिय का, १ कार्मण का, उपयोग ६—३ ज्ञान ३ अज्ञान ३ दर्शन, लेश्या ६ ।

३ नो पर्याप्त नो अपर्याप्त मे—जीव का भेद नही, गुणस्थानक नही, योग नही, उपयोग २ केवल का, लेश्या नही ।

पर्याप्त प्रमुख तीन बोल मे रहे हुए जीवो का अल्पबहुत्व १ सब से कम नो पर्याप्त नो अपर्याप्त २ इससे अपर्याप्त अनन्त गुणा ३ इससे पर्याप्त सख्यात गुणा ।

१८ सूक्ष्म द्वार : १ सूक्ष्म मे—जीव का भेद २ सूक्ष्म एकेन्द्रिय का अपर्याप्त व पर्याप्त, गुणस्थानक १ पहला, योग ३—२ औदारिक तथा १ कार्मण । उपयोग ३—२ अज्ञान व १ अचक्षुदर्शन, लेश्या ३ पहली ।

२ बादर मे—जीवका भेद—१२-सूक्ष्म का २ छोड़ कर, गुण-स्थानक १४, योग १५, उपयोग १२, लेश्या ६।

३ नो सूक्ष्म नो बादर मे—जीव का भेद नही। गुणस्थानक नही, उपयोग २ केवल का, लेश्या नही। सूक्ष्म प्रमुख तीन बोल मे रहे हुए जीवो का अल्पबहुत्व १ सब से कम नो बादर नो सूक्ष्म २ इससे बादर अनन्त गुणा ३ इससे सूक्ष्म असख्यात गुणा।

१९ सज्ञी द्वार: १ संज्ञी में—जीव का भेद २, गुणस्थानक १२ पहेला। योग १५, उपयोग १० केवल का दो छोड़ कर, लेश्या ६।

२ असज्ञी में–जीव का भेद १२–संज्ञी का दो छोड़कर, गुणस्थानक २ पहेला, योग ६—२ औदारिक का, २ वैक्रिय का, १ कार्मण का १ व्यवहार वचन, उपयोग ६—२ ज्ञान का २ अज्ञान का २ दर्शन का, लेश्या ४ प्रथम की।

नो संज्ञी नो असंज्ञी में—जीव का भेद १ संज्ञी का पर्याप्त। गुणस्थानक २, १३ वां। १४ वां, योग ७ केवलज्ञानवत्, उपयोग २ केवल का, लेश्या १ शुक्ल।

सज्ञी प्रमुख तीन बोल में रहे हुए जीवो का अल्पबहुत्व . १ सब से कम संज्ञी २ इससे नो सज्ञी नो असज्ञी अनन्त गुणा। इससे असज्ञी असंख्यात गुणा।

२० भव्य द्वार: १ भव्य मे जीव का भेद १४, गुणस्थानक १४, योग १५, उपयोग १२, लेश्या ६।

२ अभव्य मे—जीव का भेद १४, गुणस्थानक १ पहला, योग १३ आहारक के दो छोड़ कर, उपयोग ६—३ अज्ञान ३ दर्शन, लेश्या ६।

३ नो भव्य नो अभव्य में—जीव का भेद नही, गुणस्थानक नही, योग नही, उपयोग ८, लेश्या नही ।

भव्य प्रमुख तीन बोल मे रहे हुए जीवो का अल्पबहुत्व १ सब से कम अभव्य २ इस से नो भव्य नो अभव्य अनन्त गुणा ३ इस से भव्य अनन्त गुणा ।

२१ चरम द्वार · १ चरम में—जीव का भेद १४, गुणस्थानक १४ योग १५, उपयोग १२. लेश्या ६ ।

२ अचरम मे—जीव का भेद १४, गुणस्थानक १ पहला, योग १३ आहारक का दो छोड कर, उपयोग ६—३ अज्ञान ३ ३ दर्शन, लेश्या ६ ।

चरम प्रमुख दो बोल मे रहे हुए जीवो का अल्पबहुत्व १ सब से कम अचरम २ इससे चरम अनन्त गुणा ।

एवं दो गाथा के २१ बोल द्वार पर ६२ बोल कहे, तदुपरान्त अन्य वीतराग प्रमुख पाच बोल-चौदह गुणस्थानक व पाच शरीर पर ६२ बोल—

१ वीतराग मे—जीव का भेद १ सज्ञी का पर्याप्त, गुणस्थानक ४ ऊपर का, योग ११—२ आहारक तथा २ वैक्रिय का छोडकर, उपयोग ९—५ ज्ञान ४ दर्शन, लेश्या १शुक्ल ।

२ समुच्चय केवली मे—जीव का भेद २ सज्ञी का, गुणस्थानक ११ ऊपर का, योग १५, उपयोग ९—५ ज्ञान ४ दर्शन। लेश्या ६।

३ युगल (युगलियो) में—जीव का भेद २ सज्ञी का, गुणस्थानक २, १ला व ४था, योग ११, ४ मन के ४ वचन के २ औदारिक के १ कार्मण का, उपयोग ६, २ ज्ञान का, २ अज्ञान का व २ दर्शन का, लेश्या ४ प्रथम ।

४ असज्ञी तिर्यंच पंचेद्रिय में—जीव का भेद २, ११ वॉ व १२ वाँ, गुणस्थानक २ (१-२), योग ४—२ औदारिक का १ व्यवहार वचन व १ कार्मण का, उपयोग ६—२ ज्ञान २ अज्ञान २ दर्शन । लेश्या ३ प्रथम ।

५ असंज्ञी मनुष्य में—जीव का भेद १ वां, ११ वां गुणस्थानक १ पहला, योग ३, २ औदारिक का, १ कार्मण का, उपयोग ३, २ अज्ञान १ अचक्षु दर्शन, लेश्या ३ प्रथम ।

वीतराग प्रमुख पांच बोल मे रहे हुए जीवो का अल्पबहुत्व:—सब से कम युगल २ इससे असंज्ञी मनुष्य असंख्यात गुणा ३ इससे असज्ञी तिर्यंच पचेन्द्रिय असंख्यात गुणा ४ इससे वीतरागी अनन्त गुणा ५ इसस समुच्चय केवली विशेषाधिक ।

गुणस्थानक : १ मिथ्यात्व में—जीव का भेद १४, गुणस्थानक १ पहला, योग १३ आहारक दो छोड़कर, उपयोग ६—३ अज्ञान ३ दर्शन, लेश्या ६ ।

२ सास्वादान सम्यक्दृष्टि में—जीव का भेद ६ सम्यक् दृष्टि वत्, गुणस्थानक १ दूसरा, योग १३ आहारक का दो छोड़कर, उपयोग ६-३ ज्ञान ३ दर्शन, लेश्या ६ ।

३ मिश्र दृष्टि में—जीव का भेद १ संज्ञी का पर्याप्त, गुणस्थानक १ तीसरा, योग १०-४ मन के, ४ वचन के १ औदारिक का १ वैक्रिय का, उपयोग ६-३ अज्ञान ३ दर्शन, लेश्या ६ ।

४ अव्रती सम्यक् दृष्टि में–जीव का भेद २ संज्ञी का। गुणस्थानक १ चौथा, योग १३ सास्वादन सम्यक् दृष्टि वत् उपयोग ६-३ ज्ञान ३ दर्शन, लेश्या ६।

५ देशव्रती (संयतासंयति) में—जीव का भेद १–१४ वॉ, गुणस्थानक १ पांचवॉ, योग १२-२ आहारक का व १ कार्मण का छोड-कर उपयोग ६-३ ज्ञान ३ दर्शन, लेश्या ६ ।

६ प्रमत्त संयति में—जीव का भेद, १ गुणस्थानक १ छठा, योग १४ कार्मण का छोडकर, उपयोग, ७-४ ज्ञान ३ दर्शन, लेश्या ६।

७ अप्रमत्त सयति मे—जीव का भेद १ गुणस्थानक ७ वां, योग ११-४ मन के ४ वचन के १ औदारिक १ वैक्रिय १ आहारक, उपयोग ७—४ ज्ञान ३ दर्शन लेश्या ३ ऊपर की।

८ निवृत्ति बादर ९ अनि० बा० १० सूक्ष्म सं० ११ उप ० मो० १२ क्षीण मो ० में—जीव का भेद १ संज्ञी का पर्याप्त, गुणस्थानक अपना-अपना योग ९-४ मन के ४ वचन के १ औदारिक, उपयोग ७—४ ज्ञान ३ दर्शन, लेश्या १ शुक्ल ।

१३ सयोगी केवली मे—जीव का भेद १, गुणस्थानक १ तेरहवां, योग ७—२ मन के २ वचन के, २ औदारिक के १ कार्मण, उपयोग २-केवल का। लेश्या १ शुक्ल।

१४ अयोगी केवली मे—जीव का भेद १, गुणस्थानक १, योग नही, उपयोग २ केवल के, लेश्या नही ।

चौदह गुणस्थानक में रहे हुए जीवो का अल्पबहुत्व:-१ सबसे कम उपशममोहनीय वाला २ इससे क्षीण मोहनीय वाला सख्यात गुणा ३ इससे आठवे, नववे दशवे गुणस्थानक वाले परस्पर तुल्य व सख्यात गुणे, ४ इससे सयोगी केवली संख्यात गुणा ५ इससे अप्रमत्त संयत गुणस्थानक वाला सख्यात गुणा ६ इससे प्रमत्त संयत गुणस्थानक वाला सख्यात गुणा ७ इससे देशव्रती असंख्यात गुणा ८ इससे सास्वा-दन सम्यक् दृष्टि असंख्यात गुणा ९ इससे मिश्र दृष्टि असख्यात गुणा १० इससे अव्रती समदृष्टि असख्यात गुणा ११ इससे अयोगी केवली (सिद्ध सहित) अनन्त गुणा १२ इससे मिथ्यादृष्टि अनन्त गुणा ।

शरीर द्वार .—१ औदारिक में—जीव का भेद १४, गुणस्थानक १४, योग १५, उपयोग १२, लेश्या ६ ।

वैक्रिय में—जीव का भेद ४-दो संज्ञी का, एक असंज्ञी पंचेन्द्रिय का अपर्याप्त व बादर एकेन्द्रिय का पर्याप्त। गुणस्थानक ७ प्रथम; योग १२-दो आहारक का, १ कार्मण छोड़ कर; उपयोग १०-केवल के दो छोड़ कर, लेश्या ६।

आहारक में—जीव का भेद १ संज्ञी का पर्याप्त। गुणस्थानक २-६ व ७, योग १२-दो वैक्रिय व १ कार्मण छोड़ कर, उपयोग ७-४ ज्ञान व ३ दर्शन, लेश्या ६।

४ तैजस् कार्मण में—जीव का भेद १४, गुणस्थान १४, योग १५, उपयोग १२, लेश्या ६।

औदारिक प्रमुख पांच शरीर में रहे हुए जीवो का अल्पबहुत्व : १ सबसे कम आहारक शरीर २ इससे वैक्रिय शरीर असख्यात गुणा ३ इससे औदारिक शरीर असंख्यात गुणा ४ इससे तैजस् व कार्मण शरीरी परस्पर तुल्य व अनन्त गुणे।
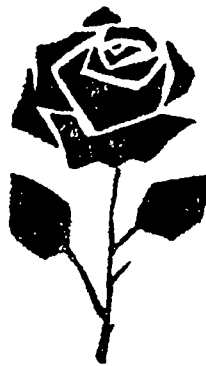
बावन बोल

पहला द्वार—समुच्चय जीव का।

१ समुच्चय जीव मे—भाव ५, उदय, उपशम, क्षायक, क्षयोपशम, पारिणामिक। आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य २, दण्डक २४ पक्ष २।

१ गति द्वार के ८ भेद

१ नारकी मे—भाव ५, आत्मा ७, (चारित्र छोड कर) लब्धि ५, वीर्य १ वाल वीर्य, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक १ नारकी का, पक्ष २।

१ तिर्यच मे—भाव ५, आत्मा ७ (चारित्र छोड कर) लब्धि ५, वीर्य १-वाल वीर्य व बाल पडित वीर्य, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक ६ पांच स्थावर तीन विकलेइन्द्रिय, एक तिर्यच पचेन्द्रिय, पक्ष २।

तिर्यचनी मे—भाव ५, आत्मा ७ ऊपरवत्, लब्धि ५, वीर्य दो दृष्टि ३ भव्य अभव्य २ दण्डक १ पक्ष दो।

४ मनुष्य में—भाव ५, आत्मा ८ लब्धि ५ वीर्य ३ दृष्टि ३ भव्य अभव्य २, दण्डक १ मनुष्य का, पक्ष २।

५ मनुष्यनी मे—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक १ पक्ष २।

६ देवता में—भाव ५, आत्मा ७ (चारित्र छोड़ कर) लब्धि ५, वीर्य १, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक १३ देवता का, पक्ष २।

७ देवाङ्गना में—भाव ५, आत्मा ७, लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २ दण्डक १३ देवता के, पक्ष २।

८ सिद्ध गति में—भाव २ क्षायक, पारिणामिक, आत्मा ४, द्रव्य ज्ञान, दर्शन व उपयोग, लब्धि नही, वीर्य नही, दृष्टि १ समकित दृष्टि, भव्य अभव्य नही, दण्डक नही, पक्ष नहीं।

३ इन्द्रिय द्वार के ७ भेद

१ सइन्द्रिय में—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४ पक्ष २।

२ एकेन्द्रिय में—भाव ३-उदय, क्षयोपशम पारिणामिक। आत्मा ६ (ज्ञान चारित्र छोड़ कर) लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि १ मिथ्यात्व दृष्टि, भव्य अभव्य २. दण्डक ५, पक्ष २।

३ बेइन्द्रिय मे—भाव ३ ऊपर अनुसार। आत्मा ७ (चारित्र छोड कर) लब्धि ५, वीर्य १ ऊपर प्रमाणे, दृष्टि २ समकित दृष्टि व मिथ्यात्व दृष्टि, भव्य अभव्य २, दण्डक १ अपना २ पक्ष २।

४ त्रिन्द्रिय में भाव ३, आत्मा ७, लब्धि ५, वीर्य १, दृष्टि २, भव्य अभव्य २, दण्डक १ त्रिइन्द्रिय का, पक्ष २।

५ चौरिन्द्रिय में—भाव ३, आत्मा ७, लब्धि ५, वीर्य १, दृष्टि २, भव्य अभव्य २, दण्डक १ चौरिन्द्रिय का, पक्ष २।

६ पंचेन्द्रिय में—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक १६-१३ देवता का, १ नारकी का, १ मनुष्य का एक तिर्यच का एवं १६ पक्ष २।

७ अनिन्द्रिय में—भाव ३ उदय, क्षायक, पारिणामिक आत्मा ७ (कषाय छोड़कर), लब्धि ५, वीर्य पंडित वीर्य, दृष्टि १, सम्यक् दृष्टि, भव्य १, दण्डक १ मनुष्य का, पक्ष १ शुक्ल।

४ सकाय के ८ भेद

१ सकाय मे—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य १ दृष्टि ६, भव्य अभव्य २, दण्डक २४, पक्ष २ ।

२ पृथ्वी काय ३ अपकाय ४ तेजस् काय—

४ वायु काय तथा ५ वनस्पति काय में—भाव ३-उदय, क्षयोपशम, परिणामिक; आत्मा ६ (ज्ञान चारित्र छोड कर), १ लब्धि ५, वीर्य १, मिथ्या दृष्टि १. भव्य अभव्य २, दण्डक २ अपना २, पक्ष २ ।

७ त्रस काय मे—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक १६ (पांच एकेन्द्रिय का छोडकर), पक्ष २ ।

४ अकाय मे—भाव २, आत्मा ४ लब्धि नही, वीर्य नही, दृष्टि १, नो भवी नो अभवी, दण्डक नही, पक्ष नही ।

५ सयोगी द्वार के ५ भेद

१ सयोगी में—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४, पक्ष २ ।

२ मन योगी मे—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दडक १६ (पाच स्थावर, ३ विकलेन्द्रिय छोडकर), पक्ष २ ।

३ वचन योगी मे—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक १९ (पांच स्थावर छोडकर), पक्ष २ ।

४ काय योगी मे—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दडक २४, पक्ष २ ।

५ अयोगी मे—भाव ३ उदय, क्षायक, परिणामिक, आत्मा ६ (कषाय, योग छोडकर), लब्धि ५, वीर्य १ पडित वीर्य, दृष्टि १ समकित दृष्टि, भव्य १ दंडक १ मनुष्य का, पक्ष १ शुक्ल ।

६ सवेद के ५ भेद

१ सवेद में—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि, ५, वीर्य ३ दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दंडक २४, पक्ष २।

२ स्त्री वेद में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दंडक १५ पक्ष २।

३ पुरुष वेद भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दंडक १५, पक्ष २।

४ नपुंसक वेद में—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दंडक ११ (देवता का १३ छोड़कर),पक्ष २।

५ अवेद में—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य १ दृष्टि १, भव्य १, दण्डक १ मनुष्य का, पक्ष १ शुक्ल ।

७ कषाय के ६ भेद

१ सकषाय में—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २ दण्डक २४, पक्ष २।

२ क्रोध कषाय में—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५ वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४, पक्ष २।

३ मान कषाय में—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४, पक्ष २।

४ माया कषाय में—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४ पक्ष २ ।

५ लोभ कषाय मे—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४, पक्ष २।

६ अकपाय मे—भाव ५, आत्मा ७, लब्धि ५, वीर्य १, दृष्टि १ समकित, भव्य १, दण्डक १ मनुष्य का, पक्ष १ शुक्ल।

८ सलेशी के ८ भेद

१ सलेशी मे—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४ पक्ष २ ।

२ कृष्ण लेश्या मे—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २२ (ज्योतिषी वैमानिक छोड कर) पक्ष २ ।

१ नील लेश्या में—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, भव्य अभव्य २ दण्डक २२ ऊपर प्रमाणे पक्ष २ ।

कापोत लेश्या मे—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २२ ऊपर प्रमाण पक्ष २ ।

तेजोलेश्या मे—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, पक्ष २, दण्डक १८ (१३ देवता का १ मनुष्य का, तिर्यंच पचेन्द्रिय का, पृथवी, अप, वनस्पति एव १८)

६ पद्म लेश्या मे—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक ३, वैमानिक, मनुष्य व तिर्यच एव ३ का, पक्ष २ ।

७ शुक्ल लेश्या मे—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दंडक ३ ऊपर प्रमाणे, पक्ष २ ।

८ अलेशी मे—भाव ३, आत्मा ६, लब्धि ५, वीर्य १, पडित वीर्य, दृष्टि १, समकित, भव्य १, दडक १, मनुष्य का, पक्ष १ शुक्ल ।

६ समकित के ७ भेद

१ समदृष्टि में—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि १ समकित, भव्य १, दडक १६ (पाच एकेन्द्रिय का दडक छोड़ कर) पक्ष १ शुक्ल ।

२ सास्वादान समदृष्टि में—भाव ३, (उदय, क्षयोपशम, पारिणामिक), आत्मा ७, लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि १ समकित, भव्य १, दडक १९ (पाच स्थावर छोड़कर); पक्ष १ शुक्ल।

३ उपशम समदृष्टि में—भाव ४ (क्षायक छोड़कर), आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३ दृष्टि १, भव्य १, दंडक १६ (पांच स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय छोड़कर), पक्ष १ शुक्ल ।

४ वेदक समदृष्टि में—भाव ३, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि १, समकित, भव्य १, दंडक १६ ऊपर प्रमाणे, पक्ष १ शुक्ल।

५ क्षायक समदृष्टि मे—भाव ४ (उपशम छोड़कर) आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि १, भव्य १, दडक १६ पक्ष १ शुक्ल ।

६ मिथ्यात्व दृष्टि में—भाव ३, आत्मा ६, लब्धि ५, वीर्य १, दृष्टि १, भव्य अभव्य २, दडक २४, पक्ष २।

७ मिश्र दृष्टि में—भाव ३, आत्मा ६, लब्धि ५, वीर्य १, बाल वीर्य, दृष्टि १, भव्य १, दडक १६, पक्ष १ शुक्ल।

१० समुच्चय ज्ञान द्वार के १० भेद

१ समुच्चय ज्ञान मे—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि १, भव्य १, दडक १६, पक्ष १ शुक्ल।

२ मति ज्ञान ३ श्रुत ज्ञान में—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि १ भव्य १ दडक १६, पक्ष १ शुक्ल।

४ अवधि ज्ञान में—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि १ भव्य १, दडक १६ पक्ष १ शुक्ल।

५ मनः पर्याय ज्ञान में—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य १ दृष्टि १, दंडक १, मनुष्य का, पक्ष १ शुक्ल।

६ केवल ज्ञान मे—भाव ३, (उदय क्षायक, पारिणामिक) आत्मा ७ (कषाय छोडकर) लब्धि ५, वीर्य १, भव्य १, दण्डक १, पक्ष १; ।

७ समुच्चय अज्ञान ८ मति अज्ञान ९ श्रुत अज्ञान मे—भाव तीन; आत्मा ६, लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि १ मिथ्यात्व दृष्टि, भव्य अभव्य २, दंडक २४ पक्ष २।

१० विभङ्ग ज्ञान मे—भाव ३ (उदय, क्षायोपशम पारिणामिक), आत्मा ६ (ज्ञान चारित्र छोड कर), लब्धि ५, वीर्य १ वाल वीर्य, दृष्टि १ मिथ्यात्व, भव्य अभव्य २, दडक १६ (पांच स्थावर तीन विकलेन्द्रिय छोड कर) पक्ष २ ।

११ दर्शन द्वार के ४ भेद

१ चक्षु दर्शन मे—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दडक १७, पक्ष २ ।

२ अचक्षु दर्शन मे भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दडक २४, पक्ष २ ।

३ अवधि दर्शन में—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दडक १६, पक्ष २ ।

४ केवल दर्शन मे—भाव ३, आत्मा ७ (कषाय छोड़ कर) लब्धि ५, वीर्य १, पडित, दृष्टि १ समकित, भव्य, दडक १ मनुष्य का, पक्ष १ शुक्ल ।

१२ समुच्चय सयति का ६ भेद

१ सयति मे—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य १ पडित, दृष्टि १ समकित, भव्य १, दडक १, पक्ष १, शुक्ल ।

२ सामायिक चारित्र व छेदोपस्थानिक चारित्र में—भाव ५,

आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य १ पडित, दृष्टि १ समकित, भव्य १, दंडक २, पक्ष १ शुक्ल।

४ परिहार विशुद्ध चारित्र मे—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य १ पडित, दृष्टि १ समकित, भव्य १ दंडक १ पक्ष १ शुक्ल।

५ सूक्ष्म संपराय चारित्र में—ऊपर प्रमाणे।

६ यथाख्यात चारित्र मे—भाव ५, आत्मा ७ (कषाय छोड़ कर) लब्धि ५, वीर्य १, दृष्टि १, भव्य १, दंडक १, पक्ष १।

७ असंयति में—भाव ५, आत्मा ७ (चारित्र छोड़ कर) लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २; दंडक २४, पक्ष २।

८ संयतासंयति में—भाव ५, आत्मा ७ ऊपर अनुसार, लब्धि ५, वीर्य १ बाल पंडित, दृष्टि १ समकित, भव्य १, दंडक २, पक्ष १ शुक्ल।

९ नो संयति नो असंयति नो संयतासंयति में—भाव २, क्षायक, पारिणामिक, आत्मा ४, लब्धि नही, वीर्य नही, दृष्टि १ समकित, नो भव्य नो अभव्य, दंडक नही, पक्ष नही।

१३ उपयोग द्वार के २ भेद

१ साकार उपयोग मे—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३; दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दडक २४, पक्ष २।

२ अनाकार उपयोग में--भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दंडक २४, पक्ष २।

१४ आहारक के २ भेद

१ आहारक मे—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, भव्य अभव्य २, दडक २४, पक्ष २।

२ अनाहारक में—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य दो बाल व पंडित, दृष्टि २, भव्य अभव्य २, दडक २४ पक्ष २ ।

१५ भाषक द्वार के २ भेद

१ भाषक मे—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दडक १६, पक्ष २ ।

२ अभाषक मे—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दडक २४ पक्ष २ ।

१६ परित द्वार के ३ भेद

१ परित मे—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य १, दडक २४, पक्ष २ शुक्ल ।

२ अपरित में—भाव ३, आत्मा ६, (ज्ञान चारित्र छोड़ कर) लब्धि ५, वीर्य १, दृष्टि १, भव्य अभव्य २, दण्डक २४, पक्ष १ कृष्ण ।

३ नो परित नो अपरित मे—भाव २, आत्मा ४, लब्धि नही, वीर्य नही, दृष्टि १ समकित, नो भवी नो अभवी, दडक नही, पक्ष नही ।

१७ पर्याप्त द्वार के ३ भेद

१ पर्याप्त मे—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दडक २४, पक्ष २ ।

२ अपर्याप्त मे—भाव ५, आत्मा ७, (चारित्र छोडकर) लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि २, भव्य अभव्य २, दण्डक २४, पक्ष २ ।

३ नो पर्याप्त नो अपर्याप्त मे भाव २ क्षायक व पारिणामिक, आत्मा ४, लब्धि नही, वीर्य नही, दृष्टि १ समकित दृष्टि, नो भव्य नो अभव्य, दण्डक नही, पक्ष नही ।

१८ सूक्ष्म द्वार के ३ भेद

१ सूक्ष्म में—भाव ३, आत्मा ६, लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि १, मिथ्यात्व, भव्य अभव्य २, दण्डक ५ (पांच स्थावर का), पक्ष २ ।

२ बादर में—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४, पक्ष २ ।

३ नो सूक्ष्म नो बादर में—भाव २, आत्मा ४, लब्धि नही, वीर्य नहीं, दृष्टि १, नो भव्य नो अभव्य, दण्डक नही पक्ष नही ।

१९ संज्ञी द्वार के ३ भेद

१ संज्ञी में—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक १६ (पांच स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय छोड़-कर) पक्ष २ ।

२ असंज्ञी में—भाव ३, आत्मा ७ (चारित्र छोड़ कर) लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि २, भव्य अभव्य २ दण्डक २२, पक्ष २ ।

३ नो संज्ञी नो असंज्ञी में—भाव ३, आत्मा ७, लब्धि ५, वीर्य १ पंडित, दृष्टि १ समकित दृष्टि, भव्य १, दण्डक १, पक्ष १ शुक्ल ।

२० भव्य द्वार के ३ भेद

१ भव्य में—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य १ दण्डक २४, पक्ष २ ।

२ अभव्य में—भाव ३, आत्मा ६, लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि १ मिथ्यात्व, अभव्य १ दण्डक २४, पक्ष १ कृष्ण ।

३ नो भव्य नो अभव्य में—भाव २—क्षायक पारिणामिक, आत्मा

४ लब्धि नही, वीर्य नही, दृष्टि १ समकित, भव्य अभव्य नहीं, दण्डक नही, पक्ष नही।

२१ चरम द्वार के दो भेद

१ चरम में—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य २, दण्डक २४, पक्ष २।

२[1] अचरम में—भाव ४ (उपशम छोड़ कर) आत्मा ७ (चारित्र छोडकर) लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि २ समकित दृष्टि व मिथ्यात्व दृष्टि, अभव्य १ दण्डक २४, पक्ष १ कृष्ण।

शरीर द्वार के ५ भेद

१ औदारिक में—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य, अभव्य २, दण्डक १० पक्ष २।

२ वैक्रिय में—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक १७ (१३ देवता का, १ नारकी का, १ नारकी का १, मनुष्य का, १ तिर्यंच का व १ वायु का एवं १७), पक्ष २।

३ आहारक मे—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य १, पंडित वीर्य, दृष्टि १ समकित दृष्टि भव्य १, दण्डक १, पक्ष १ शुक्ल।

४ तैजस व ५ कार्मण में—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४, पक्ष २।

गुणस्थानक द्वार

१ मिथ्यात्व गुणस्थानक में—भाव ३ (उदय, क्षयोपशम, पारिमा-

---

१ अचरम अर्थात् अभवी तथा सिद्ध भगवन्त।

णिक), आत्मा ६ (ज्ञान-चारित्र छोड कर) लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि १ मिथ्यात्व दृष्टि, भव्य अभव्य दो, दण्डक २४, पक्ष दो।

२ सास्वादान समदृष्टि गुणस्थानक में—भाव ३ ऊपर अनुसार, आत्मा ७ चारित्र छोड़ कर, लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि १ समकित दृष्टि; भव्य १ दण्डक १६ (पाँच एकेन्द्रिय छोड़कर), पक्ष १ शुक्ल ।

३ मिश्र गुणस्थानक में—भाव ३ ऊपर अनुसार, आत्मा ६ (ज्ञान चारित्र छोड़कर) लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि १ मिश्र दृष्टि, भव्य १, दण्डक १६, (५ एकेन्द्रिय तीन विकलेन्द्रिय छोड़कर) पक्ष १ शुक्ल ।

३ अव्रती सम्यक्त्व दृष्टि में-भाव ५, आत्मा ७ (चारित्र छोडकर), लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि १ समकित दृष्टि, भव्य १ दण्डक १६ ऊपर अनुसार, पक्ष १ शुक्ल ।

५ देशव्रती गुणस्थानक में—भाव ५, आत्मा ७ (देश से चारित्र है सर्व से नही) ५ लब्धि, वीर्य १, बाल पंडित वीर्य, दृष्टि १ समकित दृष्टि, भव्य १ दण्डक दो (मनुष्य व तिर्यंच के) पक्ष १, शुक्ल ।

६ प्रमत्त संयति गुणस्थानक में—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य १ दृष्टि १ समकित दृष्टि भव्य १, दण्डक १ मनुष्य का, पक्ष १ शुक्ल ।

७ अप्रमत्त संयति गुण स्थानक में—भाव ५, आत्मा ८ लब्धि ५, वीर्य १ पंडित वीर्य, दृष्टि १ समकित भ० १, दंडक १ मनुष्य का, पक्ष १ शुक्ल ।

नियट्टी वादर गुण० में—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य १ पंडित वीर्य दृष्टि १ समकित दृष्टि, भव्य १, दडक १ मनुष्य का, पक्ष १ शुक्ल ।

९ अनियट्टी बादर गुण० मे—भाव ५, आत्मा ८ लब्धि ५, वीर्य १ पडित वीर्य, दृष्टि १ समकित, भव्य १, दडक १ मनुष्य का, पक्ष १ शुक्ल ।

१० सूक्ष्म सपराय गुण० मे—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य १ पडित वीर्य, दृष्टि १ समकित, भव्य १, दडक १ मनु'य का पक्ष १ शुक्ल ।

११ उपशान्त मोहनीय गुण० में—भाव ५, आत्मा ७ (कषाय छोड़ कर) लब्धि ५, वीर्य १ पंडित वीर्य, दृष्टि १ समकित, भव्य १, दडक १ मनुष्य का पक्ष १ शुक्ल ।

१२ क्षीण मोहनीय गुण० मे—भाव चार (उपशम छोड कर), आत्मा ७ (कषाय छोड़ कर), लब्धि ५, वीर्य १ पडित वीर्य, दृष्टि १ समकित, भव्य १, दंडक १ मनुष्य का, पक्ष १ शुक्ल ।

१३ सयोगी केवली गुण० मे—भाव ३ (उदय, क्षायक, पारिसा-णिक), आत्मा ७ (कषाय छोड कर), लब्धि ५, वीर्य १ पडित वीर्य, दृष्टि १ समकित दृष्टि भव्य १, दडक १ मनुष्य का, पक्ष १ शुक्ल ।

१४ अयोगी केवली गुण० मे—भाव तीन ऊपर समान, आत्मा ६, (कषाय व योग छोड कर) लब्धि ५, वीर्य १ पडित वीर्य, दृष्टि १ समकित, भव्य १, दडक १ मनुष्य का, पक्ष १ शुक्ल ।
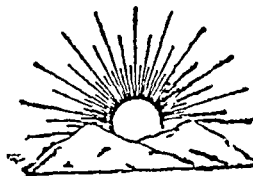
श्रोता अधिकार

श्रोता अधिकार श्री नन्दिसूत्र में है सो नीचे अनुसार

गाथा

सेल[१] घण, कुडग[२], चालणी[3], परिपुण्णग[४], हंस[५], महिस[६], मेसे[७], या भसग[८], जलूग[९], बिरालो[१०], जाहग[११], गो[१२], भेरि[१३], आभेरी[१४] सा ।१।

चौदह प्रकार के श्रोता होते है :—

१ शैलघन

जैसे पत्थर पर मेघ गिरे, परन्तु पत्थर मेघ (पानी) से भीजे नही। वैसे ही एकेक श्रोता व्याख्यानादिक सुने; परन्तु सम्यक् ज्ञान पावे नही, बुद्ध होवे नही।

दृष्टान्त—कुशिष्य रूपी पत्थर, सद्‌गुरु रूपी मेघ तथा बोध रूपी पानी मुंग शेलिआ तथा पुष्करावर्त मेघ का दृष्टान्त – जैसे पुष्करावर्त मेघ से मुंग शेलीआ पिघले नही वैसे ही एकेक कुशिष्य महान् संवेगादिक गुणयुक्त आचार्य के प्रतिबोधने पर भी समझे नही, वैराग्य रंग चढ़े नही, अतः ऐसे श्रोता छोड़ने योग्य है एवं अविनीत का दृष्टान्त जानना—

दूसरा प्रकार—काली भूमि के अन्दर जैसे मेघ बरसे तो वह भूमि अत्यन्त भीज जावे व पानी भी रक्खे तथा गोधूमादिक (गेहूं प्रमुख) की अत्यन्त निष्पत्ति करे वैसे ही विनीत सुशिष्य भी गुरु की उपदेश रूपी वाणी सुनकर हृदय मे धार रक्खे, वैराग्य से भीज जावे व अनेक अन्य भव्य जीवों को विनय धर्म के अन्दर प्रवर्तावे, अतः ये श्रोता आदरवा योग्य है।

२ कुम्भ

२ कुडग—कुम्भ का दृष्टान्त। कुम्भ के आठ भेद है, जिनमें प्रथम घड़ा सम्पूर्ण घड़ के गुणो द्वारा व्याप्त है। घड़े के तीन गुण— १ घडे के अन्दर पानी भरने से किंचित् बाहर जावे नहीं २ स्वय शीतल है अत. अन्य की भी तृषा शान्त करे—शीतल करे। ३ अन्य की मलीनता भी पानी से दूर करे।

ऐसे ही एकेक श्रोता विनयादिक गुणो से सम्पूर्ण भरे हुए है (तीन गुण सहित) १ गुर्वादिक का उपदेश सर्व धार कर रक्खे किंचित् भूले नही, २ स्वयं ज्ञान पाकर शीतल दशा को प्राप्त हुए है व अन्य भव्य जीव को त्रिविध ताप उपसमाकर शीतल करते है, ३ भव्य जीव की सन्देह रूपी मलीनता को दूर करे। ऐसे श्रोता आदरने योग्य है।

२ एक घड़ के पार्श्व भाग में काना (छेद युक्त) है इसमें पानी भरे तो आधा पानी रहे व आधा पानी बाहर निकल जावे। वैसे ही एकेक श्रोता व्याख्यानादि सुने तो आधा धार रक्खे व आधा भूल जावे।

३ एक घडा नीचे से काना है इसमे पानी भरने से सब पानी वह कर निकल जावे किंचित् भी उसमे रहे नही वैसे एकेक श्रोता व्याख्यानादि सुने तो सर्व भूल जावे, परन्तु धारे नही।

४ एक घडा नया है, इसमे पानी भरे तो थोडा २ सिर कर बह जावे व सारा घडा खाली हो जावे वैसे एकेक श्रोता ज्ञानादि अभ्यास करे परन्तु थोडा थोड़ा करके भूल जावे।

५ एक घडा दुर्गन्धवासित है इसमें पानी भरे तो वह पानी के गुण को बिगाडे वैसे एकेक श्रोता मिथ्यात्वादिक दुर्गन्ध से वासित है। सूत्रादिक पढने से यह ज्ञान के गुण को बिगाड़ते है। (नष्ट करते है)।

६ एक घड़ा सुगन्ध से वासित है इसमें यदि पानी भरे तो वह पानी के गुण को 'बढावे वैसे एकेक श्रोता समकितादिक सुगन्ध से वासित है व सूत्रादिक पढाने से यह ज्ञान के गुण को दिपाते है।

७ एक घड़ा कच्चा है इसमें पानी भरे तो वह पानी से भीज कर नष्ट हो जावे, वैसे एकेक श्रोता (अल्प बुद्धि वाले) को सूत्रादिक का ज्ञान देने से नय प्रमुख नही जानने से वह ज्ञान से व मार्ग से भ्रष्ट होवे।

८ एक घड़ा खाली है। इसके ऊपर ढक्कन ढाक कर वर्षा के समय नेवां के नीचे इसे पानी झेलने के लिये रक्खे अन्दर पानी आवे नही परन्तु पेंदे के नीचे अधिक पानी हो जाने से ऊपर तिरने (तेरने) लगे व पवनादि से भीत प्रमुख से टकरा कर फूट जावे वैसे एकेक श्रोता सद्गुरु की सभा में व्याख्यान सुनने को बैठे परन्तु ऊंघ प्रमुख के योग से ज्ञान रूपी पानी हृदय में आवे नही तथा अत्यन्त ऊघ के प्रभाव से खराब डाल रूप वायु से अथड़ावे (टक्कर खावे) जिससे सभा में अपमान प्रमुख पावे तथा ऊंघ में पड़ने से अपने शरीर को नुकसान पहुंचावे।

३ चालणी

चालणी एकेक श्रोता चालणी के समान है। इसके दो प्रकारः एक प्रकार ऐसा है कि चालणी जब पानी में रक्खे तो पानी से सम्पूर्ण भरी हुई दीखे परन्तु उठा कर देखे तो खाली दीखे वैसा एकेक श्रोता व्याख्यानादि सभा में सुनने को बैठे तो वैराग्यादि भावना से भरे हुवे दीखे परन्तु सभा से उठ कर बाहर जावे तो वैराग्य रूपी पानी किंचित् भी दीखे नही। ऐसे श्रोत छोड़ने योग्य है ।

दूसरा प्रकार—चालनी गेहूँ प्रमुख का आटा चालने से आटा तो निकल जाता है, परन्तु कंकर प्रमुख कचरा रह जाता है, वैसे एकेक

श्रोता व्याख्यानादि सुनते समय उपदेशक तथा सूत्र के गुण तो निकाल देवे परन्तु स्खलना प्रमुख अवगुण रूप कचरे को ग्रहण कर रक्खे। ऐसे श्रोता छोडने योग्य है।

४ परिपुणग

परिपुणग—सुघरी पक्षी के माला का दृष्टान्त। सुघरी पक्षी के माला से घी गालते समय घी घी निकल जावे, परन्तु चीटी प्रमुख कचरा रह जाता है, वैसे एकेक श्रोता आचार्य प्रमुख का गुण त्याग कर अवगुण को ग्रहण कर लेता है। ऐसे श्रोता छोड़ने योग्य है।

५ हंस

हंस—दूध पानी मिला कर पीने के लिये देने पर जैसे हस अपनी चोच से (खटाश के गुण के कारण) दूध दूध पीवे और पानी नही पीवे। वैसे विनीत श्रोता गुर्वादिक के गुण ग्रहण करे व अवगुण न ले, ऐसे श्रोता आदरणीय है।

६ महिष

महिष—भैसा जैसे पानी पीनेके लिये जलाशय मे जाये। पानी पीने के लिये जल मे प्रथम प्रवेश करे। पश्चात् मस्तक प्रमुख के द्वारा पानी ढोलने व मल-मूत्र करने के बाद स्वय पानी पीये, परन्तु शुद्ध जल स्वयं नही पीये, अन्य यूथ को भी पीने नही दे। वैसे कुशिष्य श्रोता व्याख्यानादि मे क्लेश रूप प्रश्नादि करके व्याख्यान डोहले, स्वय शान्तियुक्त सुने नही व अन्य सभाजनो को शान्ति से सुनाने देवे नही। ऐसे श्रोता छोडने योग्य है।

७ मेष

मेष—बकरा जैसे पानी पीने को जलाशय प्रमुख मे जाये तो किनारे पर ही पॉव नीचे नमा करके पानी पीवे, डोहले नही व अन्य

यूथ को भी निर्मल जल पीने दे । वैसे विनीत शिष्य व श्रोता व्याख्या-नादि नम्रता तथा शान्त रस से सुने, अन्य सभाजनों को सुनने दे। ऐसे श्रोता आदरणीय हैं।

८ मसग

मसग—इसके दो भेद : प्रथम मसग अर्थात् चमड़े की कोथली में जब हवा भरी हुई होती है, तब अत्यन्त फूली हुई दीखती है ; परन्तु तृषा समाये नहीं हवा निकल जाने पर खाली हो जाती है। वैसे एकेक श्रोता अभिमान रूप वायु के कारण ज्ञानीवत् तड़ाक मारे, परन्तु अपनी तथा अन्य की आत्मा को शान्ति पहुंचावे नहीं। ऐसे श्रोता छोड़ने योग्य हैं।

दूसरा प्रकार—मसग (मच्छर नामक जन्तु) अन्य को चटका मार कर परिताप उपजावे, परन्तु गुण नहीं करे वरन् नुकसान उत्पन्न करे। वैसे ऐकेक कुश्रोता गुर्वादिक को ज्ञान अभ्यास कराने के समय अत्यन्त परिश्रम देवे तथा कुवचन रूप चटका मारे ; परन्तु वैय्यावृत्य प्रमुख कुछ भी न करे और मन में असमाधि पैदा करे, यह छोड़ने योग्य है।

९ जोंक

जोंक—इसके भेद २ है। पहला जोक जन्तु गाय वगैरह के स्तन में लग जाये तब खून को पिये, दूध को नहीं पिये। इसी तरह कोई अविनयी कुशिष्य श्रोता आचार्यादिक के पास रहता हुआ उनके दोषों को देखे, परन्तु क्षमादिक गुणो को ग्रहण नही करे, यह भी त्यागने योग्य है।

दूसरे प्रकार का—जोक नामक जन्तु फोड़ा के ऊपर रखने पर उसमें चोट मार कर दुःख पैदा करता और बिगडे हुए खून को पीता है, बाद में शान्ति पैदा करता है। इसी तरह कोई विनीत

शिष्य श्रोता आचार्यादिक के साथ रहता हुआ पहले तो वचन रूप चोट को मारे। समय-असमय बहुत अभ्यास करता हुआ मेहनत करावे। पीछे सन्देह रूपी मैल को निकाल कर गुरुओ को शान्ति उपजावे। परदेशी राजा के समान यह ग्रहण करने योग्य है।

१० बिड़ाल

बिड़ाल—जैसे बिल्ली दूध के बर्तन को सीके से जमीन पर पटक कर उसमे मिली हुई धूल के साथ साथ दूध को पीती है, उसी तरह कोई श्रोता आचार्यादिक के पास से सूत्रादिक का अभ्यास करते हुए बहुत अविनय और दूसरे के पास जाकर प्रश्न पूछ कर सूत्रार्थ को धारण करे, परन्तु विनय के साथ धारण नही करे। इसलिये ऐसा श्रोता त्यागने योग्य है।

११ जाहग

जाहग—सहलो यह एक तिर्यञ्च की जाति विशेष का जीव है। यह पहले तो अपनी माता का दूध थोडा-थोडा पीता और फिर वह पच जाने पर और थोड़ा। इस तरह थोडे-थोडे दूध से अपना शरीर पुष्ट करता है, पीछे बडे भारी सर्प का मान भञ्जन करता है। इसी तरह कोई श्रोता आचार्यादिक के पास से अपनी बुद्धि माफिक समय समय पर थोडा-थोडा सूत्र अभ्यास करे और अभ्यास करते हुए गुरुओ को अत्यन्त संतोष पैदा करे, क्योकि अपना पाठ बराबर याद करता रहे और उसे याद करने पर फिर दूसरी बार और तीसरी बार इस तरह थोडा-२ लेकर पश्चात् बहुश्रुत होकर मिथ्यात्वी लोगो का मान मर्दन करे। यह आदरने योग्य है।

१२ गाय

गाय इसके दो प्रकार। प्रथम प्रकारः जैसे दूधवती गाय को एक सेठ किसी अपने पडोसी को सौप कर अन्य गाँव जाये। पडोसी घास,

पानी प्रमुख बराबर गाय को नही देवे, जिससे गाय भूख तृषा से पीडित होकर दूध में सूखने लग जाती है व दु:खी हो जाती है। वैसे ही एकेक श्रोता (अविनीत) आहार पानी प्रमुख वैयावच्च नही करने से गुर्वादिक का शरीर ग्लानि पावे व जिससे सूत्रादिक में घाटा पड़ने लग जाता है तथा अपयश के भागी होते है।

दूसरा प्रकार—एक सेठ पड़ोसी को दूधवती गाय सौप कर गॉव गया। पड़ोसी के घास पानी प्रमुख अच्छी तरह देने से दूध मे वृद्धि होने लगी तथा वह कीर्ति का भागी हुआ। वैसे एकेक विनीत श्रोता (शिष्य) गुर्वादिक की आहार पानी प्रमुख वैय्यावच्च विधिपूर्वक करके गुर्वादिक को साता उपजावे, जिससे ज्ञान में वृद्धि होवे व साथ-साथ उसको भी यश मिले। ऐसे श्रोता आदरने योग्य है।

१३ भेरी

भेरी—इसके दो प्रकार. प्रथम प्रकार—भेरी को बजाने वाला पुरुष यदि राजा की आज्ञानुसार भेरी बजावे तो राजा खुशी होकर उसे पुष्कल द्रव्य देवे वैसे ही विनीत शिष्य-श्रोता तीर्थकर तथा गुर्वादिक की आज्ञानुसार सूत्रादिक की स्वाध्याय तथा ध्यान प्रमुख अंगीकार करे तो कर्म रूप रोग दूर होवे और सिद्ध गति में अनन्त लक्ष्मी प्राप्त करे यह आदरने योग्य है।

दूसरा प्रकार भेरी बजाने वाला पुरुष यदि राजा की आज्ञानुसार भेरी नही बजावे तो राजा कोपायमान होकर द्रव्य देवे नही वैसे ही अविनीत शिष्य (श्रोता) तीर्थकर की तथा गुर्वादिक की आज्ञानुसार सूत्रादिक का स्वाध्याय तथा ध्यान करे नही तो उनका कर्म रूप रोग दूर होवे नही व सिद्ध गति का सुख प्राप्त करे नही यह छोड़ने योग्य है।

१४ आभीरी

आभीरी—प्रथम प्रकार : आभीर स्त्री-पुरुष एक ग्राम से पास के शहर मे गडवे मे घी भर कर बेचने को गये। वहां बाजार मे उतारते समय घी का भाजन-वर्तन फूट गया व जिससे घी ढुलक गया। पुरुष स्त्री को कुवचन कह कर उपालम्भ देने लगा, स्त्री भी पुन भर्ता के सामने कुवचन कहने लगी। इस बीच मे सब घी निकल कर जमीन पर बहने लगा व स्त्री पुरुष दोनो शोक करने लगे। जमीन पर गिरे हुए घी को पुनः पूछ कर ले लिया व बाजार मे बेच कर पैसे सोधे किये। पैसे लेकर सायकाल को गॉव जाते समय चोरो ने उन्हे लूट लिया। अत्यन्त निराश हुए, लोगो के पूछने पर सब वृत्तान्त कहा जिसे सुन कर लोगो ने उन्हे बहुत ही ठपका दिया। वैसे ही गुरु के द्वारा व्याख्यान मे दिये हुए उपदेश (सार घी) को लड़ाई झगडा करके ढोल दिया व अन्त मे क्लेश करके दुर्गति को प्राप्त करे यह श्रोता छोडने योग्य है।

दूसरा प्रकार—घी भर कर शहर मे जाते समय वर्तन उतारने पर फूट गया, फूटते ही दोनो स्त्री पुरुषो ने मिलकर पुन. भाजन मे घी भर लिया। बहुत नुकसान नही होने दिया। घी को बेचकर पैसे सीधे किये व अच्छा सग करके गांव मे सुख पूर्वक अन्य सुज्ञ पुरुषो के समान पहुँच गये, वैसे ही विनीत शिष्य (श्रोता) गुरु के पास से वाणी सुनकर व शुद्ध भाव पूर्वक तथा सूत्र अर्थ को धार कर रक्खे; सांचवे। अस्खलित करे, विस्मृति होवे तो गुरु के पास से पुन २ क्षमा मांग कर धारे, पूछे परन्तु क्लेश झगडा करे नही। गुरु उन पर प्रसन्न होवे, सयम ज्ञान की वृद्धि होवे, व अन्त मे सद्-गति पावे यह श्रोता आदरणीय है।

९८ बोल का अल्पबहुत्व

सूत्र श्री पन्नवणाजी पद-तीसरा

अनुक्रम	महादण्डक	जीव का भेद १४	गुणस्थानक १४	योग १५	उपयोग १२	लेश्या ६
१	गर्भज मनुष्य सबसे कम	२	१४	१५	१२	६
२	मनुष्याणी संख्यात गुणा	२	१४	१३	१२	६
३	बादर तेजस् काय पर्याप्त असंख्यात गुणा	१	१	१	३	३
४	पांच अनुत्तर विमान का देव असं० गुणा	२	१	११	६	१
५	ऊपर की त्रीक का देव संख्यात गुणा	२	२-३	११	९	१
६	मध्य त्रीक का देव संख्यात गुणा	२	२-३	११	९	१
७	नीचे की त्रीक का देव संख्यात गुणा	२	२-३	११	९	१
८	बारहवां देवलोक का देव संख्यात गुणा	२	४	११	९	१
९	११ वां देवलोक का देव सं० गुणा	२	४	११	९	१

१० दसवां देवलोक का देव सं० गुणा	२	४	११	९	१
११ नववां देवलोक का देव सं० गुणा	२	४	११	९	१
१२ सातवी नरक का नेरिया असं० गुणा	२	४	११	९	१
१३ छठ्ठी नरक का नेरिया अस० गुणा	२	४	११	९	१
१४ आठवां देवलोक का देव असं० गुणा	२	४	११	९	१
१५ सातवां देवलोक का देव असं० गुणा	२	४	११	९	१
१६ पाचवी नरक का नेरिया असं० गुणा	२	४	११	९	१
१७ छठ्ठा देवलोक का देव असं० गुणा	२	४	११	९	१
१८ चौथी नरक का नेरिया अस० गुणा	२	४	११	९	१
१९ पांचवां देवलोक का देव अस० गुणा	२	४	११	९	१
२० तीसरी नरक का नेरिया अस० गुणा	२	४	११	९	१
२१ चौथा देवलोक का देव असं० गुणा	२	४	११	९	१

२२ तीसरा देवलोक का देव असं० गुणा	२	४	११	६	१
२३ दूसरी नरक का नेरिया असं० गुणा	२	४	११	६	१
२४ संमूर्छिम मनुष्य अशाश्वत असं० गुणा	१	१	३	४	३
२५ दूसरे देवलोक का देव असं० गुणा	२	४	११	६	१
२६ दूसरे देवलोक की देविये संख्यात गुणी	२	४	११	६	१
२७ पहले देवलोक का देव सं० गुणा	२	४	११	६	१
२८ पहले देवलोक की देविये सं० गुणी	२	४	११	६	१
२९ भवनपति का देव असं० गुणा	२	४	११	६	१
३० भवनपति की देवी सं० गुणा	२	४	११	६	१
३१ पहली नरक का नेरिया असं० गुणा	३	४	११	६	१
३२ खेचर पुरुष तिर्यञ्च योनि असं० गुणा	२	५	१३	६	६
३३ खेचर की स्त्री सं० गुणा	२	५	१३	६	६
३४ स्थलचर पुरुष सं० गुणा	२	५	१३	६	६

३५ स्थलचर की स्त्री स० गुणी	२	५	१३	६	६
३६ जलचर पुरुष स० गुणा	२	५	१३	६	६
३७ जलचर की स्त्री स० गुणी	२	५	१३	६	६
३८ वाणव्यन्तर का देव सख्यात गुण	३	४	११	६	४
३९ वाण व्यन्तर की देवी स० गुणी	२	४	११	६	४
४० ज्योतिषी का देव स० गुणा	२	४	११	६	४
४१ ज्योतिषी की देवी सं० गुणी	२	४	११	६	४
४२ खेचर नपुंसक तिर्यंच योनि स० गु०	२-४	५	१३	६	६
४३ स्थल चर नपुंसक स० गुणा	२-४	५	१३	६	६
४४ जलचर नपुंसक स० गुणा	२-४	५	१३	६	६
४५ चौरिन्द्रिय पर्याप्त स० गुणा	१	१	२	४	३
४६ पचेन्द्रिय पर्याप्त विशेषाधिक	२	१२	१४	१०	३
४७ बेइन्द्रिय पर्याप्त विशेषाधिक	१	१	२	३	३

४८ त्रिइन्द्रिय पर्याप्त विशेषाधिक	१	१	२	३	३
४९ पचेन्द्रिय अप० असं० गुणा	२	३	५	८-९	६
५० चौरिन्द्रिय अप० विशेषाधिक	१	२	३	५	३
५१ त्रिइन्द्रिय अप० विशेषाधिक	१	२	३	५	३
५२ बेइन्द्रिय अप० विशेषाधिक	१	२	३	५	३
५३ प्रत्येक शरीरी बा० वन० प० असं० गु०	१	१	१	३	३
५४ बादर निगोद प० का श० अस० गु०	१	१	१	३	३
५५ बादर पृथ्वी काय पर्याप्त अस० गु०	१	१	१	३	३
५६ बादर अप काय पर्याप्त असं० गुणा	१	१	१	३	३
५७ बादर वायु काय पर्याप्त असं० गुणा	१	१	४	३	३
५८ बादर तेजस काय अपर्याप्त अस० गुणा	१	१	३	३	३
५९ प्रत्येक शरीरी बादर वनस्पति काय अ० अ० गुणा	१	१	३	३	४
६० बादर निगोद अपर्याप्त का शरीर असं० गुणा	१	१	३	३	३

६१ बादर पृथ्वी काय अप॰ असं॰ गुणा	१	१	३	२	४
६२ बादर अप काय अप॰ अस॰ गुणा	१	१	२	३	४
६३ बादर वायु काय अप॰ असं॰ गुणा	१	१	३	३	३
६४ सूक्ष्म तेजस्काय अप॰ अस॰ गुणा	१	१	३	३	३
६५ सूक्ष्म पृथ्वी काय अप॰ विशेषाधिक	१	१	३	३	३
६६ सूक्ष्म अप काय अप॰ विशेषाधिक	१	१	३	३	३
६७ सूक्ष्म वायु काय अप॰ विशेषाधिक	१	१	३	३	३
६८ सूक्ष्म तेजस्काय पर्याप्त स॰ गुणा	१	१	१	३	३
६९ सूक्ष्म पृथ्वी काय पर्याप्त विशेषाधिक	१	१	१	३	३
७० सूक्ष्म अप काय पर्याप्त विशेषाधिक	१	१	१	३	३
७१ सूक्ष्म वायु काय पर्याप्त विशेषाधिक	१	१	१	३	३
७२ सूक्ष्म निगोद अपर्याप्त का शरीर असं॰ गुणा	१	१	१	३	३
७३ सूक्ष्म निगोद पर्याप्त का शरीर स॰ गुणा	१	१	१	३	३

७४ अभव्य जीव अनन्त गुणा	१४	१	१३	६	६
७५ सम्यक् दृष्टि प्रतिपाति अनन्त गुणा	१४	१४	१५	१२	६
७६ सिद्ध अनन्त गुणा	०	०	०	२	०
७७ बादर वनस्पति काय पर्याप्त अनन्त गुणा	१	१	१	३	३
७८ बादर जीव पर्याप्त विशेषाधिक	६	१४	१४	१२	६
७९ बादर वनस्पति काय अप० अस० गुणा	१	१	३	३	[illegible]
८० बादर जीव अपर्याप्त विशेषाधिक	६	३	५	८-६	६
८१ समुच्चय बादर जीव विशेषाधिक	१२	१४	१५	१२	६
८२ सूक्ष्म वनस्पति काय अपर्याप्त असं० गु०	१	१	३	३	३
८३ सूक्ष्म जीव अपर्याप्त विशेषाधिक	१	१	३	३	३
८४ सूक्ष्म वनस्पति काय पर्याप्त स० गुणा	१	१	३	३	३
८५ सूक्ष्म जीव पर्याप्त विशेषाधिक	१	१	३	३	२
८६ समुच्चय सूक्ष्म जीव विशेषाधिक	२	१	३	३	३
८७ भव्य सिद्ध जीव विशेषाधिक	१४	१४	१५	१२	६

८८ निगोदके जीव विशेषा०	४	१	३	३	३
८९ समुच्चय वनस्पति काय के जीव विशेषाधिक	४	१	३	३	३
९० एकेन्द्रिय जीव विशेषा०	४	१	३	३	३
९१ तिर्यच योनी का जीव विशेषाधिक	१४	५	१३	३	३
९२ मिथ्यात्व दृष्टि जीव विशेषाधिक	१४	१	१३	९	६
९३ अव्रती जीव विशेषा०	१४	४	१३	९	६
९४ सकषायी जीव विशेषा०	१४	१०	१५	१०	६
९५ छद्मस्थ जीव विशेषा०	१४	१२	१५	१०	६
९६ सयोगी जीव विशेषा०	१४	१३	१५	१२	६
९७ ससारस्थ जीव विशेषा०	१४	१३	१५	१२	६
९८ सर्व जीव विशेषाधिक	१४	१४	१५	१२	६

पुद्गल परावर्त

भगवती सूत्र के १२ वे शतक के चौथे उद्देशे में पुद्गल परावर्त का विचार है सो नीचे अनुसार

गाथा :—नाम१; गुण; सख्ख३; त्ति ठाणं४; कालं५; कालोवमं च६; काल अप्प बहु७; पुग्गल मझ पुग्गलं८; पुग्गल करणं अप्पबहु९।

पुद्गल परावर्त समझाने के लिये नव द्वार कहते हैं।

१ नाम द्वार

१ औदारिक पुद्गल परावर्त, २ वैक्रिय पुद्गल परावर्त, ३ तेजस् पुद्गल परावर्त, ४ कार्मण पुद्गल परावर्त, ५ मन पुद्गल परावर्त ६ वचन पु० परावर्त, ७ श्वासोश्वास पु० परावर्त।

२ गुण द्वार

पुद्गल परावर्त किसे कहते है ? इसके कितने प्रकार होते है ? इसे किस तरह समझना आदि सहज प्रश्न शिष्य के द्वारा पूछे जाते है। तब गुरु उसका उत्तर देते है :—

इस संसार के अन्दर जितने पुद्गल हैं, उन सबो को जीव ने ले-लेकर छोडे है। छोड़ कर पुनः पुनः फिर ग्रहण किये है। पुद्गल परावर्त शब्द का यह अर्थ है कि पुद्गल-सूक्ष्म रजकण से लगाकर स्थूल से स्थूल जो पुद्गल है, उन सबों के अन्दर जीव परावर्त समग्र प्रकार से फिर चुका है, सब में भ्रमण कर चुका है।

औदारिकपने (औदारिक शरीर रह कर औदारिक योग्य जो पु०

ग्रहण करते है)। वैक्रियपने (वैक्रिय शरीर में रह कर वैक्रिय योग्य पु० ग्रहण करे)। तेजस् आदि ऊपर कहे हुए सात प्रकार से पु० जीव ने ग्रहण किये है व छोड़े है, ये भी सूक्ष्मपने और बादरपने लिये है और छोड़े है। द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से व भाव से एव चार तरह से जीव ने पु० परावर्त किये है।

इसका विवरण (खुलासा) नीचे अनुसार :—

पु० परावर्त के दो भेद :—१ बादर २ सूक्ष्म। ये द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से व भाव से।

१ द्रव्य से बादर पु० परावर्त :—लोक के समस्त पु० पूरे किये, परन्तु अनुक्रम से नही। याने औदारिकपने पु० पूरे किये बिना पहले वैक्रियपने लेवे व तेजस् पने लेवे। कोई भी पु० परावर्त पने बीच में लेकर पुन. औदारिक पने के लिये हुए पु० पूरे करे एव सात ही प्रकार से बिना अनुक्रम के समस्त लोक के सव पु० को पूरे करे इसे बादर पु० परावर्त कहते है।

२ द्रव्य से सूक्ष्म पु० परावर्त —लोक के सब पुद्गलो को औदारिक पने पूर्ण करे। फिर वैक्रिय पने, तेजस् पने एव एक के बाद एक अनुक्रम पूर्वक सात ही पु० परावर्त पने पूर्ण करे, उसे सूक्ष्म पु० परावर्त कहते है।

३ क्षेत्र से बादर पु० परावर्त :—चौदह राजलोक के जितने आकाश प्रदेश है, उन सब आकाश प्रदेश को प्रत्येक देश मे मर-मर कर अनुक्रम बिना तथा किसी भी प्रकार से पूर्ण करे।

४ क्षेत्र से सूक्ष्म पु० परावर्त :—राजलोक के आकाश प्रदेश को अनुक्रम से एक के बाद एक १, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९, १० एवं प्रत्येक प्रदेश मे मर कर पूर्ण करे उनमें पहले प्रदेश मे मर कर तीसरे प्रदेश मे मरे अथवा पाँचवे आठवें किसी भी प्रदेश मे मरे तो पु० परावर्त

करना नही गिना जाता है। अनुक्रम से प्रत्येक प्रदेश मे मर कर समस्त लोक पूर्ण करे।

५ काल से बादर पु० परावर्त :—एक कालचक्र (जिसमे उत्सर्पिणी व अवसर्पिणी सम्मिलित है) के प्रथम समय मे मरे पश्चात् दूसरे काल चक्र के दूसरे समय मे मरे अथवा तीसरे समय मे मरे एव तीसरे कालचक्र के किसी भी समय मे मरे अर्थात एक काल चक्र के जितने समय होवे उतने काल चक्र के एक २ समय मर कर एक काल चक्र पूर्ण करे।

६ काल से सूक्ष्म पु० परावर्त :—काल चक्र के प्रथम समय मे मरे अथवा दूसरे काल चक्र के दूसरे समय मे मरे, तीसरे काल चक्र के तीसरे समय में मरे, चौथे काल चक्र के चौथे समय मे मरे, बीच में नियम के बिना किसी भी समय में मरे (यह हिसाब मे नही गिना जाता) एवं काल चक्र के जितने समय होवे उतने काल चक्र के अनुक्रम से नियमित समय में मरे।

७ भाव से बादर पु० परावर्त :—जीव के असख्यात परिणाम होते है, जिनमें प्रथम परिणाम पर मरे। पश्चात् ३, २, ५, ४, ७, ६ एवं अनुक्रम के बिना प्रत्येक परिणाम पर मरे व मर कर असं० परिणाम पूर्ण करे।

८ भाव से सूक्ष्म पु० परावर्त :—जीव के असं० परिणाम होते है उनमें से प्रथम परिणाम पर मरे। पश्चात् बीच में कितना ही समय जाने बाद दूसरे परिणाम पर व अनुक्रम से तीसरे परिणामे, चौथे परिणामें व असंख्य परिणाम पर मर कर पूर्ण करे।

३ त्रिसंख्या द्वार

१ पुद्गल परावर्त :—सर्व जीवो ने कितने किये। २ एक वचन से एक जीव ने २४ दण्डक में कितने पु० परावर्त किये। ३ बहुवचन से सर्व जीवों ने २४ दण्डक में कितने पु० परावर्त किये।

१ सर्व जीवो ने—औदारिक पु० परावर्त, वैक्रिय पुद्गल परावर्त, तेजस् पु० परावर्त आदि ये सातो पु० परावर्त अनन्त अनन्त वार किये ७।

२ एक वचन से—एक जीव ने, एक नरक के जीव ने औदारिक पु०-परावर्त, वैक्रिय पु० परावर्त आदि सातो पु० परावर्त गत काल में अनन्त-अनन्त वार किये। भविष्य काल में कोई पु० परावर्त नही करेगे (जो मोक्ष मे जावेगे वह) कोई करेगे वे जघन्य १,२,३, पु० परावर्त करेगे उत्कृष्ट अनन्त करेगे एवं भवनपति आदि २४ दण्डक के एक १ जीव ने सात पु० परावर्त गत काल मे अनन्त किये, कितने भविष्य, काल मे (मोक्ष जाने से) करेगे नही, जो करेगे वो १, २, ३ उत्कृष्ट करेगे सात पु० परावर्त २४ दण्डक के साथ गिनने से १६८ (प्रश्न) हुए।

३ बहु वचन से—सर्व जीवो ने, नरक के सर्व जीवो ने पूर्व काल मे औदारिक पु० परावर्त आदि सातो पु० परावर्त अनन्त अनन्त किये। भविष्य काल में अनेक जीव अनन्त करेगे। इसी प्रकार २४ दण्डक के वहुत से जीवो ने ये अनन्त पु० परावर्त किये व भविष्य काल मे करेगे इनके भी १६८ (प्रश्न) होते है।

७+१६८+१६८=३४३ (प्रश्न) होते है।

४ त्रिस्थानक द्वार

१ जीव ने किस २ स्थान पर कौन २ से पु० परावर्त किये, कौन २ से पु० परावर्त करेगे। बहुत जीवो ने किस २ स्थान पर पु० परावर्त किये व करेगे। सर्व जीवो ने किस २ दण्डक मे कौन २ से पु० परावर्त किये।

एक वचन से—एक जीव ने नरकपने औदारिक पु० परा० किये नही, करेगा नही। वैक्रिय पु० परा० किये है व करेगा। करेगा तो जघन्य १, २, ३, उत्कृष्ट अनन्त करेगा। इसी प्रकार तेजस् पु० परा० कार्मण पु० परा० यावत् श्वासोश्वास पुद्गल परा० किये

है व आगे करेंगे ऊपर अनुसार । इसी प्रकार असुरकुमारपने, पृथ्वीपने यावत् वैमानिकपने पूर्व काल में औदारिक पु० परा०, वैक्रिय पु० परा० यावत् श्वासोश्वास पु० परा० किये है व करेंगे। (ध्यान में रखना चाहिये कि जिस दण्डक में जो २ पु० परा० होवे वह करे और न होवे उन्हें न करे)। एक नेरिया जीव २४ दण्डक में रह कर सात सात (होवे तो हां और न होवे तो नही) पु० परा० किये एवं २४×७=१६८ हुए एवं २४ दण्डक का जीव २४ दण्डक में रह कर सात सात पु० परा० करे। अत: १६८×२४=४०३२ प्रश्न पु० परा० के होते है।

बहु वचन से—सर्व जीवों ने नेरिये पने औदारिक पुद्गल परा० किये नही, करेंगे नही। वैक्रिय पु० परा० यावत् श्वासोश्वास पु० परा० किये और करेंगे। इसी प्रकार असुरकुमारपने, पृथ्वी पने यावत् वैमानिकपने जो २ घटे वे, वे (पुद्गल परा०) किये व करेंगे एवं २४ दण्डक में बहुत से जीवों ने पु० परा० सात सात किये। पूर्व अनुसार इसके भी ४०३२ प्रश्न होते है।

३ किस २ दण्डक में पुद्गल परावर्त किये :—सर्व जीवों ने पांच एकेन्द्रिय, तीन विकलेन्द्रिय, तिर्यच पंचेन्द्रिय व मनुष्य इन दश दण्डक में औदारिक पु० परावर्त अनन्त अनन्त वार किये। १ नेरिये, १० भवनपति, १२ वायु काय, १३ संज्ञी तिर्यञ्च पचेन्द्रिय पर्याप्त, १४ संज्ञी मनुष्य पर्याप्त, १५ वाण व्यन्तर, १६ ज्योतिषी, १७ वैमानिक। इन १७ दण्डक में सर्व जीवो ने वैक्रिय पु० परावर्त अनन्त वार किये। २४ दण्डक में तेजस पु० परावर्त, कार्मण पु० परावर्त सर्व जीवों ने अनन्त अनन्त वार किये। १४ नेरिया व देवता का दण्डक १५ संज्ञी तिर्यञ्च पचेन्द्रिय, १६ संज्ञी मनुष्य एवं १६ दण्डक में सर्व जीवों ने मन पु० परावर्त अनन्त अनन्त वार किये।

पाँच एकेन्द्रिय को छोडकर १९ दण्डक में सर्व जीवों ने वचन पु०

परावर्त अनन्त किये एव १३४ प्रश्न होते है। तीनो ही स्थानक मे ८१६८ प्रश्न होते है।

५ काल द्वार

अनन्त उत्सर्पिणी अनन्त अवसर्पिणी व्यतीत होवे तब जाकर कही एक औदारिक पु० परावर्त होता है। इसी प्रकार वैक्रिय पु० परावर्त इतना ही समय जाने बाद होता है। सात पु० परावर्त मे अनन्त अनन्त काल चक्र व्यतीत हो जाते हैं।

६ काल ओपमा द्वार

काल समझाने के लिये एक दृष्टान्त दिया जाता है। परमाणु यह सूक्ष्म से सूक्ष्म रजकण, यह अतीन्द्रिय (इन्द्रिय से अगम्य) होता है कि जिसका भाग व हिस्सा किसी भी शस्त्र से किंवा किसी भी प्रकार से हो सकता नही। अत्यन्त बारीक सूक्ष्म से सूक्ष्म रजकरण को परमाणु कहते है। इस प्रकार के अनन्त सूक्ष्म परमाणु से एक व्यवहार परमाणु होता है। २ अनन्त व्यवहार परमाणु से एक ऊष्ण स्निग्ध परमाणु होता है। ३ अनन्त ऊष्ण स्निग्ध परमाणु से एक शीत स्निग्ध परमाणु होता है। ४ आठ शीत स्निग्ध परमाणु से एक ऊर्ध्व रेणु होता है। ५ आठ ऊर्ध्व रेणु से एक त्रस रेणु। ६ आठ त्रस रेणु से एक रथ रेणु। ७ आठ रथ रेणु से देव-उत्तर कुरु के मनुष्यो का एक बालाग्र। ८ देव कुरु उत्तर कुरु के मनुष्यो के आठ बालाग्रो से हरि-रम्यक वर्ष के मनुष्यो का एक बालाग्र। ९ इनके आठ बालाग्र से हेमवय हिरण्य वय मनुष्यो का एक बालाग्र। १० इन आठ बालाग्र से पूर्व विदेह व पश्चिम विदेह मनुष्यो का एक बा०। ११ इन बा० से भरत ऐरावत के मनुष्यों का एक बा०। १२ इन आठ बा० से एक लीख। १३ आठ लीख की एक जूँ, १४ आठ जूँ का एक अर्ध जव, १५ आठ अर्ध जब का एक उत्सेध अगुल, १६ छः उत्सेध अगुलो का एक पैर का पहोल पना (चौडाई) १७ दो पैर के पहोल पने का एक वेत, १८ दो

वेत का एक हाथ, दो हाथ एक कुक्षि, १९ दो कुक्षि एक धनुष्य, २० दो हजार धनुष्य का एक गाउ (कोस), २१ चार गाउ का एक योजन। कल्पना करो कि ऐसा एक योजन का लम्बा, चौडा व गहरा कुवा हो, उसमें देव-उत्तर कुरु मनुष्यो के बाल—एक २ बाल के असंख्य खण्ड करे। बाल के इन असंख्य खण्डो से तल से लगा कर ऊपर तक ठूंस-ठूंस कर वह कुवा भरा जावे कि जिसके ऊपर से चक्रवर्ती का लश्कर चला जावे, परन्तु एक बाल नमे नही। नदी का प्रवाह (गंगा और सिन्धु नदी का) उस पर बह कर चला जावे, परन्तु अन्दर पानी भिदा सके नही। अग्नि भी यदि लग जावे तो वह अन्दर प्रवेश कर सके नही। ऐसे कुवे के अन्दर से सौ-सौ वर्ष[1] के बाद एक बाल-खण्ड निकाले एव सौ-सौ वर्ष के बाद एक २ खण्ड निकालने से जब कुवा खाली हो जावे उतने समय को शास्त्रकार एक पल्योपम कहते है। ऐसे दश क्रोडा-क्रोड़ पल्योपम का एक सागर होता है। २० क्रोड़ा-क्रोड सागरों का एक काल चक्र होता है।

७ काल अल्पबहुत्व द्वार

१ अनन्त काल चक्र जावे तब एक कार्मण पुद्‌गल परावर्त होवे। २ अनन्त कार्मण पु० परावर्त जावे तब तेजस् पुद्‌गल परावर्त होवे। ३ अनन्त तेजस् पु० परावर्त जावे तब एक औदारिक पु० परावर्त होवे। ४ अनन्त औदारिक पु० परावर्त जावे तब एक श्वासोश्वास पु० परावर्त होवे। ५ अनन्त श्वा० पु० परा० जावे तब एक मन पु०

---

१ असख्य समय की एक आवलिका, सख्यात आवलिका का एक श्वास, संख्यात समय का एक निश्वास दो मिलकर एक प्राण, सात प्राण का एक स्तोक (अल्प समय), सात स्तोक का एक लव (दो काष्टा का माप), ७७ लव का एक मुहूर्त, तीस मुहूर्त एक अहोरात्रि, १५ अहोरात्रि का एक पक्ष, दो पक्ष एक माह, बारह माह एक वर्ष।

परा० होवे। ६ अनन्त मन पु० परा० जावे तब एक वचन पु० परा० होवे। अनन्त वचन पु० परा० जावे तब एक वैक्रिय पु० परावर्त होवे।

८ पुद्‌गल मध्य पुद्‌गल परावर्त द्वार

१ एक कार्मण पु० परा० मे अनन्त काल चक्र जावे। २ एक तेजस पु० परा० अनन्त कार्मण पु० परा० जावे। ३ एक औदा० पु० परा० अनन्त तेजस् पु० परा० जावे। ४ एक श्वा० पु० परा० मे अनन्त औदारिक पु० परा० जावे। ५ एक मन पु० परा० में अनन्त श्वा० पु० परा० जावे। ६ एक वचन पु० परा० मे अनन्त मन पु० परावर्त जावे। ७ वैक्रिय पु० परावर्त में अनन्त वचन पुद्‌गल परावर्त जावे।

९ पुद्‌गल परावर्त किये उनका अल्पबहुत्व

१ सर्व जीवो ने सर्व से अल्प वैक्रिय पु० परावर्त किये। २ इससे वचन पु० परावर्त अनन्त गुणे अधिक किये। ३ इससे मन पु० परा० अनन्त गुणे अधिक किये। ४ इससे श्वासो० पु० परा० अनन्त गुणे अधिक किये। ५ इससे औदारिक पु० परावर्त अनन्त गुणे अधिक किये। ६ इससे तेजस् पु० परा० अनन्त गुणे अधिक किये। ७ इससे कार्मण पु० परावर्त अनन्त गुणे अधिक किये।

जीवों की मार्गणा के ५६३ प्रश्न

किस-किस स्थान पर मिलते हैं

अनुक्रम	उसकी मार्गणा के प्रश्न	नरक के १४ भेद	तिर्यञ्च के ४८ भेद	मनुष्य के ३०३ भेद	देवता के १९८ भेद
१	अधोलोक में केवली में जीव के भेद	०	०	१	०
२	निश्चय एकावतारी में	०	०	०	२
३	तेजोलेशी एकेन्द्रिय में	०	३	०	०
४	पृथ्वी काय में	०	४	०	०
५	मिश्र दृष्टि तिर्यञ्च में	०	५	०	०
६	ऊर्ध्व लोक देवी में	०	०	०	६
७	नरक के पर्याप्त मे	७	०	०	०
८	दो योग वाले तिर्यञ्च में	०	८	०	०
९	ऊर्ध्व लोक में नौ गर्भज तेजो लेश्या मे	०	३	०	६
१०	एकान्त सम्यक् दृष्टि में	०	०	०	१०
११	वचन योगी चक्षु इन्द्रिय तिर्यञ्च मे	०	११	०	०
१२	अधो लोक के गर्भज मे	०	१०	२	०
१३	वचन योगी तिर्यंच में	०	१३	०	०

१४ अधो लोक वचन योगी औदारिक शरीर मे	०	१३	१	०
१५ केवली मे	०	०	१५	०
१६ उर्ध्व लोक पचेन्द्रिय तेजो लेश्या मे	०	१०	०	६
१७ सम्यक् दृष्टि घ्राणेन्द्रिय तिर्यञ्च मे	०	१७	०	०
१८ सम्यक् दृष्टि तिर्यञ्च मे	०	१८	०	०
१९ उर्ध्व लोक तेजो लेश्या मे	०	१३	०	६
२० मिश्र दृष्टि गर्भज मे	०	५	१५	०
२१ औदारिक शरीर मे से वैक्रिय करने वाले में	०	६	१५	०
२२ एकेन्द्रिय जीवो मे	०	२२	०	०
२३ अधोलोक के मिश्र दृष्टि में	७	५	१	१०
२४ घ्राणेन्द्रिय तिर्यञ्च में	०	२४	०	०
२५ अधोलोक के वचन योगी देवो मे	०	०	०	२५
२६ त्रस तिर्यच मे	०	२६	०	०
२७ शुक्ल लेशी मिश्र दृष्टि मे	०	५	१५	७
२८ तिर्यञ्च एक सहनन वाले मे	०	२८	०	०
२९ अधालोक त्रस औदारिक मे	०	२६	३	०
३० एकान्त मिथ्यात्वी तिर्यञ्च मे	०	३०	०	०
३१ अधोलोक पुरुष वेद भाषक मे	०	५	१	२५
३२ पद्म लेशी मिश्र दृष्टि मे	०	५	१५	१२
३३ पद्म लेशी वचन योगी में	०	५	१५	१३
३४ उर्ध्व लोक मे एकान्त मिथ्या०मे	०	२८	०	६
३५ अवधि दर्शन औदा० शरीर मे	०	५	३०	०
३६ उर्ध्वलोक एकात नपुंसक में	०	३६	०	०

३७ अधोलोक पचेन्द्रिय ,,	१४	२०	३	०
३८ ,, मन योगी में	७	५	१	२५
३९ ,, एकांत असज्ञी में	०	३८	१	०
४० औदारिक शुक्ल लेशी में	०	१०	३०	०
४१ शुक्ल लेशी सम्यक् दृष्टि अभाषक में	०	५	१५	२१
४२ शुक्ल लेशी वचन योगी में	०	५	१५	२२
४३ उर्ध्व लोक मन योगी में	०	५	०	३८
४४ शुक्ललेशी देवताओं में	०	०	०	४४
४५ कर्म भूमि मनुष्यो में	०	०	४५	०
४६ अधोलोक के वचन योगी में	७	१३	१	२५
४७ शुक्ललेशी उर्ध्वलोक में अवधि ज्ञानी	०	५	०	४२
४८ अधोलोक मे त्रस अभाषक	७	१३	३	२५
४९ उर्ध्वलोक शुक्ललेशी अवधि दर्शनी	०	५	०	४४
५० ज्योतिषी की आगति में	०	५	४५	०
५१ अधोलोक में औदा० शरीर में	०	४८	३	०
५२ उर्ध्वलोक शुक्ललेशी सम्यक् दृष्टि	०	१०	०	४२
५३ अधोलोक के एकान्त नपुंसक वेद में	१४	३३	१	०
५४ ऊर्ध्वलोक शुक्ल लेशी में	०	१०	०	४४
५५ अधोलोक बादर नपुंसक में	१४	३८	३	०
५६ तिर्यक् लोक मिश्र दृष्टि में	०	५	१५	३६
५७ अधोलोक पर्याप्त में	७	२४	१	२५
५८ अधोलोक अपर्याप्त में	७	२४	२	२५

५९ कृष्ण लेशी मिश्र दृष्टि में	३	५	१५	३६
६० अकर्मभूमि सज्ञी मे	०	०	६०	०
६१ ऊर्ध्वलोक अनाहारिक मे	०	२३	०	३८
६२ अधो० एकांत मिथ्यात्वी मे	१	३०	१	३०
६३ ऊर्ध्वलोक तथा अधो० देव (मरने वालो) में	०	०	०	६३
६४ पद्म लेशी सम्यक् दृष्टि में	०	१०	३०	२४
६५ अधो० तेजो लेशी मे	०	१३	२	५०
६६ पद्म लेशी मे	०	१०	३०	२६
६७ मिश्र दृष्टि देवता मे	०	०	०	६७
६८ तेजो लेशी मिश्र दृष्टि मे	०	५	१५	४८
६९ उर्ध्व लोक बादर शाश्वत मे	०	३१	०	३८
७० अधोलोक अभाषक में	७	३५	३	२५
७१ अधोलोक अवधि दर्शन में	४	५	२	५०
७२ तिर्यक् लोक के देवताओ में	०	०	०	७२
७३ अधो के बादर मरने वालो में	७	३८	३	२५
७४ मिश्र दृष्टि नो गर्भज में	७	०	०	६७
७५ उर्ध्व. में अवधि ज्ञान मे	०	५	०	७०
७६ उर्ध्व में देवताओ में	०	०	०	७६
७७ अधो. मे चक्षु इन्द्रिय नो गर्भज	१४	१२	१	५०
७८ उर्ध्व. मे नो गर्भज सम्यक् दृष्टि मे	०	८	०	७०
७९ उर्ध्व मे शाश्वत मे	०	४१	०	३८
८० धातकी खण्ड मे त्रस मे	०	२६	५४	०

८१ सम्यक् दृष्टि देवताओं के पर्याप्त में	०	०	०	८१
८२ शुक्ल लेशी सम्यक् दृष्टि में	०	१०	३०	४२
८३ अधो. में मरने वालों में	७	४८	३	२५
८४ शुक्ल लेशी जीवों में	०	१०	३०	४४
८५ अधो. कृष्ण लेशी त्रस में	६	२६	३	५०
८६ उर्ध्व पुरुष वेद में	०	१०	०	७६
८७ उर्ध्व घ्राणेन्द्रिय सम्यक् दृष्टि में	०	१७	०	७०
८८ उर्ध्व. सम्यक् दृष्टि में	०	१८	०	७०
८९ अधो. चक्षु इन्द्रिय में	१४	२२	३	५०
९० मनुष्य सम्यग् दृष्टि में	०	०	९०	०
९१ अधो में घ्राणे० में	१४	२४	३	५०
९२ उर्ध्व. त्रस मिथ्यात्वी में	०	२६	०	६६
९३ अधोलोक त्रस में	१४	२६	३	५०
९४ देवता मिथ्यात्वी पर्याप्त में	०	०	०	९४
९५ नो गर्भज अभाषक सम्यग् दृष्टि में	६	८	०	८१
९६ उर्ध्वलोक पचेन्द्रिय में	०	२०	०	७६
९७ अधोलोक कृष्ण लेशी वादर में	६	३८	३	५०
९८ धातकी खण्ड में प्रत्येक श० में	०	४४	५४	०
९९ वचन योगी देवताओ में	०	०	०	९९
१०० उर्ध्व लोक प्रत्येक शरीर बादर मिथ्यात्वी में	०	३४	०	६६
१०१ वचन योगी मनुष्यों में	०	०	१०१	०
१०२ उर्ध्व लोक त्रस में	०	२६	०	७६
१०३ अधो लोक नो गर्भज में	१४	१८	१	५०
१०४ एकान्त मिथ्यात्व शाश्वत में	०	३०	५६	१८

१०५ अधो लोक बादर मे	१४	३८	३	५६
१०६ मन योगी गर्भज मे	०	५	१०१	०
१०७ अधो. कृष्ण लेशी मे	६	४८	३	५०
१०८ औदारिक शरीर सम्यग् दृष्टि मे	०	१८	६०	०
१०९ कृष्ण लेशी वैक्रिय शरीर नो गर्भज मे	६	१	०	१०२
११० उर्ध्व. बादर प्रत्येक शरीर मे	०	३४	०	७६
१११ अधो. प्रत्येक शरीर मे	१४	४४	३	५०
११२ उर्ध्व मिथ्यात्वी मे	०	४६	०	६६
११३ वचन योगी घ्राणेन्द्रिय औदारिक मे	०	१२	१०१	०
११४ औदारिक वचन योगी मे	०	१३	१०१	०
११५ अधोलोक मे	१४	४८	३	५०
११६ मनुष्य अपर्याप्त मरने वालो मे	०	०	११६	०
११७ क्रियावादी समोसरण अमर मे	६	०	३०	८१
११८ उर्ध्व प्रत्येक शरीर मे	०	४२	०	७६
११९ घ्राणे० मिश्र योग शाश्वत मे	७	१२	१५	८५
१२० एकान्त असज्ञी अपर्याप्त मे	०	१९	१०१	०
१२१ विभंग ज्ञान वालो मे	७	५	१५	९४
१२२ कृष्ण लेशी वैक्रिय शरीर स्त्री वेद मे	०	५	१५	१०२
१२३ तीन औदारिक शाश्वत मे	२	३७	८९	०
१२४ लवण समुद्र घ्राणे० शाश्वत मे	८	१२	११२	०
१२५ लवण समुद्र तेजो लेशी मे	०	१३	११२	०
१२६ मरनेवाले गर्भज जीवो मे	०	१०	११६	०
१२७ वैक्रिय शरीर मरने वालो	७	६	१५	९९

१२८ देवियों में	०	०	०	१२८
१२९ एकान्त असंज्ञी बादर में	०	२८	१०१	०
१३० लवण समुद्रत्रस मिश्र योगी में	०	१८	११२	०
१३१ मनुष्य नपुंसक वेद में	०	०	१३१	०
१३२ शाश्वत मिश्र योगी में	७	२५	१५	८५
१३३ मन योगी सम्यग् दृष्टि असंख्यात भववालों में	७	५	४५	७६
१३४ बादर औदारिक शाश्वत में	०	३३	१०१	०
१३५ प्रत्येक शरीरी एकांत असंज्ञी में	०	३४	१०१	०
१३६ तीन लेश्या औदा शरीर में	०	३५	१०१	०
१३७ क्रियावादी अशाश्वत में	६	५	४५	८१
१३८ मन योगी सम्यग् दृष्टि में	७	५	४५	८१
१३९ औदा० शरीर नो गर्भज में	०	३८	१०१	०
१४० कृष्ण लेशी अमर में	३	०	८६	५१
१४१ अवधि दर्शन मरने वालों में	७	५	३०	९९
१४२ पचे० सम्यग् दृष्टि मरने वालों में	६	१०	४५	८१
१४३ एकांत नपुंसक बादर में	१४	२८	१०१	०
१४४ नो गर्भज शाश्वत में	७	३८	०	९९
१४५ अपर्याप्त सम्यग् दृष्टि में	६	१३	४५	८१
१४६ त्रस नो गर्भज एकांत मिश्र में	१	८	१०१	३६
१४७ लवण समुद्र के अभाषक में	०	३५	११२	०
१४८ स्त्री वेद वैक्रिय शरीर में	०	५	१५	१२८
१४९ संज्ञी एकांत मिथ्यात्वी में	१	०	११२	३६
१५० तिर्यक् लोक में वचन योगी में	०	१३	१०१	३६
१५१ तिर्यक् लोक पंचेन्द्रिय नपु० में	०	२०	१३१	०
१५२ तिर्यक् लोक पंचे० शाश्वत में	०	१५	१०१	३६
१५३ एकांत नपुंसक वेद में	१४	३८	१०१	०

१५४ तेजो लेशी वचन योगी सम्यक् दृष्टि मे	०	५	१०१	४८
१५५ तिर्यक् लोक में प्रत्येक शरीर बादर पर्याप्त मे	०	१८	१०१	३६
१५६ तिर्यक् लोक बादर पर्याप्त मे	०	१६	१०१	३६
१५७ मनुष्य एकांत मिथ्यात्वी अपर्याप्त में	—	—	१५७	—
१५८ नो गर्भज एकांत मिथ्या दृष्टि बादर में	—	२०	१०१	३६
१५९ तिर्यक् लोक प्रत्येक शरीरी पर्याप्त में	—	२२	१०१	३६
१६० तिर्यक् लोक कृष्ण लेशी सम्यक् दृष्टि में	—	१८	९०	५२
१६१ तिर्यक् लोक पर्याप्त मे	—	२४	१०१	३६
१६२ देवता सम्यग् दृष्टि मे	—	—	—	१६२
१६३ स्त्री वेद अवधि दर्शन मे	—	५	३०	१२८
१६४ प्रत्येक शरीरी नो गर्भज एकात मिथ्या दृष्टि मे	१	२६	१०१	३६
१६५ पचे० नपु सक वेद मे	१४	२०	१३१	—
१६६ अभाषक मरने वालो में	—	३५	१३१	—
१६७ कृष्ण लेशो घ्राणे० वचन योगी मे	२	१२	१०१	५१
१६८ कृष्ण लेशी वचन योगी मे	३	१३	१०१	५१
१६९ तिर्यक् लोक नो गर्भज कृष्ण लेशी त्रस मे	—	१६	१०१	५२
१७० तेजो लेशी वचन योगी मे	—	५	१०१	६४

१७१ नो गर्भज कृष्ण लेशी त्रस मरने वालों में	३	१६	१०१	५१
१७२ कृष्ण लेशी स्त्री वेद सम्यक् दृष्टि में	—	१०	९०	७२
१७३ तेजो लेशी अभाषक में	—	८	१०१	६४
१७४ नो गर्भज कृष्ण लेशी अपर्याप्त में	३	१६	१०१	५१
१७५ औदारिक शरीर चार लेशी में	—	३	१७२	—
१७६ लवण समुद्र त्रस एकान्त मिथ्यात्वी में	—	८	१६८	—
१७७ तिर्यक् लोक पंचेन्द्रिय सम्यग् दृष्टि में	—	१५	९०	७२
१७८ तिर्यक् लोक चक्षुइन्द्रिय सम्यग् दृष्टि में	—	१६	९०	७२
१७९ तिर्यक् लोक समुच्चय नपुंसक वेद में	—	४८	१३१	—
१८० तिर्यक् लोक सम्यग् दृष्टि में	—	१८	९०	७२
१८१ नो गर्भज चक्षु इन्द्रिय सम्यग् दृष्टि में	१३	६	—	१६२
१८२ नो गर्भज घ्राणेन्द्रिय सम्यग् दृष्टि में	१३	७	—	१६२
१८३ नो गर्भज सम्यग् दृष्टि में	१३	८	—	१६२
१८४ मिश्र योगी देवता वैक्रिय शरीर में	—	—	—	१८४
१८५ कृष्ण लेशी सम्यग् दृष्टि में	५	१८	९०	७२
१८६ नील लेशी सम्यग् दृष्टि में	६	१८	९०	७२

१८७ अभाषक मनुष्य एक संस्थानी में	—	—	१८७	—
१८८ विभंग ज्ञानी देवताओ में	—	—	—	१८८
१८९ तिर्यक् लोक नो गर्भज त्रस में	—	१६	१०१	७२
१९० लवण समुद्र च० इन्द्रिय में	—	११	१६८	—
१९१ तिर्यक् लोक कृष्ण लेशी नो गर्भज में	—	३८	१०१	५२
१९२ लवण समुद्र घ्राणेन्द्रिय में	—	२४	१६८	—
१९३ समुच्चय नपुंसक वेद में	१४	४८	१३१	५२
१९४ लवणसमुद्र त्रस जीवो में	—	२५	१६८	—
१९५ सम्यग् दृष्टि वैक्रिय शरीर में	१३	५	१५	१६२
१९६ तेजो लेशी सम्यग् दृष्टि में	—	१०	९०	९६
१९७ एक वेदी चक्षु इन्द्रिय में	१४	१२	१०१	७०
१९८ एकान्त मिथ्यात्वी अभाषक में	१	२२	१५७	१८
१९९ नो गर्भज वैक्रिय मिश्र योगी मे	१४	१	—	१८४
२०० वचन योगी तीन शरीर में	७	८	८६	९९
२०१ एक वेदी त्रस में	१४	१६	१०१	७८
२०२ नो गर्भज विभग ज्ञानी में	१४	—	—	१८८
२०३ नो गर्भज वैक्रिय शरीरी मिथ्यात्वी मे	१४	१	—	१८८
२०४ एकान्त मिथ्यात्व दृष्टि तीन शरीर में	—	२६	१५७	१८
२०५ एकान्त मिथ्यात्व दृष्टि मरने वालो मे	—	३०	१५७	१८

२०६ लवण समुद्र बादर में	—	३८	१६८	—
२०७ मन योगी मिथ्यात्वी में	७	५	१०१	९४
२०८ अनेक भव वाले अवधि ज्ञान में	१३	५	३०	१६०
२०९ समुच्चय सख्यात काल के त्रस मरने वालों में	१	२६	१३१	५१
२१० एकान्त संज्ञी मिश्र योगी में	१३	५	४५	१४७
२११ तिर्यक् लोक नो गर्भज में	०	३८	१०१	७२
२१२ मन योगी जीवों में	७	५	१०१	९९
२१३ एकान्त मिथ्यात्वी मनुष्य में	०	०	२१३	०
२१४ मिथ्यात्वी वैक्रिय मिश्र योगी में	१४	६	१५	१७९
२१५ औदारिक तेजो लेशी में	०	१३	२०२	०
२१६ लवण समुद्र में	०	४८	१६८	०
२१७ वचन योगी पंचे० में	७	१०	१०१	९६
२१८ त्रस वैक्रिय मिश्र में	१४	५	१५	१८४
२१९ वैक्रिय मिश्र में	१४	६	१५	१८४
२२० वचन योगी में	७	१३	१०१	९९
२२१ अचरम बादर पर्याप्त में	७९	१०१	१०१	९४
२२२ पचे० शाश्वत में	७	१५	१०१	९९
२२३ वैक्रिय मिथ्यात्वी में	१४	६	१५	१[illegible]८
२२४ चक्षु इन्द्रिय शाश्वत में	७	१७	१०१	९९
२२५ प्रत्येक शरीर बादर पर्याप्त में	७	१८	१०१	९९
२२६ औदा० शरीरी अपर्याप्त में	०	२४	२०२	०
२२७ नोगर्भज बादर अभाषक में	७	२०	१०१	९९
२२८ त्रस शाश्वत में	७	२१	१०१	९९
२२९ प्रत्येक शरीरी पर्याप्त में	७	२२	१०१	९९

२३० त्रस औदारिक शरीरी अभाषक में	०	१३	२१७	०
२३१ पर्याप्त जीवों मे	७	२४	१०१	६६
२३२ पंचेन्द्रिय औदारिक मिश्र योगी में	०	१५	२१७	०
२३३ वैक्रिय शरीर	१४	६	१५	१६८
२३४ औदारिक मिश्र योगी घ्राणेन्द्रिय में	०	१७	२१७	०
२३५ औदा० मिश्र योगी त्रस में	०	१७	२१७	०
२३६ मनुष्य की आगति नो गर्भज मे	०	३०	१०१	६६
२३७ औदारिक शरीरी पचे० मरने वालो मे	०	२०	२१७	०
२३८ प्रत्येक श० बादर शाश्वत में	७	३१	१०१	६६
२३९ समदृष्टि मिश्र योगी मे	१३	१८	६०	१४८
२४० शास्वत बादर मे	७	३३	१०१	६६
२४१ प्रत्येक शरीरी नो गर्भज मरने वालो में	७	३४	१०१	६६
२४२ बादर औदा. मिश्र योगी में	०	२५	२१७	०
२४३ औदा. एकान्त मिथ्यात्वी मे	०	३०	२१३	०
२४४ तीन शरीर नो गर्भज मरने वालो मे	७	३६	१०१	६६
२४५ समूर्छिम असंज्ञी त्रस में	१	२१	१७२	५१
२४६ प्रत्येक श० शाश्वत मे	७	३९	१०१	६६
२४७ अवधि दर्शन मे	१४	५	३०	१९८
२४८ तिर्यक पचे० अपर्याप्त में	०	१०	२०२	३६

२४९ तिर्यक् च० इन्द्रिय अपर्याप्त में	—	११	२०२	३६
२५० भव्य सिद्धि शाश्वत में	७	४३	१०१	९९
२५१ तिर्यक त्रस अपर्याप्त में	—	१३	२०२	३६
२५२ औदारिक अभाषक में	—	३५	२१७	—
२५३ मिश्र योगी मरने वालों में	७	३०	१३१	८५
२५४ स्त्री वेद मिश्र योगी में	—	१०	११६	१२८
२५५ पंचे० एकांत मिथ्यात्वी में	१	५	२१३	३६
२५६ चक्षु इन्द्रिय एकान्त मिथ्यात्वी में	१	६	२१३	३६
२५७ घ्राणे एकांत मिथ्यात्वी में	१	७	२१३	३६
२५८ त्रस एकांत मिथ्यात्वी में	१	८	२१३	३६
२५९ धर्म देव की आगति के घ्राणेन्द्रिय में	५	२४	१३१	९९
२६० पंचेन्द्रिय तीन शरीरी सम्यक् दृष्टि में	१३	१०	७५	१६२
२६१ कृष्ण लेशी अशाश्वत में	३	५	२०२	५१
२६२ पुरुष वेदी सम्यक् दृष्टि में	०	१०	९०	१६२
२६३ प्रत्येक शरीरी समुच्चय असंज्ञी में	१	३९	१७२	५१
२६४ तिर्यक् लोक कृष्ण लेशी स्त्री वेद मे	०	१०	२०२	५२
२६५ औदा. शरीर मरने वालों मे	०	४८	२१७	०
२६६ पंचेन्द्रि कृष्ण लेशी अनाहारी मे	३	१०	२०२	५१
२६७ च० इन्द्रिय कृष्ण लेशी अनाहारी में	३	११	२०२	५१

२६८ एक दृष्टि त्रस काय मे	१	८	२१३	४६
२६९ तिर्यक कृष्ण लेशी त्रस मरने वालो मे	०	२६	२१७	२६
२७० बादर एकान्त मिथ्यात्वी मे	१	२०	२१३	३६
२७१ मनुष्य की आगति के मिथ्यात्वी मे	६	४०	१३१	९४
२७२ मनुष्य की आगति के प्रत्येक शरीरी मे	६	३६	१३१	९९
२७३ नील लेशी एकान्त मिथ्यात्वी मे	०	३०	२१३	३०
२७४ कृष्ण लेशी मिथ्यात्वी मे	१	३०	२१३	३०
२७५ क्रियावादी समोसरण मे	१३	१०	६०	१६२
२७६ मनुष्य की आगति मे	६	४०	१३१	९९
२७७ चार लेश्या वालो मे	०	३	१७२	१०२
२६८ तिर्यक लोक बादर अभाषक मे	०	२५	२१७	३७
२७९ च० इन्द्रिय सम्यक् अनेक भव वालों मे	१३	१६	९०	१६०
२८० पंचे सम्यक् दृष्टि मे	१३	१५	९०	१६२
२८१ च० इन्द्रिय स० दृष्टि में	१३	१६	९०	१६२
२८२ घ्राणेन्द्रिय स० दृष्टि मे	१३	१७	९०	१६२
२८३ त्रस काय स० दृष्टि में	१३	१८	९०	१६२
२८४ तिर्यक लोक के पुरुष वेद में	०	१०	२०२	७२
२८५ च० इन्द्रिय एक सस्थान औदारिक मे	०	१२	२९३	०

२८६ घ्राणेन्द्रिय एक संस्थान औदारिक में	०	१३	२७३	०
२८७ तिर्यक तेजो लेशी मे	०	१३	२०२	७२
२८८ तीन शरीरीमनुष्य में	—	—	२८८	०
२८९ त्रस एक संस्थान औदारिक में	—	१६	२७३	—
२९० एक दृष्टि वाले जीवों में	१	३०	२१३	४६
२९१ तिर्यक लोक कृष्ण लेशी मरने वालों में	—	४८	२१७	२६
२९२ जघन्य अनामुहूर्त उत्कृष्ट सागर १ संठान मरने वालों में	२	३८	१८७	६५
२९३ च० इन्द्रिय कृष्ण लेशी मरने वालों मे	३	२१	२१७	५१
२९४ नो गर्भज की आगति के कृष्ण लेशी त्रस में	—	२६	२१७	५१
२९५ घ्राणेन्द्रिय कृष्ण लेशी मरने वालो में	३	२४	२१७	५१
२९६ एकान्त संज्ञी में	१३	५	१३१	१४७
२९७ त्रस कृष्ण लेशी मरने वालों में	३	२६	२१७	५१
२९८ पंचेन्द्रिय पर्याप्त एक संस्थानी में	७	५	१८७	९९
२९९ च० इन्द्रिय पर्याप्त एक संस्थानी में	७	६	१८७	९९
३०० स्त्री वेद पर्याप्त एक सस्थानी में	—	—	१७२	१२८

३०१ एक संस्थानी औदारिक बादर मे	—	२८	२६३	—
३०२ घ्राणे०एक सस्थानी अचरम मरने वालों मे	७	१४	१८७	६४
३०३ मनुष्य मे	—	—	३०३	—
३०४ नो गर्भज पंचेन्द्रिय मिश्र योगी मे	१४	५	१०१	१८४
३०५ सम्यक्० आगति कृष्ण लेशी बादर मे	३	३३	२१७	५१
३०६ तिर्यक् घ्राणेन्द्रिय मिश्र योगी मे	—	१७	२१७	७२
३०७ तिर्यक् त्रस मिश्र योगी में	—	१८	२१७	७२
३०८ अशाश्वत मिथ्यात्वी में	७	५	२०२	६४
३०६ सम्यक् आगति एक संस्थानी त्रस मे	७	१६	१८७	६६
३१० औदारिक तीन शरीरी एक संस्थानी में	—	३७	२७३	—
३११ औदा० एक सस्थानी मे	—	३८	२७३	—
३१२ नो गर्भज की आगति कृष्ण० तीन शरीरो में	—	४३	२१७	५२
३१३ अशाश्वत मे	७	५	२०२	६६
३१४ कृष्ण लेशी स्त्री वेद मे	—	१०	२०२	१०२
३१५ प्रत्येक तीन शरीरी कृष्ण० मरने वालो मे	३	४४	२१७	५१
३१६ त्रस अनाहारी अचरम में	७	१३	२०२	६४
३१७ नो गर्भज घ्राणे० मिथ्यात्वी मे	१४	१४	१०१	१८८

३१८ श्रोत्रे० अपर्याप्त में	७	१०	२०२	६६
३१९ कृष्ण लेशी मरने वालों में	३	४८	२१७	५१
३२० तीन शरीरी स्त्री वेद में	—	५	१८७	१२८
३२१ त्रस अपर्याप्त में	७	१३	२०२	६६
३२२ बादर अनाहारी अचरम में	७	१६	२०२	६४
३२३ नो गर्भज पंचे० में	१४	१०	१०१	१९८
३२४ तीन शरीरी मिथ्या० में	७	२१	२०२	६४
३२५ औदारिक च० इन्द्रिय में	—	२२	३०३	—
३२६ मिथ्यात्वी एक संस्थानी मरने वालो में	७	३८	१८७	६४
३२७ नो गर्भज घ्राणे० में	१४	१४	१०१	१९८
३२८ बादर अभा० अचरम में	७	२५	२०२	६४
३२९ औदारिक त्रस में	—	२६	३०३	—
३३० औदारिक एकांत भवधारणी देह में	—	४२	२८८	—
३३१ नो गर्भज बादर मिथ्यात्वी मे	१४	२८	१०१	१८८
३३२ त्रस एकांत संख्यात काल की स्थिति वाले में	७	२४	२०२	६६
३३३ च० इन्द्रिय एक संस्थानी में	७	२०	२०७	६६
३३४ तिर्यक अधो लोक की स्त्री में	—	१०	२०२	१२२
३३५ घ्राणेन्द्रिय एक संस्थानी स्थिति वाले मे	७	२२	२०७	६६
३३६ कार्मण योग त्रस में	७	१३	२०७	६६
३३७ नो गर्भज प्र० शरीरी				

अचरम मे	१४	३४	१०१	१८८
३३८ अभाषक अचरम मे	७	३५	२०२	६४
३३९ उर्ध्व० तिर्यक्० के मरने वालों मे	०	४८	२१७	७४
३४० नो गर्भज बाद० तीन शरीरी मे	१४	२१	१०१	१९८
३४१ औदारिक बादर मे	०	३८	३०३	०
३४२ घ्राणेन्द्रिय मिथ्या० मरने वालो मे	७	२४	२१७	६४
३४३ तेजोलेश्या वाले जीवो मे	०	१३	२०२	१२८
३४४ त्रस मिथ्या० मरने वालो मे	७	२६	२१७	६४
३४५ तीन शरीरी मरने वालो मे	७	४२	२०२	६४
३४६ प्रत्येक शरीरी ज० अ० उ १६ सा० स्थिति के मरने वालो मे	५	४४	२१७	८०
३४७ अनाहारक जीवो में	७	२४	२१७	९९
३४८ बादर अभाषक में	७	२५	२१७	९९
३४९ त्रस मरने वालो मे	७	२६	२१७	९९
३५० नो गर्भज तीन शरीरी में	१४	३७	१०१	१९८
३५१ औदारिक शरीर मे	०	४८	३०३	०
३५२ ज, अ० उ० १७ सागर की स्थिति के मरने वालो में	६	४८	२१७	८१
३५३ नो गर्भज की गति के त्रस तीन शरीरी मे	२	२१	२२८	१०२
३५४ मिथ्या० एकान्त संख्या० स्थिति मे	७	४६	२०७	६४
३५५ तिर्यक् लोक पचेन्द्रिय एक सस्थान	—	१०	२७३	७२
३५६ बादर मिथ्या० मरने वालो में	७	३८	२१७	६४

३५७ सम्य० आगति के बादर में	७	३४	२१७	६६
३५८ अभाषक जीवों में	७	३५	२१७	६६
३५९ तिर्यक् घ्राणेन्द्रिय एक संस्थानी में	—	१४	२७३	७२
३६० संस्थानी त्रस एक	०	१०	२०२	१४८
३६१ ऊर्ध्व० तिर्यक् पुरुष वेद में	०	१६	२७३	७२
३६२ प्र० शरीरी मिथ्या मरने वाले में	७	४४	२१७	६४
३६३ सम्य० आगति में	७	४०	२१७	६६
३६४ नो गर्भज की गति के बादर तीन शरीरी में	२	३२	२२८	१०२
३६५ ज० अं० उ० २९ सागर की स्थिति के मरने वालों में	७	४८	२१७	६३
३६६ मिथ्या० मरने वालों में	७	४८	२१७	६४
३६७ प्र० शरीरी मरने वालों में	७	४४	२१७	६६
३६८ पुरुष एक संस्था० अनेक भववालों में	—	—	१७२	१६६
३६९ अधो तिर्यक् चक्षु० मिश्र योगी में	१४	१६	२१७	१२२
३७० कृष्ण लेशी संख्या० स्थिति वालों में	३	४८	२१७	१०२
३७१ समुच्चय मरने वालो में	७	४८	११७	६६
३७२ तिर्यक् कृष्ण० तीन शरीरी वादर मे	—	३२	२८८	५२
३७३ तिर्य० बादर एक संस्थानी में	—	२८	२७३	७२
३७४ अ० ति० बादर कृष्ण एकान्त भव धारणी देह	३	३२	२८८	५१

३७५ तिर्य० पचेन्द्रिय कृष्णलेशी में	—	२०	३०३	५२
३७६ एक सस्थानी मिश्र योगी पचेन्द्रिय अनेरियों में	—	५	१८७	१८४
३७७ तिर्य० चक्षु० कृष्ण लेशी में	—	२२	३०३	५२
३७८ भुजपर की गति के पंचे० तीन शरीरी मे	४	१०	२०२	१६२
३७९ तिर्य० घ्राणेन्द्रिय कृष्ण लेशी	—	२४	३०३	५२
३८० पुरुष तीन शरीरी अचरम में	—	५	१८७	१८८
३८१ तिर्यक्० त्रस कृष्ण लेशी में	—	२६	३०३	५२
३८२ ,, तीन शरीरी कृष्ण लेशी में	—	४२	२८८	५२
३८३ तिर्य० एक संस्थानी मे	—	३८	२७३	७२
३८४ सज्ञी एक संस्थानी मे	१४	—	१७२	१९८
३८५ नो गर्भज की गति के बादर में	२	३८	२४३	१०२
३८६ उर्ध्व० तिर्य० एकान्त भव धारणी देह पांच अचरम में	—	२०	२८८	७८
३८७ उर्ध्व० तिर्य० त्रस मिथ्या एकान्त भव धारणी देह मे	—	२१	२८८	७८
३८८ अधो० तिर्य० एकान्त भव धारणी देह बादर मे	७	३२	२८८	६१
३८९ सज्ञा अभव्य तीन शरीरी अतिर्यंच मे	१४	—	१८७	१८८
३९० पुरुष वेद तीन शरीरी में	—	५	१८७	१९८
३९१ पचेन्द्रिय कृष्ण० एक सस्थानी में	६	१०	२७३	१०२
३९२ तिर्य० बादर तीन शरीरी में	—	३२	२८८	७२
३९३ तिर्यञ्च बादर कृष्ण लेशी मे	—	३८	३०३	५२
३९४ सज्ञी अभव्य तीन शरीरी	१४	५	१८७	१८८

३९५ तिर्यन्च पंचेन्द्रिय में	—	२०	३०३	७२
३९६ उर्ध्व० तिर्य० एकान्त भव धारणी देह पंचेन्द्रिय में	—	२०	२८८	८८
३९७ तिर्य० चक्षु इन्द्रिय में	—	२२	३०३	७१
३९८ ,, घ्राण ,, ,,	—	२४	३०३	७२
३९९ अधो० तिर्य० एकान्त भव धारणी देह में	७	४२	२८८	६१
४०० अभव्य पुरुष वेद मे	—	१०	२०२	१८८
४०१ तिर्य० त्रस जीवो में	—	२६	३०३	७२
४०२ ,, तीन शरीरी में	—	४२	२८८	७२
४०३ ,, कृष्ण लेशी में	—	४८	३०३	५२
४०४ समु० सञ्ज्ञी असं० भववाले अतिर्यच मे	१४	—	२०२	१८८
४०५ ऊपर की गति चक्षु मिश्र योगी में	१०	१६	२१७	१६२
४०६ ,, ,, ,, घ्राण ,, ,,	१०	१७	२१७	१६२
४०७ बादर प्र० कृष्ण एक संस्थानी मे	६	२६	२७३	१०२
४०८ बादर कृष्ण एक	६	२७	२७३	१०२
४०९ तिर्यच एकान्त छद्मस्थ में	—	४८	२८८	७२
४१० पुरुष वेद मे	—	१०	२०२	१९८
४११ तिर्यच प्र० शरीरी बादर में	—	३६	३०३	७२
४१२ स्त्री गति के संज्ञी मिथ्यात्वी में	१२	१०	२०२	१८८
४१३ संज्ञी मिथ्यात्वी मे	१३	१०	२०२	१८८
४१४ प्रशस्त लेश्या में	—	१३	२०२	१९८
४१५ प्र० शरीरी कृष्ण० एक संस्थानी	६	३४	२७३	१०२

४१६ अप्रशस्त लेशी तीन शरोरो बा० एक सस्था०	१४	२७	२७३	१०२
४१७ प्र० बादर एक सस्था० एकान्त भव धारणी देह	७	२५	२७३	११३
४१८ कृष्ण लेशी एक सस्थानी मे	६	३८	२७३	१०२
४१९ स्त्री गति कृष्ण लेशी एक सस्थानी मे	४	३८	२७३	१०२
४२० मिश्र योगी वादर एकात असयम मे	१४	२०	२०३	१८४
४२१ स्त्री गति अप्रशस्त लेशी प्र० शरीरी एक सस्थानी मे	१२	३४	२७३	१०२
४२२ स्त्री गति के संज्ञी मे	१२	१०	२०२	१९८
४२३ समुच्चय सज्ञो मे	१४	२३	२०२	१८४
४२४ प्र० शरीरी मिश्र योगी एकान्त असयम मे	१४	१०	२०२	१९८
४२५ मिश्र योगी एकान्त अपच्चक्खणी मे	१४	२५	२०२	१८४
४२६ कृष्ण लेशी बादर प्रत्येक तीन शरीरी मे	६	३०	२८८	१०२
४२७ अप्रशस्त लेशी एक सस्थानी मे	१४	३८	२७३	१०२
४२८ कृष्ण लेशी बादर तीन शरीरी मे	६	३२	२८८	१०२
४२९ कृष्ण० एकात असयम मे	६	३३	२८८	१०२
४३० स्त्री गति के त्रस मिश्र अनेक भव वाले	१२	१८	२१७	१८३
४३१ स्त्री गति के मिथ्यात्वी मे	१२	१८	२१७	१८४

४३२ त्रस मिश्र योगी सख्यात भव वाले	१४	१८	२१७	१८३
४३३ त्रस मिश्र योगी	१४	१८	२१७	१८४
४३४ कृष्ण लेशी प्रत्येक तीन शरीरी में	६	३८	२८८	१०२
४३५ मिश्र योगी बादर मिथ्यात्वी में	१४	१५	२१७	१७९
४३६ बादर तीन शरीरी अप्रशस्त लेशी मे	१४	३२	२८८	१०२
४३७ बादर एकांत अपच्च० अप्रशस्त लेशी मे	१४	३३	२८८	१०२
४३८ कृष्ण० तीन शरीरी में	६	४२	२८८	१०२
४३९ कृष्ण० एकांत अपच्च०	६	४३	२८८	१०२
४४० मिश्र योगी बादर मे	१४	२५	२१७	१८४
४४१ अधोगति तिर्य० के च० तीन शरीरी मे	१४	१७	२८८	२०२
४४२ प्रत्येक तीन शरीरी अप्रशस्त लेशी मे	१४	३८	२८८	१०२
४४३ प्रत्येक मिश्र योगी मे	१४	२८	२१७	१८४
४४४ प्रत्येक एकांत भव धा० देह अनेक भव वाले मे	७	३८	२८८	१११
४४५ अधो० तिर्यक तीन शरीरी त्रस मिश्र योगी मे	१४	२१	२८८	१२२
४४६ अप्रशस्त लेश्या तीन शरीरी मे	१४	४२	२८८	१०२
४४७ एकांत असयम अप्रशस्त लेशी में	१४	४३	२८८	१०२

४४८	अकात भव धा० देह अनेक भाव वाले मे	७	४२	२८८	१११
४४९	स्त्री गति के एकात भव देह	६	४२	२८८	११३
४५०	भवसिद्धि एकांत भव देह	७	४२	२८८	११३
४५१	ऊपर की गति कृष्ण० प्रत्येक तीन शरीरी में	२	४४	३०३	१०२
४५२	भुज पर गति अधो० तिर्यक् प्र० तीन शरीरी मे	४	३८	२८८	१२२
४५३	स्त्री गति कृ० प्र० शरीरी मे	४	४४	३०३	१०२
४५४	उर्ध्व तिर्यक् एकान्त छद्० पचे० अनेक भव मे	०	२०	२८८	१४६
४५५	कृष्ण० प्रत्येक शरीरी मे	६	४४	३०३	१०२
४५६	अधो० तिर्यक तीन शरीरी बादर में	१४	३२	२८८	१२२
४५७	अप्रशस्त लेशी बादर मे	१४	२८	३०३	१०२
४५८	उर्ध्व तिर्यक के एक सस्थानी मे	०	३८	२७३	१४८
४५९	उर्ध्व तिर्यक के एकात छद्मस्थ चक्षु मे	०	२२	२८८	१८८
४६०	उर्ध्व तिर्यक एकात छद्मस्थ घ्राण०	०	२४	२८८	१४८
४६१	अधो० तिर्यक के च०	१४	२२	३०३	१२२
४६२	अधो० तिर्यक घ्राणे०	१४	२५	३०३	१२२
४६३	अधो० तिर्यक बादर एकात छद्मस्थ मे	१४	३८	२६८	१२२
४६४	अधो० तिर्यक त्रस मे	१४	२६	३०३	१२२

४६५	स्त्री गति के अधो॰ तिर्यंक तीन शरीरी में	१२	४२	२८८	१२२
४६६	अधो ति॰ तीन शरीरी में	१४	४२	२८८	१२२
४६७	अप्रशस्त लेश्या में	१४	४८	३०३	१०२
४६८	उर्ध्वं॰ ति॰ तीन शरीरी वादर	०	३२	२८८	१४८
४६९	,, ,, एकांत असयम ,,	०	३३	१८८	१४८
४७०	अधो. ,, छद्म॰ स्त्री गति में	१२	५८	२८८	१२२
४७१	उर्ध्व. ,, पचेन्द्रिय में	०	२०	३०३	१४८
४७२	अधो. ति. एकांत छद्मस्थ	१४	४८	२८८	१२२
४७३	उर्ध्व. ति. के चक्षु इन्द्रिय में	०	२२	३०३	१४८
४७४	,, ,, घ्राण ,,	०	२४	३०३	१४८
४७५	,, ,, एकांत छद्मस्थ वा.	०	३८	२८८	१४८
४७६	,, ,, तीन श. अ. भववाले	०	४२	२८८	१४६
४७७	,, ,, त्रस में	०	२६	३०३	१४८
४७८	,, ,, तीन शरीरी	०	४२	२८८	१४८
४७९	,, ,, एकांत असंयम	०	४३	२८८	१४८
४८०	,, ,, एकांत छद्म॰ प्र॰ शरीरी	—	५४	२८८	१४८
४८१	स्त्री गति के अधो॰ तिर्य.				
४८२	,, ,, अ. भव वालों में	—	४८	२८८	१४६
४८३	अधो. तिर्य. प्र शरीरी में	१४	४४	३०३	१२२
४८४	,, ,, ,, ,, ,,	—	४८	२८८	१२२
	प्र. शरीरी में	१२	४४	३०३	१२२
४८५	,, ,, ,, प्र. ,, ,,	१२	४८	३०३	१२१
४८६	भुजपर गति के तीन शरीर बादर	४	३२	२८८	१६२

४८७	अधो० तिर्य. लोक में	१४	४८	३०३	१२२
४८८	खेचर ,, ,, ,,	६	३२	२८८	१६२
४८९	उर्ध्व० तिर्य० बादर मे	—	३८	३०३	१४८
४९०	स्थलचर ,, ,, ,,	८	३२	२८८	१६२
४९१	खेचर गति पचेन्द्रिय में	६	२०	३०३	१६२
४९२	उरपर ,, ,, ,,	१०	३२	२८८	१६२
४९३	उर्ध्व. ,, प्र० शरीरी अनेक भववालो में	—	४४	३०३	१४६
४९४	खेचर ,, प्र ,, ,,	६	३८	२८८	१६२
४९५	,, ,, ,, में	—	४४	३०३	१४८
४९६	भुजपर गति के तीन शरीरी में	४	४२	२८८	१६२
४९७	खेचर गति त्रस मे	६	२६	३०३	१६२
४९८	,, ,,तीन शरीरी में	६	४२	२८८	१६२
४९९	खेचर गति तीन शरीरी में	—	४८	३०३	१४८
५००	स्थल चर ,, ,,	८	४२	२८८	१६२
५०१	त्रस एक संस्थानी मे	१४	१६	२७३	१९८
५०२	उरपर गति तीन शरीरी में	१०	४२	२८८	१६२
५०३	उर पर घ्राणेन्द्रिय मे	१४	२४	३०३	१६२
५०४	खेचर पर एकांत छद्मस्थ में	६	४८	२८८	१६२
५०५	तिर्य. ,, त्रस मे	१४	२६	३०३	१६२
५०६	सज्ञी ति. ,, तीन शरीरी मे	१४	४२	२८८	१६२
५०७	अन्तर्द्वीप के पर्याप्त के अलद्धिया मे	१४	४८	२४७	१९८
५०८	उर पर ,, एकांत सकषाय मे	१०	४८	२८८	१६२
५०९	स्थल चर एकांत प्र० शरीरी वादर मे	८	३६	१०३	१६२

५१० तिर्यंचणी गति के एकांत संयोगी में	१२	४८	२८८	१६२
५११ एक संस्थान प्र० शरीरी बादर में	१४	२६	२७३	१९८
५१२ तिर्यंच „ „	१४	४८	२८८	१६२
५१३ एक संस्थान मिथ्यात्वी में	१४	३८	२७३	१८८
५१४ मध्य जीवो का स्पर्श करने वाले एकांत छद्म चक्षु	१४	२२	२८८	२९०
५१५ तिर्यचणी गति के बादर में	१२	३८	३०३	१६२
५१६ „ „ „ „ „ „ घ्रा०	१४	२४	२८८	१९०
५१७ „ „ स्त्री गति प्र० शरीरी में	१२	३४	२७३	१९८
५१८ पंचेन्द्रिय में एकात छद्म० अनेक भववाले	१४	२०	२८८	१९६
५१९ एक संस्थानी मे	१४	३४	२७३	१९८
५३९ घ्राणेन्द्रिय में	१४	२४	३०३	१९८
५४० एकांत छद्म० बादर मे	१४	३८	२८८	१९८
५४१ त्रस जीवो में	१४	२६	४०३	१९८
५४२ तीन शरीरी एकांत छद्म	१४	४२	२८८	१९८
५४३ एकांत असयम में	१४	४३	२८८	१९८
५४४ प्र० श० एकांत छद्म	१४	४२	२८८	१९८
५४५ सम्य० ति० अलद्धिया में	१४	३०	३०३	१९८
५४६ एकांत छद्म० अनेक भाववालों में	१४	४८	२८८	१९६
५४७ स्त्री गति प्र० श० मिथ्या०	१२	४४	३०३	१८८
५४८ एकान्त छद्मस्थ में	१४	३८	२८८	१९८

५४९ मिथ्या० प्र० शरीरी मे	१४	४४	३०३	१८८
५५० सम्य० नरक के अलद्धिया	१	४८	३०३	१९८
५५१ स्त्री गति मिथ्या०	१२	४८	३०३	१८८
५५२ एकेन्द्रिय पर्याप्त का अलद्धिया	१४	३७	३०३	१९८
५५३ मिथ्यात्वी	१४	४८	३०३	१८८
५५४ नव ग्रैंवेयक पर्याप्त के अलद्धिया	१४	४८	३०३	१८६
५५५ जीवो के मध्य भेद स्पर्शन वाले	१४	४८	३०२	१९८
५५६ नरक पर्याप्ता के अलद्धिया	७	४८	३०३	१९८
५५७ स्त्री गति के प्र० शरीरी मे	१२	४४	३०३	१९८
५५८ तिर्य० पचे० वैक्रिय के अल०	१४	४३	३०३	१९८
५५९ प्रत्येक शरीरी मे	१४	४४	३०३	१९८
५६० तेजोलेशी एकेन्द्रिय के अलद्धिया में	१४	४५	३०३	१९८
५६१ अनेक भववाले जीवो मे	१४	४८	३०३	१९८
५६२ एकेन्द्रिय वैक्रिय श० अलद्धिया मे	१४	४७	३०३	१९८
५६३ सर्व ससारी जीवो मे	१४	४८	३०३	१९८
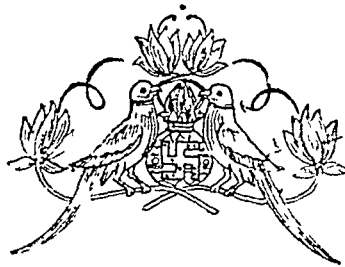
चार कषाय

सूत्र श्री पन्नवणाजी के पद चौदहवे मे चार कषाय का थोकड़ा चला है उसमे श्री गौतम स्वामी वीर भगवान से पूछते है कि "हे भगवन् ! कषाय कितने प्रकार के होते है ?" भगवान कहते है कि—हे गौतम ! कषाय १६ प्रकार के होते है।' १ अपने लिये, २ दूसरे के निमित्त, ३ तदु-भया अर्थात् दोनो के लिये, ४ खेत अर्थात् खुली हुई जमीन के लिए, ५ वथ्थु कहेता ढंकी हुई जमीन के लिये, ६ शरीर के निमित्त, ७ उपाधि के लिये—८ निरर्थक, ९ जानता, १० अजानता, ११ उपशान्त पूर्वक, १२अनुपशान्त पूर्वक, १३ अनन्तानुबन्धी क्रोध, १४ अप्रत्याख्यानी क्रोध, १५ प्रत्याख्यानी क्रोध, १६ सज्वलन का क्रोध एवं १६ वे समुच्चय जीव आश्री और ऐसे ही चौवीश दण्डक आश्री । दोनों का इस प्रकार गुणा करने से १६×२५) ४०० हुए ।

अब कषाय के दलिया कहते है—चणीया, उपचणीया, बान्ध्या, वेद्या, उदीरिया, निर्जर्या एव ६ ये भूतकाल, वर्तमान काल और भविष्यकाल आश्री एव ६ और ३ का गुणाकार करने से (६×३) १८ हुए। ये १८ एक जीव आश्री और १८ बहुजीव आश्री ३६ हुए। ये समुच्चय जीव आश्री और चौवीश दण्डक आश्री एवं (३६×२५) ९०० हुए। ४०० ऊपर के और ९०० ये और १३०० क्रोध के, १३०० मान के, १३०० माया के और १३०० लोभ के इस तरह फुला ५२०० होते है ।

श्वासोश्वास

सूत्र श्री पन्नवणाजी के पद सातवे मे श्वासोश्वास का थोकडा चला है उसमे गौतम स्वामी वीर प्रभु से पूछते है कि—हे भगवन् ! नेरिया और देवता किस प्रकार श्वासोश्वास लेते है ? वीर प्रभु उत्तर देते है कि हे गौतम ! नारकी का जीव निरन्तर धमण के समान श्वासोश्वास लेता है । असुर कुमार का देवता जघन्य सात थोक उत्कृष्ट एक पक्ष जाजेरा श्वासोश्वास लेते है । वाणव्यन्तर और नवनिकाय के देवता जघन्य सात थोक उत्कृष्ट प्रत्येक मुहूर्त मे, ज्योतिषी जघन्य उ० प्रत्येक मुहूर्त मे पहला देव लोक का ज० प्रत्येक मुहूर्त मे उ० दो पक्ष मे, दूसरे देवलोक का ज० प्रत्येक महूर्त, जाजेरा उ० दो पक्ष, जाजेरा तीसरे देवलोक का ज० दो पक्ष मे उ० सात पक्ष मे, चौथे देवलोक का ज०दो पक्ष जाजेरा उ० सात पक्ष मे, जाजेरा, पाँचवे देवलोक का ज० सात पक्ष मे, उ० दश पक्ष मे, छट्ठे देवलोक का ज० दश पक्ष में, उ० चौदह पक्ष मे, सातवे देवलोक का ज० चौदह पक्ष मे, उ० सतरह पक्ष मे, आठवे देवलोक का ज० सतरह पक्ष में, उ० अट्ठारह पक्ष मे, नववे देवलोक का ज० अट्ठारह पक्ष में, उ०उन्नीश पक्ष मे, दशवे देवलोक का ज० उन्नीश पक्ष मे, उ० वीस मे, इग्यारहवे देवलोक का ज० बीस पक्ष मे, उ० एकवीश पक्ष में, बारहवे देवलोक का ज० एकवीस पक्ष मे, उ० बावीस पक्ष मे, पहली त्रिक का ज० बावीस पक्ष मे, उ० पच्चीस पक्ष मे, दूसरी त्रिक का ज० पच्चीस पक्ष मे, उ० अट्ठाइस पक्ष मे, तीसरी त्रिक का ज० अठाइस पक्ष मे, उ० एकतीस पक्ष मे, चार अनुत्तर विमान का ज० एकतीस पक्ष मे, उ० तेतीस पक्ष मे सर्वार्थसिद्ध का ज० और उ० तेतीस पक्ष मे एव ३३ पक्ष मे श्वास ऊँचा लेते है और ३३ पक्ष मे श्वास नीचे छोडते हैं ।

अस्वाध्याय

आकाश की दश अस्वाध्याय

१ तारा आकाश से गिरे २ चार ही दिशा लाल होवे ३ अकाल गर्जना हो ४ अकाल मे बिजली गिरे ५ अकाल मे कड़क होवे ६ दूज के चन्द्रमा की ७ यक्ष का चिह्न होवे ८ ओले गिरे ९ धूँधल गिरे १० ओस गिरे। इन सब मे अस्वाध्याय होती है।

औदारिक शरीर की दश अस्वाध्याय

१ तत्काल की लीली (नीली) हड्डी गिरी हो २ मांस पडा हो ३ खून गिरा हो ४ विष्टा (मल) उल्टी पड़ी हो ५ मुर्दा (लाश) जलता हो ६ चन्द्र ग्रहण हो ७ सूर्य ग्रहण हो ८ बड़ा राजा मरे ९ सग्राम चले १० पचेन्द्रिय का प्राण रहित शरीर पड़ा हो इन सब मे अस्वाध्याय होती है।

काल की १६ अस्वाध्याय

(१) चैत्र शुक्ला पूर्णिमा (२) वैशाख कृष्ण प्रतिपदा (३) आषाढ शुक्ला पूर्णिमा (४) श्रावण कृष्ण प्रतिपदा (५) भाद्रपद शुक्ला पूर्णिमा (६) आश्विन कृष्ण प्रतिपदा (७) आश्विन शुक्ला पूर्णिमा (८) कार्तिक कृष्ण प्रतिपदा (९) कार्तिक शुक्ला पूर्णिमा (१०) मार्गशीर्ष कृष्ण प्रतिपदा (११) प्रातः काल (१२) संध्या काल (१३) मध्याह्न काल (१४) मध्य रात्रि (१५) अग्नि प्रकट होवे वह समय, और (१६) आकाश मे धूल चढे वह समय अर्थात् धूल से सूर्य का प्रकाश मद होजावे तब अस्वाध्याय होती है।

३२ सूत्रों के नाम

११ अङ्गों के नाम

१ आचाराङ्ग २ सूत्रकृताङ्ग ३ स्थानाङ्ग ४ समवायाङ्ग ५ भगवती (विवाहप्रज्ञप्ति) ६ ज्ञाता (धर्म कथा) ७ उपासक दशाङ्ग ८ अन्तकृतद्दशाङ्ग (अन्तगढ) ९ अनुत्तरोपपातिक १० प्रश्न-व्याकरण दशाङ्ग ११ विपाक सूत्र ।

१२ उपांग

१ उपपातिक (उववाई) २ राजप्रश्नीय ३ जीवाभिगम ४ प्रज्ञापना ५ जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति ६ चन्द्र प्रज्ञप्ति ७ सूर्य प्रज्ञप्ति ८ निरया-वलिका ९ कल्पवतसिका १० पुष्पिका ११ पुष्पचूलिका १२ वृष्णिदशा ।

चार मूल सूत्र

१ दशवैकालिक २ उत्तराध्ययन ३ नदि ४ अनुयोग द्वार ।

चार छेद सूत्र

१ वृहत्कल्प २ व्यवहार ३ निशीथ ४ दशाश्रुत स्कन्ध ।
बत्तीसवा आवश्यक सूत्र ।

●

अपर्याप्ता तथा पर्याप्ता द्वार

शिष्य—(विनय पूर्वक नमस्कार करके पूछता है) हे गुरु ! जीवतत्व का बोध देते समय आपने कहा कि जीव उत्पन्न होते समय अपर्याप्ता तथा पर्याप्ता कहलाता है। सो यह कैसे ? कृपा करके मुझे यह समझाइये ।

गुरु—हे शिष्य ! जीव यह राजा है। आहार, शरीर, इन्द्रिय, श्वासोश्वास, भाषा और मन ये ६ प्रजा है और ये चारो गति के जीवो को लागू रहने से ५६३ भेद माने जाते है। इनमें पहली आहार पर्याप्ति लागू होती है। यह इस प्रकार से है कि जब जीव का आयुष्य पूर्ण होवे तब वह शरोर छोड़ कर नई गति की योनि मे उत्पन्न होने को जाता है। इसमे अविग्रह गति अर्थात् सीधी व सरल बान्ध कर आया हुआ होवे वह जीव जिस समय आया हुआ होवे उसी समय में आकर उत्पन्न होता है उस जीव को आहार का अन्तर पड़ता नही इस प्रकार का बन्धन वाला जीव "सीए आहारिए" अर्थात् सदा आहारिक कहलाता है। ऐसा भगवतो सूत्र का न्याय है।

अब दूसरा प्रकार विग्रहगति का बान्ध कर आने वाले जीवो का कहा जाता है। इसमे तीन प्रकार—कितनेक जीव शरीर छोडने के वाद एक समय के अन्तर से, कितनेक दो समय के अन्तर से, और कितनेक तोन समय के अन्तर से, अर्थात् चौथे समय मे उत्पन्न हो सकते है। एव चार ही प्रकार से संसारी जीव उत्पन्न हो सकते है। यह दूसरी विग्रह अर्थात् विषम गति करके उत्पन्न होने वाले जीवों को एक दो, तीन समय उत्पन्न होते अन्तर पड़े, इसका कारण ग्रंथकार आकाश प्रदेश की श्रेणी का विभागो की तरफ आर्कपित

हो जाना बतलाते है। गुप्त भेद गीतार्थ गुरु गम्य है। ऐसे जीव जितने समय तक मार्ग मे रोक जाते है उतने समय तक अनाहारक (आहार के बिना) कह लाते है। ये जीव वान्धी हुई योनि के स्थान मे प्रवेश करके उत्पन्न होवे (वास करे) उसी समय वह योनि स्थान कि जो पुद्गल के बान्धारण से वन्धा हुवा होता है —उसी पुद्गल का आहार-कढाई मे डाले हुए बडे (भुजिये) के समान आहार करते है। उसका नाम—ओज आहार किया हुवा कहलाता है। और सारे जीवन मे एक ही वार किया जाता है। इस आहार को खेच कर पचाने मे एक अन्तर्मुहूर्त का समय लगता है। यह पहली आहार प्राप्ति कहलाती है। (१) इस प्रकार इस आहार के रस का ऐसा गुण है कि उसके रज कण एकत्रित होने से सात धातु रूप स्थूल शरीर की आकृति बनती है। और ये मूल धातु जीवन पर्यन्त स्थूल शरीर को टिका रखते है। ऐसे शरीर रूप फूल मे सुगन्ध की तरह जीव रह सकते है। यह दूसरी शरीर पर्याप्ति कहलाती है इस आकृति को बान्धने में एक अन्तर्मुहूर्त लगता है (२) इस शरीर के दृढ बन जाने पर उसमे इन्द्रियो के अवयव प्रगट होते है। ऐसा होने मे अन्तर्मुहूर्त का समय लगता है यह तीसरी इन्द्रिय पर्याप्ति कहलाती है। (३) उक्त शरीर तथा इन्द्रिय दृढ होने पर सूक्ष्म रूप से एक अन्तर्मुहूर्त मे पवन की धमण शुरू होती है यही से उस जीव के आयुष्य की गणना की जाती है यह चौथी श्वासोश्वास पर्याप्ति कहलाती है (४) पश्चात् एक अन्तर्मुहूर्त मे नाद पैदा होता है। यह पाँचवी भाषा पर्याप्ति कहलाती है (५) उपरोक्त पांच पर्याप्ति के समय पर्यन्त मन चक्र की मजबूती होती है। उनमे से मन स्फुरण हो कर सुगन्ध की तरह बाहर आता है उसमे से शरीर की स्थिति के प्रमाण मे सूक्ष्म रीति से अमुक पदार्थो के रज कण आकर्षित करने योग्य शक्ति प्राप्त होती है। यह छट्ठी मन. पर्याप्ति कहलाती है (६) उक्त रीति से ६

अन्तर्मुहूर्त मे ६ पर्याप्ति का बन्ध होता है यह सुन कर शिष्य को शङ्का होती है कि शास्त्रकार ६ पर्याप्ति का बन्ध होने मे एक अन्तर्मुहूर्त बतलाते है यह कैसे ?

गुरु—हे वत्स ! सारा मुहूर्त दो घड़ी का होता है। इसका एक ही भेद है। परन्तु अन्तर्मुहूर्त के जघन्य मध्यम और उत्कृष्ट एवं तीन भेद होते है। दो समय से लगा कर नव समय पर्यंत की जघन्य अन्तर्मुहूर्त कहलाती है। १ तदन्तर अन्तर्मुहूर्त दस समय की, ग्यारह समय की एव एकेक समय गिनते हुए अन्त ० के असख्यात भेद होते है। २ दो घडी (पहर) में एक समय शेष रहे, तब वह उत्कृष्ट अन्त० है। ३ छः पर्याप्ति का बन्ध होने में छः अन्त० लगते हैं। इससे जघन्य और मध्यम अन्त० समझना और अन्त मे छः पर्याप्ति मे जो एक अन्त० लगता है उसे उत्कृष्ट समझना। उक्त छ· पर्याप्ति मे से एकेन्द्रिय के चार (प्रथम) होती है। द्वीन्द्रिय त्रीन्द्रिय, चौरिन्द्रिय व असज्ञी मनुष्य तथा तिर्यञ्च पचेन्द्रिय के पांच और सज्ञी पचे० के छः पर्याप्ति होती है।

अपर्याप्ता का अर्थ

अपर्याप्ता के दो भेद :—१ करण अपर्याप्ता, २ लब्धि अपर्याप्ता। करण अप० के दो भेद—त्रि-इन्द्रिय वाले पर्याय बांध कर न रहे वहाँ तक करण अप० और बांध कर रहे, तब करण पर्याप्ता कहलाती है। लब्धि अप० के दो भेद—एकेन्द्रिय से अगाकर पचे० पर्यन्त जिसके जितनी पर्याय होती है, उसके उतनी मे से एकेक की अधूरी रहे वहाँ तक लब्धि अपर्याप्ता कहलाता है और अपनी जाति की हद तक पूरी बंध कर रहे तव उसे लब्धि पर्याप्ता कहते है एवं करण तथा लब्धि पर्याप्ता के चार भेद होते है।

शिष्य—हे गुरु ! जो जीव मरता है, वो अपर्याप्ता मे मरता है अथवा पर्याप्ता मे ?

गुरु—हे शिष्य ! जब तीसरी इन्द्रिय पर्या० बाध कर जीव करण-पर्याप्ता होता है तब मृत्यु प्राप्त कर सकता है। इस न्याय से पर्याप्ता होकर मरण पाता है , परन्तु करण अपर्याप्ता पने कोई जीव मरण पावे नहीं। वैसे ही दूसरे प्रकार से अप० पने का मरण कहने में आता है। यह लब्धि अप० का मरण समझना। यह इस तरह से कि चार वाला तीसरी, पाँच वाला तीसरी चौथी छ० वाला तीसरी चौथी और पाचवी पर्याप्ति पूरी बधने के बाद मरण पाते है। अब दूसरे प्रकार से अप० व पर्याप्ता इसे कहते है कि जिस जीव को जितनी पर्या० प्राप्त हुई अर्थात् बधी उसको उतनी पर्या० का पर्याप्ता कहते है और जो बधना बाकी रही, उसे उसकी अप० अर्थात् उतनी पर्या० की प्राप्ति नही हो सकी यह भी कह सकते है।

ऊपर बताये हुए अपर्याप्ता और पर्याप्ता के भेदो का अर्थ समझ कर गर्भज, नो गर्भज और एके० आदि असज्ञी पचे जीवो को ये भेद लागू करने से जीव तत्व के ५६३ भेद व्यवहार नय से गिनने मे आते है और ये सर्व कर्म विपाक के फल है, इससे जीवो की ८४ लक्ष योनियो का समावेश होता है। योनियो मे वार-बार उत्पन्न होना, जन्म लेना व मरण पाना आदि को ससार समुद्र के नाम से सम्बोधित करते है। यह सब समुद्रो से अनत गुणा बड़ा है। इस ससार समुद्र को पार करने ले लिये धर्मरूपी नाव है और जिसके नाविक (नाव को चलाने वाले) ज्ञानी गुरु है। इनकी शरण लेकर, आज्ञानुसार, विचार कर प्रवर्तन करने वाला भाविक भव्य कुशलता पूर्वक प्राप्त की हुई जिन्दगी (जीवन) को सार्थकता प्राप्त कर सकता है। इसी प्रकार अन्य भी आचरण करना योग्य है।

गर्भ विचार

गुरु—हे शिष्य ! पन्नवणा, भगवती सूत्र का तथा ग्रंथकारो का अभिप्राय देखने पर सर्व जन्म और मृत्यु के दु:खों का मुख्यत: चौथा मोहनीय कर्म के उदय मे समावेश होता है। मोहनीय मे ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय और अन्तराय कर्म एव तीन का समावेश होता है। ये चार ही कर्म एकांत पाप रूप है। इनका फल असाता और दु.ख है। इन चारो ही कर्मो के आकर्षण से आयुष्य कर्म बधता है व आयुष्य शरीर के अन्दर रहकर भोगा जाता है, भोगने का नाम वेदनीय कर्म है, इस कर्म मे साता तथा असाता वेदनीय का समावेश होता है और इस कर्म के साथ नाम तथा गोत्र कर्म जुड़ा हुआ है और ये आयुष्य कर्म के साथ सम्बन्ध रखते है। ये चार कर्म शुभ तथा अशुभ एवं दो परिणामो से बधते है अत: इन्हे मिश्र कहते है। इनके उदय से पुण्य तथा पाप की गणना की जाती है।

इस प्रकार आठ कर्मो का वन्ध होता है और ये जन्म मरण रूप क्रिया के द्वारा भोगे जाते है। मोहनीय कर्म सर्व कर्मो का राजा है। आयुष्य कर्म इसका दीवान है मन हजूरी सेवक है जो मोह राजा के आदेशानुसार नित्य नये कर्मो का सचय करके बन्ध बान्धता है। ये सब पन्नवणाजी सूत्र मे कर्म प्रकृति पद से समझना। मन सदा चचल व चपल है और कर्म सचय करने मे अप्रमादी व कर्म छोडने मे प्रमादी है इस से लोक मे रहे हुए जड़ चैतन्य रूप पदार्थो के साथ, राग द्वेष की मदद से, यह मिल जाता है। इस कारण उसे 'मन योग' कह कर पुकारते है। मन योग से नवीन कर्मो की आवक आती है। जिसका पांच इन्द्रियों के द्वारा भोगोपभोग किया जाता है। इस

प्रकार एक के बाद एक विपाक का उदय होता है। सब का मूल मोह है, तद्पश्चात् मन, फिर इन्द्रिय विषय और इन से प्रमाद की वृद्धि होती है कि जिसके वश मे पडा हुआ प्राणी, इन्द्रियो को पोषण करने के रस सिवाय, रत्नत्रयात्मक अभेदानन्द के आनन्द की लहर का रसीला नही हो सकता किंतु उलटा ऊँच-नीच कर्मो के आकर्षण से नरक आदि चार गति मे जाता व आता है। इनमे विशेष करके देव गति के सिवाय तीन गति के जन्म अशुचि से पूर्ण है। जिसमे से नरक कुण्ड के अन्दर तो केवल मल-मूत्र और मास रुधिर का कादा (कीचड) भरा हुआ है व जहाँ छेदन भेदन आदि का भयङ्कर दुख होता है जिसका विस्तार सुयगडाग सूत्र से जानना।

यहाँ से जीव मनुष्य या तिर्यंच गति मे आता है, यहाँ एकात अशुद्धि का भण्डार रूप गर्भावास में आकर उत्पन्न होता है। पायखाने से भी अधिक यह नित्य अखूट कीच से भरा हुवा है यह गर्भावास नरक के स्थान का भान कराता है व इसी प्रकार इसमे उत्पन्न होने वाला जीव नेरिये का नमूना रूप है। अन्तर केवल इतना ही है कि नरक मे छेदन, भेदन, तर्जन, खण्डन, पीसन और दहन के साथ २ दश प्रकार की क्षेत्र वेदना होती है वह गर्भ मे नही, परन्तु गति के प्रमाण मे भयङ्कर कष्ट और दुख है।

उत्पन्न होने की स्थिति तथा गर्भस्थान का विवेचन

शिष्य—हे गुरु ! गर्भस्थान मे आकर उत्पन्न होने वाला जीव वहा कितने दिन, कितनी रात्रि, तथा कितने मुहूर्त तक रहता है ? और उतने समय मे कितने श्वासो-श्वास लेता है ? गुरु—हे शिष्य ! उत्पन्न होने वाला जीव २७७॥ अहोरात्रि तक रहता है। वास्तविक रूप से देखा जाय तो गर्भ का काल इतना ही होता है। जीव ८, ३२५, मुहूर्त गर्भस्थान में रहता है। और १४, १०, २२५ श्वासोश्वास लेता है। इसमे भी कमी-वेसी होती है ये सब कर्म विपाक का

व्याघात समझना। गर्भस्थान के लिये यह समझना चाहिये कि माता के नाभि मंडल के नीचे फूल के आकर-वत् दो नाडिये है। इन दोनो के नीचे उधे फूल के आकारवत् एक तीसरी नाड़ी है कि जो योनि नाड़ी कहलाती है जिसमे जीव के उत्पन्न होने का स्थान है। इस योनि के अन्दर पिता तथा माता के पुद्गल का मिश्रण होता है। योनि रूप फूल के नीचे आम्र की मंजरी के आकर एक मांस की पेशी होती है जो हर महीने प्रवाहित होने से स्त्री ऋतु धर्म के अंदर आती है। यह रुधिर ऊपर की योनि नाडी के अन्दर ही आया करता है कारण कि वह नाडो खुली हुई ही रहती है। चौथे दिन ऋतुश्राव बन्द होजाता है। परन्तु अभ्यन्तर मे सूक्ष्म श्राव रहता है। स्नान करने पर पवित्र होता है। पाँचवे दिन योनि नाडी मे सूक्ष्म रुधिर का योग रहता है उस समय यदि वीर्यबिन्दु की प्राप्ति होवे तो उतने समय के लिए वह मिश्रयोनि कहलाती है और यह फल प्राप्ति के योग्य गिनी जाती है। यह मिश्रपना बारह मुहुर्त रहता है कि जिस अवधि में जीव की उत्पत्ति हो, इसमे एक, दो तीन आदि नव लाख तक उत्पन्न हो सकते है। इनका आयुष्य जघन्य अन्तमु० उत्कृष्ट तीन पल्योपम का। इस जीव का पिता एक ही होता है, परन्तु अन्य अपेक्षा से नव सो पिता तक शास्त्र का कथन है। यह संयोग से सम्भव नही है परंतु नदी के प्रवाह के सामने बैठ कर स्नान करने के समय उपरवाड़े से खिंच कर आये हुए पुरुष विन्दु (वीर्य) में सैकड़ो रजकरण स्त्री के शरीर में पिचकारी के आकर्षण की तरह आकर भर जाते है। कर्मयोग से उसके क्कचित् गर्भ रह जाता है तो जितने पुरुषो के रजकण आये हुए हो, वे सब पुरुष उस जीव के पिता तुल्य माने जाते है। एक साथ दश हजार तक गर्भ रह सकता है पर मच्छी तथा सर्पनी माता का न्याय है। मनुष्य के अधिक से अधिक तीन सन्ताने हो सकती है शेष मरण पा जाते है। एक ही समय नव लाख उत्पन्न होकर यदि मर जावे तो वह स्त्री जन्म पर्यंत बांझ रहती है। दूसरी तरह जो स्त्री कामांध बन कर

अनियमित रूप से विषय का सेवन करे अथवा व्यभिचारिणी बनकर मर्यादा रहित पर पुरुष का सेवन करे तो वही स्त्री वॉझ होती है। उसके गर्भ नही रहता ऐसी स्त्री के शरीर मे (झेरी) (जहरी) जीव उत्पन्न होते है कि जिनके डङ्क से विकारो की वृद्धि होती है और इससे वह स्त्री देवगुरु धर्म व कुल मर्यादा तथा शियल व्रत के लायक नही रह सकती। ऐसी स्त्री का स्वभाव निर्दय तथा असत्य-वादी होता है। जो स्त्री दयालु तथा सत्यवादी होती है वह अपने शरीर को यातना करती है, कामवासना पर काबू रखती है। अपनी प्रजा की रक्षा के निमित्त सांसारिक सुखो के अनुराग की मर्यादा करतो है। इस कारण से ऐसी स्त्रिया पुत्र-पुत्री का अच्छा फल प्राप्त करती है। केवल रुधिर से या केवल विन्दु से प्रजा प्राप्त नही हो सकती। ऐसे ही ऋतु के रुधिर सिवाय अन्य रुधिर प्रजा प्राप्ति के निमित्त काम नही आ सकता। एक ग्रन्थकार कहते है कि सूक्ष्म रीति से सोलह दिन पर्यत ऋतुस्राव होता है। यह रोगी स्त्री के नही. परन्तु निरोगी स्त्री के शरीर मे होता है और यह प्रजा प्राप्ति के योग्य कहा जाता है।

उक्त दिनो मे से प्रथम तीन दिनो का ग्र थकार निपेध करते है। यह नीति मार्ग का न्याय है और इस न्याय को पुण्यात्मा जीव स्वीकार करते है। अन्य मतानुसार चार दिन का निषेध है, क्योकि चौथे दिन को उत्पन्न होने वाला जीव अल्प समय तक ही जीवन धारण कर सकता है। ऐसा जीव शक्तिहीन होता है व माता-पिता को भार रूप होता है। पॉचवे से सोलहवे दिन तक नीति शास्त्रानुसार गर्भाधारण सस्कार के उपयुक्त माने जाते है। पश्चात् एक के बाद एक ।दिन) का वालक उत्तरोत्तर तेजस्वी, बलवान, रूपवान, बुद्धिमान और अन्य सर्व सस्कारो में श्रेष्ठ दीर्घायुष्य वाला तथा कुटुम्ब पालक निवडता (होता) है। इनमे से छटठी, आठवी, दशवी, बारहवी, चौदहवी एव सम (बेकी की) रात्रि विशेषकर पुत्री रूप फल देती

है। इसमें विशेषता यह है कि पाचवी रात्रि को उत्पन्न होने वाली पुत्री कालांतर में अनेक पुत्रियो की माता बनती है। पांचवी, सातवी, नववी, ग्यारहवी, तेरहवी, पन्द्रहवी एवं विषम (एकी की) रात्रि का बीज पुत्र रूप मे उत्पन्न होता है और वह ऊपर कहे गुण वाला निकलता है। दिन का संयोग शास्त्र द्वारा निषेध है। इतने पर भी अगर होवे (सन्तान) तो वह कुटुम्ब की तथा व्यावहारिक सुख व धर्म की हानि करने वाला निकलता है।

गर्भ में पुत्र या पुत्री होने का कारण

वीर्य के रजकरण अधिक और रुधिर के थोड़े होवे तो पुत्र रूपफल की प्राप्ति होती है। रुधिर अधिक और वीर्य कम होवे तो पुत्री उत्पन्न होती है। दोनों समान परिमाण मे होवे तो नपुसक होता है। (अब इनका स्थान कहते है) माता के दाहिनी तरफ पुत्र, बायी कुक्षि मे पुत्री और दोनो कुक्षि के मध्य में नपुंसक के रहने का स्थान है। गर्भ की स्थिति मनुष्य गर्भ में उत्कृष्ट बारह वर्ष तक जीवित रह सकता है। बाद मे मर जाता है, परन्तु शरीर रहता है, जो चौबीस वर्ष तक रह सकता है। इस सूखे शरीर के अन्दर चौवीसवे वर्ष नया जीव उत्पन्न होवे तो उसका जन्म अत्यन्त कठिनाई से होता है। यदि नही जन्मे तो माता की मृत्यु होती है। सज्ञी तिर्यञ्च आठ वर्ष तक गर्भ में जीवित रहता है। आहार की रीति कहते है—योनि कमल में उत्पन्न होने वाला जीव प्रथम माता पिता के मिले हुए मिश्र पुद्‌गलो का आहार करके उत्पन्न होता है इसका अर्थ प्रजा द्वार से जानना। विशेष इतना है कि यह आहार माता पिता का पुद्‌गल कहलाता है। इस आहार से सात धातु उत्पन्न होती है। इनमे—१ रसी (राध) २ लोही ३ मांस ४ हड्डी ५ हड्डी की मज्जा ६ चर्म ७ वीर्य और नसा जाल एवं सात मिल कर दूसरी शरीर पर्याय अर्थात् सूक्ष्म पुतला कहलाता है। छः पर्या० बंधने के बाद वह बीजक (वीर्य) सात

दिवस मे चावल के धोवन समान तोलदार हो जाता है। चौदहवे दिन जल के परपोटे समान आकार में आता है। इकवीश दिन में नाक के श्लेश्म के समान और अठाईस दिन में अडतालीस मासे वजन मे हो जाता है। एक महीने में बेर की गुठली समान अथवा छोटे आम की गुठली समान हो जाता है। इसका वजन एक करखरा कम एक पल का होता है, पल का परिमाण–सोलह मासे का एक करखरा और चार करखण का एक पल होता है। दूसरे महीने कच्ची केरी समान, तीसरे महीने पक्की केरी (आम) समान हो जाता है। इस समय से गर्भ प्रमाणे माता को डोहला (दोहद) भाव उत्पन्न होने लगता है और यह क्रम फलानुसार फलता है। इसके द्वारा गर्भ अच्छा है या बुरा इसकी परीक्षा होती है। चौथे महीने कणक के पिण्डे के समान हो जाता है। इससे माता के शरीर की पुष्टि होने लगती है। पाचवे महीने मे पॉच अकूरे फूटते है। जिनमें से २ हाथ, २ पांव, ५ वा मस्तक, छट्ठे महीने रुधिर, रोम, नख और केश की वृद्धि होने लगती है। कुल साढे तीन क्रोड़ रोम होते है जिनमे से दो क्रोड और इकावन लाख गले ऊपर व नवाणु लाख गले के नीचे होते है। दूसरे मत से:— इतनी सख्या के रोम गाडर के कहलाते है। यह विचार उचित (वाजबी) मालूम होता है। एकेक रोम के उगने की जगह मे १।।। से कुछ विशेष रोग भरे हुए है। इस हिसाब से पौने छः करोड़ से अधिक रोग होते है। पुण्य के उदय से ये ढके हुए होते है। यही से रोम आहार की शुरुआत होने की सम्भावना है। तत्व तु सर्वज्ञ गम्य'। यह आहार माता के रुधिर का समय-समय लेने मे आता है और समय-समय पर गमता है। सातवे महीने सात सौ सिराये अर्थात् रसहरणी नाडियाँ बधती है। इनके द्वारा शरीर का पोषण होता है और इससे गर्भ को पुष्टि मिलती है। इनमें से स्त्री को ६७० (नाडिये), नपु सक को ६८० और पुरुष को ७०० पूरी होती है। पांचसो मांस की पेशियां बंधती है, जिनमें से स्त्री के तीस और

नपुंसक के बीस कम होती है, इनसे हड्डियाँ ढंकी हुई रहती है। हाड सर्व मिला कर ३६० सांधे (जोड़) होते है। एकेक जोड़ पर आठ-आठ मर्म के स्थान है। इन मर्म स्थानो पर एक टकोर लगने पर मरण पाता है। अन्य मान्यता से एक सौ साठ सधि और १७० मर्म-स्थान होते है। उपरांत सर्वज्ञ गम्य। शरीर मे छः अङ्ग होते है। जिनमें से मांस, लोही और मस्तक की मज्जा (भेजा) ये तीन अङ्ग माता के है और हड्डी (हाड़) मज्जा और नख, केश, रोम ये तीन अङ्ग पिता के है। आठवे महीने सर्व अङ्ग उपाङ्ग पूर्ण हो जाते है। इस गर्भ को लघु नीत, बड़ी नीत श्लेष्म, उधरस, छीक, अगड़ाई आदि कुछ नही होता व जिस जिस आहार को खेचता है उस २ आहार का रस इन्द्रियो को पुष्ट करता है। हाड़, हाड़ की मज्जा चरवी, नख केश की वृद्धि होती है।

आहार लेने की दूसरी रीति यह है कि माता की तथा गर्भ की नाभि व व ऊपर की रसहरणी नाडी ये दोनो परस्पर वाले (नेहरू) के आटे के समान वीटे हुए है। इसमें गर्भ की नाड़ी का मुंह माता की नाभि मे जुड़ा हुआ होता है। माता के कोठे में पहले जो आहार का कवल पड़ता है वह नाभि के पास अटक जाता है व इसका रस वनता है, जिससे गर्भ अपनी जुडी हुई रसहरणी नाड़ी से खेच कर पुष्ट होता है। शरीर के अन्दर ७२ कोठे है, जिनमे से पांच वड़े है। शीयाले मे दो कोठे आहार के और एक कोठा जल का व गर्मी मे दो कोठे जल के और एक कोठा आहार का तथा चौमासे मे दो कोठे आहार के और दो कोठे जल के माने जाते है। एक कोठा हमेशा खाली रहता है। स्त्री के छट्टा कोठा विशेष होता है कि जिसमें गर्भ रहता है। पुरुष के दो कान, दो चक्षु, दो नासिका (छेद), मुंह, लघु नीत, बडी नीत आदि नव द्वार अपवित्र और सदा काल वहते रहते हैं और स्त्री के दो थन (स्तन) और एक गर्भ द्वार ये तीन मिल कर कुल वारह द्वार सदाकाल वहते रहते है।

शरीर के अन्दर अठारह पृष्ट दण्डक नाम की पासलिये है। जो गर्भवास की करोड़ के साथ जुडी हुई है। इनके सिवाय दो वासे की बारह कडक पांसलिये है कि जिनके ऊपर सात पुड चमडे के चढे हुवे होते है। छाती के पडदे मे दो (कलेजे) है। जिनमे से एक पड़दे के साथ जुडा हुवा है और दूसरा कुछ लटकता हुवा है। पेट के पडदे मे दो अतस (नल) है जिनमे से स्थूल नल मल स्थान है और सूक्ष्म लघु नीत का स्थान है। दो प्रणव स्थान अर्थात् भोजन पान परगमाने (पचाने) की जगह है। दक्षिण परगमे तो दु ख उपजे व बाये परगमे तो सुख। सोलह आँतरा है, चार आगुल की ग्रीवा है। चार पल की जीभ है, दो पल की आखे है, चार पल का मस्तक है। नव आंगुल की जीभ है, अन्य मान्यतानुसार सात आंगुल की है। आठ पल का हृदय है पच्चीश पल का कलेजा है।

सात धातु का प्रमाण व माप

शरीर के अन्दर एक आढा (टेढा) रुधिर का और आधा मांस का होता है। एक पाथा मस्तक का भेजा, एक आढा लघुनीत, एक पाथा बडी नीत का है। कफ, पित्त, और श्लेष्म इन तीनो का एकेक कलव और आधा कलव वीर्य का होता है। इन सबो को मूल धातु कहते है कि जिन पर शरीर का टिकाव है। ये सातो धातु जब तक अपने वजन प्रमाण रहते है तब तक शरीर निरोगी और प्रकाशमय रहता है। उनमे कमी बेसी होने से शरीर तुरन्त रोग के आधीन हो जाता है।

नाड़ी विवेचन

नाडी का विवेचन—शरीर के अन्दर योग शास्त्र के अनुसार ७२००० नाडिये है। जिनमे से नवसो नाडिये बड़ी है, नव नाडी धमण के समान वडी है जिनके धड़कन से रोग की तथा सचेत शरीर की

परीक्षा होती है। दोनों पांव की घुंटी के नीचे दो नाड़ी, एक नाभी की, एक हृदय की, एक तालवे की दो लमणे की और दो हाथ की एवं नव। इन सर्व नाडियों का मूल सम्बन्ध नाभि से है। नाभि से १६० नाड़ी पेट तथा हृदय ऊपर फैलकर ठेठ ऊंचे मस्तक तक गई हुई है। इनके बन्धन से मस्तक स्थिर रहता है। ये नाड़िये मस्तक को नियम पूर्वक रस पहुंचाती है जिससे मस्तक सतेज आरोग्य और तर रहता है। जब नाड़ियों में नुकसान होता है तब आँख, नाक, कान और जीभ ये सब कमजोर रोगिष्ट बन जाते है व शूल, गुमडे आदि व्याधियों का प्रकोप होने लगता है।

दूसरी १६० नाडी नाभी के नीचे चली हुई है जो जाकर पांव के तलिये तक पहुची हुई है। इनके आकर्षण से गमनागमन करने, खड़े होने व बैठने आदि में सहायता मिलती है। ये नाड़िये वहा तक रस पहुँचा कर शरीर आदि को आरोग्य रखती है। नाड़ी में नुकसान होने से संधिवात, पक्षाघात (लकवा) पैर आदि का कूटना, कलतर, तोड़-काट, मस्तक का दुखना व आधाशीशी आदि रोगो का प्रकोप हो जाता है।

तीसरी १६० नाडी नाभी से तिर्छी गई हुई है। ये दोनो हाथों की आंगुलियें तक चली गई है। इतना भाग इन नाडियों से मजबूत रहता है। नुकसान होने से पासा शूल, पेट के दर्द, मुंह के व दांतो के दर्द आदि रोग उत्पन्न होने लगते है।

चौथी १६० नाडी नाभी से नीचे गर्भ स्थान पर फैली हुई है। जो अपान द्वार तक गई हुई है। इनकी शक्ति द्वारा शरीर का बन्धेज रहा हुवा है। इनके अन्दर नुकसान होने पर लघु नीत वडी नीत आदि की कबजियत (रुकावट) अथवा अनियमित छूट होने लग जाती है। इसी प्रकार वायु, कृमि प्रकोप, उदर विकार, अर्श, चांदी, प्रमेह, पवनरोध, पांडु रोग, जलोदर, कठोदर, भगंदर, संग्रहणी आदि का प्रकोप होने लग जाता है।

नाभि से पच्चीश नाडी ऊपर की ओर श्लेष्म द्वार तक गई हुई है। जो श्लेष्म की धातु को पुष्ट करती है। इनमे नुकसान होने पर श्लेष्म, पीनस का रोग हो जाता है। अन्य पच्चीश नाडी इसी तरफ आकर पित्त धातु को पुष्ट करती है। जिनमे नुकसान होने पर पित्त का प्रकोप तथा ज्वरादिक रोग की उत्पत्ति होने लग जाती है। तीसरी दश नाडिएँ वीर्य धारण करने वाली है जो वीर्य को पुष्ट करती है। इनके अन्दर नुकसान होने पर स्वप्नदोष मुख—लाल पूणित पेशाब आदि विकारो से निर्बलता आदि में वृद्धि होती है।

एव सर्व मिलाकर ७०० नाडी रस खीच कर पुष्टि प्रदान करती है व शरीर को टिकाती है। नियमित रूप से चलने पर निरोग और नियम भङ्ग होने पर रोगी (शरीर) हो जाता है।

इसके सिवाय दो सौ नाडी और गुप्त तथा प्रगट रूप से शरीर का पोषण करती है। एव सर्व नव सौ नाडिये हुई।

उक्त प्रकार से नव मास के अन्दर सर्व अवयव सहित शरीर मजबूत बन जाता है। गर्भाधान के समय से जो स्त्री ब्रह्मचारिणी रहती है उसका गर्भ अत्यन्त भाग्यशाली, मजबूत बन्धेज का, वलवान तथा स्वरूपवान होता है न्याय नीति वाला और धर्मात्मा निकलता है। उभय कुलो का उद्धार करके माता पिता को यश देने वाला होता है और उसकी पांचो ही इन्द्रिये अच्छी होती है। गर्भाधान से लगा कर सन्तति होने तक जो स्त्री निर्दय बुद्धि रख कर कुशील (मैथुन) का सेवन करती है तो यदि गर्भ मे पुत्री होवे तो उनके माता पिता दुष्ट मे दुष्ट, पापी मे पापी और रौरव नरक के अधिकारी बनते है। गर्भ भी अधिक दिनों तक जीवित नही रहता यदि जिन्दा रहे भी तो वह काना, कुबडा, दुर्बल, शक्ति हीन तथा खराब डीलडौल का होता है। क्रोधी, क्लेशी,प्रपची और खराब चाल चलन वाला निकलता

है। ऐसा समझ कर प्रजा (सन्तति) की हित इच्छने वाली जो माताएं गर्भ काल मे शीलवन्ती रहती है वे धन्य है ।

विशेप में उपरोक्त गर्भावास के स्थानक में महा कष्ट तथा पीडा उठानी पड़ती है। इस पर एक दृष्टांत दिया जाता है—जिस मनुष्य का शरीर कोढ तथा पित्त के रोग से गलता होवे ऐसे मनुष्य के शरीर मे साड़े तीन क्रोड सूईये अग्नि में गरम करके साड़े तीन रोमो के अन्दर पिरोवे। पुन. शरीर पर निमक तथा चूने का जल छीट कर शरीर को गीले चमड़े से मढ़े और मढ़ कर धूप के अन्दर रखे। सूखने (शरीर का चमड़ा) पर जो अत्यन्त कष्ट उसे होता है, उस (दुःख) को सिवाय भोगने वाले और सर्वज्ञ के अन्य कोई नही जान सकता। इस प्रकार वेदना पहिले महीने गर्भ को होती है, दूसरे महीने दुगनी एवं उत्तरोत्तर नववे महीने नवगुणी वेदना होती है। गर्भवास की जगह छोटी है और गर्भ का शरीर (स्थूल) वडा है, अतः सुकड़ करके आम के समान अधोमुख करके रहना पडता है। इस समय मस्तक छाती पर लगा हुआ और दोनो हाथो की मुट्ठिये आँखो के आड़े दी हुई होती है। कर्मयोग से दूसरा व तीसरा गर्भ यदि एक साथ होवे तो उस समय की सकड़ाई व पीड़ा वर्णनातोत है। माता की विष्टा (मल) गर्भ के नाक पर से होकर गिरती है। खराव से खराब गन्दगी मे पडा हुआ होता है। वैठी हुई माता खडी होवे तो उस समय गर्भ को ऐसा मालूम होता है कि मैं आसमान मे फेका जा रहा हूँ। नीचे बैठते समय ऐसा मालूम होता है कि मै पाताल मे गिराया जा रहा हू। चलते समय ऐसा जान पडता है। कि मसक मे भरे हुए दही के समान डगेलाया जा रहा हूँ। रसोई करने के समय गर्भ को ऐसा मालूम होता है कि मैं ईट की भट्ठी मे गल रहा हूँ। चक्की के पास पीसने के लिये वैठने पर गर्भ जाने कि मै कुम्हार के चाक पर चढाया जा रहा हूँ। माता चित्त सोवे तब गर्भ को मालूम होवे कि मेरी छाती पर सवा मन

की शिला पड़ी हुई है। मैथुन करने के समय गर्भ को ऊखल मूसल का न्याय है।

इस प्रकार माता-पिता के द्वारा पहुंचाये हुए तथा गर्भस्थान के एव दो प्रकार के दु खो से पीडित, कुटाये हुए, खडाये हुए और अशुचि से तर बने हुए इस गर्भ की दया शीलवान माता पिता बिना कौन देख सके ? अर्थात् पापी स्त्री-पुरुष (विधि गर्भ से अज्ञात) देख सकते है क्या ? नही देख सकते।

गर्भ का जीव माता के दुख से दुखी व सुख से सुखी होता है। माता के स्वभाव की छाया गर्भ पर गिरती है। गर्भ मे से बाहर आने के बाद पुत्र-पुत्री का स्वभाव, आचार-विचार, आहार व्यवहार आदि सब माता के स्वभावानुसार होता है। इस पर माता-पिता के ऊच-नीच गर्भ की तथा यश-अपयश आदि की परीक्षा सन्तति रूप फोटू के ऊपर से विवेकी स्त्री पुरुष कर सकते है। कारण कि सन्तति रूप चित्र (फोटू) माता पिता की प्रकृति अनुसार खिचा हुआ होता है। माता धर्म ध्यान मे, उपदेशश्रवण करने मे तथा दान-पुन्य करने मे और उत्तम भावना भावने मे सलग्न होवे तो गर्भ भी वैसे ही विचार वाला होता है। यदि इस समय गर्भ का मरण होवे तो वह मर कर देवलोक मे जा सकता है। ऐसे ही यदि माता आर्त और रौद्र ध्यान मे होवे तो गर्भ भी आर्त और रौद्र ध्यानी होता है। इस समय गर्भ की मृत्यु होने पर वो नरक मे जाता है। माता यदि उस समय महाकपट मे प्रवृत्त हो तो गर्भ उस समय मर कर तिर्यंच गति मे जाता है। माता महा भद्रिक तथा प्रपञ्च रहित विचारो मे लगी हुई होवे तो गर्भ मर कर मनुष्य गति मे जाता है एव गर्भ के अन्दर से ही जीव चारो गति मे जा सकता है। गर्भकाल जब पूर्ण होता है, तब माता तथा गर्भ की नाभी की विटी हुई रसहरणी नाड़ी खुल जाती है। जन्म होने के समय यदि माता और गर्भ के पुन्य तथा

आयुष्य का बल होवे तो सीधे मार्ग से जन्म हो जाता है। इस समय कितने ही मस्तक तरफ से अथवा कितने ही पैर तरफ से जन्म लेते है, परन्तु यदि माता और गर्भ दोनों भारी कर्मी होवे तो गभ टेढा गिर जाता है जिससे दोनो को मृत्यु हो जाती है अथवा माता को बचाने के निमित्त पापी गर्भ के जीव पर बेध कर छुरी व शस्त्र से खण्ड २ करके जिन्दगी पार की शिक्षा देते है। इसका किसी को शोक, सताप होता नही।

सीधे मार्ग से जन्म लेने वाले सोने चाँदो के तार समान है।माता का शरीर जतरड़ा है। जैसे सोनी तार खेचता है वैसे गर्भ खिचा कर (करोड़ों कष्टों से) बाहर निकल आता है अर्थात् नववे महीने जो पीड़ा होती है उससे क्रोड़ गुणी पीड़ा जन्म के समय गभ को होती है। मृत्यु के समय तो क्रोड़ाक्रोड़ गुणा दुख गर्भ को होता है। यह दुख वरणनातीत है। ये सब खुद के किये हुए पुण्य पाप के फल है, जो उदय काल मे भोगे जाते है। यह सर्व मोहनीय कर्म का सन्ताप है।

ऊपर अनुसार गर्भकाल, गर्भ स्थान तथा गर्भ मे उत्पन्न होनेवाले जीव की स्थिति का विवेचन आदि तंदुल वियालिया पइना, भगवती जी अथवा अन्य ग्रन्थान्तरो के न्यायानुसार गुरु ने शिष्य को उपदेश द्वारा कहकर सुनाया। अन्त मे कहने लगे कि जन्म होने के बाद भङ्गियानी के समान कार्य द्वारा माता संभाल से उछेर कर सन्तति को योग्य उम्र का कर देती है। सन्तति की आशा मे माता का यौवन नष्ट हुआ है, व्यवहारिक सुख को तिलाञ्जलि दी गई है एवं सब बातो को तथा गर्भवास व जन्म के दुखो को भूल कर यौवन मद में उन्मत्त वने हुए पुत्र-पुत्रियां महा उपकारी माता को तिरस्कार दृष्टि से धिक्कार देकर अनादर करते और स्वयं वस्त्रालङ्कार से सुशोभित होते है। तेल-फुलेल, चोवा चदन, चम्पा चमेली, अगर-तगर, अमर और अतर आदि मे मस्त होकर फूल-हार व गजरे धारण करते है। इनकी सुगध के अभिमान से अन्धे वन कर ऐसा समझते है कि यह

सर्व सुगध मेरे शरीर से निकल कर बाहर आ रही है। इस प्रकार की शोभा व सुगध माता-पिता आदि किसी के भी शरीर (चमडे) मे नही है। इस प्रकार के मिथ्याभिमान की आधी मे पडे हुए बेभान अज्ञान प्राणियो को गर्भवास के तथा नरक निगोद के अनन्त दुख पुनः तैयार है। इतना तो सिद्ध है कि ये सब विकार पापी माता की मूर्खता के स्वभाव का तथा कम भाग्य के उत्पन्न होने वाले पापी गर्भ के वक्र कर्मो का परिणाम है।

अब दूसरी तरफ विवेकी और धर्मात्मा व शीलव्रत धारण करने वाली सगर्भा माताओ के पुत्र-पुत्रिये जन्म लेकर उछरते है। इनकी जन्म क्रिया भी वैसी ही होती है। अन्तर केवल इतना कि इन पर माता-पिता के स्वभावो की छाया पडी हुई होती है। इस प्रकार की माताओ के स्वभाव का पान करके योग्य उम्र वाले पुत्र-पुत्रियां भी अपने २ पुण्यो के अनुसार सर्व वैभव का उपभोग करते है। इतना होते हुए भी अपने माता पिता के साथ विनय का व्यवहार करते है, गुरुजनो के प्रति भक्ति का व्यवहार करते है। लज्जा, दया, क्षमादि गुणो मे और प्रभु प्रार्थना मे आगे रहते है, अभिमान से विमुख रह कर मैत्री भाव के सम्मुख रहते है। जीवन योग्य सत्सङ्ग करके ज्ञान प्राप्त करते है और शरीर सम्पत्ति आदि की ओरसे उदास रहकर आत्म स्मरण मे जीवन पूर्ण करते है।

अत. सर्व विवेक दृष्टि वाले स्त्री-पुरुषो को इस अशुचिपूर्ण गन्दे शरीर की उत्पत्ति पर ध्यान देकर ममता घटानी चाहिये, मिथ्याभिमान से विमुख रहना चाहिये। मिली हुई जिन्दगी को सार्थक करने के लिये सत्कर्म करना चाहिये कि जिससे उपरोक्त गर्भ-वास के दु.खो को पुनः प्राप्त नही करना पड़े। एव सत्पुरुष को मन, वचन और कर्म से पवित्र होना चाहिये।

नक्षत्र और विदेश गमन

शिष्य नमस्कार करके पूछता है कि हे गुरु ! नक्षत्र कितने ? तारे कितने ? इनका आकार कैसा ? वे नक्षत्र ज्ञान शक्ति बढ़ाने में क्या मददगार है ? उन नक्षत्र के समय विदेश गमन करने पर किस पदार्थ का उपभोग करके चलना चाहिये और उससे किस फल की प्राप्ति होती है ?

गुरु—(एक साथ छः ही सवालो का जवाव देते है) :—हे शिष्य ! नक्षत्र अठावीश है, जिन सवो के आकार अलग २ है। ये आकर इन नक्षत्रो के ताराओं की संख्या के ऊपर से समझे जा सकते है। इनके आधार से स्वाध्याय, ध्यान करने वाले मुनि रात्रि की पोरसियो का माप अनुमान कर आत्म स्मरण में प्रवृत्त हो सकते है। इनमें से दश नक्षत्र ज्ञान शक्ति में वृद्धि करने वाले है। ज्ञान शक्ति वाले महात्मा अपने संयम की वृद्धि निमित्त तथा भव्य जीवों पर उपकार करने के लिये विदेश में विचरते है, जिससे अनेक लाभ होने की सम्भावना है। अत इन नक्षत्रो का विचार करके गमन करने पर धर्म वृद्धि का कारण होता है। यही नक्षत्रो का फल है। चलने के समय भिन्न भिन्न पदार्थो का उपभोग करने मे आता है। उन पदार्थो के साथ मनोभावनाओ का रस मिल कर मिश्रित रस वनता है। तदन्तर वे उपभोग मे लिये जाते है। इसे शकुन वाधा कहते है। इनका मतलव ज्ञानी ही जानते है। उनके सिवाय अज्ञानी प्राणी इन सर्वोत्तम तत्त्व को मिथ्याभिमान की परिणति तरफ प्रवृत्त करके उपजीविका के साधन रूप उनका गैर उपयोग करते है। यह अज्ञानता का लक्षण है।

अठावोश नक्षत्रो मे पहला नक्षत्र अभीच है। इसके तारे तीन है, जिनका गाय के मस्तक तथा मुख समान आकार होता है। उत्तम जाति के स्वादिष्ट व सौरभदार (सुगन्धित) वृक्ष के कुसुमो का उपभोग करके अर्थात् गुलकन्द खाकर गमन करने से अनेक लाभ होते है। १ अन्य मत से अश्वनी नक्षत्र प्रथम गिना जाता है। यह वहुसूत्री गम्य है। २ दूसरे श्रवण न० के तीन तारे है। आकार कामधेनु (कावड) समान है। इसके योग मे खीर खाण्ड खाकर पश्चिम सिवाय अन्य तीन दिशाओ मे जाने से इच्छित कार्य की सिद्धि होती है। ३ तीसरे घनिष्टा न० के पॉच तारे है। इसका आकार तोते के पिजरे समान है। इसके सयोग से मक्खन आदि खाकर दक्षिण सिवाय अन्य दिशाओ मे गमन करने से कार्य सफल होता है। ४ शतभीखा न० के सौ तारे है। इसका आधार बिखरे हुए फूल के समान है। इसके योग पर सारे (आखे) तुवर का भोजन खाकर दक्षिण सिवाय अन्य दिशाओ मे जाने से भय की सम्भावना रहती है। ५ पूर्वाभाद्रपद न० के दो तारे है। इसका आकार अर्ध वाव्य के भाग समान है। इसके योग पर करेले की शाक खाकर चलने पर लडाई होवे, परन्तु इससे ज्ञानवृद्धि की सम्भावना भी है। उत्तरा भाद्रपद न० के दो तारे है। इसका आकार भी पूर्वा भाद्रपद समान होता है। इसमे वासकपूर (वशलोचन) खाकर पिछले पहर चलने से सुख होता है। यह न० दीक्षा के योग्य है। ७ रेवती न० के वत्तीस तारे है। इसका आकार नाव समान है। इसके समय स्वच्छ जल पान करके चलने से विजय मिलती हैं। ८ अश्वनि न० के तीन तारे है। घोडे के बन्ध जैसा आकार है। मटर (वटले) की फली का शाक खाकर चलने से सुख-शान्ति प्राप्ति होती है। ६ भरणी न० के तीन तारे है। इसका आकार स्त्री के मर्मस्थान वत् है। तेल, चावल खाकर चलने पर सफलता मिलती है। १० कृतिका न० के छः

तारे होते है, जिसका नाई की पेटी समान आकार होता है। गाय का दूध पीकर चलने पर सौभाग्य की वृद्धि होती है तथा सत्कार मिलता है। ११ रोहिणी न० के पॉच तारे होते है। गाडे के ऊंट समान इसका आकार होता है। इस समय हरे मूंग खाकर चलने पर मार्ग मे यात्रा के योग्य सर्व सामग्री अल्प परिश्रम से प्राप्त हो जाती है। यह नक्षत्र दीक्षा योग्य है। १२ मृगशीर्ष न० के तीन तारे होते है। इसका आकार हिरण के सिर समान होता है। इलायची खाकर चलने पर अत्यन्त लाभ होता है। यह न० नये विद्यार्थी की तथा नये शास्त्रों का अभ्यास करने वालो की ज्ञानवृद्धि करने वाला है। १३ आर्द्रा न० का एक ही तारा है। इसका रुधिर के बिन्दु समान आकार है। इस समय नवनीत (माखन) खाकर चलने से मरण, शोक, सन्ताप तथा भय एव चार फल की प्राप्ति होती है, परन्तु ज्ञान अभ्यासियो को सत्वर उत्तम फल देनेवाली निकलता है और वर्षा ऋतु के मेघ-बादल की अस्वाध्याय दूर करता है। १५ पुनर्वसु न० के पॉच तारे है। इसका आकार तराजू के समान है। घृत-शक्कर खाकर चलने पर इच्छित फल मिलते है। १५ पुष्य न० के तीन तारे है, जिसका आकार वर्द्धमान (दो जुड़े हुए रामपात्र) समान होता है। खीर खाण्ड खाकर चलने से अनियमित लाभ की प्राप्ति होती है और इस नक्षत्र में किये हुए नये शास्त्र का अभ्यास भी बढ़ता है। १६ अश्लेषा न० के छः तारे है। इसका आकार ध्वजा समान है। इस समय सीताफल खाकर चले तो प्राणान्त भय की सम्भावना होती है, परन्तु यदि कोई ज्ञान, अभ्यास, हुनर, कला, शिल्प, शास्त्र आदि के अभ्यास में प्रवेश करे तो जल तथा तेल के विन्दु समान उसके ज्ञान का विस्तार होता है। १७ मघा न० के सात तारे होते है, जिनका आकार गिरे हुए किले की दीवार के समान है। केसर खाकर चलने पर वुरी तरह से आकस्मिक मरण होता है। १८ पूर्वा फाल्गुनी नक्षत्र के दो तारे होते है। इनका आकार आधे पलङ्ग जैसा होता है। इस समय कोठिवड़े (फल) की शाक खा-

कर चलने से विरुद्ध फल की प्राप्ति होती है, परन्तु शास्त्र अभ्यासी के लिए श्रेष्ठ है। (१९) उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र के भी दो तारे होते हैं और आकार भी पलङ्ग जैसा होता है इस समय कडा नामक वनस्पति की फली का शाक खाकर चलने पर सहज ही क्लेश मिलता है। यह नक्षत्र दीक्षा लायक है। (२०) हस्त नक्षत्र के पाँच तारे है। इसका आकार हाथ के पजे समान है सिगोडे खाकर उत्तर दिशा सिवाय अन्य तरफ चलने से अनेक लाभ है व नये शास्त्र अभ्यासियो को अत्यन्त शक्ति देने वाला है। (२१) चित्रा नक्षत्र का एक ही तारा है खिले हुवे फूल जैसा उसका आकार है। दो पहर दिन चढने बाद मूग की दाल खाकर दक्षिण दिशा सिवाय अन्य दिशाओ मे जाने पर लाभ होता है व ज्ञान वृद्धि होती है (२२) स्वाति नक्षत्र का एक तारा है इसका आकार नागफनी समान होता है आम खाकर जाने पर लाभ लेकर कुशल क्षेम पूर्वक जल्दी घर लौट आ सकते है। (२३) विशाखा नक्षत्र के पाँच तारे होते है जिसका आकार घोड़े की लगाम (दामणी) जैसा है इस योग पर अलसी फल खाकर जाने से विकट काम सिद्ध हो जाते है। (२४) अनुराधा नक्षत्र के चार तारे है। इसका आकार एकावली हार समान होता है। चावल मिश्री खाकर जाने से दूर देश यात्रा करने पर भी कार्य सिद्धि कठिनता से होती है। (२५) जेष्ठा न० के तीन तारे है। इनका आकार हाथी के दाँत जैसा होता है। इस समय कलथी का शाक अथवा कोल कुट (बोर कुट) खाकर चलने से शीघ्र मरण होता है। (२६) मूल न० के ग्यारह तारे हैं। इसका वीछे जैसा आकार है। मूला के पत्र का शाक खाकर जाने से कार्य सिद्धि मे बहुत समय लगता है। इस नक्षत्र को वीछीडा भी कहते है। ज्ञान अभ्यासियो के लिये तो यह अच्छा है। २७ पूर्वाषाढ न० के चार तारे है। हाथी के पॉव समान इसका आकार है। इस समय खीर ऑवला खाकर जाने से क्लेश, कुसम्प व अशान्ति प्राप्त होती है, परन्तु शास्त्र अभ्यासियो को अच्छी शक्ति देने वाला

होता है। (२८) उत्तराषाढ़ा ५० के चार तारे होते है, इसका बैठे हुए सिह समान आकार है। इस समय पके हुए वीली फल खाकर जाने से सर्वसाधन सहित कार्य सिद्धि होती है। यह नक्षत्र दीक्षित करने योग्य है।

ऊपर बताये हुए अट्ठावीस नक्षत्रों में से पाँचवाँ, बारहवाँ, तेरहवाँ, पन्द्रहवाँ, सोल्हवाँ, अट्ठारहवाँ, बीसवाँ, एकवीसवाँ, छब्बीसवाँ और सत्तावीसवाँ एव दश नक्षत्रो से अमुक नक्षत्र चन्द्र के साथ जोड़ कर गमन करते होवे व उस दिन गुरुवार होवे तब उस समय मिथ्याभिमान दूर करके विनय भक्तिपूर्वक गुरुवन्दन करे व आज्ञा प्राप्त करके शास्त्राध्ययन करने में तथा वांचन लेने मे प्रवृत्त होवे। ऐसा करने से सत्वर ज्ञान वृद्धि होती है, परन्तु याद रखना चाहिये कि छः वार छोड कर गुरुवार लेवे। २ अष्टमी, २ चउदश, पूर्णिमा, अमावस्या और २ एकम ये सर्व तिथि छोड़ कर शेष अन्य तिथियो में अच्छा चौघड़िया देख कर सूर्य-गमन मे प्रारम्भ करे।

विशेष मे गणिपद (आचार्य), वाचक पद (उपाध्याय) अथवा बडी दीक्षा देने के शुभ प्रसंग मे २ चोथ २ छट्ठ, २ अष्टमी, २ नवमी, २ वारस, २चउदश, पूर्णिमा तथा अमावस्या आदि चौदह तिथियाँ निषेध है। इनके सिवाय की अन्य तिथि अथवा वार नक्षत्र योग्य है। ऐसे काल के लिये गणी विधि प्रकरण ग्रन्थ का न्याय है। अष्टमी को प्रारम्भ करने पर पढाने वाला मरे अथवा वियोग पडे। अमावस्या के दिन प्रारम्भ करने पर दोनो मरे और एकम के दिन प्रारम्भ करने से विद्या की नास्ति होवे। ऐसा समझ कर तिथि वार नक्षत्र चौघड़िया देख कर गुरु सम्मुख ज्ञान लेना चाहिये। यह श्रेय का कारण है।

●

पांच देव

(भगवती सूत्र, शतक १२ उद्देश ६)

गाथा :— नाम गुण उवाए, ठी वीयु चवण सचीठणा,
अन्तर अप्पा बहुय च, नव भेए देव दाराए ।।१।।

१ नाम द्वार, २ गुण द्वार, ३ उववाय द्वार, ४ स्थिति द्वार ५ रिद्धि तथा विकुर्वणा द्वार ६ चवन द्वार ७ सचिठण द्वार ८ अन्तर द्वार ९ अल्प बहुत्व द्वार ।

१ नाम द्वार

१ भविय द्रव्य देव, २ नर देव, ३ धर्म देव, ४ देवाधि देव, ५ भाव देव ।

२ गुण द्वार

मनुष्य तथा तिर्यच पचेन्द्रिय मे से जो देवता मे उत्पन्न होने वाले है उन्हे भविय देव कहते है । २ चक्रवर्ती को ऋद्धि भोगने वालो को नर देव कहते है ।

चक्रवर्ती की रिद्धि का वर्णन :—

नव निधान, चौदह रत्न, चौरासी लाख हाथी, चौरासी लाख घोडे, चौरासी लाख रथ, छन्नु क्रोड पैदल, बत्तीस हजार मुकुटबन्ध राजे, बत्तीस हजार सामानिक राजे, सोलह हजार देवता सेवक, चौसठ हजार स्त्री, तीन सौ साठ रसोइये, बीस हजार सोना के आगर आदि ।

धर्म देव के गुण :—

३ धर्म देव :—आठ प्रवचन माता का सेवन करने वाले, नववाड विशुद्ध ब्रह्मचर्य का पालन करने वाले, दशविध यति धर्म का पालन करने वाले, बारह प्रकार की तपस्या करने वाले, सतरह प्रकार के संयम का आचरण करने वाले, बावीस परिषह को सहन करने वाले, सत्तावीस गुण सहित, तेतीस अशातना के टालने वाले, १०६ दोष रहित आहार पानी लेने वाले को धर्म देव कहते है।

देवाधिदेव के गुण :—

४ देवाधिदेव :—चौतीस अतिशय सहित विराजमान पैंतीस वचन (वाणी) के गुण सहित, चौसठ इन्द्र के द्वारा पूज्यनीय, एक हजार और अष्ट उत्तम लक्षण के धारक, अट्ठारह दोष रहित व बारह गुणों सहित होते है उन्हे देवाधि देव कहते है।

अट्ठारह दोष :—

अट्ठारह दोषो के नाम—१ अज्ञान २ क्रोध ३ मद ४ मान ५ माया ६ लोभ ७ रति ८ अरति ९ निद्रा १० शोक ११ असत्य १२ चोरी १३ भय १४ प्राणिवध १५ मत्सर १६ राग १७ क्रीडा प्रसंग १८ हास्य।

बारह गुण :—

१२ गुणो के नाम १ जहां २ भगवन्त खडे रहे, बैठे समोसरे वहा २ दश बोलों के साथ भगवन्त से बारह गुणा ऊंचा तत्काल अशोक वृक्ष उत्पन्न हो जाता है और भगवन्त के मस्तक पर छाया करता है। २ भगवन्त जहां २ समोसरे वहां २ पांच वर्ण के अचेत फूलो की वृष्टि होती है जो गिरकर घुटने के बराबर ढेर लगा देते हैं। ३ भगवन्त की योजन पर्यन्त वाणी फैल कर सब के मन का सन्देह दूर करती है। ४ भगवन्त के चौवीस जोड चामर ढुलते है ५ स्फटिक रत्न मय पाद पीठ सहित सिंहासन स्वामी के आगे हो जाता है, भामंडल अम्बोड के

स्थान पर तेज मंडल विराजे व दशो-दिशाओं का अन्धकार दूर करे ७ आकाश में साडाबारह करोड देव-दुंदुभि बजे ८ भगवन्त के ऊपर तीन छत्र ऊपरा-उपरी विराजे ९ अनन्त ज्ञान अतिशय १० अनन्त अचर्ना अतिशय परम पूज्यपना ११ अनन्त वचन अतिशय १२ अनन्त अपायापगम अतिशय (सर्व दोष रहित परा) एव बारह गुणो सहित ।

भाव देव :—१ भवनपति २ वाणव्यन्तर ३ ज्योतिषी ४ वैमानिक एव चार प्रकार के देव भाव देव कहलाते है ।

३ उववाय द्वार

१ भविय द्रव्य देव में मनुष्य तिर्यंच १, युगलिये २, और सर्वार्थ सिद्ध ३ एवं तीन स्थान छोड कर शेष सर्व स्थानों के आकर उत्पन्न होते है २ नरदेव मे चार जाति के देव और पहली नरक एवं पांच स्थान के आकर उत्पन्न होते है ३ धर्म देव मे छटी सातवी नरक, तेउ, वायु, मनुष्य तिर्यंच व युगलिये एव छ स्थान के छोड कर शेष सर्व स्थान के आकर उत्पन्न होते है ४ देवाधिदेव में पहली, दूसरी, तीसरी नरक और किल्विषी छोड कर वैमानिक देव के आकर उपजते है ५ भाव देव मे तिर्यंच, पचेन्द्रिय और सज्ञी मनुष्य इन दो स्थान के आकर उत्पन्न होते है ।

४ स्थिति द्वार

१ भवि द्रव्य देवकी स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की उत्कृष्ट तीन पल्य की । २ नर देव की जघन्य सातसौ वर्ष की उत्कृष्ट चौरासी लक्ष पूर्व की ३ धर्मदेव की जघन्य अन्तर्मुहूर्त की उत्कृष्ट देश उणी (न्यून) पूर्व क्रोड को ४ देवाधिदेव की जघन्य ७२ वर्ष की उत्कृष्ट ८४ लक्ष पूर्व की ५ भावदेव की जघन्य दश हजार वर्ष की उत्कृष्ट ३३ सागरोपम की ।

५ रिद्धि तथा विकुर्वणा द्वार

भविय द्रव्य देव में जिन्हे वैक्रिय उत्पन्न होवे वह, नर देव को त होती ही है, धर्म देव में से जिन्हे होवे वो और भाव देव के तो होती ही है एव ये चारों वैक्रिय रूप करे तो जघन्य १, २, ३, उत्कृष्ट सख्यात रूप करे, शक्ति तो असख्याता रूप करने की है। परन्तु करे नही देवाधिदेव की शक्ति अनन्त है परन्तु करे नही।

६ चवन द्वार

१ भवि द्रव्य देव चव कर देवता होवे २ नर देव चव कर नरक जावे ३ धर्म देव चव कर वैमानिक में तथा मोक्ष मे जावे ४ देवाधिदेव मोक्ष में जावे ५ भाव देव चवकर पृथ्वी अप, वनस्पति बादर मे और गर्भज मनुष्य तिर्यंच मे जावे।

७ संचिठणा द्वार

सचिठणा अर्थात् क्या देव का देवपने रहे तो कितने काल तक रह सकता है? भवि द्रव्य देव की सचिठणा जघन्य अन्तर्मुहूर्त की उत्कृष्ट ३ पल्योपम की। नर देव की जघन्य सातसौ वर्ष की उत्कृष्ट ८४ लक्ष पूर्व की। धर्म देव की परिणाम आश्री एक समय, प्रवर्तन आश्री जघन्य अन्तर्मुहूर्त की उत्कृष्ट देश उणी पूर्व क्रोड़ की। देवाधिदेव की जघन्य ७२ वर्ष की उत्कृष्ट ८४ लक्ष पूर्व की। भाव देव की ज० दश हजार वर्ष की, उत्कृष्ट ३३ सागरोपम की।

८ अन्तर द्वार

भवि द्रव्य देव मे अन्तर पडे तो जघन्य दश हजार वर्ष और अन्त० अधिक। उत्कृष्ट अनन्त काल का। नर देव मे जघन्य एक सागर जाजेरा उ० अर्ध पुद्गल परावर्तन में देश न्यून। धर्मदेव में

अन्तर पड़े तो ज० दो पल्य जाजेरा उ० अर्ध पुद्गल परा० मे देश न्यून । देवाधिदेव मे अन्तर नही पड़े । भाव देव मे ज० अन्तर्मुहूर्त का उ० अनन्त काल का ।

९ अल्पबहुत्व द्वार

१ सव से कम नर देव, २ उनसे देवाधि देव सख्यात गुणा, ३ उनसे धर्म देव सख्यात गुणा, ४ उनसे भवि द्रव्य देव असख्यात गुणा और ५ उनसे भाव देव असख्यात गुणा ।
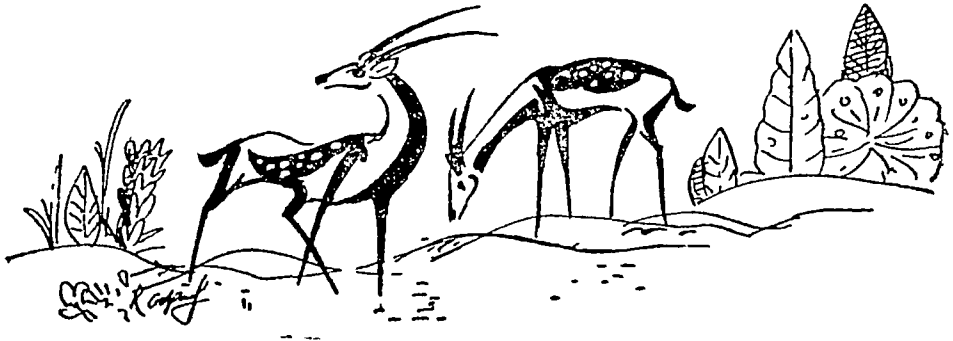
आराधक विराधक

(श्री भगवती सूत्र, शतक पहला, उद्देशा दूसरा)

१ असंजत भव्य द्रव्य देव जघन्य भवनपति उत्कृष्ट नव ग्रैवेयक तक जावे।

२ आराधक साधु ज० पहले देवलोक तक उत्कृष्ट सर्वार्थसिद्ध विमान तक जावे।

३ विराधक साधु जघन्य भवनपति उत्कृष्ट पहले देवलोक तक जावे।

४ आराधक श्रावक ज० पहले देवलोक तक उ० बारहवे देवलोक तक जावे।

५ विराधक श्रावक ज० भवनपति उ० ज्योतिषी तक जावे।

६ असंजति तिर्यञ्च जघन्य भवनपति उत्कृष्ट वाणव्यंतर तक जावे।

७ तापस के मत वाले जघन्य भवनपति उत्कृष्ट ज्योतिपी तक जावे।

८ कदर्पीया साधु जघन्य भवनपति उत्कृष्ट पहला देवलोक तक जावे।

९ अम्बड सन्यासी के मत वाले ज० भवनपति उ० पाँचवें देवलोक तक जावे।

१० जमाली के मत वाले जघन्य भवनपति छटठे देवलोक तक जावे।

११ संज्ञी तिर्यञ्च जघन्य भवनपति उत्कृष्ट आठवे देवलोक तक जावे।

१२ गोशाले के मतवाले ज० भवनपति उत्कृष्ट बारहवे देव० तक जावे।

१३ दर्शन विराधिक स्वलिगी साधु ज० भवनपति उ० नव ग्रवेयक तक जावे।

१४ आजीवक मतवाले जघन्य भवनपति उत्कृष्ट बारहवे देवलोक तक जावे।

●

तीन जाग्रिका (जागरणा)

श्री वीर भगवन्त को गौतम स्वामी पूछने लगे कि—हे भगवन् ! जाग्रिका कितने प्रकार की होती है ?

भगवान्—हे गौतम ! जाग्रिका तीन प्रकार की होती है :—

१ धर्म जागरणा २ अधर्म जागरणा ३ सुदखु जागरणा

धर्म जागरणा के भेद —धर्म जागरण के चार भेद :—१ आचार धर्म, २ क्रिया धर्म, ३ दया धर्म और ४ स्वभाव धर्म।

आचार धर्म के भेद —आचार धर्म के पाँच भेद —१ ज्ञानाचार, २ दर्शनाचार, ३ चारित्राचार, ४ तपाचार, ५ वीर्याचार। इनमे से ज्ञानाचार के ८ भेद, दर्शनाचार के ८ भेद, चारित्राचार के ८ भेद, तपाचार के १२ भेद, वीर्याचार के ३ भेद—एव ३९ भेद हुए।

ज्ञानाचार के भेद :—ज्ञानाचार के ८ भेद —१ ज्ञान सीखने के समय ज्ञान सीखे, २ ज्ञान लेने के समय विनय करे, ३ ज्ञान का बहुमान करे, ४ ज्ञान पढने के यमय यथाशक्ति तप करे, ५ अर्थ तथा

गुरु को गोपे (छिपावे) नही, ६ अक्षर शुद्ध, ७ अर्थ शुद्ध, ८ अक्षर और अर्थ दोनो शुद्ध ।

दर्शनाचार के भेद :—दर्शनाचार के ८ भेद :—जैनधर्म मे शङ्का नही करे, २ पाखण्ड धर्म की वांछा नही करे, ३ करणी के फल में सन्देह नही रक्खे, ४ पाखण्डी के आडम्बर देख कर मोहित नही होवे, ५ स्वधर्म की प्रशसा करे, ६ धर्म से भ्रष्ट होने वाले को मार्ग पर लावे, ७ स्वधर्म की भक्ति करे, ८ धर्म को अनेक प्रकार से दिपावे कृष्ण, श्रेणिक समान ।

चारित्राचार के भेद :—चारित्राचार के ८ भेद.—१ ईर्या समिति २ भाषा समिति ३ एषणा समिति ४ आदानभण्डमात्रनिखेवणा समिति ५ उचारपासवणखेलजलसंघाणपरिठावणिया समिति ६ मन गुप्ति ७ वचन गुप्ति ८ काय गुप्ति ।

तपाचार के भेद ·—तपाचार के वारह भेद ·—छ बाह्य और छ आभ्यन्तर एव बारह । छ बाह्य तप के नाम–१ अनशन २ उणोदरी ३ वृत्ति सक्षेप ४ रस परित्याग ५ काय क्लेश ६ इन्द्रिय प्रति सलीनता । छ अभ्यन्तर तप के नाम–१ प्रायश्चित २ विनय ३ वैयावच्च ४ स्वाध्याय ५ ध्यान ६ कायोत्सर्ग एव सर्व १२ हुवे । इन मे से इहलोक पर लोक के सुख की वाञ्छा रहित तप करे अथवा आजीविका रहित तप करे एव तप के बारह आचार जानना ।

वीर्याचार के भेद —वीर्याचार के तीन भेद .—१ वल व वीर्य धार्मिक कार्य मे छिपावे नही २ पूर्वोक्त ३६ बोल मे उद्यम करे ३ शक्ति अनुसार काम करे एवं ३९ भेद आचार धर्म के कहे ।

क्रियाधर्म :—क्रिया धर्म ·—इस के ७० भेदो के नाम-चार प्रकार की पिण्ड विशुद्धि ४, ५ समिति, १२ भावना, ३२ साधु की पडिलेहना, ३ गुप्ति, ४ अभिग्रह पाच इन्द्रियो का निरोध; २५ प्रकार की पडिलेहणा :, एव ७० ।

दया धर्म के भेद :—दया धर्म के आठ भेद :—१ स्वदया अर्थात् अपनी आत्मा को पाप से बचावे २ पर दया याने अन्य जीवो की रक्षा करे ३ द्रव्य दया याने देखादेखी दया पाले अथवा लज्जा से जीव की रक्षा करे तथा कुल आचार से दया पाले ४ भाव दया अर्थात् ज्ञान के द्वारा जीव को आत्मा जान कर उस पर अनुकम्पा लावे व दया लाकर जीव की रक्षा करे ५ व्यवहार दया श्रावक को जैसी दया पालने के लिए कहा है वह पाले घर के अनेक काम काज करने के समय यतना रक्खे ६ निश्चय दया याने अपनी आत्मा को कर्म–बन्ध से छुडावे।

विवेचन :—पुद्‌गल पर वस्तु है। इनके ऊपर से ममता हटा कर उसका परिचय छोडे, अपने आत्मिक गुण मे लीन रहे, जीव का कर्म रहित शुद्ध स्वरूप प्रगट करे, यह निश्चय दया है। चौदह गुण-स्थानक के अन्त मे यह दया पाई जाती है। ७ स्वरूप दया-अर्थात् किसी जीव को मारने के लिये उस को (जीव को) पहिले अच्छी तरह से खिलाते है व शरीर पुष्ट करते है, सार सभाल लेते है। यह दया ऊपर दिखावा मात्र है। परन्तु पीछे से उस जीव को मारने के परिणाम है। यह उत्तराध्यान सूत्र के सातवे अध्ययन मे बकरे के अधिकार से समझना। ८ अनुबन्ध दया-वह जीव को त्रास देवे परन्तु अन्तर्हृदय से उसको सुख देने की भावना है। जैसे माता पुत्र का रोग दूर करने के लिये कटुक औषधि पिलाती है परन्तु हृदय से उसका हित चाहती है। तथा जैसे पिता पुत्र को हित शिक्षा देने के लिये ऊपर से तर्जना करे, मारे परन्तु हृदय से उसको सद्‌गुणी बनाने के लिये उसका हित चाहता है।

स्वभाव धर्म —जीव व अजीव की प्रणति के दो भेद–१ शुद्ध स्वभाव से और २ कर्म के सयोग के अशुद्ध प्रणति। इनसे जीव को विषय कषाय के सयोग से विभावना होती है। जिसे दूर करके जीव अपने ज्ञानादिक गुण मे रमण करे उसे स्वभाव धर्म

कहते है। और पुद्गल का एक वर्ण, एक गन्ध एकरस, दो फरस (स्पर्श) में रमण होवे तो यह पुद्गल का शुद्ध जानना। इसके सिवाय चार द्रव्य में स्वभाव धर्म है परन्तु विभाव धर्म नहीं। चलन गुण, स्थिर गुण, अवकाश गुण, वर्तना गुण आदि ये अपने २ स्वभाव को छोड़ते नही अत. ये शुद्ध स्वभाव धर्म है। एवं चार प्रकार की धर्म जाग्रिका कही।

अधर्म जाग्रिका :—संसार मे धन कुटुम्ब परिवार आदि का संयोग मिलना व इसके लिये आरम्भादि करना, उन पर दृष्टि रखना व रक्षा करना आदि को अधर्म जाग्रिका कहते है।

सुदखु जाग्रिका :—सुदखु जाग्रिका :—सु कहेता अच्छी व दखु कहेता चतुराई की जाग्रिका। यह श्रावक की होती है कारण कि सम्यक् ज्ञान, दर्शन सहित धन कुटुम्बादिक तथा विपय कपाय को खराव जानता है। देश से निवृत्त हुआ है, उदय भाव से उदासीन पने है, तीन मनोरथ का चितन करता है। इसे सुदखु जाग्रिका कहते है।

६ काय के भव

श्री गौतम स्वामी वीर भगवान को वदना नमस्कार करके पूछने लगे कि हे भगवन् ! छ. काय के जीव अन्तर्मुहूर्त मे कितने भव करते है ?

भगवान—हे गौतम ! पृथ्वी, अप, अग्नि, वायु आदि जघन्य एक भव करे उत्कृष्ट बारह हजार आठ सो चोवीस भव एक अन्तर्मुहूर्त मे करे और वनस्पति के दो भेद -१ प्रत्येक २ साधारण। प्रत्येक जघन्य एक भव उत्कृष्ट बावीस हजार भव करे व साधारण जघन्य एक भव और उत्कृष्ट पैसठ हजार पॉच सौ छब्बीस भव करे। बेइन्द्रिय जघन्य एक भव उत्कृष्ट ८० भव करे। त्रि-इद्रिय जघन्य एक० उत्कृष्ट साठ भव करे। चौरिन्द्रिय जघन्य एक उत्कृष्ट चालीस भव करे। असंज्ञी तिर्यंच जघन्य एक भव उत्कुष्ट चौवीस भव करे। संज्ञी तिर्यंच व संज्ञी मनुष्य जघन्य तथा उत्कृष्ट एक भव करे।
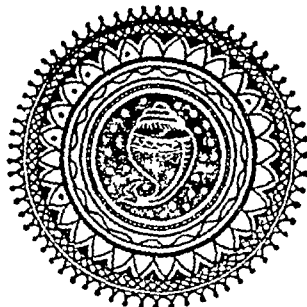
अवधि पद

(सूत्र श्री पन्नवणाजी पद तैतीसवां)

इसके दश द्वार

१ भेद द्वार २ विषय द्वार ३ संठाण द्वार ४ आभ्यन्तर और वाह्य द्वार ५ देश थकी व सर्व थकी ६ अनुगामी ७ हीयमान-वर्धमान ८ अवट्ठीया ६ पड़वाई १० अपड़वाई ।

१ भेद द्वार :—नेरिये व देवभव प्रत्ये देखे अर्थात् उत्पन्न होने के समय से ही उन्हे अवधिज्ञान होता है तिर्यंच व मनुष्य क्षयोपशम भाव से देखे ।

२ विषय द्वार :—पहली नरक का नेरिया जघन्य साड़े तीन गाउ देखे उत्कृष्ट चार गाउ, दूसरी नरक का नेरिया जघन्य तीन गाउ, उत्कृष्ट साढा तीन गाउ, । तीसरी नरक का नेरिया जघन्य अढाई गाउ, उ० तीन गाउ, चौथी नरक का नेरिया ज० दो गाउ उ० अढाई गाउ, पांचवी नरक का जघन्य डेढ गाउ उत्कृष्ट दो गाउ, छट्ठी नरक का जघन्य एक गाउ उत्कृष्ट डेढ गाउ, सातवी नरक का जघन्य आधा गाउ उत्कृष्ट एक गाउ देखे । भवनपति जघन्य पच्चीस योजन तक देखे उत्कृष्ट तीन प्रकार से देखे ऊचा-पहले दूसरे देवलोक तक, नीचे-तीसरीनरक के तले तक और तिर्छा-पल के आयुष्य वाले सख्यात द्वीप समुद्र देखे व सागर से आयु० वाले असंख्यात द्वीप समुद्र देखे । वाण-व्यन्तर व नव निकाय के देवता ज० पच्चीस योजन उ० तीन प्रकार से देखे ऊचा-पहेले देव लोक तक नीचे-पाताल कलश तक व तिर्यक् सख्यात द्वीप समुद्र देखे । ज्योतिषी ज० आंगुल के असंख्यातवें भाव

उ० तीन प्रकार से देखे ऊचा-अपने विमान की ध्वजा तक, नीचे नरक के तले तक ।

तिर्यक् पल के आयु० वाले स० द्वीप समुद्र देखे व सागर के आयु० वाले असख्यात द्वीप समुद्र देखे । तीसरे देवलोक से सर्वार्थसिद्ध विमान तक के देवता ऊचा अपने २ विमान की ध्वजा तक देखे, तिर्यक असख्यात द्वीप समुद्र देखे नीचे-तीसरे चौथे देवलोक वाले दूसरा नरक के तले पर्यंत,पांचवे छट्ठे वाले तीसरी नरक के तले तक, सातवाँ, आठवाँ देवलोक वाला चौथी नरक के तलिया तक देखे । नववे से बारहवे देवलोक तक वाले पांचवी नरक के तले पर्यन्त, नव ग्रैवेयक वाले छट्ठी नरक के तले तक चार, अनुत्तर विमान वाले सातवी नरक के तले तक और सर्वार्थ सिद्ध के देवता सातवी नरक के तले तक देश ऊणी लोक नालिका तक देखे । तिर्यच ज० आगुल के असख्यातवे भाग उ० सख्यात द्वीप समुद्र देखे । मनुष्य ज० के असख्यातवे भाग उ० समग्र लोक और अलोक मे लोक जितने अस० भाग देखे ।

३ सठाण द्वार —नेरिये त्रिपाई के आकरवत् देखे, भवनपति पालने के आकारवत्, वाणव्यन्तर झालर के आकार समान, ज्योतिषी पडह के आकारवत् देखे । वारह देव लोक के देवता मृदग के आकार वत्, देखे नवग्रैवेयक के देवता फूलो की चगेरी समान देखे, और अनुत्तर विमान के देवता कु वारी कन्या की कचुकी समान देखे ।

४ आभ्यन्तर-बाह्य द्वार —नेरिये व देव आभ्यन्तर देखे, तिर्यञ्च बाह्य देखे । मनुष्य आभ्यन्तर और बाह्य दोनो देखे कारण की तीथे-करो को अवधि ज्ञान जन्म से ही होता है ।

५ देश और सर्व थकी —नारकी, देवता और तिर्यच देश थकी और मनुष्य सर्व थकी ।

६ अनुगामी और अनानुगामी —नारकी देवता का अवधिज्ञान

अनुगामी (अर्थात साथ २ रहने वाला) अवधि ज्ञान होता है। तिर्यंच और मनष्य का अनुगामी तथा अनानुगामी दोनो प्रकार का होता है।

७ हीयमान-वर्धमान और ८ अवट्ठिया द्वार :—नारकी देवता का अवधि ज्ञान अवट्ठिया होवे (न तो घटे और न वढे, उतना ही रहता है) मनुष्य और तिर्यंच का हीयमान, वर्धमान अथा अवट्ठिया एवं तीनो प्रकार का अवधि ज्ञान होता है ।

९-१० पड़वाई और अपड़वाई द्वार :—नारकी देवता का अवधि ज्ञान अपड़वाई होता है और मनुष्य व तिर्यंचका अवधि ज्ञान पड़वाई तथा अपड़वाई दोनो प्रकार का होता है ।
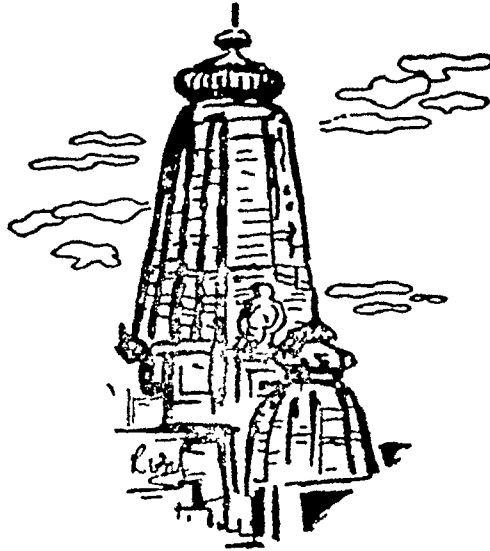
धर्म-ध्यान

(उववाई सूत्र पाठ)

से कि त धम्मे झाणे ? चउविहे, चउपड़यारे पन्नत्ते तजहा, आणा-विजए १ अवाय विजए २ विवाग विजए ३ सठाण विजए ४, धम्मस्सण झाणस्स चत्तारि लक्खणा पन्नता तजहा, आणारुई १निसग्गरुई २ सुत्त-रुई ३ उवएस रूई ४, धम्मस्सण झाणस्स चत्तारि आलम्बणा पन्नता तजहा, वायणा १ पुच्छणा २ परियट्टणा ३ धम्म-कहा ४, धम्मस्सणं झाणस्स चत्तारि अणप्पेहा पन्नता तजहा, एगच्चाणुप्पेहा १ अणिच्चा-णुप्पेहा २ असरणाणुप्पेहा ३ससाराणुप्पेहा ४।

धर्मध्यान के चार भेद :—

आणाविजए, अवायविजए, विवागविजए, सठाण विजए।

आणाविजए :—वीतराग की आज्ञा का विचार चितन करे। समकित सहित बारह व्रत, श्रावक की ग्यारह पडिमा, पच महाव्रत, भिक्षु (साधु) की बारह पडिमा, शुभ ध्यान, शुभ योग, ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप व छकाय की रक्षा एव वीतराग की आज्ञा का आराधन करे। इसमे समय मात्र का प्रमाद नही करे। और चतुर्विध तीर्थ के गुणो का कीर्तन करे। इस प्रकार धर्म ध्यान का यह पहला भेद खत्म हुवा।

अवाय विजए :—ससार के अन्दर जीव को जिसके द्वारा दुख प्राप्त होता है, उनका चितवन करे अथवा मिथ्यात्व, अव्रत, प्रमाद, कषाय, अशुभ योग तथा अठारह पाप स्थानक, छकाय की हिंसा एव

इनको दुखो का कारण जानकर आश्रव मार्ग का त्याग करे व संवर मार्ग को आदरे, जिससे जीव को दुख नही होवे ।

विवाग विजए :—जीव को किस प्रकार सुख-दुख की प्राप्ति होती है अर्थात् वह इन्हे किस प्रकार भोगता है, इसपर चितन व मनन करे। जीव जिससे रस के द्वारा जैसे शुभाशुभ ज्ञानावरणीयादिक कर्मो का उपार्जन किया है वैसे ही शुभाशुभ कर्मो के उदय से जीव सुख-दुख का अनुभव करता है। सुख-दुख अनुभव करते समय किसी पर राग-द्वेष नही करना चाहिये, किन्तु समता भाव रखना चाहिय। मन, वचन, काया के शुभ योग सहित जैन धर्म के अन्दर प्रवृत्त होना चाहिये, जिससे जीव को निराबाध परम सुख की प्राप्ति होवे।

संठाण विजए .—तीनों लोको के आकार का स्वरूप चितवे। लोक का स्वरूप इस प्रकार है :–यह लोक सुपइठक के आकारवत् है। जीव-अजीवो से समग्र भरा हुआ है। असख्यात योजन का क्रोडाक्रोड़ प्रमाण तीर्च्छा लोक है, जिसके अन्दर असं० द्वीप समुद्र है, असं० वाणव्यन्तर के नगर है, असं० ज्योतिषी के विमान है तथा अस० ज्योतिषी की राजधानिये है। इसमें अढाई द्वीप के अन्दर तीर्थङ्कर जघन्य २०, उत्कृष्ट १७०, केवली ज० दो क्रोड़, उ० नव क्रोड तथा साधु ज० दो हजार क्रोड़, उ० नव हजार क्रोड़ होते है—जिन्हे वदामि, नमसामि, सक्कोरमि समाणेमि कल्लाण, मंगलं देवय, चेइयं, पजुवास्सामि। तीर्छे लोक में असख्याते श्रावक-श्राविका है, उनके गुण ग्राम करना चाहिये। तीर्छे लोक से असं० गुणा अधिक ऊर्ध्व लोक है, जिसमें बारह देवलोक, नव ग्रैवेयक, पॉच अनुत्तर विमान एवं सर्व मिलाकर चोरासी लाख, सत्ताणु हजार तेवीस विमान है। इनके ऊपर सिद्ध शिला है, जहा पर सिद्ध भगवान विराजमान है। उन्हे वंदामि जाव पजुवास्सामि। ऊर्ध्वलोक से नीचे अधोलोक है,

जिसमे चोरासी लाख नरक वासे है और सात क्रोड़, बहत्तर लाख भवनपति के भवन है। ऐसे तीन लोक के सर्व स्थानक को समकित रहित करणी बिना सर्व जीव अनन्ती वार जन्म मरण द्वारा फरस कर छोड चुके है। ऐसा जानकर समकित सहित श्रुत और चारित्र धर्म की आराधना करनी चाहिये, जिससे अजरामर पद की प्राप्ति होवे।

धर्म ध्यान के चार लक्षण :-

१ आणारुई :—वीतराग की आज्ञा अङ्गीकार करने की रुचि उपजे, उसे आणारुई कहते है।

२ निसग्गरुई :—जीव की स्वभाव से ही तथा जाति स्मरणादिक ज्ञान से श्रुत सहित चारित्र धर्म करने की रुचि उपजे, इसे निसग्ग रुई कहते है।

३ सूत्र रुई :—इसके दो भेद—१ अङ्ग पविट्ठ २ अङ्ग बाह्य। आचारांगादि १२ अङ्ग अङ्गपविट्ठ है। इनमे से ११ अङ्ग कालिक और बारहवॉ अग दृष्टिवाद यह उत्कालिक। अग बाह्य के दो भेद :—१ आवश्यक, २आवश्यक व्यतिरिक्त। आवश्यक—सामायिकादिक छ अध्ययन उत्कालिक तथा उत्तराध्ययनादिक कालिकसूत्र। उववाई प्रमुख उत्कालिक सूत्र सुनने की तथा पढने की रुचि उत्पन्न होवे उसे सूत्र-रुचि कहते है।

४ उवएसरुई :—अज्ञान द्वारा उपार्जित कर्मो को ज्ञान द्वारा खपावे ज्ञान से नये कर्म न वांधे, मिथ्यात्व द्वारा उपार्जित कर्मो को समकित द्वारा खपावे, समकित के द्वारा नवीन कर्म नही बाधे। अव्रत से बंधे हुए कर्मो को व्रत द्वारा खपावे व व्रत से नये कर्म न बाधे। प्रमाद द्वारा उपार्जित अप्रमाद से खपावे और अप्रमाद के द्वारा नये कर्म न बाधे। कषाय द्वारा बधे हुए कर्मो को अकषाय द्वारा खपावे व अकषाय के द्वारा नये कर्म न बाधे। अशुभ योग से

उपार्जित कर्मो को शुभ योग से खपावे व शुभ योग के द्वारा नये कर्म न वांधे। पाँच इन्द्रिय के स्वाद रूप आश्रव से उपार्जित कर्म तप रूप संवर द्वारा खपावे और तप रूप सवर से नये कर्म न वांधे। अतः अज्ञानादिक आश्रव मार्ग का त्याग करके ज्ञानादिक सवर मार्ग आराधन करे एवं तीर्थङ्करों का उपदेश सुनने की रुचि उपजे। इसे उपदेश रुचि (उवएस रुचि) तथा उगाढ रुचि भी कहते हैं।

धर्मध्यान के चार अवलम्बन

१ वायणा, २ पुच्छणा, ३ परियट्टणा, ४ धर्मकथा

१ वायणा—विनय सहित ज्ञान तथा निर्जरा के निमित्त सूत्र के व अर्थ के ज्ञाता गुर्वादिक के समीप सूत्र तथा अर्थ की वाचना लेवे उसे वायणा कहते है।

२ पुच्छणा - अपूर्व ज्ञान प्राप्त करने लिये तथा जैन मत दीपाने के लिये, सन्देह दूर करने के लिये अथवा अन्य की परीक्षा के लिये यथा-योग्य विनय सहित गुर्वादिक से प्रश्न पूछे उसे पुच्छणा कहते है।

३ परियट्टणा – पूर्व पठित जिनभाषित सूत्र व अर्थो को अस्खलित करने के लिये तथा निर्जरा निमित्त शुद्ध उपयोग सहित शुद्ध अर्थ और सूत्र की बारम्बार स्वाध्याय करे उसे परियट्टणा कहते है।

४ धर्मकथा—जैसे भाव वीतराग ने परूपे है, वैसे ही भाव स्वयं अंगीकार करके विशेष निश्चय पूर्वक शङ्का, कङ्खा, वितिगच्छा रहित अपनी निर्जरा के लिए और पर-उपकार निमित्त सभी के अन्दर वे भाव वैसे ही परूपे, उसे धर्म कथा कहते है।

इस प्रकार की धर्म कथा कहने वाले तथा सुन कर श्रद्धा रखने वाले दोनो जीव वीतराग की आज्ञा के आराधक होते है। इस धर्म-कथा संवर रूप वृक्ष की सेवा करने से मन वाँछित सुख रूप फल की प्राप्ति होती है।

संवर रूपी वृक्ष का वर्णन

जिस वृक्ष का समकित रूप मूल है, धैर्य रूप कन्द है, विनय रूप वेदिका है, तीर्थङ्कर तथा चार तीर्थ के गुण कीर्तन रूप स्कन्ध है, पाँच महाव्रत रूप बडी शाखा है, पच्चीस भावना रूप त्वचा है, शुभ ध्यान व शुभ योग रूप प्रधान पल्लव पत्र है, गुण रूप फूल है, शील रूप सुगन्ध है, आनंद रूप रस है और मोक्ष रूप प्रधान फल है। मेरु गिरि के शिखर पर जैसे चूलिका विराजमान है वैस ही समकितो के हृदय में संवर रूपी वृक्ष विराजमान होता है। इसी संवर रूपी वृक्ष की शीतल छाया जिसे प्राप्त होती है, उस जीव के भवोभव के पाप टल जाते है और वह अतुल सुख प्राप्त करता है।

उक्त चार प्रकार की कथा विस्तार पूर्वक कहे उसे धर्म कथा कहते है। आक्षेवणी, विक्षेवणी, सवेगणी और निव्वेगणी आदि ४ कथाओ का विस्तार चौथे ठाणे दूसरे उद्देशे के अन्दर है।

धर्म ध्यान की चार अणुप्पेहा

जीव द्रव्य तथा अजीव द्रव्य का स्वभाव स्वरूप जानने के लिये सूत्र का अर्थ विस्तार पूर्वक चितवे उसे अणुप्पेहा कहते है।

१ एकच्चाणुप्पेहा —मेरी आत्मा निश्चय नय से असख्यात प्रदेशी अरूपी सदा सउपयोगी और चैतन्य रूप है। सर्व आत्मा निश्चय नय से ऐसी ही है और व्यवहार नय से आत्मा अनादि काल से अचैतन्य जड वर्णादि २० रूप सहित पुद्‌गल के सयोग से त्रस व स्थावर रूप लेकर अनेक नृत्यकार नट के समान अनेक रूप वाली है। वह त्रस का त्रस रूप मे प्रवर्ते तो जघन्य अतर्मुहूर्त उत्कृष्ट दो हजार सागर जाजेरा तक रहे और स्थावर का स्थावर रूप मे प्रवर्ते तो ज० अन्त० उत्कृष्ट (काल से) अनती उत्सर्पिणी अवसर्पिणी व क्षेत्र से अनता लोक प्रमाणे अलोक के आकाश प्रदेश होवे इतने काल चक्र उत्सर्पिणी अवसर्पिणी समझना। इसके असंख्यात पुद्‌गल परार्वतन

होते है। आंगुल के असंख्यातवे भाग में जितने आकाश प्रदेश आवे उतने अ० पुद्‌गल परा० होते है। स्थावर के अंदर पुद्‌गल लेकर खेला। यह व्यवहार नय से जानना। त्रस स्थावर मे रहकर स्त्री-पुरुष नपुंसक वेद में पुद्‌गल सयोग में खेला, प्रवर्त हुआ और अनेक रूप धारण किये। जैसे किसी समय देवी रूप मे भवनपत्यादिक से ईशान देवलोक तक इन्द्र की ईन्द्राणी सुरुपवन्ती अप्सरा हुई जघन्य १० हजार वर्ष उत्कृष्ट ५५ पल्योपम देवांगना के रूप मे अनतो बार जीव खेला। देवता रूप में भवनपत्यादिक से भाव नव ग्रैवेयक तक महर्धिक महा शक्तिवंत इन्द्रादिक लोक पाल प्रमुख रूपवान देदीप्यवान् वांछित भोग सयोग में प्रवृत्त हुआ। जघन्य १० हजार वर्ष, उत्कृष्ट ३१ सागरोपम एवं अनंती बार भोगा।

इन्द्र महाराज के रूप मे एक भव के अन्दर ७ पल्योपम की देवी, बावीस क्रोड़ाक्रोड, पिच्चाशी लाख क्रोड़, एकोत्तर हजार क्रोड, चार से अठावीस क्रोड, सत्तावन लाख चौदह हजार दो सो अठचासी ऊपर पॉच पल्य की ८, इतनी देवियो के साथ भोग करने पर भी तृप्ति न हुई। मनुष्य के अदर स्त्री-पुरुष रूप में हुआ। देव कुरु उत्तर कुरु के अदंर युगल युगलानी हुआ, जहां महामनोहर रूप मनवांछित ,ुख भोगे। दस प्रकार के कल्प वृक्षो से सुख भोगे। स्त्री-पुरुष का क्षण मात्र के लिए भी वियोग नही पड़ा। ३ पल्योपम तक निरतर सुख भोगे। हरिवास रम्यक वास में २ पल्योपम हेमवय हिरण्य वय क्षेत्र के अन्दर १ पल्य तक, छप्पन अन्तरद्वीपा के अन्दर पल्योपम का असंख्यातवॉ भाग, युगल युगलानी रूप मे अनन्ती बार स्त्री-पुरुप के रूप में खेला, परन्तु आत्म-तृप्ति नही हुई। चक्रवर्ती के घर स्त्री रत्न के रूप में लक्ष्मी समान रूप अनन्ती बार यह जीव पाकर खेला, परन्तु तृप्त नही हुआ। वासुदेव मण्डलीक राजा व प्रधान व्यवहारिया के घर स्त्री रूप में मनोज्ञ सुखो मे पूर्व क्रोडादिक के आयुष्यपने प्रवर्त हुआ। यही जीव मनुष्य के अन्दर कुरूपवान, दुर्भागी नीच कुल,

दरिद्री भर्तार की स्त्री रूप मे, अलक्ष रूप दुर्भागिणीपने और नटपने प्रवर्त हुआ तो भी मनुष्य पने स्त्री पुरुष के अवतार पूरे नही हुए। तिर्यञ्च पचेन्द्रिय जलचरादि के अन्दर स्त्री वेद से प्रवर्त हुआ वह जीव सात नरक मे, पाँच एकेन्द्रिय मे, तीन विकलेन्द्रिय तथा असज्ञी तिर्य च मनुष्य के अन्दर भी जीव नपुंसक वेद से प्रवर्त हुआ, परमार्थे लागठ स्त्री वेद से प्रवर्त हुआ । उत्कृष्ट ११० पल्य और पृथक् पूर्व क्रोड तक स्त्री वेद मे खेला। जघन्य आयुष्य भोगने के आश्री अन्त० पुरुष वेद में उत्कृष्ट पृथक् सो सागर जाजेरा तक खेला। जघन्य आयुष्य भोगने के आश्री अन्त०, नपु सक वेद उ० अनत काल चक्र अस० पुद्गल परावर्तन तक खेला। जहा गया वहा अकेला पुद्गल के सयोग से अनेक रूप परा० किये। यह सर्व रूप व्यवहार नय से जानना।

इस प्रकार के परिभ्रमण को मिटाने वाले श्री जैनधर्म के अन्दर शुद्ध श्रद्धा सहित शुद्धउद्यम पराक्रम करे तब ही आत्मा का साधन होवे और इस समय आत्मा के सिद्ध पद की प्राप्ति होती है। इसमे निश्चय नय से एक ही आत्मा जानना चाहिए । जब शुद्ध व्यवहार में प्रवर्त होकर अशुद्ध व्यवहार को दूर करे, तब सिद्ध गति प्राप्त होती है। इस प्रकार की मेरी एक आत्मा है। अपर परिवार स्वार्थ रूप है और पउगसा, मीससा तथा वीससा पुद्गल ये पर्याय करके जैसे स्वभाव मे है वैसे स्वभाव मे नही रहते है अत· अशाश्वत है। इसलिए अपनी आत्मा को अपने कार्य का साधक व शाश्वत जान कर अपनी आत्मा का साधन करे ।

अणिच्चाणुप्पेहा :--रूपी पुद्गल की अनेक प्रकार से यतना करने पर भी ये अनित्य है। नित्य केवल एक श्री जैनधर्म परम सुखदायक है। अपनी आत्मा को नित्य जानकर समकितादिक सवर द्वारा पुष्ट करे। यह दूसरी अणुप्पेहा है।

३ असरणाणुप्पेहा :—इस भव के अन्दर व परलोक में जाते हुए जीव को एक समकित पूर्वक जैनधर्म बिना जन्म, जरा, मरण के दु.ख दूर करने में अन्य कोई शरण समर्थ नही। ऐसा जानकर श्री जैन धर्म का शरण लेना चाहिए, जिससे परम सुख की प्राप्ति होवे। यह तीसरी अणुप्पेहा है।

१ संसाराणुप्पेहा :—स्वार्थ रूप संसार समुद्र के अन्दर जन्म, जरा, मरण, संयोग वियोग शारीरिक मानसिक दुख, कषाय मिथ्यात्व, तृष्णारूप अनेक जल कल्लोलादिक की लहरो से चार गति चौवीश दंडक के अंदर परिभ्रमण करते हुए जीव को श्री जैनधर्म रूप द्वीप का आधार है और संयम रूप नाव को शुद्ध समकित रूप निर्जामिक नाविक (नाव चलाने वाला) है। ऐसी नावो के द्वारा जीव—सिद्धि रूप महानगर के अन्दर पहुँच जाता है। जहां अनन्त अतुल विमल सिद्धि के सुख प्राप्त करता है। यह धर्मध्यान की चौथी अणुप्पेहा है। धर्म ध्यान के गुण जान कर सदा धर्मध्यान ध्यावे, जिससे जीव को परम सुख की प्राप्ति होवे।
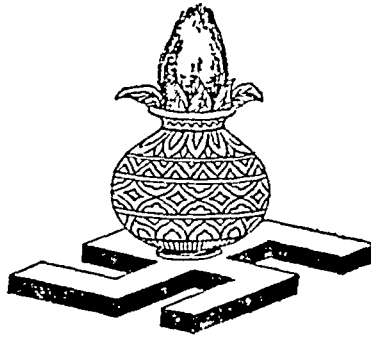
छः लेश्या

(श्री उत्तराध्ययन सूत्र, ३४ वा अध्ययन)

छ· लेश्या के ११ द्वार—१ नाम २ वर्ण ३ रस ४ गध ५ स्पर्श ६ परिणाम ७ लक्षण ८ स्थानक ९ स्थिति १० गति ११ चवन।

१ नाम द्वार :—१ कृष्ण लेश्या २ नील लेश्या ३ कापोत लेश्या ४ तेजो लेश्या ५ पद्म लेश्या ६ शुक्ल लेश्या।

२ वर्ण द्वार —कृष्ण लेश्या का वर्ण जल सहित मेघ समान काला तथा भैंस के सीग समान काला, अरीठे के वीज समान, गाड़ी के खंजन (काजली) समान और आँख की कीकी समान काला। इनसे भी अनन्त गुणा काला।

नील लेश्या—अशोक वृक्ष, चास पक्षी की पांख और वैडुर्य रत्न से भी अनत गुणा नीला इस लेश्या का वर्ण होता है।

कापोत लेश्या—अलसी के फूल, कोयल की पाख, कबूतर की गर्दन कुछ लाल कुछ काली आदि। इनसे भी अनत गुणा अधिक कापोत लेश्या का वर्ण होता है।

तेजो लेश्या—उगता हुआ सूर्य, तोते की चोच, दीपक की शिखा आदि। इनमें अनंत गुणा अधिक इस लेश्या का वर्ण लाल रंग होता है।

पद्म लेश्या—हरताल, हलदर, सण के फूल, आदि इनसे भी अनत गुणा अधिक पीला इसका रग-होता है।

शुक्ल लेश्या—शंख, अक रत्न, मोगरे का फूल, गाय का दूध,

चांदी का हार आदि इनसे भी अनंत गुणा इस लेश्या का वर्ण श्वेत होता है।

३ रस द्वार :—कड़वा तुम्बा, नीम्ब का रस, रोहिणी नामक वनस्पति का रस आदि इनसे भी अनंत गुणा अधिक कड़वा रस कृष्ण लेश्या का होता है। नील लेश्या का रस-सूंठ के रस के समान, पीपला मूल आदि के रस से भी अनंत गुणा कड़वा रस नील लेश्या का होता है।

कापोत लेश्या का रस—कच्ची केरी, कच्चा कोठा (कबीट) आदि के रस से भी अनंत गुणा खट्टा होता है।

तेजो लेश्या का रस—पक्के आम, व पक्के कोठे के रस से अनत गुणा अधिक कुछ खट्टा व कुछ मीठा होता है।

पद्म लेश्या का रस—शराव, सिरका व शहद आदि से भी अनत गुणा अधिक मधुर होता है।

शुल्क लेश्या का रस—खजूर, दाख (द्राक्ष) दूध व शक्कर आदि से भी अनत गुणा अधिक मीठा होता है।

४ गंध द्वार :—गाय, कुत्ता, सर्प आदि के मड़े से भी अनंत गुणी अधिक अप्रशस्त गन्ध प्रथम तीन लेश्या की होती है। कपूर, केवड़ा, प्रमुख घोटने के समय जैसी सुगन्ध निकलती है उस से भी अनत गुणी अधिक प्रशस्त सुगन्ध पिछली लेश्याओं की होती है।

५ स्पर्श द्वार :—करवत की धार, गाय की जीभ, मुंझ (ज) का तथा बांस का पान आदि से भी अनंत गुणा तीक्ष्ण अप्रशस्त लेश्या का स्पर्श होता है। वुर नामक वनस्पति, मक्खन सरसव के फूल व मखमल से भी अनंत गुणा अधिक कोमल प्रशस्त लेश्याओ का स्पर्श होता है।

६ परिणाम द्वार :—लेश्या तीन प्रकारे प्रणमे—जघन्य, मध्यम और उत्कृष्ट तथा नव प्रकारे परिणमे ऊपर के तीन प्रकार के पुन

एक एक के तीन भेद होते है। जैसे जघन्य का ज०, जघन्य का मध्यम और ज० का उत्कृष्ट एव हरेक के तीन-तीन करते नव भेद हुए। ऐसे ही नव के सत्तावीस, सत्तावीस के एकासी और एकासी के दो सौ तेतालीस भेद होते है। इतने भेदो से लेश्या परिणमती है।

७ लक्षण द्वार —कृष्ण लेश्या के लक्षण—पॉच आश्रव का सेवन करनेवाला, अगुप्ति वत, छकाय जीव का हिसक, आरम्भ का तीव्र परिणामी और द्वेषी, पाप करने में साहसिक, निष्ठुर परिणामी, जीव हिसा, सुग्या रहित करने वाला और अजितेन्द्री आदि लक्षण कृष्ण लेश्या के है।

नील लेश्या के लक्षण—ईर्ष्यावंत, मृषावत, तप रहित, मायावी, पाप करने मे शर्माये नही, गृद्धी, धूतारा, प्रमादी रस-लोलुपी, माया का गवेषी, आरम्भ का अत्यागी, पाप के अन्दर साहसिक—ये लक्षण नील लेश्या के है।

कापोत लेश्या के लक्षण—वक्रभाषी, वक्र कार्य करनेवाला, माया करके प्रसन्न होवे, सरलता रहित, मुंह पर कुछ और पीठ पीछे कुछ, मिथ्या और मृषा भाषी, चोरी मत्सर का करने वाला आदि।

तेजो लेश्या के लक्षण—मर्यादावन्त, माया रहित, चपलता रहित, कुतुहल रहित, विनयवत, जितेन्द्रिय, शुभ योगवत, उपध्यान तप सहित, दृढ धर्मी, प्रिय धर्मी, पाप से डरने वाला आदि।

पद्म लेश्या के लक्षण—क्रोध, मान, माया, लोभ को जिसने पतले (कम) किये है, प्रशात चित्त, आत्म निग्रही, योग उपध्यान सहित, अल्प भापी, उपशात जितेन्द्रिय।

शुक्ल लेश्या के लक्षण—आर्त्तध्यान, रौद्र ध्यान से सर्वथा रहित, धर्म ध्यान, शुक्ल ध्यान सहित, दश प्रकार की चित्त समाधि सहित, आत्म निग्रही आदि।

८ लेश्या स्थानक द्वार :—असख्यात उत्सर्पिणी अवसर्पिणी के

जितने समय होते है तथा असं० लोक के जितने आकाश प्रदेश होते है, उतने लेश्या के स्थानक जानना ।

९ लेश्या की स्थिति द्वार :—कृष्ण लेश्या की स्थिति जघन्य अंत० की उत्कृष्ट ३३ सागरोपम व अन्त० अधिक । नील लेश्या की स्थिति जघन्य अन्त० की उत्कृष्ट दश सागरोपम और पल का असं० भाग अधिक । कापोत लेश्या की स्थिति जघन्य अन्त० की उ० तीन सागरोपम और पल का असख्यातवाँ भाग अधिक। तेजो लेश्या की स्थिति ज० अन्त० की उ० दो सागर और पल का असंख्यातवाँ भाग अधिक। पद्म लेश्या की स्थिति ज० अन्त० की उ० दश सागरोपम और अंत० अधिक। शुक्ल लेश्या की स्थिति जघन्य अंत० की उ० ३३ सागरोपम और अंत० अधिक एवं समुच्चय लेश्या की स्थिति कही ।

चार गति में लेश्या की स्थिति नारकी की लेश्या की स्थिति :—कापोत लेश्या की स्थिति जघन्य दश हजार वर्ष की उ० तीन सागरोपम और पल का असंख्यातवाँ भाग। नील लेश्या की स्थिति ज० तीन सागर और पल का असं० भाग उ० दश सागर और पल का अस० भाग। कृष्ण लेश्या की स्थिति ज० दश सागर और पल का अस० भाग उ० तेतीस सागर और अंत० अधिक एवं नारकी की लेश्या हुई। मनुष्य तिर्यंच की लेश्या की स्थिति—प्रथम पाँच लेश्या की स्थिति जघन्य उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त की। शुक्ल लश्या की स्थिति (केवली आश्री) ज० अन्त० की उ० नव वर्ष न्यून क्रोड़ पूर्व की। देवता की लेश्या की स्थिति—भवनपति और वाण व्यतर में कृष्ण लेश्या की स्थिति ज० दश हजार वर्ष की उ० पल का असंख्यातवाँ भाग। नील लेश्या की स्थिति ज० कृष्ण लेश्या की उ० स्थिति से एक समय अधिक उ० पल का असंख्या० भाग। कापोत लेश्या की स्थिति ज० नील लेश्या की उ० स्थिति से एक समय अधिक उ० पल का असख्यातवाँ भाग। तेजो लेश्या की स्थिति ज० दश हजार वर्ष की, भवनपति वाण व्यन्तर की उ० दो सागर और पल का असं-

ख्यातवाँ भाग अधिक। वैमानिक देव की पद्म लेश्या की स्थिति ज० तेजो लेश्या की उ० स्थिति से एक समय अधिक। वैमानिक की उ० दश सागर और अतर्मुहूर्त अधिक। वैमानिक की शुक्ल लेश्या की स्थिति ज० पद्म लेश्या की उ० स्थिति से एक समय अधिक उ० तेतीस सागर और अतर्मुहूर्त अधिक।

१० लेश्या की गति द्वार :—कृष्ण, नील, कापोत ये तीन अप्रशस्त व अधम लेश्या है जिनके द्वारा जीव दुर्गति को जाता है। तेजो, पद्म और शुक्ल इन तीन धर्म लेश्या के द्वारा जीव सुगति में जाता है।

११ लेश्या का च्यवन द्वार :—सर्व लेश्या प्रथम परिणमते समय कोई जीव उपजता व चवता नही तथा लेश्या के अत समय में कोई जीव उपजता व चवता नही। परभव में कैसे चवे ? इसका वर्णन—लेश्या पर भव की आई हुई अर्तमुहूर्त गये बाद शेष अन्तमुहूर्त आयुष्य मे बाकी रहने पर जीव परभव के अंदर जावे।

योनि पद

(सूत्र श्री पन्नवणाजी पद नववा)

योनि तीन प्रकार की—शीत योनि, उष्ण योनि शीतोष्ण योनि।

विस्तार—पहली नरक से तीसरी नरक तक शीत योनियां, चौथी नरक मे शीत योनियां विशेप और उष्ण योनिया कम। पाचवी नरक में उष्ण योनियां विशेष और शीत योनियां कम। छट्ठी नरक में उष्ण योनियां। सातवी नरक मे महा उष्ण योनियां अग्नि छोड़ कर चार स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय, समुच्चय तिर्यच और मनुष्य में तीन योनि मिले तेउ काय में एक उष्ण योनि संज्ञी तिर्यच सज्ञी मनुष्य और देवता में एक शीतोष्ण योनियां।

इनका अल्पवहुत्व—सर्व से कम शीतोष्ण योनियां, उन से अयोनिया सिद्ध भगवन्त अनन्त गुणा उन से शीत योनियां अनत गुणा। योनि तीन प्रकार की होती है सचित्त, अचित्त, मिश्र। नारकी और देवता मे योनि एक अचित। पांच स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय समुच्चय तिर्यंच और समुच्चय मनुष्य मे योनि तीन ही मिलती है संज्ञी तिर्यच और संज्ञी मनुष्य मे योनि एक मिश्र। इनका अल्पबहुत्व :-सर्व से कम मिश्र योनियां-उससे अचित योनिया असख्यात गुणा और उससे सचित योनियां अनत गुणा। योनि तीन प्रकार की-संवुडा, वियडा और संवुडा-वियड़ा अर्थात् सवुडा ढंकी हुई वियड़ा याने खुली (उघाडी) हुई और सवुड़ा वियड़ा याने कुछ ढकी हुई और कुछ खुली हुई।

पाच स्थावर देवता और नारकी की योनि एक सवुडा, तीन विकलेंद्रिय, समुच्चय तिर्यंच और मनुष्य मे तीनो ही योनि पावे। सज्ञी तिर्यंच और सज्ञी मनुष्य मे योनि एक संवुडा, वियडा। इनका अल्पवहुत्व-सर्वं से कम सवुडावियडा उनसे वियडा योनियां असंख्यात गुणा। उनसे सवुडा योनियां अनन्त गुणा। योनि तीन प्रकार की है सखा अर्थात् शख के आकार समान। कच्छा याने कछुये के आकार समान और वंश पत्ता कहेता वास के पत्र के समान। चक्रवर्ती की स्त्री रत्न की योनि शख वत्। ऐसी योनि वाली स्त्री के संतान नही होती। ५४ शलाका पुरुष की माता की योनि काचबे (कछुवा) के आकार समान होवे और सर्व मनुष्यो की माता की योनि बास के पत्र के आकार समान होती है।

आठ आत्मा का विचार

शिष्य पूछता है कि हे भगवन्! सग्रह नय के मत से आत्मा एक ही स्वरूपी कहने मे आया है जब कि अन्य मत से आत्मा के भिन्न २ प्रकार कहे जाते है। क्या आत्मा के अलग २ भेद है ? यदि होवे तो कितने ?

गुरु—हे शिष्य! भगवतीजी का अभिप्राय देखते आत्मा तो आत्मा ही है, वह आत्मा स्वशक्ति के कारण एक ही रीति से एक ही स्वरूपी है समान प्रदेशी और समान गुणी है अत निश्चय से एक ही भेद कहने मे आता है परन्तु व्यवहार नय के मत से कितने कारणो से आत्मा आठ मानी जाती है। जैसे —१ द्रव्य आत्मा २ कषाय आत्मा ३ योग आत्मा ४ उपयोग आत्मा ५ ज्ञान आत्मा ६ दर्शन आत्मा ७ चारित्र आत्मा ८ वीर्य आत्मा। एव आठ गुणो के कारण से आत्मा आठ कहलाती है और एक दूसरी के साथ मिल जाने से इस के अनेक विकल्प भेद होते है जैसा कि आगे के यन्त्र मे वताया गया है।

१	२	३	४	५	६	७	८
द्रव्य आत्मा मे	कषाय आ०	योग आ०	उप० आ०	ज्ञान आ०	दर्शन आ०	चारित्र आ०	वीर्य आ०
कषाय आत्मा	द्रव्य आ०	द्रव्य आ०	द्रव्य आ०	द्रव्य आ०	द्रव्य आ०	द्रव्य आ०	द्रव्य आ०
की भजना	की नियमा	की नियमा	की नियमा	की नियमा	की नियमा	की नियमा	की निदमा
योग आत्मा	योग आत्मा	कपाय आ०	कषाय आ०	कषाय आ०	कषाय आ०	कषाय आ०	कषाय आ०
की भजना	की नियमा	की भजना	की भजना	की भजना	की भजना	की भजना	की भजना
उपयोग आत्मा	उप० आ०	उप० आ०	उप० आ०	योग० आ०	योग आ०	योग आ०	योग आ०
की नियमा	की नियमा	की नियमा	की भजना	की भजना	की भजना	की भजना	की भजना
ज्ञान आ०	ज्ञान आ०	ज्ञान आ०	ज्ञान आ०	उप० आ०	उप० आ०	उप० आ०	उप० आ०
की भजना	की भजना	की भजना	की भजना	की नियमा	की नियमा	की नियमा	की नियमा
दर्शन आत्मा	दर्शन आ०	दर्शन आ०	दर्शन आ०	दर्शन आ०	ज्ञान आ०	ज्ञान आ०	ज्ञान आ०
की भजना	की नियमा	की नियमा	की नियमा	की नियमा	की भजना	की भजना	की भजना
चारित्र आ०	चारित्र आ०	चारित्र आ०	चारित्र आ०	चारित्र आ०	चारित्र आ०	दर्शन आ०	दर्शन आ०
की भजना	की भजना	की भजना	की भजना	को भजना	की भजना	की नियमा	की नियमा
वीर्य आ०	वीर्य आ०	वीर्य आ०	वीर्य आ०	वीर्य आ०	वीर्य आ०	वीर्य आ०	चारित्र आ०
की भजना	की नियमा	की नियमा	की भजना	की भजना	की भजना	की नियमा	की भजना

भजना अर्थात् होवे अथवा नहीं होवे। नियमा का अर्थ निश्चय होवे।

अल्प बहुत

इनका अल्पबहुत्व—सर्व से कम चारित्र आत्मा उनसे ज्ञान आत्मा अनन्त गुणी । उनसे कषाय आत्मा अनन्त गुणी, उनसे योग आत्मा विशेषाधिक, उनसे वीर्य आत्मा विशेषाधिक, उनसे द्रव्य आत्मा तथा उपयोग आत्मा तथा दर्शन आत्मा परस्पर तुल्य और (वी. आ. से) विशेषाधिक । यह सामान्य विचार हुवा । अब आठ आत्मा का विशेष विचार कहा जाता है —

शिष्य—कृपालु गुरु ! आत्म द्रव्य एक ही शक्ति वाला तथा असख्यात प्रदेशी सत्, चिद् और आनन्दघन कहने मे आता है । इसका निश्चय नय से क्या अभिप्राय है ? व्यवहार नय के मत से किस कारण से आत्मा आठ कही जाती है ? और वे आत्मा किन २ सयोग के साथ मिल कर गतागति करती है ? ये सर्व कृपा करके कहो ।

गुरु—हे शिष्य ! कारण केवल यही है कि शुद्ध आत्म द्रव्य मे पांच ज्ञान. दो दर्शन तथा पांच चारित्र का समावेश होता है । ये सर्व आत्म शुद्धि के कारण अर्थात् साधन है । इनके अन्दर आत्मबल और आत्म वीर्य लगाने से कर्म मुक्त होती है जब कि सामने पक्ष मे अर्थात् इसके विरुद्ध अशुद्ध आत्म द्रव्य मे पच्चीस कषाय, पन्द्रह योग, तीन अज्ञान और दो दर्शन का समावेश होता है । ये सर्व आत्म अशुद्धि के कारण तथा साधन है । इनमे बल या वीर्य लगाने पर चार गतियो मे परिभ्रमण करना पडता है । ऐसा होने पर प्रत्येक आत्मा भिन्न २ सयोगो के साथ मिलती है । जैसा कि इस यन्त्र में बताया गया है —

आठ आत्माओं का दूसरा यन्त्र	जीव के चौदह भेद मे से	चौदह गुण स्थानकमे से	पन्द्रह योग मे से	बारह उपयोग मे से	छः लेश्याओ मे से
१ द्रव्य आत्मा	समुच्चय १४ भेद पावे	समुच्चय १४ गुण स्थानक पावे	समुच्चय १५ योग पावे	समुच्चय १२ उपयोग पावे	समुच्चय ६ लेश्या ६
२ कषाय आ०में	१४ पावे	प्रथम १० गुणस्थान	१५ पावे	केवल ज्ञान व केवल दर्शनछोड,शेप १०पावे	६ लेश्या
३ योग आ०मे	१४ पावे	पहेले से तेरह गुण स्थानक तक पावे	१५ पावे	१२ पावे.	६ लेश्या
४ उप०आ०मे	१४ पावे	१४ गुण स्थानक	१५ पावे	१२ उपयोग पावे	६ लेश्या
५ ज्ञान आ० मे	३ विकलेन्द्रिय असज्ञी अपर्याप्ता और संज्ञी के दो एवं ६	पहला और तीसरा छोड कर शेष १२ गुण० पावे	१५ पावे	तीन अज्ञान छोड नव उपयोग पावे	६ लेश्या
६ दर्शन आ० मे	१४ पावे	१४ पावे	१५ पावे	१२ उपयोग पावे	६ लेश्या
७ चारित्र आ०मे	१ सज्ञी की पर्याप्त पावे	प्रथम पाच छोड़ शेप नव पावे	१५ पावे	३ अज्ञान छोड शेप नव उपयोग	६ लेश्या
८ वीर्य आ०मे	१४ पावे	१४ पावे	१५ पावे	१२ उपयोग पावे	६ लेश्या

व्यवहार समकित के ६७ बोल

इस पर बारह द्वार :—(१) सद्दहणा ४ (२) लिङ्ग ३ (३) विनय १० (४) शुद्धता ३ (५) लक्षण ५ (६) भूषण ५ (७) दूषण ५ (८) प्रभावना ८ (९) आगार ६ (१०) जयना ६ (११) स्थानक ६ (१२) भावना ६ ।

१ सद्दहणा के चार भेद —(१) परतीर्थी से अधिक परिचय न करे (२) अधर्म पाखण्डियो की प्रशसा न करे (३) अपने मत के पासत्था, उसन्ना व कुलिङ्गी आदि की संगति न करे। इन तीनो का परिचय करने से शुद्ध तत्व की प्राप्ति नही हो सकती (४) परमार्थ के ज्ञाता सर्वा गी गीतार्थ की उपासना करके शुद्ध श्रद्धान धारण करे ।

२ लिङ्ग के तीन भेद —(१) जैसे युवा पुरुष रग राग ऊपर राचे वैसे ही भव्यात्मा श्री जैन शासन पर राचे (२) जैसे क्षुधावान् पुरुष खीर खाण्ड के भोजन का प्रेम सहित आदर करे वैसे ही वीतराग की वाणी का आदर करे (२) जैसे व्यवहारिक ज्ञान सीखने की तीव्र इच्छा होवे, और शिक्षक का योग मिलने पर सीख कर इस लोक मे सुखी होवे वैसे ही वीतराग कथित सूत्रो का नित्य सूक्ष्मार्थ न्याय वाले ज्ञान को सीख कर इहलोक और परलोक मे मनोवाच्छित सुख की प्राप्ति करे ।

३, विनय के दश भेद :—(१) अरिहत का विनय करे (२) सिद्ध का विनय करे (३) आचार्य का विनय करे (४) उपाध्याय का विनय करे (५) स्थविर का विनय करे (६) गण (बहुत आचार्यो का समूह)

का विनय करे (७) कुल (बहुत आचार्यो के शिष्यों का समूह) का विनय करे (८) स्वधर्मी का विनय करे (९) सघ का विनय करे (१०) संभोगी का विनय करे एव दश का बहुमान पूर्वक विनय करे। जैन शासन मे विनय मूल धर्म कहते है। विनय करने से अनेक सद्गुणो की प्राप्ति होती है।

४, शुद्धता के तीन भेद :—(१) मन शुद्धता—मन से अरिहत-देव-कि जो ३४ अतिशय, ३५ वाणी, ८ महा प्रतिहार्य सहित, १८ दूषण रहित १२ गुण सहित है वे ही अमर व सच्चे देव है। इनके सिवाय हजारों कष्ट पड़े तो भी सरागी देवो को मन से स्मरण नही करे (२) वचन शुद्धता—वचन से गुण कीर्तन, ऐसे अरिहंत देव के करे व इनके सिवाय सरागी देवों का नही करे। (३) काया शुद्धता-काया से अरिहंत सिवाय अन्य सरागी देवो को नमस्कार नही करे।

५, लक्षण के पांच भेद :—(१) सम—शत्रु मित्र पर समभाव रक्ख (२) सवेग-वैराग्य भाव रक्खे और संसार असार है, विषय व कषाय से अनन्त काल पर्यन्त भवभ्रमण होता है, इस भव मे अच्छी सामग्री मिली है अतः धर्म की आराधना करनी चाहिए, इत्यादि नित्य चितन करे (३) निर्वेद —शरीर अथवा संसार की अनित्यता पर चिंतन करे और वने वहां तक इस मोहमय जगत से अलग रहे अथवा जग-तारक जिनराज को दीक्षा लेकर कर्म शत्रुओ को जीते व सिद्ध पद को प्राप्त करने की हमेशा अभिलाषा (भावना) रक्खे, (४) अनुकम्पा—अपनी तथा पर की आत्मा की अनुकम्पा करे अथवा दुखी जीवों पर दया लावे (५) आस्था—त्रिलोक पूज्यनीक श्रीवीतराग देव के वचनो पर दृढ श्रद्धा रक्खे, हिताहित का विचार करे अथवा अस्तित्व भाव मे रमण करे ये ही व्यवहार समकित के लक्षण है। अतः जिस विषय मे अपूर्णता होवे उसे पूरी करे।

६, भूपण पांच—(१) जैन शासन में धैर्यवन्त होकर शासन का प्रत्येक कार्य धैर्यता से करे (२) जैन शासन का भक्तिवान् होवे (३)

शासन मे क्रियावान् होवे (४) शासन में चतुर होवे। शासन के प्रत्येक कार्य को ऐसी चतुराई (बुद्धि) से करे कि जिससे वह कार्य निर्विघ्नता से समाप्त हो जावे (५) शासन मे चतुर्विध संघ की भक्ति तथा वहु-सत्कार करने वाला होवे। इन पाच भूषणो से शासन की शोभा होती है।

७, दूषण पांच—(१) शङ्का—जिन वचन में शङ्का करे (२) कंखा—अन्य मतो का आडम्बर देख कर उनकी वाञ्छा करे (३) विति-गिच्छा—धर्म की करणी के फल मे सन्देह करे इसका फल होवेगा या नही ? वर्तमान मे तो कुछ फल नजर नही आता आदि इस प्रकार का सन्देह करे (४) पर पाखण्डी से नित्य परिचय रक्खे (५) परपाख-ण्डियो की प्रशसा करे। एव समकित के पांच दूषणो को अवश्य दूर करना चाहिये।

८, प्रभावना ८ भेद—(१) जिस काल मे जितने सूत्र होते है, उन्हे गुरु गम से जाने वह शासन का प्रभावक बनता है। (२) बड़े आडम्बर से धर्म-कथा व्याख्यान आदि द्वारा शासन के ज्ञान की प्रभावना करे। (३) महान विकट तपश्चर्या करके शासन की प्रभावना करे। (४) तीन काल अथवा तीन मत का ज्ञाता होवे। (५) तर्क, वितर्क, हेतु, वाद युक्ति, न्याय तथा विद्यादि बल से वादियो को शास्त्रार्थ में पराजय करके शासन की प्रभावना करे। (६) पुरुषार्थी पुरुष दीक्षा लेकर शासन की प्रभावना करे। (७) कविता करने को शक्ति होवे तो कविता करके शासन की प्रभावना करे। (८) ब्रह्मचर्य आदि कोई वडा व्रत लेना होवे तो वहुत से मनुष्यो की सभा मे लेवे, कारण कि इससे लोको को शासन पर श्रद्धा अथवा व्रतादि लेने की रुचि वढ़े अथवा दुर्बल स्वधर्मी भाइयो को सहायता करे।

यह भी एक प्रकार की प्रभावना है परन्तु आजकल चौमासे में अभक्ष्य वस्तु की अथवा लड्डू आदि की प्रभावना करते हैं। दीर्घ

दृष्टि से विचार करने योग्य है कि इस प्रभावना से क्या शासन की प्रभावना होती है अथवा इससे कितना लाभ ? इसका स्वय बुद्धिमान विचार कर सकते है। यदि प्रभावना से हमारा सच्चा अनुराग और प्रेम होवे तो छोटी २ तत्वज्ञान की पुस्तकों को बाट कर प्रभावना करे कि जिससे अपने भाइयो को आत्म ज्ञान की प्राप्ति हो।

९, आगार ६ भेद—(१) राजा का आगार, (२) देवता का आगार, (३) जाति का आगार, (४) माता-पिता व गुरु का आगार, (५) वलात्कर (जबर्दस्ती) का आगार, (६) दुष्काल में सुखपूर्वक आजीविका नही चले तो इसका आगार। इन छ. प्रकारो के आगार से कोई अनुचित कार्य करना पड़े तो समकित दूषित नही होता।

१०, जयना के ६ भेद—(१) आलाप—स्वधर्मी भाइयो के साथ एक बार बोले, (२) संलाप—स्वधर्मी भाइयो के साथ बारम्बार बोले, (३) मुनि को दान दे अथवा स्वधर्मी भाइयो की वात्सल्यता करे (४) एव बारम्बार प्रतिदिन करे, (५) गुणी जनो का गुण प्रगट करे, (६) तथा वंदना नमस्कार बहु-मान करे।

११, स्थानक के ६ प्रकार—(१) धर्म रूपी नगर तथा समकित रूपी दरवाजा, (२) धर्म रूपी वृक्ष तथा समकित रूपी धड, (३) धर्म रूपी प्रासाद (महल) तथा समकित रूपी नीव (बुनियाद), (४) धर्म रूपी भोजन तथा समकित रूपी थाल, (५) धर्म रूपी माल तथा समकित रूपी दुकान, (६) धर्म रूपी रत्न तथा समकित रूपी मंजूषा (सन्दूक या तिजोरी)।

१२, भावना के ६ भेद—(१) जीव चैतन्य लक्षण युक्त असख्यात प्रदेशी निष्कलङ्क अमूर्त है। (२) अनादि काल से जीव और कर्मो का संयोग है। जैसे—दूध मे घी, तिल में तेल, धूल में धातु, फूल मे सुगध, चन्द्र की कान्ति में अमृत आदि के समान अनादि संयोग है।

(३) जीव सुख-दुख का कर्त्ता और भोक्ता है, निश्चय नय से कर्म का कर्त्ता कर्म है ; परन्तु व्यवहार नय से जीव है । (४) जीव, द्रव्य गुण पर्याय, प्राण और गुण स्थानक सहित है । (५) भव्य जीवो को मोक्ष होता है । ज्ञान, दर्शन और चारित्र ये मोक्ष के साधन है ।

इस थोकडे को मुंहजबानी (कठस्थ करके सोचो कि इन ६७ बोलो में से (व्यवहार समकित के) मेरे अन्दर कितने बोल है। फिर जितने बोल कम हो उन्हे पूरे करने का प्रयत्न करे तथा पुरुषार्थ द्वारा उन्हे प्राप्त करे ।

●

काय-स्थिति

समजाण (स्पष्टी करण) :—स्थिति दो प्रकार की । १ भव स्थिति, २ काय स्थिति । एक भव मे जितने समय तक रहे वह भव स्थिति । जैसे—पृथ्वी काय की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट २२ हजार वर्ष को ।

काय-स्थिति :—पृथ्वी काय आदि एक ही काय के जीव उसी काया मे बारम्बार जन्म-मरण करते रहे और अन्य काय, अप, तेउ, वायु आदि मे नही उपजे वहां तक की स्थिति, वह कायस्थिति ।

पुढवी काल—द्रव्य से अस० उत्स० अवस० काल, क्षेत्र से असख्यात काल, भाव से अगुल के अस० भाग के आकाश प्रदेश जितने लोक ।

असख्यात काल—द्रव्य, क्षेत्र, काल से ऊपर वत् भाव से आवलिका के असख्यातवे भाग के समय जितने लोक ।

अर्ध पुद्गल परावर्त्तन काल—द्रव्य से अतन्त उत्स० अवस० क्षेत्र

से अनन्ता लोक, काल से अनन्त काल और भाव से अर्ध पुद्गल परावर्त्तन।

वनस्पति काल—द्रव्य से अनन्त उत्स० अवस०, क्षेत्र से अनन्त ।ोक, काल से अनन्त काल और भाव से असं० पुद्गल परावर्तन।

अ० सा०—अनादि सांत, सा० सा०-सादि सांत।

गाथा—जीव गइन्दिय काए जोए वेद कषाय लेसाय।
सम्मत्त णाण दसण संयम उवओग आहारे ॥१॥
भासगयं परित्त पज्जत सुहुम सन्नी भवऽत्थि।
चरिमेय एतेसित पदाणं कायठिई होइ णायव्वा॥२॥

क्रम मार्गणा	जघन्य कायस्थिति	उत्कृष्ट कायस्थिति
१ समुच्चय जीवकी	शाश्वता	शाश्वता
२ नारकी की	१० हजार वर्ष	३३ सागरोपम
३ देवता की	,,	,,
४ देवी की	,,	५५ पलकी
५ तिर्यंच की	अन्तर्मुहूर्त	अनन्त काल (वन०)
६ तिर्यंचणी की	,,	३ पल्य और प्र० क्रोड पूर्व
७ मनुष्य की	,,	,, ,,
८ मनुष्यनी की	,,	,, ,,
९ सिद्ध भगवान् की	शाश्वता	शाश्वता
१० अपर्याप्ता नारकी की	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त
११ ,, देवता की	,,	,,
१२ ,, देवी की	,,	,,
१३ ,, तिर्यंच की	,,	,,
१४ ,, तिर्यंचनी की	,,	,,
१५ ,, मनुष्य की	,,	,,
१६ ,, मनुष्यनी की	,,	,,

१७ पर्याप्ता नारकी	१० हजार वर्ष मे अन्तर्मुहूर्त न्यून	३३ सागर में अन्त० न्यून
१८ ,, देवता	,,	भव स्थिति मे ,,
१९ ,, देवी	,,	५५ पल्य मे ,,
२० ,, तिर्यंच	अन्तर्मुहूर्त	३ पल्य मे ,,
२१ ,, तिर्यंचनी	,,	,, ,,
२२ ,, मनुष्य	,,	,, ,,
२३ ,, मनुष्यनी	,,	,, ,,
२४ सइन्द्रिय	०	अनादि अनन्त अना० सा०
२५ एकेन्द्रिय	अन्तर्मुहूर्त	अनन्त काल (वन०)
२६ बेइन्द्रिय	,,	संख्यात वर्ष
२७ तेइन्द्रिय	,,	,,
२८ चउइन्द्रिय	,,	,,
२९ पचेन्द्रिय	,,	१००० सागर साधिक
३० अनिन्द्रिय	०	सादि अनन्त
३१ सकायी	०	अ० अन०, अ० सात
३२ पृथ्वी काय	अन्तर्मुहूर्त	असंख्यात काल
३३ अप काय	,,	,,
३४ तेउ काय	,,	,,
३५ वाउ काय	,,	,,
३६ वनस्पति काय	,,	अनन्त काल (वन०)
३७ त्रस काय	,,	२००० सागर और स० वर्ष
३८ अकाय	सादि अनन्त	सादि अनन्त
३९ से ४५, ३१ से ३७ का अपर्याप्ता	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त
४६ से ५०, ३२ से ३६ का पर्याप्ता	,,	सख्यात वर्ष

५१ सकाय ,,	,	प्रत्येक सौ सागर
५२ त्रस काय ,,	,	,, ,,
५३ समुच्चय बादर		अ० काल अ० जितने लोकाकाश प्रदेश
५४ बादर वनस्पति	,,	,, ,,
५५ समुच्चय निगोद	,,	अनन्त काल
५६ बादर त्रस काय	,,	२००० सागर जाजेरी
५७ से ६२ बादर पृ० अ., ते., वा., प्र., व , बा. निगोद	,,	७० क्रोड़ाक्रोड सागर
६३ से ६९ समुच्चय सूक्ष्म पृ०, अ०, ते०, वा०, वन०, निगोद	,,	असं० काल
७० से ८६ नं० ५३ से ६६ के अपर्याप्ता	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त
८७ से ९३ समुच्चय सूक्ष्म पृ०, अ०, ते०, वा०, व०, निगोद का पर्याप्ता	,,	,,
९४ से ९७ बादर पृ०, अ०, बा० और प्र० वा० वन० का पर्याप्ता	,,	सं० हजार वर्ष
९८ बादर तेउका पर्याप्ता	,,	सं० अहोरात्रि
९९ समुच्चय बादर ,,	,,	प्र० सो सागर साधिक
		अन्तर्मुहूर्त
१०० समुच्चय निगोद ,,	,,	,,
१०१ बादर ,,	,,	,,
१०२ सयोगी	०	अ० अन०, अ० सांत

१०३ मन योगी	१ समय	अन्तर्मुहूर्त
१०४ वचन योगी	,,	,,
१०५ काय योगी	अन्त०	अनन्त काल (वन०)
१०६ अयोगी	०	सादि अनन्त०
१०७ सवेदी	०	अ. अ , अ सा. सा. सां.
१०८ स्त्री वेद	१ समय	११० पल्य० प्र० क्रोड पूर्व अधिक
१०९ पुरुष वेद	अन्त०	प्रत्येक सो सागर
११० नपुंसक वेद	१ समय	अनत काल (वन०)
१११ अवेदी	सादि अनंत	सा० सा०, ज० स० उ० अ० मु०
११२ सकषायी सादि सात	अ० अ०, अ० सा. सादि सात	देश न्यून अर्ध पुद्गल
११३ क्रोध कषायी	अन्त०	अन्त० ,,
११४ मान ,,	,,	,,
११५ माया ,,	,,	,,
११६ लोभ ,,	१ समय	,,
११७ अकषायी	सा अ., सा. सां, ज.	१ समय उ. अ. पु.
११८ सलेशी	०	अ. अ अ. सा.
११९ कृष्ण लेशी	अन्त०	३३ सागर अ. मु. अ०
१२० नील ,,	,,	१० सागर पल्य असं० भाग अधिक
१२१ कापोत ,,	,,	सागर ३ भाग ,,
१२२ तेजो ,,	,,	,, २ भाग ,,
१२३ पद्म ,,	,,	,,१०भाग अ. मु. अधिक
१२४ शुक्ल ,,	,,	,, ३३ भाग ,,
१२५ अलेशी	,,	सादि अनन्त

१२६ समकित दृष्टि	,,	सा. अं. सा. सा, ६६ सा. सा.
१२७ मिथ्या ,,	अ. अ., अ. सा,	अनन्तकाल
१२८ मिथ्या दृष्टि सादि सांत	अ. मु.	सा. सां, (अध पु०)
१२६ मिश्र दृष्टि	,,	अं. मु.
१३० क्षायक समकित	,,	सादि अनन्त
१३१ क्षयोपशम ,,	अं. मु.	६६ सागर अधिक
१३२ सास्वादान ,,	१ समय	६ आवलिका
१३३ उपशम ,,	,,	अन्तर्मुहूर्त
१३४ वेदक ,,	,,	,,
१३५ सनाणी	अन्त०	सा. अ., सा. सा. ६६ सागर
१३६ मति ज्ञानी	,,	६६ सागर अधिक
१३७ श्रुत ज्ञानी	,,	,,
१३८ अवधि ,,	१ समय	,,
१३६ मनःपर्यव ज्ञानी	,,	देश न्यून क्रोड़ पूर्व
१४० केवल ,,	०	सादि अनन्त
१४१ अज्ञानी १४२ मति अ. १४३ श्रुत ,,	अ० अ०, अ० सां, सा० सां० की ज० अं०	सा० सांत मु० उ० अर्ध पु०
१४४ विभग ज्ञानी	१ समय	३३ सागर अधिक
१४५ चक्षु दर्शनी	अन्त०	प्रत्येक हजार सागर
१४६ अचक्षु ,,	०	अ० अ. अ० सा०
१४७ अवधि ,,	१ समय	१३२ सागर साधिक
१४८ केवल ,,	०	सादि अनन्त
१४६ सयती	१ समय	देश न्यून क्रोड़ पर्व

१५० असयती	अ० मु०	अ. अ. आस, सा. सा.
१५१ ,, सादि सात	,,	अनन्त काल (अर्धपु०)
१५२ सयतासयत	,,	देश न्यून क्रोड़ पूर्व
१५३ नोसयत नोअसयत	०	सादि अनत
१५४ सामायिक चारित्र	१ समय	देश न्यून क्रोड़ पूर्व
१५५ छेदोपस्थान ,,	अन्त०	,,
१५६ परिहार विशुद्ध ,,	,, १८ माह	,,
१५७ सूक्ष्म सपराय ,,	१ समय	अन्त०
१५८ यथाख्यात ,,	,,	देश न्यून क्रोड पूर्व
१५९ साकार उपयोग	अन्त०	अन्त०
१६० अनाकार ,,	,,	,,
१६१ आहारक छद्मस्थ	२ समय न्यून	असख्याता काल
१६२ ,, केवली	अन्त०	देशन्यून क्रोड़ पूर्व
१६२ अनाहारी छद्मस्थ	१ समय	२ समय
१६४ ,, केवली सयोगी	३ समय	३ समय
१६५ ,, ,, अयोगी	ह्रस्व अक्षर	उच्चारण काल
१६६ सिद्ध	०	सादि अनन्त
१६७ भाषक	१ समय	अन्य०
१६८ अभाषक सिद्ध	०	सादि अनन्त
१६९ ,, ससारी	अन्त०	अनन्त काल
१७० काय परत	अन्त०	अस० काल (पुढ का)
१७१ ससार परत	,,	अर्ध पु०
१७२ काय अपरत	,,	अन० काल (वन० काल)
१७३ ससार ,,	०	अ० अ०, अ० सां
१७४ नो परतापरत	०	सादि अनन्त
१७५ पर्याप्ता	अन्त०	प्रत्येक सो सा० अ०
१७६ अपर्याप्ता	,,	अन्त०

१७७ नो पर्याप्तापर्याप्त	०	सादि अनन्त
१७८ सूक्ष्म	अन्त०	असं० काल (पुढ०)
१७९ बादर	,,	,, (लोकाकाश)
१८० नो सूक्ष्म बादर	०	सादि अनन्त
१८१ संज्ञी	अन्त०	प्र० सो सागर साधिक
१८२ असज्ञी	,,	अनन्त काल (वन०)
१८३ नो सज्ञी-असंज्ञी	०	सादि अनन्त
१८४ भव सिद्धिया	०	अनादि सांत
१८५ अभव सिद्धिया	०	,, अनन्त
१८६ नो भव सिद्धिया अभ. सि०		सादि ,,
१८७ से १९१ पांच अस्ति काय स्थित	०	अनादि अनंत
१९२ चरम	०	,, सांत
१९३ अचरम	०	अ० अ०, सा० अ०
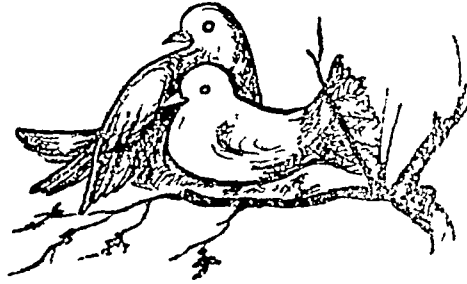
योगों का अल्पबहुत्व

(श्री भगवती सूत्र शतक २५ उद्देश १ में)

जीव के आत्म प्रदेशों मे अध्यवसाय उत्पन्न होते है । अध्यवसाय से जीव शुभाशुभ कर्म (पुद्गल) को ग्रहण करता है यह परिणाम है और यह सूक्ष्म है । परिणामो की प्रेरणा से लेश्या होती है । और लेश्या की प्रेरणा से मन, वचन, काय का योग होता है ।

योग दो प्रकार का । १ जघन्य योग—१४ जीवो के भेद मे सामान्य योग सचार । २ उत्कृष्ट योग, (तारतम्यता) अनुसार उनका अल्पबहुत्व नीचे अनुसार—

(१) सब से कम सूक्ष्म एकेन्द्रिय का अपर्याप्ता का जघन्य योग उनसे
(२) बादर ऐकेन्द्रिय का अपर्याप्ता का ज० योग असं० गुण ,,
(३) बे इन्द्रिय ,, ,, ,, ,,
(४) ते इन्द्रिय ,, ,, ,, ,,
(५) चौरिन्द्रिय ,, ,, ,, ,,
(६) असज्ञी पचेन्द्रिय का ,, ,, ,, ,,
(७) सज्ञी , ,, ,, ,, ,,
(८) सूक्ष्म एकेन्द्रिय का पर्याप्ता का ,, ,, ,,
(९) बादर ,, ,, ,, ,, ,,
(१०) सूक्ष्म ,, अपर्याप्ता का उ० योग ,, ,,
(११) बादर ,, ,, ,, ,, ,,
(१४) सूक्ष्म ,, पर्याप्ता का ,, ,, ,,
(१३) वादर ,, ,, ,, ,, ,,

(१२) बेइन्द्रिय का	,,	ज० उ० योग	,,	,,
(१५) तेइन्द्रिय	,,	,,	,,	,,
(१६) चौरिन्द्रिय का	,,	,,	,,	,,
(१७) असज्ञी पंचे० का	,,	,,	,,	,,
(१८) संज्ञी ,,	,,	,,	,,	,,
(१९) बेइद्रिय का अपर्याप्ता का उ०		,,	,,	,,
(२०) ते इन्द्रिय	,,	,,	,,	,,
(२१) चौरिन्द्रिय का	,,	,,	,,	,,
(२२) असंज्ञी पंचे० का	,,	,,	,,	,,
(२३) संज्ञी ,,	,,	,,	,,	,,
(२४) बेइन्द्रिय का पर्याप्या का		,,	,,	,,
(२५) ते इन्द्रिय	,,	,,	,,	,,
(२६) चौरिन्द्रिय का	,,	,,	,,	,,
(२७) असंज्ञी पचे० का	,,	,,	,,	,,
(२८) संज्ञी ,,	,,	,,	,,	,,

●

पुद्गलों का अल्पबहुत्व

(श्री भगवती सूत्र शतक २५ उद्देशा चौथा)

पुद्गल परमाणु, संख्यात प्रदेशी, असंख्यात प्रदेशी और अनन्त प्रदेशी स्कन्धो का द्रव्य, प्रदेश और द्रव्य प्रदेशो का अल्पबहुत्व—

(१) सब से कम अनंत प्रदेशी स्कंध का द्रव्य, उनसे
(२) परमाणु पुद्गल का द्रव्य अनंत गुणा ,,
(३) सख्यात प्रदेशी का द्रव्य संख्यात गुणा ,,

(४) असंख्यात ,, ,, असख्यात ,, ,,
प्रदेशापेक्षा अल्पबहुत्व भी ऊपर के द्रव्यवत् ।

द्रव्य और प्रदेश दोनो का एक साथ अल्पबहुत्व

(१) सब से कम अनन्त प्रदेशी स्कन्ध का द्रव्य, उनसे
(२) अनत प्रदेशी स्कन्ध का प्रदेश अनंत गुणा ,,
(३) परमाणु पुद्गल का द्रव्य प्रदेश ,, ,,
(४) सख्यात प्रदेशी स्कन्ध का द्रव्य सख्यात गुणा ,,
(५) ,, ,, ,, प्रदेश ,, ,,
(६ असख्याता ,, ,, द्रव्य असख्यात गुणा ,,
(७) ,, ,, ,, प्रदेश ,,

क्षेत्र अपेक्षा अल्पबहुत्व

(१) सब से कम एक आकाश प्रदेश अवगाह्या द्रव्य उनसे
(२) सख्यात प्रदेश अवगाह्या द्रव्य संख्यात गुणा ,,
(३) असख्यात ,, ,, ,, असख्यात ,, ,,

इसी प्रकार प्रदेशो का अल्पबहुत्व समझना—

(१) सब से कम एक प्रदेश अवगाह्या द्रव्य और प्रदेश उनसे
(२) सख्यात प्रदेश ,, ,, सख्यात गुणा ,,
(३) ,, ,, ,, प्रदेश ,, ,,
(४) असख्यात ,, ,, द्रव्य अस० ,,
(५) ,, ,, ,, प्रदेश ,,

कालापेक्षा अल्पबहुत्व

(१) सबसे कम एक समय की स्थिति के द्रव्य उनसे
(२) सख्यात समय स्थिति के द्रव्य सख्यात गुणा, उनसे
(३) असख्यात ,, ,, ,, असं० ,,

इसी प्रकार प्रदेशों का अल्पबहुत्व जानना—

(१) सबसे कम एक समय की स्थिति के द्रव्य और प्रदेश उनसे
(२) संख्यात समय की स्थिति के द्रव्य संख्यात गुणा ,,
(३) ,, ,, ,, प्रदेश ,, ,,
(४) असं० ,, ,, द्रव्य असं० ,,
(५) ,, ,, ,, प्रदेश ,, ,,

भावापेक्षा प्रमाणों का अल्पबहुत्व

(१) सब से कम अनत गुण काला पुद्गलों का द्रव्य उनसे
(२) एक गुण काला पुद्गल द्रव्य अनंत गुणा ,,
(३) संख्यात ,, ,, ,, सख्यात ,, ,,
(४) असं० ,, ,, ,, अस० ,,

इसी प्रकार प्रदेशों का अल्पबहुत्व समझना—

(१) सवसे कम अनत गुणा काला का द्रव्य उनसे
(२) अनंत गुणा काला प्रदेश अनंत गुणा ,,
(३) एक गुण काला द्रव्य व प्रदेश अनत गुणा ,,
(४) संख्यात प्रदेश काला पुद्गल द्रव्य सख्यात ,, ,,
(५) ,, ,, ,, ,, प्रदेश ,, ,, ,,
(६) असं० ,, ,, ,, द्रव्य असं० ,, ,, ,,
(७) ,, ,, ,, ,, प्रदेश ,, ,,

एवं ५ वर्ण; २ गन्ध, ५ रस, ४ स्पर्श, (शीत, उष्ण; स्निग्ध; रूक्ष) आदि १६ बोलों का विस्तार काले वर्ण अनुसार तीन-तीन अल्पबहुत्व करना।

कर्कश स्पर्श का अल्पबहुत्व

(१) सब से कम एक गुण कर्कश का द्रव्य उनसे
(२) सं० गुण कर्कश का द्रव्य सं० गुणा ,,

(३) असं० गु० ,, ,, असं ,, ,,
(४) अनंत गु० ,, ,, अनत ,, ,,

कर्कश स्पर्श प्रदेशापेक्षा अल्पबहुत्व

(१) सब से कम एक गुण कर्कश का प्रदेश उनसे
(२) स० गुण कर्कश का प्रदेश असख्यात गुणा ,,
(२) असं० ,, ,, ,, ,, ,, ,,
(४) अनत ,, ,, ,, ,, ,,

कर्कश द्रव्य प्रदेशापेक्षा अल्पबहुत्व

(१) सब से कम एक गुण कर्कश का द्रव्य प्रदेश उनसे
(२) संख्यात गुण कर्कश का पुद्गल ,, स० गुणा ,,
(३) ,, ,, ,, ,, प्रदेश अस० ,, ,,
(४) अस० ,, ,, ,, द्रव्य ,, ,, ,,
(५) ,, ,, ,, ,, प्रदेश ,, ,, ,,
(६) अनत ,, ,, ,, द्रव्य अनत ,, ,,
(७) ,, ,, ,, ,, प्रदेश ,, ,,

इसी प्रकार मृदु, गुरु, व लघु समझना कुल ६९ अल्पबहुत्व हुए—३ द्रव्य के, ३ क्षेत्र के, ३ काल के, व ६० भाव के एव कुल ६९ अल्पबहुत्व ।
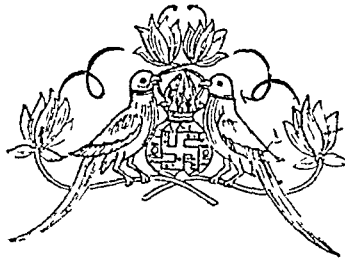
आकाश श्रेणी

(श्री भगवती सूत्र शतक २५ उ० ३)

आकाश प्रदेश की पंक्ति को श्रेणी कहते है। समुच्चय आकाश प्रदेश की द्रव्यापेक्षा श्रेणी अनन्त है। पूर्वादि ६ दिक्षाओ की और अलोकाकाश की भी अनन्त है।

द्रव्यापेक्षा लोकाकाश की तथा ६ दिशाओं की श्रेणी असख्यात है प्रदेशापेक्षा समुच्चय आकाश प्रदेश तथा ६ दिशाओ की श्रेणी अनन्त है।

प्रदेशापेक्षा लोकाकाश आकाश प्रदेश तथा ६ दिशा की श्रेणी अस० है। प्रदेशापेक्षा अलोकाकाश आकाश की श्रेणी सख्यात, असंख्यात, अनन्ती है। पूर्वादि ४ दिशा में अनन्त है और ऊँची-नीची दिक्षा में तीन ही प्रकार की।

समुच्चय श्रेणी तथा ६ दिशा की श्रेणी अनादि अनन्त है। लोकाकाश की श्रेणी तथा ६ दिशा की श्रेणी सादि सांत है। अलोकाकाश की श्रेणी स्यात् सादि सांत स्यात् सादि अनन्त स्यात् अनादि सांत और स्यात् अनादि अनन्त है।

१ सादि सान्त—लोक के व्याघात मे

२ सादि अनन्त लोक के अन्त में अलोक को आदि है; परन्तु अन्त नही।

३ अनादि सान्त—अलोक अनादि है; परन्तु लोक के पास अन्त है।
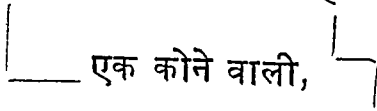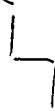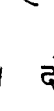
४ अनादि अनन्त—जहाँ लोक का व्याघात नही पडे वहां चार

दिशा मे सादि सात सिवाय के २ भागे। ऊँची-नीची दिशा मे ४ भांगा।

द्रव्यापेक्षा श्रेणी कुडजुम्मा है। ६ दिक्षा मे और द्रव्यापेक्षा लोकाकाश की श्रेणी ६ दिशा की श्रेणी और अलोकाकाश की श्रेणी भी यही है। प्रदेशा पेक्षा आकाश श्रेणी तथा ६ दिशा मे श्रेणी कुडजुम्मा है। प्रदेशापेक्षा लोकाकाश की श्रेणी स्यात् कुडजुम्मा स्यात् दावरजुम्मा है। पूर्वादि ४ दिशा और ऊँची-नीची दिशापेक्षा कुड़जुम्मा है।

प्रदेशापेक्षा अलोकाकाश की श्रेणी स्यात् कुडजुम्मा जाव स्यात् कलयुगा है एव ४ दिशा की श्रेणी, परन्तु ऊँची-नीची दिशा मे कलयुगा सिवाय की तीन श्रेणी है।

श्रेणी ७ प्रकार की होती है :—ऋजु, Λ एक वका, M दो वंका, |___ एक कोने वाली, |¯¯| दो कोने वाली, ⌒ अर्ध चक्रवाल, तज्ञा O चक्र वाल।

जीव अनुश्रेणी (सम) गति करे, विस्रेणी गति न करे। पुद्गल भी अनुस्रेणी गति ही करे। विश्रेणी गति न करे।

●

बल का अल्पबहुत्व

(पूर्वाचार्यों की प्राचीन प्रति के आधार से)

१ सब से कम सूक्ष्म निगोद के अपर्याप्ता का बल, उनसे
२ बादर निगोद के अपर्याप्ता का बल असख्यात गुणा „
३—सूक्ष्म „ पर्याप्ता „ „ „ „
४—बादर „ „ „ „ „ „

५—सूक्ष्म पृथ्वी काय के अपर्याप्ता	,,	,,	,,	,,
६— ,, ,, पर्याप्ता	,,	,,	,,	,,
७—बादर ,, अपर्या०	,,	,,	,,	,,
८— ,, ,, पर्या०	,,	,,	,,	,,
९— ,, वनस्पति के अपर्या०	,,	,,	,,	,,
१०— ,, ,, पर्या०	,,	,,	,,	,,
११—तनु वाय का	,,	,,	,,	,,
१२—घनोदधि	,,	,,	,,	,,
१३—घन वायु	,,	,,	,,	,,
१४—कुंथवा	,,	,,	,,	,,
१५—लीख	,,	पाच	,,	,,
१६—जूँ	,,	दश	,,	,,
१७—चीटी मकोडे	,,	वीस	,,	,,
१८—मक्खी	,,	पांच	,,	,,
१९—डस मच्छर	बल	दश	गुणा	उनसे
२०—भवरे	,,	वीस	,,	,,
२१—तीड	,,	पचास	,,	,,
२२—चकली	,,	साठ	,,	,,
२३—कबूतर	,,	पन्द्रह	,,	,,
२४—कौवे	,,	सौ	,,	,,
२५=मुर्गे	,,	,,	,,	,,
२६—सर्प	,,	हजार	,,	,,
२७—मोर	,,	पाचसौ	,,	,,
२८—बन्दर	,,	हजार	,,	,,
२९—घेटा (सूअर का वच्चा)	,,	सौ	,,	,,
३०—मेढा	,,	हजार	,,	,,
३१—पुरुप	,,	सौ	,,	,,

३२—वृषभ			,,	बारह	,,	,,
३३—अश्व			,,	दश	,,	,,
३४—भेसे			,,	बारह	,,	,,
३५—हाथी			,,	पाचसौ	,,	,,
३६—सिह			,,	,,	,,	,,
३७—अष्टापद			,,	दो हजार	,,	,,
३८—वलदेव			,,	दस हजार	,,	,,
३९—वासुदेव			,,	दो ,,	,,	,,
४०—चक्रवर्ती			,,	दो ,,	,,	,,
४१—व्यन्तर देव			बल	क्रोड	गुणा	अधिक
४२—नागादि भवनपति			,,	असंख्य	,,	,,
४३—असुर कुमार देवता			,,	,,	,,	,,
४४—तारा	,,		,,	,,	,,	,,
४५—नक्षत्र	,,		,,	,,	,,	,,
४६—ग्रह	,,		,,	,,	,,	,,
४७—व्यन्तर इन्द्र	,,		,,	,,	,,	,,
४८—नागादि देवता का इन्द्र			,,	,,	,,	,,
४९—असुर	,,	,,	,,	,,	,,	,,
५०—ज्योतिषी	,,	,,	,,	,,	,,	,,
५१—वैमानिक	,,	,,	,,	,,	,,	,,
५२— ,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,

५३—तीनो ही काल के इन्द्रो से भी तीर्थंकर की कनिष्ठ अगुली का बल अनन्त गुणा है। (तत्व केवलीगम्य)

●

समकित का ११ द्वार

१ नाम २ लक्षण ३ आवन (आगति) ४ पावन ५ परिणाम ६ उच्छेद ७ स्थिति ८ अन्तर ९ निरन्तर १० आगरेश ११ क्षेत्र स्पर्शना और अल्पबहुत्व ।

१ नाम द्वार—समकित के ४ प्रकार :

क्षायक, उपशम, क्षयोपशम और वेदक समकित

२ लक्षण द्वार—७ प्रकृति (अनंतानुबन्धी क्रोध । मान, माया, लोभ और ३ दर्शन मोहनीय) का मूल से क्षय करने से क्षायक समकित व ६ प्रकृति उपशमावे और समकित मोहनीय वेदे तो वेदक समकित होता है । अनंतानु० चोक का क्षय करे और तीन दर्शन मोह को उपशमावे उसे क्षयोपशम समकित कहते है ।

३ आवन द्वार—क्षायक समकित केवल मनुष्य भव में आवे । शेष तीन समकित चार गति में आवे ।

८ पावन द्वार—चार ही समकित गति में पावे ।

५ परिणाम द्वार:—क्षायक समकित अनन्ता (सिद्ध आश्री) शेष तीन समकित वाला असंख्यात जीव ।

६ उच्छेद द्वार.—क्षायक समकित का उच्छेद कभी न होवे । शेप तीन की भजना ।

७ स्थिति द्वार —क्षायक समकित सादि अनन्त । उपशम समकित ज० उ० अं० मु०, क्षयोप० और वेदक की स्थिति ज० अ० मु० उ० ६६ सागर झाझेरी ।

८ अन्तर द्वार:—क्षायक समकित में अन्तर नही पडे । शेप ३ में

अन्तर पडे तो ज० अं० उ० अनन्त काल यावत् देश न्यून [उणा] अर्ध पुद्गल परावर्तन ।

६ निरन्तर द्वार.—क्षायक समकित निरन्तर आठ समय तक आवे । शेष ३ समकित आवलिका के अस० में भाग जितने समय निरन्तर आवे ।

१० आगरेश द्वार:—क्षायक समकित एक बार ही आवे । उपशम समकित एक भव मे ज० १ बार उ० २ बार आवे और अनेक भव आश्री ज० २ वार आवे । शेष २ समकित एक भव आश्री ज० १ बार उ० असख्य बार और अनेक भव आश्री ज० २ बार, उत्कृष्ट असख्य बार आवे ।

११ क्षेत्र स्पर्शना-द्वार—क्षायक समकित समस्त लोक स्पर्शे (केवली समु० आश्री) शेष ३ समकित देश उणा सात राजू लोक स्पर्शे ।

१२ अल्पवहुत्व द्वार—सब से कम उपशम समकित वाला, उनसे वेदक समकित वाला असं० गुणा, उनसे क्षायोपशम समकित वाला असख्यात गुणा, उनसे क्षायक समकित वाला अनन्त गुणा (सिद्धापेक्षा) ।

●

खण्डा जोयणा

(सूत्र श्री जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति)

१खण्डा २जोयण ३वासा ४पव्वय ५कूडा ६तित्थ ७सेढीओ
८विजय ९द्रह १०सलिलाओ, पिडए होई सगहणी ।। १ ।।

१ लाख योजन लम्बे-चौडे जम्बू द्वीप के अन्दर (जिसमे हम रहते है) १ खण्ड, २ योजन, ३ बास, ४ पर्वत, ५ कूट (पर्वत के ऊपर) ६ उतीर्थ, ७ श्रेणी, ८ विजय, ९ द्रह, १० नदिएँ आदि कितनी है ? इसका वर्णन :—

जम्बू द्वीप चक्की के पाट के समान गोल है। इसकी परिधि ३१६२२७ योजन, ३ गाउ, १२८ धनुष्य, १३।। आंगुल, १ जव, १ जूँ, १ लीख, ६ वालाग्र और १ व्यवहार परमाणु समान है। इसके चारो ओर एक कोट (जगति) है। १ पद्मवर वेदिका, १ वन खण्ड और ४ दरवाजो से सुशोभित है।

१ खण्ड द्वार :—दक्षिण-उत्तर भरत जितने (समान) खण्ड करे तो जम्बू द्वीप के १०९ खण्ड हो सकते है।

न०	क्षेत्र के नाम	खण्ड	योजन कला
१	भरत क्षेत्र	१	५२६-६
२	चूल हेमवन्त पर्वत	२	१०५२-१२
३	हेमवाय क्षेत्र	४	२१०५-५
४	महा हेमवन्त पर्वत	८	४२१०-१०
५	हरिवास क्षेत्र	१६	८४२१-१
६	निषध पर्वत	३२	१६८४२-२
७	महाविदेह क्षेत्र	६४	३३६८४-४
८	नीलवत पर्वत	३२	१६८४२-२
९	रम्यक् वास क्षेत्र	१६	८४२१-१
१०	रूपी पर्वत	८	४२१०-१०
११	हिरण्यवास क्षेत्र	४	२१०५-५
१२	शिखरी पवत	२	१०५२-१२
१३	ऐरावत क्षेत्र	१	५२५-६
		१९०	१०००००-०

१९ कला का १ योजन समझना।

पूर्व पश्चिम का १ लाख योजन का माप

नं० क्षेत्र का नाम	योजन
१ मेरु पर्वत की चौडाई	१००००

नं०	क्षेत्र का नाम	योजन
२	पूर्व भद्रशाल वन	२२०००
३	" आठ विजय	१७७०२
४	" चार वक्षार पर्वत	२०००
५	" तीन अन्तर नदी	३७५
६	" सीतामुख वन	२६२३
७	पश्चिम भद्रशाल वन	२२०००
८	" आठ विजय	१७७०२
९	" चार वक्षार पर्वत	२०००
१०	" तीन अन्तर नदी	३७५
११	" सीतामुख वन	२६२३
		कुल १०००००

२ योजन द्वार : १ लाख योजन के लम्बे चौड़े जम्बू द्वीप के एक-एक योजन के १० अबज खण्ड हो सकते है। जो १ योजन सम चोरस जितने खण्ड करे तो ७००-५६९४१५० खण्ड होकर ५३१५ धनुष्य और ६० आंगुल क्षेत्र बाकी बचे।

३ वासा द्वार मनुष्य के रहने वाले वास ७ तथा १० है। कर्म भूमि के मनुष्यों के ३ क्षेत्र—भरत, ऐरावर्त और महाविदेह। अकर्म भूमि मनुष्यो के ४ क्षेत्र—हेमवाय, हिरणवाय, हरिवास, रम्यक्-वास एव सात १० गिनने होवे तो महाविदेह क्षेत्र के ४ भाग करना —(१) पूर्व महाविदेह, (२) पश्चिम महाविदेह, (३) देव कुरु, (४) उत्तर कुरु एवं १०।

जगति (कोट) ८ योजन ऊँचा और चौडा मूल में १२, मध्य में ८ और ऊपर ४ योजन का है। सारा वज्र रत्नमय है। कोट के एक के एक तरफ झरोखे की लाइन है, जो ०॥ योजन ऊँची, ५०० धनुष्य चौड़ी है। कोषीशा ओर कागरा रत्नमय है।

जगति के ऊपर मध्य में पद्मवर वेदिका है, जा ०॥ योजन ऊँची, ५०० धनुष्य चौडी है। दोनो तरफ नीले पन्नो के स्तम्भ है जिन पर सुन्दर पुतलिये और मोती की मालाएँ है। मध्य भाग के अन्दर पद्मवर वेदिका के दो भाग किये हुए है—(१) अन्दर के विभाग मे एक जाति के वृक्षों का वनखन्ड है, जिसमे ५ वर्ण का रत्नमय तृण है। वायु के सञ्चार से जिसमें ६ राग और ३६ रागनियाँ निकलती है। इसमें अन्य बावड़िये और पर्वत है, अनेक आसन है, जहाँ देवो-देवता क्रीड़ा करते है। (२) बाहर के विभाग मे तृण नही है। शेप रचना अन्दर के विभाग समान है।

मेरु पर्वत से चार ही दिशा मे ४५-४५ हजार योजन पर चार दरवाजे है। पूर्व में विजय, दक्षिण मे विजयवत, पश्चिम मे जयन्त और उत्तर मे अपराजित नामक है। प्रत्येक दरवाजा ८ योजन ऊँचा, ४ योजन चौड़ा है। दरवाजे के ऊपर नव भूमि और सफेद घुमट (गुम्बज), छत्र, चामर, ध्वजा तथा ८-८ मागलिक हैं। दरवाजों के दोनो तरफ दो-दो चौतरे है, जो प्रासाद, तोरण, चन्दन, कलश, झारी, धूप कड़छा, और मनोहर पुतलियों से सुशोभित है।

क्षेत्र का विस्तार—भरत क्षेत्र :—मेरु के दक्षिण में अर्ध चन्द्राकारवत् है। मध्य में वैताढ्य पर्वत आने से भरत के दो भाग हो गये है—१ उत्तर भरत, २ दक्षिण भरत। भरत की मर्यादा (सीमा) करने वाला चूल हेमवन्त पर्वत पर पद्म द्रह है, जिसके अन्दर से गङ्गा और सिन्धु नदी निकल कर तमस् गुफा और खण्ड प्रभा गुफा के नीचे वैताढ्य पर्वत को भेद कर लवण समुद्र में मिलती है। इनसे भरत क्षेत्र के ६ खन्ड होते है।

दक्षिण भरत २३८ योजन कला का है, जिसमें ३ खण्ड है। मध्य खण्ड मे १४ हजार देश है। मध्य भाग में कोशल देश, वनिता (अयोध्या) नगरी है, जो १२ योजन लम्वी, ६ योजन चौड़ो है। पूर्व मे १ हजार और पश्चिम में ३ हजार देश है। कुल दक्षिण भरत

मे १६ हजार देश है। इसी प्रकार १६ हजार देश उत्तर भरत मे है। इस भरत क्षेत्र मे काल चक्र का प्रभाव है (६ आरावत्)।

ऐरावत् क्षेत्र :—मेरु के उत्तर मे शिखरी पर्वत से आगे भरतवत् है।

महाविदेह क्षेत्र :—निपिध और नीलवन्त पर्वत के मध्य में है। पलङ्ग के सठाणवत् ३२ विजय है। मध्य मे १० हजार योजन का विस्तार वाला मेरु है। पूर्व पश्चिम दोनो तरफ २२-२२ हजार योजन भद्रशाल वन है। दोनो तरफ १६-१६ विजय है।

मेरु के उत्तर और दक्षिण मे २५०-२५० योजन का भद्रशाल वन है। दक्षिण मे निषिध तक देव कुरु और उत्तर मे नीलवत तक उत्तार कुरु है। ये दोनो दो-दो गजदन्त के कारण अर्धचन्द्राकार है। इस क्षत्र मे युगल मनुष्य ३ गाउ की अवगाहना उछेध आगल के और ३ पल्य के आयुष्य वाले रहते है। देव कुरु मे कुड शाल्मली वृक्ष, चित्र विचित्र पर्वत, १०० कञ्चन गिरि पर्वत और ५ द्रह है। इसी प्रकार उत्तर कुरु मे भी है, परन्तु ये जम्बूसुदर्शन वृक्ष है।

निषिध और महाहिमवन्त पर्वत के मध्य मे हरिवास क्षेत्र है तथा नीलवन्त और रूपी पर्वत के बीच मे रम्यक्वास क्षेत्र है। इन दो क्षेत्रो मे २ गाउ की अवगाहना और २ पल्य की स्थितिवाले युगल मनुष्य रहते है।

महाहैमवन्त और चूल हेमवन्त पर्वत के बीच मे हेमवाय क्षेत्र और रूपी तथा शिखरी पर्वत के मध्य मे हिरणवाय क्षेत्र है। इन दोनो क्षेत्रो मे १ गाउ की अवगाहना वाले और १ पल्य का आयुष्य वाले युगल मनुष्य रहते है।

क्षेत्र	द० उ० चौडाई	बाह	जीवा	धनष् पीठ
	यो० कला	यो० कला	यो० कला	यो० कला
दक्षिण भरत	२३८३	०	९७४८-१२	९७६६-१
उत्तर ,,	,,	१८९२-७॥	१४४७१-६	१४५२८-११

ह्रेमवाय क्षेत्र	२१०५-५	६७५५-३	३७६७४-१६	३८७४०-१०
हरिवास ,,	८४२१-१	१३३६१-६	७३९०१-१७	८४०१६-४
महाविदेह ,,	३३६८४-४	३३७६७-७	१०००००	११८११३-१६
देव कुरु ,,	११८४२-२	०	५३०००	६०४१८-१२
उत्तर कुरु ,,	११८४२-२	०	५३०००	६०४१८-१२
रम्यक्वास,,	८४२१-१	१३३६१-१६	७३९०१-१७	८४०१६-४
हिरण्यवास,,	२१०५-५	६७५५-३	३७६७४-१६	३८७४०-१०
द. ऐरावर्त,,	२३८-३	१८९२-७॥	१८४७१-६	१४५२८-११
उत्तर ,, ,,	२३८-३	०	९७४८-१२	९७६६-१

४ पव्वय द्वार (पर्वत) :—२६९ पर्वत शाश्वत है। देव कुरु में ५ द्रह है, जिसके दोनों तट पर दस-दसकञ्चन गिरि सर्व सुवर्णमय है, दस तट पर १०० पर्वत है। इसी प्रकार १०० कञ्चन गिरि उत्तर कुरु में है तथा दीर्घ वैताढ्य १६ वक्षार प०, ६ वर्षधर प०, ४ गजदन्ता प०, ४ वृतल वैताढ्य, ४ चित विचितादि और १ मेरु पर्वत एवं २३९ है।

३४ दीर्घ वैताढ्य—३२—विजय विदेह, १ भरत, १ ऐरावत के मध्य भाग मे है। १६ वक्षार—१६-१६ विजय में सीता, सीतोदा नदी से ८-८ विजय के ४ भाग हो गये है। इसके ७ अन्तर है, जिनमे ४ वक्षार पर्वत एवं ४ विभागो में १६ वक्षार है। इनके नाम .—चित्र विचित्र शैलन, एकशैल, त्रिकुट, वैश्रमण, अञ्जन, भयाञ्जन अङ्का-वाई, पवमावाई, आशीविष, सुहावह, चन्द्र, सूर्य, नाग, देव।

६ वर्षधर—७ मनुष्य क्षेत्रों के मध्य में ६ वर्षधर (चूल हेमवन्त, महा हेमवन्त, निषिध, नीलवन्त, रूपी और शिखरी) पर्वत है।

४ गजदन्ता पर्वत—देव कुरु, उत्तर कुरु और विजय के बीच में आये हुए है। नाम—गन्धमर्दन, मालवन्त, विद्युत्प्रभा और सुमानस।

४ वृतल वैताढ्य—हेमवाय, हिरणवाय, हरिवास, रम्यक्वास के

मध्य मे है । नाम :—सदावाई, वयड़ावाई, गन्धावाई, और मालवन्ता ।

४ चित विचितादि निषिध पर्वत के पास सीता नदी के दोनो तट पर चित और विचित प० है तथा नीलवन्त के पास सीतोदा के दो तट पर जमग और समग दो पर्वत है ।

जम्बू द्वीप के बराबर मध्य मे मेरु पर्वत है ।

पर्वत के नाम	ऊँचाई	गहराई	विस्तार
२०० कञ्चन गिरि पर्वत	१०० यो	२५ यो.	१०० यो.
३४ दीर्घ वैताढ्य "	२५ यो.	२५ गाउ	५० यो.
१६ वक्षार "	५०० यो.	५०० गाउ	५०० यो.
			यो कला
चूल हेमवन्त और शिखरी	१०० यो.	२५ यो	१०५२-१२
महा हेमवन्त और रूपी	२०० यो.	५० यो.	४२१०-१०
निषिध और नीलवन्त	४०० यो	१०० यो.	१६८४२-२
४ गजदन्ता पर्वत	५०० यो.	१२५ यो.	३०२०९-६
४ वृतल वैताढ्य	१००० यो.	२५० यो	१०००-०
चित, विचि., जमग, सुमग	१००० यो.	२५० यो.	१००-०
मेरु पर्वत	९९००० यो.	१००० यो.	१००९० यो.

मेरु पवत पर ४ वन है—भद्रशाल; नन्दन, सुमानस और पण्डक वन ।

१ भद्रशाल वन—पूर्व-पश्चिम २२००० योजन, उत्तर दक्षिण २५० योजन विस्तार है । मेरु से ५० योजन दूर चार ही दिशाओ मे ४ सिद्धायतन है जिनमे जिन प्रतिमा है । मेरु से ईशान मे ४ पुष्करणी (बावडियाँ) है । ५० यो. लम्बी, २५ यो. चौडी, १० यो. गहरी है । वेदिका वनखण्ड तोरणादि युक्त है । चार बावड़ियो के

अन्दर ईशानेन्द्र का महल है। ५०० योजन ऊँचा; २५० योजन विस्तार वाला है। नीचे लिखी रचना अनुसार अग्निकोन मे ४ बावड़िये है:— उत्पला, गुम्मा, निलना, उज्ज्वला के अन्दर शक्रोन्द्र का महल है।

वायु कोन में ४—लिगा, मिगनाभा, अञ्जना, अञ्जन प्रभा के अन्दर शक्रेन्द्र का प्रासाद व सिंहासन है।

नैऋत्य कोन में ४—श्रीकता, श्रोचंदा, श्रीमहीता, श्रोनलीता मे ईशानेन्द्र का प्रासाद व सिहासन है।

आठ विदिशा मे ८ हस्तिकूट पर्वत है। पद्मुत्तर; नोलवन्त; सुहस्ति; अञ्जनगिरि; कुमुद; पोलाश, विठिस और रोयणगिरि। ये प्रत्येक १२५ योजन पृथ्वी में ५०० योजन; ऊँचा मूल मे ५०० योजन; मध्य मे ३७५ योजन और ऊपर २५० योजन विस्तार वाला है। अनेक वृक्ष, गुच्छा गुमा, वेली, तृण से शोभित है। विद्याधरो और देवताओ का क्रीड़ा स्थान है।

२ नन्दन वन—भद्रशाल से ५०० योजन ऊँचे मेरु पर वलयाकार है। ५०० योजन विस्तार है। वेदिका वनखण्ड; ४ सिद्धायतन; १६ वावडिये; ४ प्रासाद पूववत है। ९ कूट है : नन्दन वन कूट; मेरु कूट; निषिध कूट, हेमवन्त कूट; रजित कूट; रुचित, सागरचित, वज्र और वल कूट; ८ कूट ५०० यो. ऊंचे है। आठो ही पर १ पल्य वाली ८ देवियो के भवन है। नाम :—मेघकरा, मेघवती, सुमेघा, हेम-मालिनी; सुवच्छा, वच्छमित्रा, वज्रसेना और बलहका देवी। वल कूट १००० यो. ऊँचा, मूल में १००० योजन, मध्य में ७५० योजन, ऊपर ५०० योजन विस्तार है। वल देवता का महल है। शेष भद्रशाल वन समान सुन्दर और विस्तार वाला है

३ सुमानस वन—नन्दन वन से ६२५०० योजन ऊँचा है। ५०० योजन विस्तार वाला मेरु के चारो ओर है। वेदिका वनखण्ड, १६ बावडिये, ४ सिद्धायतन, शक्रेन्द्र ईशानेन्द्र के महल आदि पूर्ववत् हैं।

४ पाण्डक वन—सुमानस वन से ३६००० यो ऊँचा मेरु शिखर

पर है। ४९४ योजन चूडी आकारवत् है। मेरु को ३२ योजन की चूलिका के चारो ओर (तरफ) लिपटा हुआ है। वेदिका, वन खण्ड, ४ सिद्धायतन, १६ बावडिए, मध्य मे ४ महल। सब पूर्ववत्।

मध्य की चूलिका (मेरुको) १२ योजन, मध्य मे ८ योजन; ऊपर ४ योजन की विस्तार वाली। ४० योजन ऊँची है। वैडूर्य रत्नमय है। वेदिका बनखण्ड से विठायी हुई (लिपटी हुई) है, मध्य मे १ सिद्धायतन है।

पाडुक वन की ४ दिशा मे ४ शिला है। पडू, पडूबल, रक्त और रक्त कम्बल। प्रत्येक शिला ५०० योजन लम्बी, २५० योजन चौड़ी, ४ योजन जाडी अधचन्द्र आकारवत् है। पूर्व-पश्चिम शिलाओ पर दो-दो सिहासन है। जहाँ महाविदेह के तीर्थकरो का जन्माभिषेक भवनपति, व्यतर, ज्योतिषी और वैमानिक देवता करते है। उत्तर-दक्षिण मे एकेक सिहासन है, जहाँ भरत ऐरावत के तीर्थंकरो का जन्माभिषेक ४ निकाय के देवता करते है।

मेरु पर्वत के ३ करण्ड है। नीचे का १००० योजन पृथ्वो मे, मध्य मे ६३००० योजन पृथ्वी के ऊपर और ऊपर का ३६००० योजन का। कुल एक लाख योजन का शाश्वत मेरु है।

५ कूट द्वार :—४६७ कूट पर्वतो पर और ५८ क्षेत्रो मे है।

		ऊँचा योजन	मूल वि	ऊँचा वि.
चूल हेमवन्त पर	११	५००	५००	२५०
महा हेमवन्त पर	८	,,	,,	,,
निषिध पर	९	,,	,,	,,
नीलवन्त पर	९	,,	,,	,,
रूपी पर	८	,,	,,	,,
शिखरी पर	११	,,	,,	,,
वैताढ्य ३४×९=३०६		२५ गाउ	२५ गाउ	१२॥ गाउ

वक्षार १६×४=६४		५००	५००	२५०
विद्युतप्रभा गजदंता पर	९	,,	,,	,,
मालवन्ता ,,	९	,,	,,	,
सुमानस ,,	६	,,	,,	,,
गधमाल ,,	७	,,	,,	,,
मेरु के नन्दन वन में	९	,,	,,	,,
	४६७			
भद्रशाल ,,	८	,,	,,	,,
देव कुरु में	८	८ यो.	८ यो.	४ यो.
उत्तर कुरु में	८	,,	,,	,,
चक्रवर्ती के विजय में	३४			
	५२५			

गजदंता के २ और नन्दन वन का १ कूट और १ हजार योजन ऊँचा, १ हजार योजन मूल में और ५ सो योजन का विस्तार समझना।

७६ कूट (१६ वक्षार, ८ उत्तर कुरु ३४ वैताढ्य) पर जिन गृह है।

शेष कूटो पर देव देवी के महल है। ४ वन मे चार (१६) मेरु चलो पर १, जम्बू वृक्षपर १, शालमली वृक्षपर १ जिनगृह। कुल ९५ शाश्वत सिद्धायतन है।

६ तीर्थ द्वार :—३४ विजय (३२ विदेह का, १ भरत, १ ऐरावर्त) में से प्रत्येक तीन-तीन लौकिक तीर्थ है। मगध, वरदाम व प्रभास। जब चक्रवर्ती खण्ड साधने को जाते है तब यहाँ रोक दिये जाते है। यहाँ अट्ठम करते है। तीर्थंकरों के जन्माभिषेक के लिये भी इन तीर्थो का जल और औषधि देव लाते है।

७ श्रेणी द्वार :—विद्याधरो की तथा देवों की १३६ श्रेणी है। वैताढ्य पर १० योजन ऊँचे विद्याधरो की २ श्रेणी है। दक्षिण श्रेणी में ५० और उत्तर श्रेणी में ६० नगर है। यहाँ से १० योजन ऊँचे पर

अभियोग देवकी दो श्रेणी (उत्तर-दक्षिण) की है एव ३४ वैताढ्य पर चार-चार श्रेणी है। कुल ४४×८=१३६ श्रेणिये है।

८ विजय द्वार :—कुल ३४ विजय है जहाँ चक्रवर्ती ६ खण्ड का एकछत्र राज्य कर सकते है। ३२ विजय तो महाविदेह क्षेत्र के है। नीचे अनुसार :—

पूर्व विदेह	सीता नदी	पश्चिम विदेह	सीतोदा नदी
उत्तर किनारे ८	दक्षिण कि. ८	उत्तर कि. ८	दक्षिण कि. ८
कच्छ विजय	वच्छ विजय	पद्म विजय	विप्रा विजय
सुकच्छ ,,	सुवच्छ ,,	सुपद्म ,,	सुविप्रा ,,
महाकच्छ ,,	महावच्छ ,,	महापद्म ,,	महाविप्रा ,,
कच्छवती ,,	वच्छवती ,,	पद्मवती ,,	विप्रावती ,,
आव्रता ,,	रम' ,,	सवा ,,	वग्गु ,,
मङ्गला ,,	रमक ,,	कुमुदा ,,	सुवग्गु ,,
पुरकला ,,	रमणीक ,,	निलीका ,,	गन्धीला ,,
पुष्कलावती ,,	मङ्गलावती ,,	सलीला ,,	गधीलावती ,,

प्रत्येक विजय १६५९२ योजन २ कला दक्षिणोत्तर लम्बी और २२२॥। योजन पूर्व-पश्चिम मे चौडी है। ये ३२ तथा १ भरत क्षेत्र, १ ऐरावत क्षेत्र एव ३४ चक्रवर्ती हो सकते है।

इन ३४ विजयो मे ३४ दीर्घ वैताढ्य पर्वत, ३४ तमस गुफा ३४ खन्ड प्रभा गुफा, ३४ राजधानी, ३४ नगरी, ३४ कृत मालो देव ३४ नट माली देव ३४ ऋषभ कूट ३४ गङ्गा नदी ३४ सिंधु नदी ये सब शाश्वत है।

९ द्रह द्वार :—वर्षधर पर्वतो पर छः-छ पाच देव कुरु में और पाच उत्तर कुरु मे है।

द्रह के नाम (कुण्ड)	किस पर्वत पर है	लम्बाई योजन	चौडाई योजन	देवी	गहराई कमल

पद्मद्रह चूल	हेमवन्त	१०००	५०००	१० श्री.	१२०५०१२०
महापद्म चूल	महाहेमवन्त	२०००	१०००	१० ल.	२४१००२४०
तिगच्छ चूल	निषिध	४०००	२०००	१० धृति	४८२००४८०
केशरी चूल	नीलवन्त	,,	,,	,, बुद्धि	,,
म. पु. चूल	रूपी	२०००	१०००	,, ह्री	२४१००२४०
पुंडरोक चूल	शिखरी	१०००	५००	,, कीर्ति	१२०५०१२०
१० द्रह जमीन पर		१०००	५००	,, दे.	४१००२४०
					कुल १९२८०१९२०

देव कुरु के ५ द्रह—निषेण; देव कुरु; सूर्य, सूलस, और विद्युतप्रभ द्रह।

उत्तर कुरु के ५ द्रह—नीलवन्त, उत्तर कुरु; चन्द्र; ऐरावर्त और मालवन्त द्रह।

१० नदी द्वार —१४५६०९० नदियें है। विस्तार नीचे अनुसार—
नि. ऊँडी=निकलता ऊँडी प्र. ऊँडी=समुद्र में प्रवेश करते ऊँडो
नि वि= निकला विस्तार प्र. वि=समुद्र में प्रवेश करते वि.

नदी	पर्वतसे	कुण्डसे	निऊँ	नि. वि.	प्र. ऊँ	प्र वि	परि न.
१ गङ्गा	चूल हेम	पद्म	०॥गाउ	६।यो.	१।यो	६२।.यो.	१४०००
२ सिन्धु	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,
३ रोहिता	,,	,	१ गाउ	१२॥यो.	२॥यो.	१२५यो.	२८०००
४ रोहितसा	म.हेम,	म.पद्म	,,	,,	,,	,,	,,
५ हरिकन्ता	,,	,,	२ गाउ	२५ यो.	५यो.	२५०यो.	५६०००
६ हरिसलीजा	निपिध	तिगच्छ	,,	,,	,,	,,	,,
७ सीता	,,	,,	४गाउ	५०यो.	१०यो.	५००यो.	५३२०००
८ सीतोदा	नीलवन्त	केशरी	,,	,,	,,	,,	,,
९ नरकन्ता	,,	,,	२गाउ	२५यो.	५यो.	२५०यो.	५६०००
१० नारीकन्ता	रूपी	महापुंड	,,	,,	,,	,,	,,

११	रूपकूला	,,	,,	१गाउ	१२॥यो.	२॥यो.	१२५यो.	२८०००
१२	सुवर्णकूला	शिखर	पु डरीक	,,	,,	,,	,,	,,
१३	रक्ता	,,	,,	०॥गाउ	६।यो.	१।यो	६२॥यो.	१४०००
१४	रक्तोदा	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,
७८	विदेह की कु ढो से	पृथ्वी पर		,,	,,	,,	,,	,,
	६४ नदी							

प्रत्येक नदी ऊपर बताये हुए पर्वत तथा कुँड से निकल कर आगे बहती हुई गङ्गा प्रभास, सिंधु प्रभास आदि कुँड में गिरती है। यहाँ से आगे जाने पर आधे परिवार जितनी नदिये मिलती है जिनके साथ बीच मे आये हुए पहाड को तोड कर आगे बहती है जहाॅ आधे परिवार की नदिये मिलती हैं जिनके साथ बहकर जम्बूद्वीप की जगति से बाहर लवण समुद्र मे मिलती है।

गगा प्रभास आदि कुँड मे गगा द्वीप आदि नामक एकेक द्वीप है, जिनमे इसी नाम की एकेक देवी सपरिवार रहती है। इन कुँड, द्वीप और देवियो के नाम शाश्वत है।

यन्त्र के अनुसार ७८ मूल नदिये और उनकी परिवार की (मिलने वाली चौदह लाख ५६ हजार नदिये है। इस उपरात महाविदेह के ३२ विजयो के २८ अन्तर है जिनमे पहले लिखे हुए १६ वक्षार पर्वत और शेष १२ अन्तर मे १२ अन्तर नदिये है। इनके नाम —गृहवन्ती, द्रहवन्ती, पकवन्ती, तत जला, मतजला, उगम जला, क्षीरोदा, सिंह सोता, अन्तो वहनी, उपमालनी, केनमालनी, और गम्भीर मालनी।

ये प्रत्येक नदिये १२५ योजन चौड़ी, २॥ यो० ऊँडी (गहरी) और १६५९२ योजन २ कला की लम्बी है। कुल नदिये चौदह लाख ५६ हजार नब्बे है। विशेष विस्तार जम्बू द्वीप प्रज्ञप्ति सूत्र से जानना।

धर्म के सम्मुख होने के १५ कारण

(१) नीतिमान होवे कारण कि नीति धर्म की माता है।

(२) हिम्मतवान और बहादुर होवे कारण कि कायरो से धर्म वन सकता नही ।

(३) धैर्यवान होवे किवा प्रत्येक कार्य मे आतुरता न करे।

(४) बुद्धिमान होवे किवा प्रत्येक कार्य अपनी बुद्धि से विचार कर करे ।

(५) असत्य से घृणा करने वाला होवे और सत्य बोलने वाला होवे।

(६) निष्कपटी होवे, हृदय साफ स्फटिक रत्नमय होवे।

(७) विनयवान तथा मधुर भाषी होवे।

(८) गुणग्राही होवे और स्वात्म-श्लाघा न करे (स्वयं अपने गुण अन्य से आदर पाने के लिये न कहे)।

(९) प्रतिज्ञा-पालक होवे अर्थात् जो नियमादि लिये हो उन्हे बराबर पाले।

(१०) दयावान होवे, परोपकार की बुद्धि होवे ।

(११) सत्य धर्म का अर्थी होवे और सत्य का पक्ष लेने वाला होवे।

(१२) जितेन्द्रिय होवे, कषाय की मन्दता होवे ।

(१३) आत्म कल्याण की दृढ इच्छा वाला होवे।

(१४) तत्त्व विचार में निपुण होवे, तत्त्व मे ही रमन करे।

(१५) जिसके पास से धर्म की प्राप्ति हुई होवे उसका उपकार कभी भी नही भूले और समय आने पर उपकारी के प्रति प्रत्युपकार करने वाला होवे ।

मार्गानुसारी के ३५ गुण

१ न्याय सम्पन्न द्रव्य प्राप्त करे, २ सात कुव्यसन का त्याग करे, ३ अभक्ष्य का त्यागी होवे, ४ गुण परीक्षा से सम्बन्ध (लग्न) जोडे, ५ पाप-भीरु ६ देश हित कर बर्तन वाला, ७ पर निन्दा का त्यागी, ८ अति प्रकट, अति गुप्त तथा अनेक द्वार वाले मकान मे न रहे, ९ सद्गुणी की संगति करे, १० बुद्धि के आठ गुणो का धारक, ११ कदा-ग्रही न होवे (सरल होवे), १२ सेवाभावी होवे, १३ विनयी, १४ भय स्थान त्यागे, १५ आय व्यय का हिसाब रक्खे, १६ उचित (सभ्य) वस्त्राभूषण पहिने, १७ स्वाध्याय करे (नित्य नियमित धार्मिक वाचन श्रवण करे), १८ अजीर्ण मे भोजन न करे, १९ योग्य समय पर (भूख लगने पर मित, पथ्य नियमित) भोजन करे, २० समय का सदुपयोग करे, २१ तीन पुरुषार्थ (धर्म अर्थ काम) मे विवेकी, २२ समयज्ञ (द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव का ज्ञाता) होवे, २३ शात प्रकृति वाला, २४ ब्रह्मचर्य को ध्येय समझने वाला, २५ सत्यव्रत धारी, २६ दीर्घदर्शी, २७ दयालु, २८ परोपकारी, २९ कृतघ्न न होकर कृतज्ञ होवे, (अप-कारी पर भी उपकार करे, ३० आत्म प्रशसा न इच्छे, न करे न करावे, ३१ विवेकी (योग्यायोग्य का भेद समझने वाला) होवे, ३२ लज्जावान होवे, ३३ धैर्यवान होवे ३४ षड्रिपु (क्रोध, मान, माया लोभ, राग, द्वेष) का नाश करे, ३५ इन्द्रियो को जीते (जितेन्द्रिय होवे) ।

इन ३५ गुणो को धारण करने वाला ही नैतिक धार्मिक जैन जीवन के योग्य हो सकता है ।

●●

श्रावक के २१ गुण

(१) उदार हृदयी	होवे
(२) यशवन्त	,,
(३) सौम्य प्रकृति वाला	,,
(४) लोक प्रिय	,,
(५) अक्रूर प्रकृति वाला	,,
(६) पाप भीरु	,,
(७) धर्म श्रद्धावान	,,
(८) दाक्षिण्य (चतुराई) युक्त	,,
(९) लज्जावान	,,
(१०) दयावन्त	,,
(११) मध्यस्थ (सम) दृष्टि	,,
(१२) गम्भीर-सहिष्णु-विवेकी	,,
(१३) गुणानुरागी	,,
(१४) धर्मोपदेश करने वाला	,,
(१५) न्याय पक्षी	,,
(१६) शुद्ध विचारक	,,
(१७) मर्यादा युक्त व्यवहार करने वाला होवे	
(१८) विनयशील होवे	,,
(१९) कृतज्ञ (उपकार मानने वाला)	,,
(२०) परोपकारी होवे	,,
(२१) सत्कार्य में सदा सावधान	,,

●

जल्दी मोक्ष जाने के २३ बोल

१ मोक्ष की अभिलाषा रखने से, २ उग्र तपश्चर्या करने से, ३ गुरु मुख द्वारा सूत्र सिद्धान्त सुनने से, ४ आगमन सुनकर वैसी ही प्रवृत्ति करने से, ५ पाच इन्द्रियो को दमन करने से, ६ छकाय जीवो की रक्षा करने से, ७ भोजन करने के समय साधु-साध्वियो की भावना भावने से, ८ सद्ज्ञान सीखने व सिखाने से, ९ नियाणा रहित एक कोटी से व्रत मे रहता हुआ नव कोटी से व्रत प्रत्याख्यान करने से, १० दश प्रकार की वैयावृत्य करने से, ११ कषाय को पतले करके निर्मूल करने से, १२ शक्ति होते हुए क्षमा करने से, १३ लगे हुए पापो की तुरन्त आलोचना करने से, १४ लिये हुए व्रतो को निर्मल पालने से, १५ अभयदान सुपात्र दान देने से, १६ शुद्ध मन से शीयल (ब्रह्मचर्य) पालने से, १७ निर्वद्य (पाप रहित) मधुर वचन बोलने से, १८ ग्रहण किये हुए सयम भार को अखण्ड पालने से, १९ धर्म-शुक्ल ध्यान ध्याने से, २० हर महीने ६-६ पौषध करने से, २१ पिछली रात्रि मे धर्म जागरण करते हुए तीन मनोरथादि चितवने से, २३ मृत्यु समय आलोचनादि से शुद्ध होकर समाधि पण्डित मरण मरने से ।

इन २३ बोलो को सम्यक् प्रकार से जान कर सेवन करने से जीव जल्दी मोक्ष मे जावे ।

●

तीर्थंकर गोत्र (नाम) बान्धने के २० कारण

१ श्री अरिहंत भगवान् के गुण कीर्तन करने से ।
२ श्री सिद्ध भगवान् के गुण कीर्तन करने से ।
३ आठ प्रवचन (५ समिति, ३ गुप्ति) का आराधन करने से ।
४ गुणवन्त गुरु के गुण कीर्तन करने से ।
५ स्थविर (वृद्ध मुनि) के गुण कीर्तन करने से ।
६ बहुश्रुत के गुण कीर्तन करने से ।
७ तपस्वी के गुण कीर्तन करने से ।
८ सीखे हुए ज्ञान को वारम्बार चितवने से ।
९ समकित निर्मल पालने से ।
१० विनय (७-१०-१३४ प्रकार के) करने से ।
११ समय-समय पर आवश्यक करने से ।
१२ लिये हुए व्रत प्रत्याख्यान निर्मल पालने से ।
१३ शुभ (धर्म-शुक्ल) ध्यान देने से ।
१४ वाहर प्रकार की निर्जरा (तप) करने से ।
१५ दान (अभय दान, सुपात्र दान) देने से ।
१६ वैयावृत्य (१० प्रकार की सेवा) करने से ।
१७ चतुर्विध सघ को शांति-समाधि (सेवा-शोभा) देने से ।
१८ नया-नया अपूर्व तत्त्व ज्ञान पढने से ।
१९ सूत्र सिद्धांत की भक्ति (सेवा , करने से ।
२० मिथ्यात्व नाश और समकित उद्योग करने से ।

जीव अनन्तान्त कर्मो को खपाते है। इन सत्कार्यो को करते हुए उत्कृष्ट रसायण (भावना) आवे तो तीर्थङ्कर गोत्र कर्म वांधे ।

★

श्री ज्ञाता सूत्र आठवा अध्ययन

परम कल्याण के ४० बोल

गुण	दृष्टान्त	सूत्र की साक्षी
१ समकित परम कल्याण निर्मल पालने से होवे	श्रेणिक महाराज	ठाणाग सूत्र
२ नियाणा रहित ,, तपश्चर्या से	तामिली तापस	भगवती ,,
३ तीन योग निश्चल करने से	गजसुकुमाल मुनि	अतगड ,,
४ समभाव सहित ,, क्षमा करने से	अर्जुन मालो	,, ,
५ पाच महाव्रत निर्मल ,, पालने से	गौतम स्वामी	भगवती ,,
६ प्रमाद छोड अप्र- ,, मादी होने से	शैलग राजर्षि	ज्ञाता ,,
७ इन्द्रिय दमन ,, करने से	हरिकेशी मुनि	उ. ध्ययन ,,
८ मित्रो मे माया , कपट न करने से	मल्लिनाथ प्रभु	ज्ञाता ,,
९ धर्मचर्या करने से ,,	केशी गौतम	उ. ध्ययन ,,
१० सत्य धर्म पर ,, करने से	वरुण नाग नतुये का. मित्र	भगवती ,,
११ जीवो पर करुणा ,, श्रद्धा करने से	मेघ कुमार (हाथी के) भव मे	ज्ञाता ,,
१२ सत्य बात निषङ्क ,, पूर्वक कहने से	आनद श्रावक	उपाशकदशा ,,

१३ कष्ट पड़ने पर भी व्रतों की दृढ़ता से	,,	अंबड़ और ७०० शिष्य	उववाई ,,
१४ शुद्ध मन से शीयल पालने से	,,	सुदर्शन शेठ	सुदर्शन चरित्र
१५ परिग्रह की ममता छोड़ने से	,,	कपिल ब्राह्मण	उत्तराध्ययन सूत्र
१६ उदारता से सुपात्र दान देने से	,,	सुमुख गाथापति	विपाक ,
१७ तप से डिगते हुए को स्थिर करने से	,,	राजमति	उत्तरा॰ ,,
१८ उग्र तपस्या करने से	,,	धन्ना मुनि	अ. ,,
१९ अग्लानि पूर्वक वैयावच्च करने से	,	पंथक मुनि	ज्ञाता ,,
२० सदैव अनित्य भावना भावने से	,,	भरत चक्रवर्ती	जम्बूद्वीप प्र॰ सूत्र
२१ अशुभ परिणाम रोकने से	,,	प्रसन्नचन्द्र राजर्षि	श्रेणिक
२२ सत्य ज्ञान पर श्रद्धा रखने से	,,	अर्हन्नक श्रावक	ज्ञाता सूत्र
२३ चतुर्विध सघ की वैयावच्च से	,,	सनत्कुमार चक्र॰ पूर्व भव में	भगवती ,,
२४ उत्कृष्ट भाव से मुनि सेवा करने से	,,	वाहुवल जी पूर्व भव मे	ऋषभ देव
२५ शुद्ध अभिग्रह करने से	,,	पांच पाडव	ज्ञाता सूत्र
२६ धर्म दलाली से	,,	श्री कृष्ण वासुदेव	अंतगड ,,
२७ सूत्र ज्ञान की भक्ति	,,	उदाई राजा	भगवती ,,

२८	जीव दया पालने से ,,	धर्मरुचि अणगार	ज्ञाता ,,
२९	व्रत से गिरते ही ,, सावधान होने से	अरणिक अनगार	आवश्यक ,,
३०	आपत्ति आने पर ,, धैर्य रखने से	खदक अणगार	उत्तरा. ,,
३१	जिनराज की भक्ति ,, करने से	प्रभावती रानी	,, ,,
३२	प्राणो का मोह ,, छोडकर भी दया पालने से	मेघरथ राजा	शातिनाथ चरित
३३	शक्ति होने पर भी ,, क्षमा करने से	प्रदेशी राजा	रायप्रश्नीय सूत्र
३४	सहोदर भाइयो ,, का भी मोह छोड़ने से	राम वलदेव	६३ श्ला० पु० चरित्र
३५	देवादि के उपसर्ग ,, सहने से	कामदेव	उपासक दशा
३६	देव गुरु वदन में ,, निर्भीक होने से	सुदर्शन सेठ	अतगड ,,
३७	चर्चा से वादियो को ,, जीतने से	मण्डूक श्रावक	भगवती ,,
३८	मिले हुए नि मित पर ,, शुभ भावना से	आर्द्रकुमार	सूत्रकृताग ,,
३९	एकत्व भावना ,, भावने से	नमिराजर्षि	उत्तरा ,,
४०	विषय सुख मे ,, गृद्ध न होने से	जिनपाल	ज्ञाता ,,

तीर्थंकर के ३४ अतिशय

१ तीर्थङ्कर के केश, नख न बढे, सुशोभित रहे, २ शरीर निरोग रहे, ३ लोही मास गाय के दूध समान होवे, ४ श्वासो-श्वास पद्म कमल जैसा सुगन्धित होवे, ५ आहार-निहार अदृश्य ६ आकाश मे धर्म चक्र चले, ६ आकाश में ३ छत्र शोभे तथा दो चमार उड़े, ८ आकाश में पाद पीठ सहित सिहासन चले, ९ आकाश मे इन्द्रध्वज चले, १० अशोक वृक्ष रहे, ११ भामडल होवे १२ विषम भूमि सम होवे, १३ कण्टक ऊधे (ओधे) हो जावे, १४ छ ही ऋतु अनुकुल होवे, १५ अनुकूल वायु चले, १६ पांच वर्ण के फूल प्रगट होवे, १७ अशुभ पुद्गलो का नाश होवे, १८ सुगन्धित वर्षा से भूमि सिचित होवे, १९ शुभ पुद्गल प्रगट होवे, २० योजनगामी वाणी ध्वनि होवे, २१ अर्ध मागधी भाषा में देशना देवे, २२ सर्व सभा अपनी २ भाषा में समझे, २३ जन्म वैर, जाति वैर शान्त होवे, २४ अन्यमती भी देशना सुने व विनय करे, २५ प्रतिवादी निरुत्तर बने, (२६) २५ योजन तक किसी जात का रोग न होवे, २७ महामारी (प्लेग) न होवे, २८ उप-द्रव न होवे, २९ स्वचक्र का भय न होवे, ३० पर लश्कर का भय न होवे ३१ अतिवृष्टि न होवे, ३२ अनावृष्टि न होवे, ३३ दुष्काल न पड़े, ३४ पहले उत्पन्न हुए उपद्रव शांत होवे ।

क्रमश: ४ अतिशय जन्म से होवे, ११ अतिशय केवल ज्ञान उत्पन्न होने के बाद प्रगटे और १९ अतिशय देवकृत होवे ।

ब्रह्मचर्य की ३२ उपमा

(श्री प्रश्नव्याकरण सूत्र, अध्य० ९)

१ ज्योतिषी समूह में चन्द्र समान व्रतो मे ब्रह्मचर्य उत्तम

२ सब खानो मे सोने की खदान कीमती सामान „ „ कीमती

३ „ रत्नो मे वैडूर्य रत्न प्रधान वैसे „ „ प्रधान

४ „ आभूषणों में मुकुट „ „ „ „ „

५ „ वस्त्रो में क्षेमयुगल „ „ „ „ „

६ „ चन्दन मे गोशीर्ष चन्दन „ „ „ „ „

७ „ फूलो में अरविन्द कमल „ „ „ „ „

८ „ औषधीश्वर मे चूल हेमवन्त „ „ „ „ „

९ „ नदियो मे सीता-सीतोदा „ „ „ „ „

१० „ समुद्रों में स्वयभूरमण „ „ „ „ „

११ „ पर्वतो में मेरु पर्वत ऊँचा „ „ „ „ „

१२ „ हाथियो में ऐरावत „ „ „ „ „

१३ „ चतुष्पदो मे केशरीसिह „ „ „ „ „

१४ „ भवनपति मे धरणेन्द्र „ „ „ „ „

१५ „ सुवर्णकुमार देवो मे वेणु देवेन्द्र „ „ „ „ „

१६	,, देवलोक में ब्रह्मलोक बडा	,,	,,	,,	,,	,,
१७	,, सभाओं में सुधर्मा सभा वडी	,,	,,	,,	,,	,,
१८	,, स्थिति के देवो में सर्वार्थसिद्ध	,,	,,	,,	,,	,,
१९	,, दानों में अभय दान बड़ा					
२०	,, रंगोमे किरमजी रंग	,,	,,	,,	,,	,,
२१	,, संस्थानो मे समचतुरस्र	,,	,,	,,	,,	,,
२२	,, संहननोमें वज्रऋषभ-नाराच बड़ा	,,	,,	,,	,,	,,
२३	,, लेश्या मे शुक्ल लेश्या	,,	,,	,,	,,	,,
२४	,, ध्यानो में शुक्ल ध्यान बड़ा	,,	,,	,,	,,	,,
२५	,, ज्ञान में केवल ज्ञान	,,	,,	,,	,,	,,
२६	,, क्षेत्रो में महाविदेह क्षेत्र	,,	,,	,,	,,	,,
२७	,, साधुओ में तीर्थंकर	,,	,,	,,	,,	,,
२८	,, गोल पर्वतो में कुण्डल पर्वत	,,	,,	,,	,,	,,
२९	,, वृक्षो मे सुदर्शन वृक्ष	,,	,,	,,	,	,,
३०	,, वनो मे नन्दन वन	,,	,,	,,	,,	,,
३१	,, ऋद्धि में चक्रवर्ती की ऋद्धि	,,	,,	,,	,,	,,
३२	,, योद्धाओं में वासुदेव	,,	,,	,,	,,	,,

देवोत्पत्ति के १४ बोल

निम्नलिखित १४ बोल के जीव यदि देव गति में जावे तो कहा तक जा सके ?

	मार्गणा	जघन्य	उत्कृष्ट
१	असयति भवि द्रव्य देव	भवनपति मे	नव ग्रैवेयक मे
२	अविराधक मुनि	सौधर्म कल्प मे	अनुत्तर विमान में
३	विराधक मुनि	भवनपति मे	सौधर्म कल्प में
४	अविराधक श्रावक	सौधर्म कल्प मे	अच्युत कल्प मे
५	विराधक श्रावक	भवनपति मे	ज्योतिषी में
६	असंज्ञी तिर्यञ्च	भवनपति मे	व्यन्तर देवी में
७	कन्द मूल भक्षक तापस	भवनपति मे	ज्योतिषी में
८	हासी करने वाले मुनि	भवनपति मे	सौधर्म कल्प में
९	परिव्राजक सन्यासी तापस	भवनपति मे	ब्रह्म देवलोक में
१०	आचार्यादि निन्दक मुनि	भवनपति मे	लातक ,,
११	संज्ञी तिर्यञ्च	भवनपति मे	आठवे ,,
१२	आजीविक साधु (गोशालापथी)	भवनपति मे	अच्युत ,,
१३	यन्त्र मन्त्र करने वाले अभोगी साधु	भवनपति	,, ,,
१४	स्वलिगी ववन्नगा (सम्यक् श्रद्धा विहीन)	भवनपति में	नव ग्रैवेयक मे

चौदहवे बोल मे भव्य जीव है। शेष मे भव्याभव्य दोनो है। ●

षट्द्रव्य पर ३१ द्वार

१ नाम द्वार, २ आदि द्वार, ३ सठाण द्वार, ४ द्रव्य द्वार, ५ क्षेत्र द्वार, ६ काल द्वार, ७ भाव द्वार, ८ सामान्य विशेष द्वार, ९ निश्चय द्वार, १० नय द्वार, ११ निक्षेप द्वार, १२ गुण द्वार, १३ पर्याय द्वार, १४ साधारण द्वार, १५ साधर्मी द्वार, १६ पारिणामिक द्वार, १७ जीव द्वार, १८ मूर्ति द्वार, १९ प्रदेश द्वार, २० एक द्वार, २१ क्षेत्र क्षेत्री द्वार २२ क्रिया द्वार, २३ कर्ता द्वार, २४ नित्य द्वार, २५ कारण द्वार, २६ गति द्वार, २७ प्रवेश द्वार, २८ पृच्छा द्वार, २९ स्पर्शना द्वार, ३० प्रदेश स्पर्शना द्वार और ३१ अल्पबहुत्व द्वार।

१ नाम द्वार : १ धर्म, २ अधर्म, ३ आकाश, ४ जीव, ५ पुद्गलास्तिकाय ६ काल द्रव्य।

२ आदि द्वार : द्रव्यापेक्षा समस्त द्रव्य अनादि है। क्षेत्रापेक्षा लोकव्यापक है अतः सादि है। केवल आकाश अनादि है। कालापेक्षा षट्द्रव्य अनादि है। भावापेक्षा षट्द्रव्य में उत्पाद-व्यय अपेक्षा ये सादि सांत है।

३ संठाण द्वार : धर्मास्तिकाय का सठाण गाड़े के ओघण समान।

```
    o o
   o o o
  o o o o
 o o o o o o
o o o o o o o o
```

इस प्रकार बढते २ लोकान्त तक असंख्य प्रदेशी है। इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय का सठाण, आकाशास्तिकाय का सठाण लोक में गले के भूषण समान, अलोक में ओघणाकार जीव तथा पुद्गल का सम्बन्ध अनेक प्रकार का है और काल के आकार नही। (प्रदेश नही इस कारण)

४ द्रव्य द्वार गुण पर्याय के समूह युक्त होवे उसे द्रव्य कहते है। हरेक द्रव्य के मूल ६ स्वभाव है। अस्तित्व, वस्तुत्व, द्रव्यत्व, प्रमेयत्व, सत्तत्त्व, अगुरुलघुत्व, उत्तर स्वभाव अनन्त है। यथा नास्तित्व नित्य, अनित्य, एक, अनेक, भेद, अभेद, भव्य, अभव्य, भक्तव्य परम इत्यादि धर्म, अधर्म, आकाश एक-एक द्रव्य है। जीव पुद्‌गल और काल अनन्त है।

५ क्षेत्र द्वार धर्म, अधर्म, जीव और पुद्‌गल लोक व्यापक है। आकाश लोकालोक व्यापक है और काल २।। द्वीप मे प्रवर्तन रूप है और उत्पाद-व्यय रूप से लोकालोक व्यापक है।

६ काल द्वार . धर्म, अधर्म आकाश द्रव्यापेक्षा अनादि अनन्त है। क्रियापेक्षा सादि सात है। पुद्‌गल द्रव्यापेक्षा अनादि अनन्त हैं। प्रदेशापेक्षा सादि सात है। काल द्रव्य द्रव्यापेक्षा अनादि अनत समयापेक्षा सादि सात है।

७ भाव द्वार : पुद्‌गल रूपी है। शेष ५ द्रव्य अरूपी है।

८ सामान्य-विशेष द्वार · सामान्य से विशेष बलवान है। जैसे सामान्यत द्रव्य एक है। विशेषत. ६–६ धर्मास्तिकाय का सामान्य गुण चलन सहाय है। अधर्मा० का स्थिर सहाय, आका० का अवगाह-दान, काल का वर्तना, जीव० का चैतन्य, पुद्‌गल का जीर्ण-गलन-विध्वसन गुण और विशेप गुण और विशेष गुण छ ही द्रव्यो का अनत-अनत है।

९ निश्चय व्यवहार द्वार निश्चय से समस्त द्रव्य अपने २ गुणों मे प्रवृत होते है। व्यवहार मे अन्य द्रव्यो की अपने गुण से सहायता देते है। जैसे—लोकाकाश मे रहने वाले समस्त द्रव्य आकाश अवगा-हन मे सहायक होते है, परन्तु अलोक मे अन्य द्रव्य नही। अत. अवगाहन मे सहायक नही होते। प्रत्युत् अवगाहन मे षट्‌गुण हानि वृद्धि सदा होती रहती है। इसी प्रकार सब द्रव्यो के विषय मे जानना।

१० नय द्वार: अंश ज्ञान को नय कहते है। नय ७ है इनके नाम :—१ नैगम, २ सग्रह, ३ व्यवहार, ४ ऋजु सूत्र, ५ शब्द, ६ समभिरूढ और ७ एवंभूत नय। इन सातों नय वालो की मान्यता कैसी है ? यह जानने के लिये जीव द्रव्य ऊपर ७ नय उतारे जाते है।

१ नैगम	नय वाला—	जीव	कहने से	जीव के सब नामो को	ग्र० करे
२ संग्रह	,,	— ,,	,,	, असंख्य प्रदेशो को	,,
३ व्यवहार	,,	— ,,	,,	त्रस स्थावर जीवो को	,,
४ ऋजु सूत्र	,,	— ,,	,,	सुखदुख भोगनेवाले जीव	,,
५ शब्द	,,	— ,,	,,	क्षायक समकिती जीव	,,
६ समभिरूढ	,,	— ,,	,,	केवल ज्ञानी ,,	,,
७ एवंभूत	,,	— ,,	,,	सिद्ध अवस्था के ,,	,,

इस प्रकार सातों ही नय सब द्रव्यों पर उतारे जा सकते है।

११ निक्षेप द्वार :—निक्षेप ४—१ नाम, २ स्थापना, ३ द्रव्य, ४ भाव निक्षेप।

(१) द्रव्य के नाम मात्र को नाम निक्षेप कहते है।

(२) द्रव्य की सदृश तथा असदृश स्थापना की आकृति को स्थापना निक्षेप कहते है।

(३) द्रव्य की भूत तथा भविष्य पर्याय को वर्तमान में कहना सो द्रव्य निक्षेप।

(४) द्रव्य की मूल गुण युक्त दशा को भाव निक्षेप कहते है। षट-द्रव्य पर ये चारो ही निक्षेप भी उतारे जा सकते है।

१२ गुण द्वार :—प्रत्येक द्रव्य में चार २ गुण है।

१ धर्मास्तिकाय	में ४	गुण—अरूपी,	अचेतन,	अक्रिय	चलन सहा०
२ अधर्मास्ति	, ,,	,,	,,	,,	स्थिर ,,
३ आकाशास्ति	,, ,,	,,	,,	,,	अवगाहन दान
४ जीवास्ति काय में	,,	,,			चैतन्य, सक्रिय और उपयोग, ज्ञान, दर्शन, चारित्र और वीर्य।

५ काल द्रव्य में ४ गुण—अरूपी, अचेतन, अक्रिय, वर्तना गुण
६ पुद्गलास्ति मे ,, रूपी, अचेतन, सक्रिय, जीर्णगलन

१३ पर्याय द्वार :—प्रत्येक द्रव्य की चार २ पर्याय है।

१ धर्मास्ति० की ४ पर्याय—स्कध, देश, प्रदेश, अगुरु लघु
२ अधर्मास्ति० की ४ ,, ,, ,, ,, ,,
३ आकाशास्ति की ४ ,, ,, ,, ,, ,,
४ जीवास्ति० की ४ ,, अव्यावाध, अनावगाढ, अमूर्त, ,,
५ पुद्गलास्ति० की ४ ,, वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श
६ काल द्रव्य० की ४ ,, भूत, भविष्य, वर्तमान, अगुरु लघु

१४ साधारण द्वार .—साधारण धर्म जो अन्य द्रव्य मे भी पावे। जैसे धर्मास्ति० मे अगुरु लघु, असाधारण धर्म जो अन्य द्रव्य मे न पावे। जैसे धर्मास्तिकाय में चलन सहाय इत्यादि।

१५ साधर्मी द्वार :—षट्द्रव्यो में प्रति समय उत्पाद-व्यय है, क्योंकि अगुरु लघु पर्याय में षट् गुण हानि वृद्धि होती है। सो यह छ. ही द्रव्यो मे समान है।

१६ परिणामी द्वार :—निश्चय नय से छ ही द्रव्य अपने २ गुणो में परिणमते है। व्यवहार से जीव और पुद्गल अन्यान्य स्वभाव में परिणमते है। जिस प्रकार जीव मनुष्यादि रूप से और पुद्गल दो प्रदेशी यावत् अनन्त प्रदेशी स्कंध रूप से परिणमता है।

१७ जीव द्वार —जीवास्ति काय जीव है। शेप ५ द्रव्य अजीव है।

१८ मूर्ति द्वार —पुद्गल रूपी है। शेष अरूपी है, कर्म के साथ जीव भी रूपी है।

१९ प्रदेश द्वार :—५ द्रव्य सप्रदेशी है। काल द्रव्य अप्रदेशी है। धर्म-अधर्म अस० प्रदेशी है। आकाश (लोकालोक अपेक्षा) अनन्त प्रदेशी है। एकेक जीव अस० प्रदेशी है। अनन्त जीवो के अनन्त प्रदेश है। पुद्गल परमाणु १ प्रदेशी है। परन्तु पुद्गल द्रव्य अनन्त प्रदेशी है।

२० एक द्वार :—धर्म, अधर्म, आकाश एकेक द्रव्य है। शेष ३ अनन्त है।

२१ क्षेत्र-क्षेत्री द्वार :—आकाश क्षेत्र है। शेष क्षेत्री है।अर्थात् प्रत्येक लोकाकाश प्रदेश पर पाँचों ही द्रव्य अपनी २ क्रिया करते हुए भी एक दूसरे में नही मिलते।

२२ क्रिया द्वार :—निश्चय से सर्व द्रव्य अपनी २ क्रिया करते है। व्यवहार से जीव और पुद्गल क्रिया करते है। शेष अक्रिय है।

२३ नित्य द्वार :—द्रव्यास्तिक नय से सब द्रव्य नित्य है। पर्याय अपेक्षा से सब अनित्य है। व्यवहार नय से जीव, पुद्गल अनित्य है शेष ४ द्रव्य नित्य है।

२४ कारण द्वार ,—पाँचो ही द्रव्य जीव के कारण है। परन्तु जीव किसी के कारण नही। जैसे-जीव कर्त्ता और धर्मा० कारण मिलने से जीव को चलन कार्य की प्राप्ति होवे। इसी प्रकार दूसरे द्रव्यभी समझना।

२५ कर्त्ता द्वार :—निश्चय से समस्त द्रव्य अपने २ स्वभाव कार्य के कर्ता है। व्यवहार से जीव और पुद्गल कर्ता है। शेष अकर्त्ता है।

२६ गति द्वार :—आकाश की गति (व्यापकता) लोकालोक मे है शेष की लोक मे है।

२७ प्रवेश द्वार :—एक २ आकाश प्रदेश पर पाचो ही द्रव्यो का प्रवेश है। वे अपनी २ क्रिया करते जा रहे है। तो भी एक दूसरे से मिलते नही जैसे एक नगर मे ५ मानव अपने २ कार्य करते रहने पर भी एक रूप नही हो जाते है।

२८ पृच्छा द्वार :—श्री गौतम स्वामी श्री वीर को सविनय निम्न-लिखित प्रश्न पूछते है।

१ धर्मा० के १ प्रदेश को धर्मा० कहते है क्या ? उत्तर–नही. (एवं-भूत नयापेक्षा) धर्मा० काय के १-२-३, लेकर सख्यात असंख्यात प्रदेश,

जहां तक धर्मा० का १ भी प्रदेश बाकी रहे वहां तक उसे धर्मा० नही कह सकते सम्पूर्ण प्रदेश मिले हुवे को ही धर्मा० कहते है ।

२ जिस प्रकार १ एवभूत नयवाला थोड भी टूटे हुवे पदार्थ को पदार्थ नही माने, अखण्डित द्रव्य को ही द्रव्य कहते है । इसी तरह सब द्रव्यो के विषय मे भी समझना ।

३ लोक का मध्य प्रदेश कहा है ?

उत्तर-रत्नप्रभा १८०००० योजन की है। उसके नीचे २०००० योजन घनोदधि है। उसके नीचे अस० योजन घनवायु, अस० यो० तन वायु और अस० यो० आकाश है उस आकाश के असख्यातवे भाग मे लोक का मध्य भाग है।

४ अधोलोक का मध्य प्रदेश कहा है, ? उ०—पक-प्रभा के नीचे के आकाश प्रदेश साधिक मे।

५ ऊर्ध्व लोक का मध्य प्रदेश कहा है ? उ०—ब्रह्म देवलोक के तीसरे रिष्ठ प्रतर मे ।

तिर्छे लोक का मध्य प्रदेश कहां है ? उ०—मेरु पर्वत के ८ रुचक प्रदेशो मे ।

इसी प्रकार धर्मा०, अधर्मा०, आकाशा० काय द्रव्य के प्रश्नोत्तर समझना जीव को मध्य प्रदेश ८ रुचक प्रदेशो मे है, काल का मध्य प्रदेश वर्तमान समय है।

२९ स्पर्शना द्वार धर्मास्ति कार्य अधर्मा० लोककाश, जीव और पुद्गल द्रव्य को सम्पूर्ण स्पर्शा रहे है। काल को कही स्पर्शे कही न स्पर्शे इसी प्रकार शेष ४ अस्तिकाय स्पर्शे काल द्रव्य २।। द्वीप मे समस्त द्रव्य को स्पर्शे अन्य क्षेत्र मे नही ।

३० प्रदेश स्पर्शना द्वार .

धर्मा का एक प्रदेश धर्मा के कितने प्रदेशोको स्पर्शे ? ज. ३प्र उ. ६को स्पर्शे
„ „ अधर्मा० „ „ „ ? ज, ४ प्र उ ७ प्र. को स्पर्शे

„ „ आकाशा० „ „ „ ? ज. ७ प्र. उ. ७. „
„ „ जीवपुद्गल „ „ „ ? अनंत प्रदेशो का स्पर्शे
„ „ काल द्रव्य„ „ „ ? स्यात् अनन्त स्पर्शे
स्यात् नहीं

एवं अधर्मा० प्रदेश स्पर्शना समझना।

आकाश० का १ प्रदेश धर्मा० का ज० १-२-३ प्रदेश उ० ७ प्रदेश को स्पर्शे. शेष प्रदेश स्पर्शना धर्मास्ति-कायवत् जानना।

जीव की १ प्रदेश धर्मा० काल. ४ उ. ७ प्रदेश को स्पर्शे
पुद्गल० „ „ „ „ „
काल द्रव्य एक समय „ „ प्रदेश को स्यात स्पर्शे
स्यात् नहीं
} शेष प्र० स्पर्शना धर्मास्तिकाय वत्

पुद्गल० के २ प्रदेश „ ज० दुगणा से दो अधिक (६) प्रदेश को स्पर्शे और उ० पाच गुणे से २ अधिक ५×२=१०+२=१२ प्रदेश स्पर्शे

इसी प्रकार ३-४-५ जीव अनन्त प्रदेश ज० दुगणे से २ अधिक उ० पांच गुणे से २ अधिक प्रदेश को स्पर्शे।

३१ अल्पबहुत्व द्वार : द्रव्य अपेक्षा—धर्म, अधर्म आकाश परस्पर तुल्य है, उनसे जीव द्रव्य अनन्त गुणा, उनसे पुद्गल अनन्त गुणा और उनसे काल अनन्त।

प्रदेश अपेक्षा—सर्व से कम धर्म अधर्म का प्रदेश, उनसे जीव के प्र० अनन्त गुणा, उनसे पुद्गल के प्र० अनन्त गुणा, उनसे काल द्रव्य के अ० गुणा, उनसे आकाश प्र० अ० गुणा।

द्रव्य और प्रदेश का एक साथ अल्पबहुत्व :—सब से कम धर्म, अधर्म, आकाश के द्रव्य, उनसे धर्म अधर्म के प्रदेश असं० गुणा। उनके जीव द्रव्य अनं० उनसे जीव के प्रदेश असं० पुद्गल द्रव्य अन० उनसे पु० प्रदेश असं०, उनसे काल के द्रव्य प्रदेश अनं० उनसे आकाश प्र० अनन्त गुणा।

चार ध्यान

ध्यान के ४ भेद—आर्त, रौद्र, धर्म व शुक्ल ध्यान

आर्त ध्यान के ४ पाये : १ मनोज्ञ वस्तु की अभिलाषा करे, २ अमनोज्ञ वस्तु का वियोग चिंतवे, ३ रोगादि अनिष्ट का वियोग चितवे, ४ परभव के सुख निमित्त नियाणा करे।

आर्त ध्यान के ४ लक्षण : १ चिन्ता शोक करना, २ अश्रु पात करना, ३ आक्रन्द (विलाप) शब्द करके रोना. ४ छाती माथा (मस्तक) आदि कूट कर रोना।

रौद्र ध्यान के ४ पाये : १ हिंसा मे, २ झूठ मे ३ चोरी में, ४ कारागृह मे फसाने मे आनन्द मानना (पाप करके व कराकर के प्रसन्न होना)।

रौद्र ध्यान के ४ लक्षण १ तुच्छ अपराध पर बहुत गुस्सा करना, २ द्वेष करना, ४ बडे अपराध पर अत्यन्त क्रोध-द्वेष करे ३ अज्ञानता से द्वेष करे और ४ जाव-जीव पर द्वेष रक्खे।

धर्म ध्यान के ४ पाये . १ वीतराग की आज्ञा का चितवन करे, २ कर्म आने के कारण (आश्रव) का विचार करे, ३ शुभाशुभ कर्म विपाक को विचारे, ४ लोक संस्थान (आकार) का विचार करे।

धर्म ध्यान के ४ लक्षण १ वीतराग आज्ञा की रुचि, २ नि सर्ग (ज्ञान से उत्पन्न) रुचि, ३ उपदेश रुचि, ४ सूत्र-सिद्धान्त आगम रुचि।

धर्म ध्यान के ४ अवलम्बन . १ वाचना २ पृच्छना ३ परावर्तना और ४ धर्मकथा।

धर्मध्यान की ४ अनुप्रेक्षा १ एगच्चाणुपेहा—जीव अकेला आया

अकेला जायगा एवं जीव के अकेलेपन (एकत्व) का विचार। २ अणिच्चाणु पेहा—संसार की अनित्यता का विचार। ३ असरणाणु पेहा—ससार में कोई किसी को शरण देने वाला नही, इसका विचार और ४ ससाराणुपेहा—ससार की स्थिति (दशा) का विचार करना।

शुक्ल ध्यान के ४ पाये · १ एक-एक द्रव्य में भिन्न-भिन्न अनेक पर्याय—उपन्नेवा, विगमेइवा, धुवेवा आदि भावों का विचार करना। २ अनेक द्रव्यो मे एक भाव (अगुरु लघु) का विचार करना। ३ अचलावस्था में तीनों ही योगों का निरोध करना (रोकना)। ३ चौदहवे गुणस्थानक की सूक्ष्म क्रिया से भी निवर्तन होने का चितवना।

शुक्ल ध्यान के ४ लक्षण : १ देवादि के उपसर्ग से चलित न होवे २ सूक्ष्म भाव (धर्म का) सुन ग्लानि न लावे. ३ शरीर-आत्मा को भिन्न २ चितवे और ४ शरीर को अनित्य समझ कर व पुद्गल को पर वस्तु जान कर इनका त्याग करे।

शुक्ल ध्यान के ४ अवलम्बन . १ क्षमा, २ निर्लोभता, ३ निष्कपटता, ४ मदरहितता।

शुक्ल ध्यान की ४ अनुप्रेक्षा : १ जीव ने अनंत बार ससार भ्रमण किया है ऐसा विचारे, २ संसार की समस्त पौद्गलिक वस्तु अनित्य है, शुभ पुद्गल अशुभ रूप से और अशुभ शुभ रूप से परिणमते है, अत शुभाशुभ पुद्गलों में आसक्त वन कर राग-द्वेष न करना ३ ससार परिभ्रमण का मूल कारण शुभाशुभ कर्म है। कर्म बन्ध का मूल कारण ४ हेतु है ऐसा विचारे, ४ कर्म हेतुओ को छोड़ कर स्वसत्ता मे रमण करने का विचार करना। ऐसे विचारो में तन्मय (एक रूप) हो जाने को शुक्ल ध्यान कहते है।

●●

आराधना पद

(श्री भगवती सूत्र, शतक, ८ उद्देशा १०)

आराधना ३ प्रकार की—ज्ञान की, दर्शन (समकित) की और चारित्र की आराधना।

आराधना—उ० १४ पूर्व का ज्ञान, मध्यम ११ अग का ज्ञान, ज० ८ प्रवचन का ज्ञान।

दर्शनाराधना—उ० क्षायक समकित, मध्यम क्षयोपशम समकित ज० सास्वादान समकित।

चारित्राराधना—उ० यथाख्यात चारित्र, मध्यम परिहार विशुद्ध चारित्र, ज० सामायिक चारित्र।

उ० ज्ञान आ० में दर्शन आ० दो (उत्कृष्ट और मध्यम)
उ० ज्ञान आ० चारित्र आ० दो (,, ,,)
उ० दर्शन " " " तीन (ज० म० उ०)
उ० " " " " " (")
उ० चारित्र " ,, " " (")
उ० " " दर्शन " " (")

उ० ज्ञान " वाला ज० १ भव करे उ० २ भव करे
म० " " " २ भव " " ३ भव करे
ज० " " " ३ " " " १५ " "

दर्शन और चारित्र की आराधना भी ऊपर अनुसार।

जीवो मे ज्ञान, दर्शन और चारित्र की आराध्ना उत्कृष्ट,

मध्यम और जघन्य रीति से हो सकती है। इस पर निम्नलिखित १७ भाँगा (प्रकार हो सकते है।

(इनके चिन्ह—उ० ३, म० २, ज० १, समझना, क्रम—ज्ञान-दर्शन-चारित्र समभना)

३-३-३	२-३-२	२-१-२	१-३-१
३-३-२	२-३-१	२-१-१	१-२-२
३-२-३	२-२-२	१-३-३	१-२-१
२-३-३	२-२-१	१-३-२	१-१-२
			१-१-१
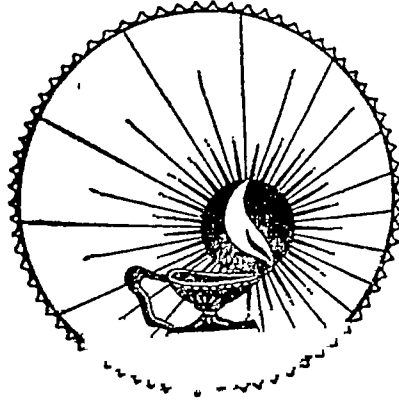
विरह पद

(श्री पन्नवणा सूत्र, ६ ठा० पद)

ज० विरह पड़े १ समय का, उ० विरह पड़े तो समुच्च ४ गति, सज्ञी मनुष्य और सज्ञी तिर्यंच में १२ मुहूर्त का १ ली नरक, १० भवनपति वाणव्यन्तर, ज्योतिषी, १-२ देवलोक और असज्ञी मनुष्य मे २४ मुहूर्त का दूसरी नरक मे ७ दिन का, तीसरी नरक मे १५ दिन का, चौथी नरक मे १ माह का, पांचवी नरक मे २ माह का, छट्ठी मे ४ माह का और सातवी नरक मे सिद्ध गति तथा ६४ इन्द्रो मे विरह पड़े तो ६ माह का।

तीसरे देवलोक मे ६ दिन २० मुहूर्त का, चौथे देवलोक मे १२ दिन १० मु०
पाचवे ,, २२ ,, १५ ,, छट्टे ,, ४५ — ६ मु०
सातवे ,, ८० ,, का आठवें ,, १००
६—१० ,, सेकडो माह का ११-१२ ,, सेकड़ो वर्षो का
१ ली त्रिक मे स० सैकडो वर्षो का, दूसरी त्रिक मे स० हजारो वर्षो का
तीसरी ,, ,, ,, चार अनुत्तर विमान मे पल्य के असख्यातवें भाग का और सर्वार्थसिद्ध मे पल्य से सख्यातवे भाग का विरह पडे।

५ स्थावर मे विरह नही पडे, ३ विकलेन्द्रिय और असज्ञी तिर्यंच मे अन्तर्मुहूर्त का विरह पड़े, चन्द्र सूर्य ग्रहण का विरह पड़े तो ज० ६ माह का उ० चन्द्र का ४२ माह का और सूर्य का ४८ वर्ष का पड़े भरत क्षेत्र मे साधु साध्वी, श्रावक श्राविका का विरह पड़े तो ज० ६३ हजार वर्ष का और अरिहत, चक्रवर्ती, वासुदेव- बलदेवो का ज० ४८ हजार वर्ष का- उ० देश उणा १८ क्रोडा-क्रोड़ सागरोपम का विरह पडे।

संज्ञा पद

(श्री पन्नवणा सूत्र, आठवां पद)

संज्ञा—जीवों की इच्छा। संज्ञा १० प्रकार की है :–आहार, भय, मैथुन, परिग्रह, क्रोध, मान, माया, लोभ, लोक और ओघ सज्ञा।

आहार संज्ञा : ४ कारण से उपजे—१ पेट खाली होने से २ क्षुधा वेदनीय के उदय से, ३ आहार देखने से और ४ आहार की चितवना करने से।

भय संज्ञा : ४ कारण से उपजे—१ अधैर्य रखने से, २ भय मोह के उदय से, ३ भय उत्पन्न करने वाले पदार्थ देखने से, ४ भय की चिंतवना करने से।

मैथुन संज्ञा : ४ कारण से उपजे—१ शरीर पुष्ट बनाने से, २ वेद मोह के कर्मोदय से, ३ स्त्री आदि को देखने से और ४ काम-भोग का चिंतवन करने से।

परिग्रह संज्ञा : ४ कारण से उपजे—१ ममत्व बढाने से, २ लोभ-मोह के उदय से, ३ धन-सम्पत्ति देखने से और ४ धन परिग्रह का चिंतवन करने से।

क्रोध, मान, माया, लोभ संज्ञा : ४ कारण से उपजे—१ क्षेत्र (खुली जमीन) के लिये २ वत्थु (ढंकी हुई जमीन मकानादि) के लिये, ३ शरीर-उपाधि के लिये, ४ धन्य-धान्यादि औषधि के लिये।

लोक सज्ञा : अन्य लोगो को देख कर स्वयं वैसा ही कार्य करना।

ओघ संज्ञा : शून्य चित्त से विलाप करे, घास तोड़े, पृथ्वी (जमीन) खोदे आदि।

नरकादि २४ दण्डक मे दश-दश सज्ञा होवे। किसी मे सामग्री अधिक मिल जाने से प्रवृति रूप से है, किसी में सत्ता रूप से है। सज्ञा का अस्तित्व छट्ठे गुणस्थान तक है। इनका अल्पबहुत्व :

आहार, भय, मैथुन और परिग्रह सज्ञा का अल्पबहुत्व . नारकी में सब से कम मैथुन, उससे आहार स०, उससे परिग्रह सं० भय स० सख्यात गुणी।

तिर्यञ्च मे सब से कम परिग्रह, उससे मैथुन सं०, भय सं० आहार सख्या० गुणी।

मनुष्य मे सबसे कम भय, उससे आहार स०, परिग्रह स० मैथुन स० गुणी।

देवता मे सबसे कम आहार, उससे भय स०, मैथुन सं० परिग्रह सख्या० गुणी।

क्रोध, मान, माया और लोभ सज्ञा का अल्पबहुत्व . नारकी मे सबसे कम लोभ, उससे माया स०, मान स०, क्रोध संख्या गुणी।

तिर्यञ्च मे सबसे कम मान, उससे क्रोध विशेष, माया विशेष, लोभ विशेष अधिक।

मनुष्य मे सबसे कम मान, उससे क्रोध विशेष, माया विशेष, लोभ विशेष अधिक।

देवता मे सबसे कम क्रोध. उससे मान सज्ञा, माया, सज्ञा, लोभ सख्या० गुणी।

●

वेदना पद

(श्री पन्नवणा सूत्र, ३५ वां पद)

जीव सात प्रकार से वेदना वेदे :—१ शीत, २ द्रव्य, ३ शरीर. ४ शाता, ५ अशाता (दुख), ६ अभूगमीया, ७ निन्दा द्वार।

(१) वेदना ३ प्रकार की—शीत, उष्ण और शीतोष्ण समुच्चय जीव ३ प्रकार की वेदना वेदे। १, २, ३ नारकी में उष्ण वेदना वेदे। (कारण नेरिया शीत योनिया है)। चौथी नारकी (नरक) में उष्ण वेदना के वेदक अनेक (विशेष), शीत वेदना वाला कम, (दो वेदका)। पांचवी नारको में उष्ण वेदना के वेदक कम, शीत वेदना के वेदक विशेष। छटठी नरक में शीत वेदना और सातवी नरक में महाशीत वेदना है। शेष २३ दण्डक में तीनों ही प्रकार की वेदना पावे।

(२) वेदना चार प्रकार की—द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव से। समुच्चय जीव और २४ दण्डक मे चार प्रकार की वेदना वेदी जाती है :—

१ द्रव्य वेदना—इष्ट अनिष्ट पुद्गलों की वेदना, (२) क्षेत्र वेदना—नरकादि शुभाशुभ क्षेत्र की वेदना, (३) काल वेदना—शीत-उष्ण काल की वेदना, (४) भाव वेदना—मन्द तीव्र रस (अनुभाग) की।

(३) वेदना तीन प्रकार की—शारीरिक, मानसिक और शारीरिक-मानसिक। समुच्चय जीव में ३ प्रकार की वेदना। संज्ञी के १६ दण्डक मे ३ प्रकार की। स्थावर, ३ विकलेन्द्रिय मे १ शारीरिक वेदना।

(४) वेदना तीन प्रकार की—शाता, अशाता और शाता-अशाता। समच्चय जीव और २४ दण्डक मे तीनो ही वेदना होती है।

(५) वेदना तीन प्रकार की—सुख, दुख और सुख-दुख। समुच्चय और २४ दण्डक मे तीन ही प्रकार की वेदना वेदी जाती है।

(६) वेदना दो प्रकार की—उदीरणा जन्य (लोच, तपश्चर्यादि से ; २ उदय जन्य (कर्मोदय से)। तिर्यञ्च पचेन्द्रिय और मनुष्य मे दोनो ही प्रकार की वेदना। शेष २२ दण्डक मे उदय (औपक्रमीय) वेदना होवे।

(७) वेदना दो प्रकार की—निन्दा व अनिन्दा। नारकी, १० भवनपति और व्यन्तर व १२ दण्डक मे २ वेदना। सज्ञी निन्दा वेदे, असज्ञी अनिन्दा वेदे। (सज्ञी, असज्ञी मनुष्य तियञ्च मे से मर कर गये इस अपेक्षा समझना)।

पॉच स्थावर, ३ विकलेन्द्रिय अनिन्दा वेदना वेदे (असज्ञी होने से)। तिर्यञ्च पचे० और मनुष्य मे दोनो प्रकार की वेदना, ज्योतिषी और वैमानिक मे दोनो प्रकार की वेदना। कारण कि दो प्रकार के देवता है।

१ अमायी सम्यक् दृष्टि—निन्दा वेदना वेदते है।

२. मायी मिथ्या दृष्टि—अनिन्दा वेदना वेदते है।

समुद्घात पद

(श्री पन्नवणा सूत्र ३६ वॉ पद)

जीव के लिये हुए पुद्गल जिस-जिस रूप से परिणमते है उन्हे उस २ नाम से बताया गया है। जैसे कोई पुद्गल वेदनीय रूप परिणमे, कोई कषाय रूप परिणमें इन ग्रहण किये हुए पुद्गलो को सम और विषम रूप से परिणत होने को समुद्घात कहते है।

१ नाम द्वारा—वेदनीय, कषाय, मरणान्तिक, वैक्रिय, तैजस्, आहारक और केवली समुद्घात। ये ७ समुद्घात २४ दण्डक ऊपर उतारे जाते है।

समुच्चय जीवो मे ७ समु०, नारकी में ४ समु० प्रथम की, देवता के १३ दण्डक मे ५ समुद्घात प्रथम की, वायु मे ४ समु० प्रथम की, ४ स्थावर ३ विकलेन्द्रिय में ३ समु० प्रथमकी, तिर्यच पचेन्द्रिय मे ५ प्रथम की, मनुष्य में ७ समुद्घात पावे।

२– काल द्वार—६ समु० का काल असंख्यात समय अन्तमुर्हुत तक का केवली समु० का काल ८ समय का।

३—२४ दण्डक एकेक जीव की अपेक्षा—वेदनीय, कषाय, मारणान्तिक, वैक्रिय और तैजस् समु० २४ दडक में एक-एक जीव भूतकाल में अनन्तकरी और भविष्य में कोई करेगा, कोई नही करेगा। करे तो १, २. ३ बार सख्यात, असंख्यात और अनन्त करेगा।

आहारिक समु० २३ दंडक में एकेक जीव भूतकाल में स्यात् करे, स्यात् न करे। यदि करे तो १. २. ३ बार, भविष्य में जो करे तो १. २. ३ ४ बार करेगा। मनुष्य दंडक के एकेक जीव भूतकाल में की

होवे तो १. २, ३. ४ बार को शेष पूर्ववत् । केवली समु० २३ दंडक के एकेक जीव भूतकाल में करे तो १ वार करेगा। मनुष्य मे की होवे तो भूत मे १ वार और भविष्य मे भी एक बार करेगा।

४ अनेक जीव अपेक्षा—४ दण्डक—पाँच (प्रथम की) समु० २४ दडक के अनेक जीवो ने भूतकाल मे अनन्त करी, भविष्य मे अनन्त करेगा।

आहारिक समु० २२ दंडक के अनेक जीव आश्री भूतकाल मे असंख्यातकरी और भविष्य मे असंख्यात करेगा। वनस्पति मे भूत भविष्य की अनन्त कहनी मनुष्य मे भूत-भविष्य की स्यात् सख्यात. स्यात् असं० कहनी।

केवली समु० २२ दंडक मे भूतकाल मे नही. भविष्य मे असं० करेगा। वनस्पति मे भूतकाल में नही करी. भविष्य मे अनन्त करेगा। मनुष्य के अनेक जीव भूत मे करी होवे तो १. २ ३ उ० प्रत्येक सौ बार भविष्य में स्यात् संख्याती स्यात् असं० करेगा।

५ परस्पर की अपेक्षा २४ दण्डक–एक एक नेरिया भूतकाल में नेरिया रूप मे अनन्ती वेदनी समु० करी भविष्य मे कोई करेगा, कोई नही करेगा तो १-२-३ संख्याती, असख्याती अनती करेगा एव एकेक नेरिया, असुर कुमार रूप मे यावत् वैमानिक देव रूप से कहना।

एकेक असुर कुमार रूप मे वेदनी समु० भूतकाल मे अनन्ती करी भविष्य मे करे तो जाव अनती करेगा। असुर कुमार देव असुर कुमार रूप मे वेदनी समु० भूत मे अनती करी, भविष्य मे करे तो १-२ ३ जाव अनन्ती करेगा एव बैमानिक तक कहना और ऐसे ही २४ दन्डक मे समझना।

कषाय समु० एकेक नेरिया नेरिया रूप से भूत मे अनती करी भविष्य मे करे तो १-२-३ जाव अनती करेगा एकेक नेरिया असुर

कुमार रूप से भूतकाल में अनन्ती करी भविष्य में करे तो संख्याती, असंख्याती; अनन्ती करेगा ऐसे ही व्यन्तर, ज्योतिषी, वैमानिक रूप से भी भविष्य में करे तो असंख्याती व अनंती करेगा।

उदारिक के १० दण्डक मे भूतकाल में अनन्ती करी। भविष्य में करे तो १-२-३ जाव अनन्ती करे एवं भवनपति का भी कहना।

एकेक पृथ्वी काय के जीव नारकी रूप से कषाय समु० भूतकाल में अनन्ती करी और भविष्य में करेगा तो स्यात् संख्याती, असं० अनन्ती करेगा एवं भवनपति व्यन्तर, ज्योतिषी और वैमानिक रूप से भी भविष्य में असं० अनन्ती करेगा। उदारिक के १० दण्डक में भविष्य में स्यात् १-२-३ जाव संख्याती, असं० अनन्ती करेगा। एवं उदारिक के १० दण्डक व्यन्तर, ज्योतिषो वैमानिक असुर कुमार के समान समझना !

एकेक नेरिया नेरिये रूप से मरणांतिक समु० भूतकाल में अनन्ती करी, भविष्य में जो करे तो १-२-३ सं० जाव अनन्ती करेगा एव २४ दण्डक कहना, परन्तु स्वस्थान परस्थान सर्वत्र १-२-३ कहना, कारण मरणातिक समु० एक भव मे एक ही बार होती है।

एकेक नेरिया नेरिये रूप से वैक्रिय समु० भूतकाल मे अनन्ती करी, भविष्य में जो करे तो १-२-३ जाव अनन्ती करेगा। ऐसे ही २४ दण्डक, १७ दण्डक पने कषाय समु० समान करे सात दण्डक (४ स्थावर ३ बिकलेन्द्रिय) में वैक्रिय समु० नही।

एकेक नेरिया नेरिये रूप से तैजस समु० भूत में नही करी, भविष्य में नही करेगा।

एकेक नेरिया असुर कुमार रूप से भूतकाल में तैजस समु० अनंती करी और भवि० में करे तो १, २, ३ जाव अनन्ती करेगा एवं तैजस् समु० १५ दंडक में मरणांतिक अनुसार।

आहारिक समु० मनुष्य सिवाय २३ दंडक के जीवों ने अपने तथा अन्य २३ दंडक रूप से नही करी और न करेंगे। एकेक २३ दडक के

जीव ने म० रूप से आहारिक समु० जो करी होवे तो १, २, ३ और भ० मे जो करे तो १ २, ३, ४ बार करेगे।

केवली समु० मनुष्य सिवाय २३ दडक के जीवो ने अपने तथा अन्य २३ दडक रूप से भूत काल मे नही करी और न भ० में करेगे। मनु० रूप से भूतकाल मे नही की और भ० में करे तो १ बार करेगे। एकेक मनु० २३ दंडक रूप से केवली समु० करी नही और करेगे भी नही। एकेक मनु० मनु० रूप से केवली समु० करी होवे तो १ बार और करेगे तो भी १ बार।

६ अनेक जीव परस्पर —अनेक नेरियो ने नेरिये रूप से वेदनीय समु० भूत मे अनती करी, भवि० मे अनती करेगे एव २४ दडको का समझना। शेष २३ दडक मे भी नारकी वत्। वेदनी के समान ही कषाय मारणातिक वैक्रिय और तैजस समु० का समझना, परन्तु वैक्रिय सभु० १७ दंडक मे और तैजस समु० १५ दडक मे कहनी।

अनेक नेरिये २३ दडक (मनुष्य सिवाय) रूप से आहा० समु० न की न करेगे। मनु० रूप से भूतकाल मे असं० की. भ० मे अस० करेगे एवं २३ दण्डक (वनस्पति सिवाय) रूप से भी समझना। वनस्पति मे अनती कहनी।

एकेक मनुष्य २३ द० रूप से आहा० समु० की नही व करेगे भी नही। मनुष्य रूप से भूतकाल मे स्यात् सख्याती, स्यात् अस० की और भवि० मे करे तो स्यात् सख्याती, स्यात् अस० करेगे।

अनेक नरकादि २३ दण्डक के जीवो ने अनेक नरकादि २३ दण्डक रूप से केवली समु० की नही और करेगे भी नही। मनुष्य रूप से की नही, जो करे तो सख्या० अस० करेगे।

अनेक मनुष्यो ने २३ दण्डक रूप से केवली समु० की नही और करेगे भी नही। मनुष्य रूप से की होवे तो स्यात् सख्या० की। भविष्य मे करे तो स्यात् सख्याती स्यात् अस० करेगे।

७ अल्पबहुत्व द्वार

समुच्चय अल्पबहुत्व

१ सब से कम आहा, समु. वाले
२ केवली स. वाले सख्या. गुणा
३ तैजस स. वाले असं० गुणा
४ वैक्रिय स. वाले असं, गुणा
५ मरणांतिक स. वाले अनंत गुणा
६ कषाय स. वाले अस० गुणा
७ वेदनी स. वाले विशेष गुणा
८ असमोहिया स. वाले अस. गुणा

१ नरक का अल्पबहुत्व

१ सब से कम मर० स० वाले
२ उन से वैक्रिय समु. अ. गु.
३ उनसे कषाय स. संख्या. अ गु.
४ उनसे वेदनी समु. अ. गु.
५ उनसे असमो. समु. अ. गु,

२ देवता का अल्प बहुत्व

१ सब से कम तै. समु. वाले
२ उनसे मर० स० वाले अ० गुण
३ उनसे वेदनी समु वाले अ. गुण
४ उनसे कषाय समु. वाले सं. गु.
५ उनसे वैक्रिय समु. वाले सं गु.
६ उनसे असमोहिया वाले सं. गु.

३ मनुष्य का अल्पबहुत्व

१ सब से कम आहा. समु. वाले
२ उनसे समु. संख्या. गुणा
३ तैजस समु. असं. गुणा
४ वैक्रिय के. समु. संख्या गुणा
५ मरणांतिक समु० असं० गुणा

६ वेदनी समु० अस० गुणा	२ उनसे व० समु० वाले अ. गु.
७ कषाय समु० सख्या० गुणा	३ उनसे मरणातिक वाले अ. गु.
८ असमोहिया समु सख्या. गुणा	४ उनसे वेदनी वाले अ. गु.
४ तिर्यंच पचेन्द्रिय का अ. व.	५ उनसे कषाय वाले अ. गु.
१ सबसे कम तै० समु० वाले	६ उनसे असमो० वाले अ. गु.

पृथ्व्यादि ४ स्थावर का अल्पबहुत्व

१	सबसे	कम	मरणातिक	समु०	वाले
२	उनसे	कषाय	समु० वाले	सख्या०	गुणा
३	उनसे	वेदनी	समु० वाले	विशेषाइया	
४	उनसे	असमो०	समु० वाले	अस०	णगु।

वायुकाय का अल्पबहुत्व

१ सब से कम वैक्रिय समु० वाले
२ उनसे मरणातिक समु० वाले अस० गुणा
३ उनसे कपाय समु० वाले सख्या गुणा
४ उनसे वेदनी समु० वाले विशेषाइया
५ उनसे असमो० समु० वाले अस० गुणा

विकलेन्द्रिय का अल्पबहुत्व

१ सबसे कम मरणातिक समु० वाले
२ उनसे वेदनी समु० वाले अस० गुणा
३ उनसे कषाय समु० वाले सख्यात गुणा
४ उनसे असमो समु० वाले अस० गुणा।

उपयोग पद

(श्री पन्नवणा सूत्र २६ वां पद)

उपयोग २ प्रकार का :—

१ साकार उपयोग, २ निराकार उपयोग

साकार उपयोग के ८ भेद :—५ ज्ञान (मति, श्रुत, अवधि, मनः पर्यय और केवल ज्ञान) और ३ अज्ञान (मति, श्रुत, अज्ञान विभंग ज्ञान)।

अनाकार उपयोग ४ प्रकार का :—चक्षु, अचक्षु, अवधि दर्शन और केवल दर्शन।

२४ दण्डक में कितने २ उपयोग पाये जाते है :—

दण्डक	नाम	उपयोग	साकार	अनाकार
	समुच्चय जीवो में	२	८	४
१	नारकी में	२	६	३
१३	देवता में	२	६	३
५	स्थावर में	२	२	१
१	बेन्द्रिय में	२	४	१
१	तेइन्द्रिय में	२	४	१
१	चौरिन्द्रिय में	२	४	२
१	तिर्यच पंचेन्द्रिय मे	२	६	३
१	मनुष्य में	२	८	४

उपयोग अधिकार

(श्री भगवती सूत्र शतक, १३ उद्देशा १-२)

उपयोग १२—५ ज्ञान, ३ अज्ञान और ४ दर्शन। १२ उपयोग मे से जीव किस गति में कितने साथ ले जाते है और लाते है इसका वर्णन :—

(१) १-२-३ नरक मे जाते समय ८ उपयोग (३ ज्ञान, ३ अज्ञान, २ दर्शन—अचक्षु और अवधि) लेकर आवे और ७ उपयोग लेकर (ऊपर में से विभंग छोड कर) निकले। ४-५ ६ नरक मे ८ उपयोग (ऊपरवत्) लेकर आवे और ५ उपयोग (२ ज्ञान, २अ०, १ अच० दर्शन) लेकर निकले, ७ वी नरक में ५ उपयोग (३ ज्ञान, २ दर्शन) लेकर आवे और ३ उपयोग (२ अज्ञान, अच० दर्शन) लेकर निकले।

(२) भवनपति, व्यन्तर, ज्योतिषी देव मे ८ उपयोग (३ ज्ञान, ३ अ०, २ दर्शन) लेकर आवे और ५ उपयोग (२ ज्ञान, ३ अ, १ अच० दर्शन) लेकर निकले, १२ देवलोक ९ ग्रैवेयक मे ८ उपयोग लेकर आवे और ७ उपयोग (विभग ज्ञान छोड कर) लेकर निकले, अनुत्तर विमान में ५ उपयोग (३ ज्ञान, २ दर्शन) लेकर आवे और यही ५ उपयोग लेकर निकले।

(३) ५ स्थावर मे ३ उपयोग (२ अज्ञान, १ दर्शन) लेकर आवे और ३ उपयोग लेकर निकले, विकलेन्द्रिय मे ५ उपयोग (२ ज्ञान, २ अज्ञान, १ दर्शन) लेकर आवे और ३ उपयोग (२ अज्ञान, १ दर्शन) लेकर निकले, तिर्यच पचेन्द्रिय मे ५ उपयोग लेकर आवे और ८ उपयोग लेकर निकले, मनुष्य मे ७ उपयोग (३ ज्ञान, २ अज्ञान २ दर्शन) लेकर आवे और ८ उपयोग लेकर निकले। सिद्ध मे केवल ज्ञान, केवल दर्शन लेकर आवे और अनन्त काल तक आनन्दघन रूप से शाश्वत विराजमान होवे।

☆

नियंठा

(श्री भगवती सूत्र शतक २५ उद्देशा छठा)

निर्ग्रन्थों पर ३६ द्वार

१ पन्नवणा (प्ररूपणा), १ वेद, ३ राग, (सरागी), ४ कल्प, ५ चारित्र, ६ पडिसेवना (दोष सेवन), ७ ज्ञान, ८ तीर्थ ९ लिग, १० शरीर, ११ क्षेत्र, १२ काल, १३ गति, १४ संयम स्थान, १५ (निकासे) चारित्र पर्याय, १६ योग, १७ उपयोग, १८ कषाय, १९ लेश्या, २० परिणाम (३), २१ बन्ध, २२ वेद, २३ उदीरणा, २४ उपसम्पझाण (कहां जावे ?), २५ सन्नाबहुत्ता, २६ आहार, २७ भव, २८ आगरेस (कितनी बार आवे ?) २९ कालस्थिति, ३० आन्तरा, ३१ समुद्घात, ३२ क्षेत्र (विस्तार) ३३ स्पर्शना, ३४ भाव, ३५ परिणाम (कितने पावे ?) व ३६ अल्पबहुत्व द्वार।

१ पन्नवणा द्वार :—निर्ग्रन्थ (साधु) ६ प्रकार के प्ररूपे गये है। यथा १ पुलाक, २ वकुश ३ पडिसेवणा (ना), ४ कषाय कुशील, ५ निर्ग्रंथ, ६ स्नातक।

१ पुलाक—चावल की शाल समान, जिसमें सार वस्तु कम और भूसा विशेष होता है। इसके दो भेद : १ लब्धि पुलाक—कोई चक्रवर्ती आदि किसी जैन मुनि की अथवा जिन शासन आदि की अशातना करे, तो उसकी सेना आदि को चकचूर करने के लिये लब्धि का प्रयोग करे, उसे लब्धि पुलाक कहते है।

२ चारित्र पुलाक, इसके ५ भेद :—ज्ञान पुलाक, दर्शन पुलाक, चारित्र पुलाक, लिंग पुलाक (अकारण लिग-वेष वदले) और अहसुहम्म पुलाक (मन से भी अकल्पनीय वस्तु भोगने की इच्छा करे)।

वकुश—खले में गिरी हुई शालवत् । इसके ५ भेद :—१ आभोग (जान कर दोष लगावे), २ अनाभोग (अजानता दोष लगे), ३ सवुडा (गुप्त दोष लगे), ४ असवुडा (प्रकट दोष लगे, ५ अहासुहम्म (हाथ-मुँह धोवे, कज्जल आंजे इत्यादि) ।

पडिसेवण -शाल के उफने हुए खले के समान । इसके ५ भेद :—१ ज्ञान, २ दर्शन, ३ चारित्र में अतिचार लगावे, ४ लिंग बदले, ५ तप करके देवादि की पदवी की इच्छा करे ।

कषाय कुशील—फोतरे वाली, कचरे बिना की शाल समान, इसके ५ भेद —१ ज्ञान, २ दर्शन, ३ चारित्र मे कषाय करे, ४ कषाय करके लिंग बदले, ५ तप करके कषाय करे ।

निर्ग्रंथ—फोतरे निकाली हुई व खण्डी हुई शालवत्, इसके ५ भेद भेद :—१ प्रथम समय निर्ग्रन्थ (दशवे गुण० से ११ वे तथा १२ वे गुण० पर चढता प्रथम समय का) २ अप्रथम समय निर्ग्रन्थ (११-१२ गुण० मे दो समय से अधिक हुआ हो), ३ चरम समय (एक समय छद्मस्थापन का बाकी रहा हो), ४ अचरम समय (दो समय से अधिक समय जिसकी छद्मस्थ अवस्था बाकी बची हो) और ५ अहासुम्म निग्रन्थ (सामान्य प्रकारे वर्ते) ।

स्नातक—शुद्ध, अखण्ड, चावल समान । इसके ५ भेद :—१ अच्छवी (योग निरोध), २ असबले (सबले दोष रहित), ३ अकम्मे (घातिक कर्म रहित), ४ सशुद्ध (केवली) और ५ अपरिस्सवी (अबन्धक) ।

२ वेद द्वार —१पुलाक पुरुष वेदी और नपुंसक वेदी, २वकुश पु० स्त्री नपुंसक वेदी, ३ पडिसेवणा— तीन वेदी, ४ कषाय कुशील—तीन वेदी और अवेदी (उपशांत तथा क्षीण), ५ निर्ग्रन्थ अवेदी (उपशांत तथा क्षीण) और स्नातक क्षीण अवेदी होवे ।

३ राग द्वार :—४ निर्ग्रन्थ सरागी, निर्ग्रन्थ पाँचवाँ) वीतरागी (उपशांत तथा क्षीण) और स्नातक क्षीण वीतरागी होवे ।

४ कल्प द्वार :—कल्प पाँच प्रकार का (स्थित, अस्थित, स्थविर, जिन कल्प और कल्पातीत) पालन होता है। इसके १० भेद (प्रकार) है :—१ अचेल, २ उद्द`शी, ३ राज पिड, ४ सेज्जान्तर, ५ मासकल्प, ६ चोमासी कल्प, ७ व्रत, ८ प्रतिक्रमण, ९ कीर्ति धर्म और १० पुरुषा ज्येष्ठ।

१० कल्पो मे से प्रथम का और अन्त का तीर्थङ्कर के शासन में स्थित कल्प होते है, शेष २२ तीर्थङ्कर के शासन मे अस्थित कल्प है। उक्त १० कल्पो में से ४, ७, ९, १० और ४ स्थित कल्प है व १, २, ३, ५, ६, ८ अस्थित कल्प है।

स्थविर कल्प—शास्त्रोक्त वस्त्र पात्रादि रक्खे।

जिन कल्प—ज० २, उ० १२ उपकरण रक्खे।

कल्पातीत—केवली, मन : पर्यय, अवधि ज्ञानी, १४ पूर्व धारी, १० पूर्वधारी, श्रुत केवली और जातिस्मरण ज्ञानी।

पलाक—स्थित, अस्थित और स्थविर कल्पी होवे।

वकुश और पडिसेवणा नियठा मे कल्प ४—स्थित, अस्थित, स्थविर और जिन कल्पो।

कषाय कुशील मे ५ कल्प—ऊपर के ४ व कल्पातोत निग्रन्थ और स्नातक—स्थित, अस्थित और कल्पातोत में होवे।

५ चारित्र द्वार :—चारित्र ५ है :—१ सामायिक, २ छेदोपस्थापनीय, ३ परिहार विशुद्ध, ४ सूक्ष्म सम्पराय, ५ यथाख्यात। पुलाक, वकुश, पडिसेवणा मे प्रथम दो चारित्र। कषाय-कुशील मे ४ चारित्र और निर्ग्रन्थ, स्नातक मे यथाख्यातचारित्र होवे।

६ पडिसेवणा द्वार :—मूलगुणपडिसेवणा (महाव्रत में दोष) और उत्तर गुणपडिसेवणा (गोचरी आदि मे दोष) पुलाक, वकुश, पडिसेवणा मे मूल गुण, उत्तर गुण दोनो की पडिसेवणा, शेष तीन नियंठा अपडिसेवी। (व्रतो में दोष न लगावे)।

७ ज्ञान द्वार —पुलाक, वकुश, पडिसेवणा नियठा में दो ज्ञान तथा तीन ज्ञान, कपाय, कुशील और निर्ग्रन्थ में २, ३, ४ ज्ञान और स्नातक मे केवल ज्ञान। श्रुत ज्ञान आश्री पुलाक के ज० ९ पूर्व न्यून, उ० ९ पूर्व पूर्ण, वकुश और पडिसेवणा के ज० ८ प्रवचन। उ० दश पूर्व कपाय कुशील तथा निर्ग्रन्थ के ज० ८ प्रवचन। उ० १४ पूर्व स्नातक सूत्र व्यतिरिक्त।

८ तीर्थ द्वार —पुलाक, वकुश, पडिसेवणा तीर्थ मे होवे। शेष तीन तीर्थ में और अतीर्थ मे होवे। अतीर्थ मे प्रत्येक बुद्ध आदि होवे।

९ लिङ्ग द्वार :—ये ६ नियठा (साधु) द्रव्य लिग अपेक्षा स्वलिग, अन्य लिग अपेक्षा गृहस्थ लिग मे होवे। भावापेक्षा स्वलिग ही होवे।

१० शरीर द्वार पुलाक, निर्ग्रथ स्नातक मे ३ (औ० ते० का०), वकुश पडि० मे ४ (औ० वै० तै० का०), कषाय कुशील मे ५ शरीर।

११ क्षेत्र द्वार : नियठा जन्म अपेक्षा १५ कर्म भूमि मे होवे, सहरण अपेक्षा ५ नियठा (पुलाक सिवाय) कर्म-भूमि और अकर्म-भूमि मे होवे। प्रसगोपात पुलाक लब्धि आहारक शरीर, साध्वी, अप्रमादी, उपशम श्रेणी वाले, क्षपक श्रेणी वाले और केवली होने से बाद सहरण नही हो सके।

१२ काल द्वार पुलाक निर्ग्रन्थ और स्नातक अवस० काल मे तीसरे-चौथे आरे मे जन्मे और ३, ४ ५ वे आरे मे प्रवर्ते। उत्स० काल मे २, ३, ४ आरे मे जन्मे और ३-४ थे आरे मे प्रवर्ते। महा विदेह मे सदा होवे।

पुलाक का सहरण नही होवे, परन्तु निर्ग्रथ, स्नातक सहरण अपेक्षा अन्य काल मे भी होवे। वकुश पडिसेवण और कपाय कुशील अवस० काल के ३, ४, ५ आरे मे जन्मे और प्रवर्ते। उत्स० काल के २, ३, ४ आरे में जन्मे और ३-४ आरे मे प्र०। महाविदेह मे सदा होवे।

नाम	गति		स्थिति	
	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट
१ पुलाक	सुधर्म देव०	सहस्रार दे०	प्रत्येक पल्य.	१८ सा.
२ वकुश	सुधर्म देव०	अच्युत देव०	प्रत्येक पल्य.	२२ सा.
३ पडिसेवरण	सुधर्म देव	अच्युत देव०	प्रत्येक पल्य.	२२ सा.
४ कषाय कुशील	सुधर्म देव०	अनुत्तर विमान	प्रत्येक पल्य.	३३ सा.
५ निर्गृन्थ	अनुत्तर वि०	सर्वार्थसिद्ध	३१ सागर	३३ सा.
६ उपशान्त	अनुत्तर वि०	मोक्ष	३३ सागर	३३ सा.
७ स्नातक	अनुत्तर वि०	मोक्ष		

देवताओ मे ५ पदविये है:—१ इन्द्र, २ लोकपाल ३ त्राय-स्त्रिशक, ४ सामानिक ५ अहमिन्द्र। पुलाक वकुश पड़िसेवण प्रथम ४ पदवी मे से १ पदवी पावे। कषाय कुशोल ५ पदवो में से पावे। निर्ग्रंथ अहमिन्द्र होवे, स्नातक आराधक अहमिन्द्र होवे तथा मोक्ष जावे, विराधक ज० विरा० होवे तो ४ पदवी में से १ पदवी पावे। उ० वि० २४ दण्डक में भ्रमण करे।

१४ संयम द्वार . संख्याता स्थान असंख्याता है। चार नियंठा मे असं. संयम स्थान और निग्रंथ, स्नातक मे संयम स्थान एक ही होवे। सब से कम मि स्ना. के सं स्था०। उनसे पुलाक के सं. स्था. अस. गुणा० उनसे वकुश के स. स्था. अस. गुणा. उनसे पड़िसेवण सं. स्था. अस. गुणा, उनसे कषाय कुशील का स. स्था. अस. गुणा।

१५ निकासे (सयम का पर्याय) द्वार : सवो का चारित्र पर्याय अनन्ता-अनन्ता, पुलाक से पुलाक चारित्र पर्याय परस्पर छट्ठाणवडिया। यथा :—

३ अनंत भाग हानि, २ अस० भाग हानि, ३ सं० भाग हानि, ४ सं० भाग हानि, ५ अस० भाग हानि, ६ अनन्त भाग हानि।

१ अनत भाग वृद्धि २ अस० भाग वृद्धि ३ संख्यात भाग वृद्धि ४ संख्यात भाग वृद्धि ५ असं० ६ अनंत भाग सख्यात वृद्धि

पुलाक वकुश, पड़िसेवण से अनतगुणा हीन। कषाय कुशील छठाणवलिया। निर्ग्रन्थ स्नातक से अनत गुणा हीन, वकुश पुलाक से अनंत गुणा वृद्धि। वकुश वकुश से छठाणवलिया, वकुश-पड़िसेवण, कषाय कुशील से छठाणवलिया। निर्ग्रन्थ स्नातक से अनत गुणा हीन।

पडिसेवण, वकुश समान समझना। कषाय कुशील चार नियंठा (पुलाक, वकुश पडि०, कपाय कुशील) से छठाणवलिया और निर्ग्रन्थ स्नातक से अनत गुणा हीन।

निर्ग्रन्थ प्रथम ४ नियठा से अनत गुणा अधिक। निर्ग्रन्थ स्नातक को निर्ग्रन्थ समान (ऊपरवत्) समझना।

अल्पबहुत्व—पुलाक और कषाय कुशील का ज० चारित्र पर्याय परस्पर तुल्य० उनसे पुलाक का उ० चा० पर्याय अनत गुणा, उनसे वकुश और पडि० का ज० चा प. परस्पर तुल्य और अनत गुणा, उनसे वकुश का उ चा० पर्याय अनंत गुणा उनसे निग्रन्थ और स्नातक का ज उ चा पर्याय परस्पर तुल्य और अनत गुणा।

१६ योग द्वार · ५ नियठा सयोगी और स्नातक सयोगी तथा अयोगी।

१७ उपयोग द्वार . ६ नियठाओ मे साकार-निराकार दोनो प्रकार का उपयोग।

१८ कपाय द्वार : प्रथम ३ नियठा मे सकषायी (सज्वलन का चोक) कषाय कुशील मे सज्वलन ४-३-२-१ निर्ग्रथ अकपायी (उपशम तथा क्षीण) और स्नातक अकषायी (क्षीण)।

१९ लेश्या द्वार पुलाक, वकुश, पडिसेवण मे ३ शुभ लेश्या, कषाय कुशील मे ६ लेश्या, निर्ग्रथ मे शुक्ल लेश्या, स्नातक मे शुक्ल लेश्या अथवा अलेशी।

२० परिणाम द्वार · प्रथम नियंठा में तीन परिणाम—१ हीयमान, २ वर्धमान, ३ अवस्थित (१ घटता, २ वढ़ता, ३ समान)। हीय. वर्ध० को स्थिति ज. समय की १ उ० अ० मु० अवस्थित की ज० १ १ समय उ० ७ समय की, निर्ग्रन्थ मे वर्धमान परिणाम अवस्थित में २ परिणाम । स्थिति ज० १ समय, उ० अ० मु० । स्नातक मे ० वर्ध. अव.) वर्ध. की स्थिति ज० १ समय, उ० अ० मु० अव० की स्थिति ज० अं० मु० उ० देश उणी पूर्व क्रोड की ।

२१ बन्ध द्वार : पुलाक ७ कर्म (आयुष्य सिवाय) बांधे, वकुश व पडिसे० ७-८ कर्म बाधे, कषाय कुशील ६-७ तथा ८ कर्म (आयु मोह सिवाय) बांधे, निर्ग्रन्थ १ साता वेदनीय बांधे और स्नातक साता वेदनीय बांधे अथवा अबन्ध (नही वाधे))

२२ वेदे द्वार : ४ नियंठा ८ कर्म वेदे, निर्ग्रथ ७ कर्म (मोह सिवाय) वेदे, स्नातक ४ कर्म (अघाती) वेदे ।

२३ उदीरणा द्वार : पुलाक ६ कर्म (आयु-मोह सिवाय) की उदी० करे, वकुश पडिसेवण ६-७ तथा ८ कर्म उदेरे, कषाय कुशील ५-६-७-८ कर्म उदेरे (५ होवे तो आयु, मोह वेदनीय छोड़ कर), निर्ग्रन्थ २ तथा ५ कर्म उदेरे (नाम-गोत्र) और स्नातक अनुदीरिक ।

२४ उपसंपझणं द्वार : पुलाक-पुलाक को छोड़कर कषाय कुशील मे अथवा असंयम जावे, वकुश वकुश को छोड कर पडि० में, कषाय कुशील में असंयम तथा संयमासंयम मे जावे । इसी प्रकार चार स्थान पर पडि० नियठा जावे, कषाय कुशील ६ स्थान पर (पु०, व०, पडि०, असंयम, सयमा. तथा निर्ग्रन्थ में) जावे । निर्ग्रन्थ निर्ग्रन्थपने को छोड़ कर कषाय कुशील स्नातक तथा असंयम में जावे और स्नातक मोक्ष मे जावे ।

२५ सज्ञा द्वार : पुलाक, निर्ग्रन्थ और स्नातक नोसंज्ञा वहुता। वकुश. पडि० और कषाय कुशील सज्ञा बहुता और नोसंज्ञा वहुता ।

२६ आहारिक द्वार . ५ नियठा आहारिक और स्नातक आहारिक तथा अना० ।

२७ भव द्वार . पुलाक और निर्ग्रंथ भव करे ज० १ उ० ३ वकुश, पडि०, कषाय कुशोल ज० १ उ० १५ भव करे और स्नातक उसी भव मे मोक्ष जावे ।

२८ आगरेस द्वार पुलाक एक भव मे ज० १ वार उ० बार ३ आवे । अनेक भव आश्री ज० २ बार उ० ७ बार आवे, वकुश पडि० और कषाय कुशील एक भव मे ज० १ वार उ० प्रत्येक १०० वार आवे अनेक भव आश्री ज० २ बार उ० प्रत्येक हजार बार, निर्ग्रन्थ एक भव आश्री ज० १ बार उ० १ बार आवे, अनेक भव आश्रा ज० २ बार उ० ५ वार आवे, स्नातकपना ज० उ० १ हो वार आवे ।

२९ काल द्वार : (स्थिति) पुलाक एक जीव अपेक्षा ज० १ समय उ० अ० मु०, अनेक जीव अपेक्षा ज० उ० अन्तर्मुहूर्त को वकुश एक जीव अपेक्षा ज० १ समय उ० देश उणा पूर्व क्रोड, अनेक जीवापेक्षा शाश्वता पडि० कषाय कु० वकुशवत्, निग्रन्थ एक तथा अनेक जीवापेक्षा ज० १ समय उ० अन्तमु० स्नातक एक जीवाश्री ज० अ० मु०, उ० देश उणा पूर्व क्रोड़, अनेक जीवा० शाश्वता है ।

३० आन्तरा (अन्तर) द्वार . प्रथम ५ नियठा मे आन्तरा पड़े तो १ जीव अपेक्षा ज० अ० मु० उ० देश उणा अर्ध पुद्गल परावर्तन काल तक स्नातक मे एक जीवा० अन्तर न पडे । अनेक जोवा० अन्तर पडे तो पुलाक मे ज० १ समय, उ० सख्यात काल, निग्रन्थ मे ज० १ समय, उ० ६ माह, शेष ४ मे अन्तर न पडे ।

३१ समुद्घात द्वार पुलाक मे ३ समु० (वेदनी, कषाय, मारणातिक) वकुश मे तथा पडि० मे ५ समु० (वे०, क०, म०, वै०, ते०) कपाय कु० मे ६ समु० (केवली समु० नही,) निग्रंथ में नही, स्नातक मे होवे तो केवली समुद्घात ।

३२ क्षेत्र द्वार : पांच नियंठा लोक के असंख्यातवे भाग में होवे और स्नातक लोक के असंख्यातवे होवे अथवा समस्त लोक में (केवली समु० अपेक्षा होवे।

३३ स्पर्शना द्वार : क्षेत्र द्वार वत्।

३४ भाव द्वार : प्रथम ४ नियठा क्षयोपशम भाव में होवे। निर्ग्रन्थ उपशम तथा क्षायिक भाव में होवे और स्नातक क्षायिक भाव में होवे।

३५ परिमाण द्वार : (सख्या प्रमाण) स्यात् होवे, स्यात् न होवे, होवे तो कितना ?

नाम	वर्तमान पर्याय अपेक्षा		पूर्व पर्याय अपेक्षा	
	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट
पुलाक	१-२-३	प्रत्येक सौ (२०० से ९००)	१-२-३	प्रत्येक हजार (२ से ९ हजार)
बकुश	,,	,,		प्रत्येक सौ क्रोड़ (नियमा)
पडिसेवरण	,,	,,	,,	,,
कषाय कुशील	,,	प्रत्येक हजार		प्रत्येक हजार क्रोड़ ,,
निर्ग्रन्थ	,,	१६२	१-२-३	प्रत्येक सो ०
स्नातक	,,	१०८		प्रत्येक क्रोड नियमा

३६ अल्पबहुत्व द्वार :—सर्व से कम निग्रन्थ नियंठा, उनसे पुलाक वाले संख्यात गुणा, उनसे स्नातक संख्यात गुणा, उनसे वकुश संख्यात उनसे पडिसेवण संख्यात गुरणा और उनसे कषाय कुशील का जीव सख्यात गुरणा।

संजया (संयति)

(श्री भगवती सूत्र शतक २५ उद्देशा ७)

सयति पॉच प्रकार के (इनके ३६ द्वार नियंठा समान जानना)

१ सामायिक चारित्री, २ छेदोपस्थापनीय चारित्री, ३ परिहार विशुद्धि चारित्री, ४ सूक्ष्म सम्पराय चारित्री, ५ यथाख्यात चारित्री ।

१ सामायिक चारित्री के २ भेद —१ स्वल्प काल का—प्रथम और चरम तीर्थङ्कर के साधु होते है । ज० ७ दिन, मध्यम ४ मास (माह), उ० ६ माह की कच्ची दीक्षा वाले । २ जावजीव के—२२ तीर्थङ्कर के, महाविदेह क्षेत्र के और पक्की दीक्षा लिये हुए साधु (सामा० चारित्री) ।

छेदोपस्थापनीय (दूसरी वार नयो दीक्षा लिये हुए) सयति के २ भेद —१ सातिचार—पूर्व सयम मे दोष लगने से नई दीक्षा लेवे । २ निरतिचार—शासन तथा सम्प्रदाय बदल कर फिर दीक्षा लेवे । जैसे पार्श्वजिन के साधु महावीर प्रभु के शासन मे दीक्षा लेवे ।

३ परिहारविशुद्ध चारित्री —९-९ वर्ष के नव जन दोक्षा ले । २० वर्ष गुरुकुल वास करके नव पूर्व सीखे, पश्चात् गुरु आज्ञा से विशेष गुण प्राप्ति के लिए नव ही साधु परिहार विशुद्ध चारित्र ले । जिनमे से चार मुनि ६ माह तक तप करे, ४ मुनि वैयावच्च करे और १ मुनि व्याख्यान देवे । दूसरे ६ माह मे ४ वैयावच्ची मुनि तप करे, ४ तप करने वाले वैयावच्च करे और १ मुनि व्याख्यान देवे । तीसरे ६ माह मे १ व्याख्यान देने वाला तप करे, १ व्याख्यान देवे और ७ मुनि वैयावच्च करे । तपश्चर्या उनाले मे एकातर उपवास, शियाले

छठ-छठ पारणा, चौमासे अठम २ पारणा करे एव १८ माह तप करके जिन कल्पी होवे अथवा पुन. गुरुकुल वास स्वीकारे।

४ सूक्ष्मसम्पराय चारित्री के २ भेद :—१ संक्लेश परिणाम—उपशम श्रेणी से गिरने वाले, २ विशुद्ध परिणाम—क्षपक श्रेणी पर चढने वाले।

५ यथाख्यात चारित्री के २ भेद :—१ उपशान्त वीतरागी—११ वे गुणस्थानवाले, २ क्षीण वीतरागी—के २ भेद—छद्मस्थ व केवली (सयोगी तथा अयोगी)।

२ वेद द्वार—सामा०, छेदोप० वाले सवेदी (३वेद) तथा अवेदी (नववे गुण अपेक्षा) परि० वि०, पुरुष या पुरुष नपुंसक वेदी सूक्ष्म स० और यथा० अवेदी।

३ राग द्वार—सयती सरागी और यथा. संयती वीतरागी।

४ कल्प द्वार—कल्प के ५ भेद, नीचे अनुसार :—

(१) स्थित कल्प—नियठा में बताये हुए १० कल्प, प्रथम तथा चरम तीर्थङ्कर के शासन मे होवे।

(२) अस्थित कल्प—२२ तीर्थङ्कर के साधुओ मे होवे। १० कल्प में से शय्यान्तर, ६ तकर्म और और, पुरुष ज्येष्ठ एव ४ तो स्थित है और वस्त्र कल्प, उद्देशीक आहार कल्प, राजपिड मास कल्प, चातुर्मासिक कल्प और प्रतिक्रमण कल्प एवं ६ अस्थित होवे।

(३) स्थविर कल्प—मर्यादापूर्वक वस्त्र-पात्रादि उपकरण से गुरुकुलवास, गच्छ और अन्य मर्यादा का पालन करे।

(४) जिन कल्प—जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट उत्सर्ग पक्ष स्वीकार करके, अनेक उपसर्ग पक्ष स्वीकार करके तथा अनेक उपसर्ग सहन करते हुए जगल आदि मे रहे (विस्तार नन्दी सूत्र मे से जानना)।

(५) कल्पातीत—आगम विहारी अतिशय ज्ञानवाले महात्मा जो कल्प रहित भूत-भावी के लाभालाभ देख कर वर्ते।

सामायिक संयति में ५ कल्प, छेदोप० परि० में ३ कल्प (स्थित

स्थविर, जिनकल्प), सूक्ष्म० यथा० मे २ कल्प (अस्थित और कल्पा-तीत) पावे ।

५ चारित्र द्वार—सामा०, छेदो० मे ४ नियंठा (पुलाक, वकुश, पडिसेवण और कषाय कुशील), परिशिष्ट सूक्ष्म मे एक नियठा (कषाय कुशील) और यथा० मे २ नियठा (निर्ग्रन्थ और स्नातक) पावे ।

६ पडिसेवण द्वार—सामा०, छेदो०, सयति मूल गुण प्रति सेवी (महाव्रत मे दोष लगावे) तथा उत्तर गुण प्रतिसेवी (दोष लगावे) तथा अप्रति सेवी (दोष नही भी लगावे) । शेष ३ सयति अप्रतिसेवी (दोष नही लगावे) ।

७ ज्ञान द्वार—४ संयति मे ४ ज्ञान (२-३-४) की भजना और यथाख्यात मे ५ ज्ञान की भजना । ज्ञानाभ्यास अपेक्षा—सामा०, छेदो० मे जघन्य अष्ट प्रवचन (५ समिति, ३ गुप्ति) उत्कृष्ट १४ पूर्व तक, परिशिष्ट मे जघन्य ६ वे पूर्व की तीसरी आचार वत्थु तक, उत्कृष्ट ६ पूर्व सम्पूर्ण सूक्ष्म सख्यात और यथा० जघन्य अष्ट प्रवचन तक उत्कृष्ट १४ पूर्व तथा सूत्र व्यतिरिक्त ।

८ तीर्थ द्वार—सामायिक और यथाख्यात संयति तीर्थ मे, अतीर्थ मे, तीर्थकर मे और प्रत्येक बुद्ध में होवे । छेदो०, परि०, सूक्ष्म तीर्थ मे ही होवे ।

९ लिग द्वार—परि० द्रव्ये भावे स्वलिंगी होवे । शेष चार सयति द्रव्य स्वलिगी, अन्य लिगी तथा गृहस्थ लिगी होवे, परन्तु भावे स्वलिगी होव ।

१० शरीर द्वार—सामायिक, छेदो० मे ३-४-५ शरीर होवे । शेप तीन मे ३ शरीर ।

११ क्षेत्र द्वार—सामायिक, सूक्ष्म तथा १५ कर्म भूमि मे और छेदो० परि० ५ भरत ५ ऐरावत मे होवे, सहरण अपेक्षा अकर्म भूमि मे भी होवे, परन्तु परिहार विशुद्ध संयति का सहरण नही होवे ।

१२ काल द्वार—सामा० अवसर्पिणी काल के ३-४-५ आरा में जन्मे और ३-४-५ आरा में विचरे, उत्स० के २-३-४ आरा मे जन्में और ३-४ आरा में विचरे, महाविदेह मे भी होवे। संहरण अपेक्षा अन्य क्षेत्र (३० अकर्म भूमि) में भी होवे। छेदो० महाविदेह मे नही होवे, शेष ऊपरवत्। परि० अवस० काल के ३-४ आरा में जन्मे, प्रवर्तें, उत्स० काल के २-३-४ आरा में जन्मे और ३-४ आरा में प्रवर्ते सूक्ष्म० यथा० संयति अवस० ३-४ आरा में जन्मे और प्रवर्ते। उत्स० काल के २-३-४ आरा में प्रवर्ते। महाविदेह मे भी पावे, सहरण अन्यत्र भी होवे।

१३ गति द्वार—	गति		स्थिति	
सं० नाम	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट
सामा० छेदो०	सौधर्म कल्प	अनुत्तर विमान	२ पल्य	३३ सागर
परिहार विशुद्ध	सौधर्म कल्प	सहस्रार विमान	२ पल्य	१८ सागर
सूक्ष्म संपराय	अनु० विमान	अनुत्तर विमान	३१ सागर	३३ सागर
यथाख्यात	अनु. विमान	अनुत्तर विमान	३१ सागर	३३ सागर

देवता में ५ पदवी है :—इन्द्र, सामानिक, त्रायस्त्रिशक, लोकपाल और अहमेन्द्र। सामा० छेदो० आराधक होवे तो पॉच मे से १ पदवी पावे। सूक्ष्म. यथा० वाले अहमेन्द्र पद पावे। ज० विराधक होवे तो ४ प्रकार के देवो मे उपजे, उ० विराधक होवे तो ससार भ्रमण करे।

१४ सयम स्थान—सामा० छेदो० परि० मे अस० संस्थान होवे। सूक्ष्म मे अं० मु० के जितने असख्य और यथा० का सं० स्थान एक ही है। इनका अल्पबहुत्व।

सव से कम यथा० संयति के संयम स्थान
उनसे सूक्ष्म सम्पराय के सं० स्थान असख्यात गुणा
उनसे परिहार वि० के सं० स्थान असंख्यात गुणा
उनसे सामा० छेदो के सं० स्थान परस्पर तुल्य

१५ निकासे द्वार—एकेक संयम के पर्यव (पर्जवा) अनन्ता अनन्त

है। प्रथम तीन सयति के पर्यव परस्पर तुल्य तथा पट् गुण हानि वृद्धि । सूक्ष्म० यथा० से ३ सयम अनन्त गुणा न्यून है। सूक्ष्म० तीनो ही से अनन्त गुणा अधिक है। परस्पर षट् गुण हानि वृद्धि और यथा० से अनन्त गुणा न्यून है। यथा० चारो ही से अनन्त गुणा अधिक है। परस्पर तुल्य है।

अल्प वहुत्व :—

१ सर्व से कम सामा० छेदो० के ज० सयम पर्यव (परस्पर तुल्य)
२ उनसे छेदो. परिहार विशुद्ध के ज० सयम पर्यव अनन्त गुणा
३ उनसे छेदो परिहार विशुद्ध के उत्कृष्ट पर्यव अनन्त गुणा
४ उनसे छेदो सामा० छेदो० के उत्कृष्ट पर्यव अनन्त गुणा
५ उनसे छेदो सूक्ष्म सम्पराय के जघन्य पर्यव अनन्त गुणा
६ उनसे छेदो. सूक्ष्म सम्पराय के उत्कृष्ट पर्यव अनन्त गुणा
७ उनसे छेदो. यथाख्यात के ज० उ० पर्यव परस्पर तुल्य

१६ योग द्वार–४ सयति, सयोगी और यथा० सयोगी एव अयोगी।

१७ उपयोग द्वार—सूक्ष्म मे साकार उपयोगी होवे। शेप चार में साकार निराकार दोनो ही उपयोग वाले होवे।

१८ कषाय द्वार—३ सयति सज्वलन का चौक (चारो की कपाय) मे होवे, सूक्ष्म० सज्व० लोभ मे होवे और यथा० अकपायी (उपशांत तथा क्षीण) होवे।

१९ लेश्या द्वार—सामा० छेदो० मे ६ लेश्या, परि० मे ३ शुभ लेश्या, मूक्ष्म, मे शुक्ल लेश्या, यथा० मे १ शुक्ल लेश्या अलेशी भी होवे।

२० परिणाम द्वार—३ सयति मे तीनो ही परिणाम उनकी स्थिति हायमान तथा वर्धमान की ज० १ उ० ७ अ० मु० की, अवस्थित की ज० १ समय की, सूक्ष्म० मे २ परिणाम (हायमान, वर्धमान) इनकी स्थिति ज० उ० अं० मु० की, यथा० मे २ परिणाम,

वर्धमान (ज ० उ० अ० मु० की स्थिति) और अवस्थित (ज० १ समय उ० देश उणा क्रोड़ पूर्व की० स्थिति)।

२१ बन्ध द्वार—तीन संयति ७-८ कर्म बांधे, सूक्ष्म० ६ कर्म बांधे (मोह, आयु छोड कर), यथा० बांधे तो शाता वेदनी अथवा अबन्ध (नही वांधे)।

२२ वेदे द्वार—चार संयति ८ कर्म वेदे, यथा० ७ कर्म (मोह सिवाय) यथा ४ कर्म (अघातिक) वेदे।

२३ उदीरणा द्वार—सामा० छेदो० परि० ७-८-६ कर्म उदेरे (उदीरणा करे), सूक्ष्म ५-६ कर्म उदेरे ६ होवे तो (आयु, मोह सिवाय), ५ होवे तो (आयु, मोह, वेदनी सिवाय), यथा० ५ कर्म तथा २ कर्म (नाम, गोत्र) उदेरे तथा उदी० नही करे।

२४ उपसम्पज्झाणं द्वार—सामा० वाले सामा० संयम छोडे तो ४ स्थान पर (छेदो० सूक्ष्म० सयम तथा असंयम में) जावे, छेदो० वाले छोडे तो ५ स्थान पर (सामा०, परि०, सूक्ष्म०, संयम तथा असंयम में जावे, परि० वाले छोड़े तो २ स्थान पर) छेदो०, असंयम में जावे, सूक्ष्म० वाले छोड़े तो ४ स्थान पर (सामा०, छेदो. यथा०, असंयम में) जावे, यथा० वाले छोडे तो ३ स्थान पर (सूक्ष्म०, असंयम तथा मोक्ष में) जावे।

२५ सज्ञा द्वार—३ चारित्र में ४ सज्ञावाला तथा संज्ञा रहित, शेष में संज्ञा नही।

२६ आहार द्वार—४ संयम में आहारक और यथा० आहारक व अनाहारक दोनों होवे।

२७ भव द्वार—३ संयति ज० १ भव करे उ० १५ भव (८ ममुस्य का, ७ देवता का एव १५ भव) करके मोक्ष जावे। सूक्ष्म ज० १ भव उ० ३ भव करे यथा० ज० १ उ० ३ भव करके तथा उसी भव मे मोक्ष जावे।

२८ आगरेस द्वार—संयम कितनी बार आवे ?

नाम	एक भव अपेक्षा		अनेक भव अपेक्षा	
	ज०	उत्कृष्ट	ज०	उत्कृष्ट
सामायिक	१	प्रत्येक सौ बार	२	प्रत्येक हजार बार
छेदोपस्था०	१	प्रत्येक सौ बार	२	नव सौ बार से अधिक
परिहार वि०	१	तीन बार	२	नव सौ बार से अधिक
सूक्ष्म स०	१	चार बार	२	नव वार
यथाख्यात	१	दो बार	२	पॉच वार

२९ स्थिति द्वार—सयम कितने समय रहे ?

नाम	एक जीवापेक्षा		अनेक जीवापेक्षा	
	ज०	उत्कृष्ट	ज०	उत्कृष्ट
सामायिक	१ स	देश उ. क्रो पू०	शाश्वता	शाश्वता
छेदोप०	१ स.	देश उ. क्रो	२० वर्ष	५० क्रोड सा
परिहार वि०	१	२९ वर्ष उणा क्रो	देश उणा २५० वर्ष	देश उ. को पू
सूक्ष्मसम्पराय	१	अन्तर्मुहूर्त	अन्त०	अन्तर्मुहूर्त
यथाख्यात	१	देश उ० को पृ	शाश्वता	शाश्वता

३० अन्तर द्वार—एक जीवापेक्षा ५ सयति का अन्तर ज० अ० मु० देश उणा अर्ध पुद्गल परावर्तन काल। अनेक जीवापेक्षा—सामा०, यथा० मे अन्तर नही पडे। छेदो० मे जघन्य ६३ ०० वर्ष, परि० मे जघन्य ८४००० वर्ष का। दोनो मे उ० देश उणा १८ क्रोडाक्रोड सागर का और सूक्ष्म मे ज० १ समय उ० ६ माह का अन्तर पड़े।

३१ समुद्घात द्वार—सामा० छेदो० मे ६ समु० (केवली समु० छोड कर) परि० मे ३ प्रथम की, सूक्ष्म० मे नही और यथा० मे १ केवली समुद्घात।

३२ क्षेत्र द्वार—पाचो ही संयति लोक के असख्यातवे भाग होवे, यथा० वाले केवली समु० करे तो समस्त लोक प्रमाण होवे।

३३ स्पर्शना द्वार—क्षेत्र द्वार समान ।

३४ भाव द्वार—४ संयति क्षयोपशम भाव में होवे और यथाख्यात उपशम तथा क्षायिक भाव मे होवे ।

३५ परिणाम द्वार—स्यात् पावे तो—

नाम	वर्तमान अपेक्षा		पूर्व पर्याय अपेक्षा	
	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट
सामायिक	१-२-३	प्रत्येक हजार	नियम से	प्रत्येक ह० क्रोड
छेदोप०	१-२-३	प्रत्येक सो	प्र० सो क्रोड़	प्रत्येक सो क्रोड
परिहार वि०	१-२-३	प्रत्येक सो	१-२-३	प्रत्येक सो हजार
सूक्ष्म सपराय	१-२-३	प्रत्येक १-६-२ (१० क्षपक ५४ उपशम)	१-२-३	प्रत्येक, सो
यथाख्यात	१-२-३	प्रत्येक १-६-२	१-२-३	नियम से सो क्रोड[1]

३६ अल्पबहुत्व द्वार—

सब से कम सूक्ष्म सम्पराय सयम वाले, उनसे—
परिहार वि० सयम वाले संख्यात गुणा उनसे—
यथाख्यात सयम वाले सख्यात गुणा उनसे
छेदोपस्था० सयम वाले सख्यात गुणा उनसे
सामायिक सयम वाले सख्यात गुणा उनसे

---
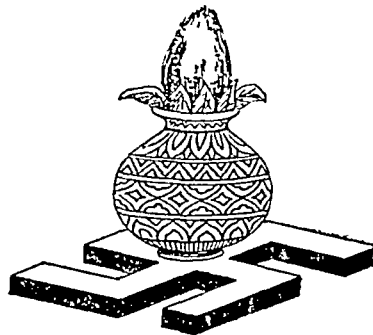
१ केवली की अपेक्षा से समझना ।

अष्ट प्रवचन (५ समिति ३ गुप्ति)

(श्री उत्तराध्यान सूत्र, २४ वा अध्ययन)

पाँच समिति (विधि) के नाम—१ इरिया समिति (मार्ग मे चलने की विधि), २ भाषा (बोलने की) समिति, ३ एषणा (गोचरी की) समिति, ४ निक्षेपणा (आदान भडमत्त वस्त्र पात्रादि देने व रखने की) समिति, ५ परिठावणिया (उच्चार, पासवण खेल-जल-सघाण बडी-नीत, लघुनीत, बलखा लीठ आदि परठने की) समिति ।

तीन गुप्ति (गोपना) के नाम :—

१ मन गुप्ति, २ वचन गुप्ति, ३ काय गुप्ति

इर्या समिति के ४ भेद —१ आलम्बन—ज्ञान दर्शन, चारित्र का, २ काल–अहोरात्रि का, ३ मार्ग - कुमार्ग छोडकर सुमार्ग पर चलना, ४ यत्ना (जयाणा सावधानी) के ४ भेद —द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव । द्रव्य से छकाय जीवो की यत्ना करके चले, क्षेत्र से घुसरी (३॥ हाथ प्रमाण जमीन आगे देखते हुए चले), काल से रास्ते चलते नही बोले और भाव से रास्ते चलते वाचन पूछने (पृच्छना) पर्यट्टण, धर्मकथा आदि न करे और न शब्द, रूप, गन्ध, रस, स्पर्शादि विषय में ध्यान दे ।

भाषा समिति के ४ भेद :—द्रव्य, क्षेत्र काल, और भाव । द्रव्य से आठ प्रकार की भाषा (कर्कश, कठोर, छेदकारी, भेदकारी, अधार्मिक, मृषा, सावद्य, निश्चयकारी) नही बोले, क्षेत्र से रास्ते चलते न बोले, काल १ एक प्रहर रात्रि बीतने पर जोर से नही बोले, भाव से राग-द्वेष-युक्त भाषा न बोले ।

एषणा समिति ४ भेद :—द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव । द्रव्य से

४२ तथा ६६ दोष टाल कर निर्दोष आहार, पानी, वस्त्र, पात्र, मकानादि याचे (मांगे), क्षेत्र से २ गाउ (कोस) उपरान्त ले जाकर आहार पानी नही भोगे, काल से पहले पहर का आहार पानी चौथे पहर मे न भोगे, भाव से माडले के व दोष (सयोग, अङ्गाल, धूम, परिमाण, कारण) टाल कर अनासक्तता से भोगे।

४ आदानभण्डमत्त निखेवणीया समिति :—मुनियो के उपकरण ये है :—१ रजोहरण, २मुँहपत्ति एक चोल पट्टा (५ हाथ), ३ चादर (पछेड़ी) साध्वी, ४ पछेडी रक्खे। काष्ट तुम्बी तथा मिट्टी के पात्र, १ गुच्छा, १ आसन, १ सस्तारक (२॥ हाथ लम्बा बिछाने का कपडा तथा ज्ञान, दर्शन, चारित्र वृद्धि निमित्त आवश्यक वस्तुए।

(१) द्रव्य से ऊपर कहे हुए उपकरण यत्न से लेवे, रक्खे और वापरे (काम मे लेवे)।

(२) क्षेत्र से व्यवस्थित रक्खे, जहाँ-तहाँ बिखरे हुए नहीं रक्खे।

(३) काल से दोनो समय (१ से और चौथे पहर में) पड़िलेहन तथा पूजन करे।

(४) भाव से ममता रहित संयम साधन समझ कर भोगे।

५ उच्चारपासवण खेलजलसघाणपरिठावणिया समिति के ४ भेद :—१ द्रव्य मलमूत्रादि १० प्रकार के स्थान पर बैठे नही (१ जहाँ मनुष्यो का आवन-जावन हो, २ जीवो को जहाँ घात होवे, ३ विषम ऊँची-नीची भूमि पर, ४ पोली भूमि पर, ५ सचित्त भूमि पर, ६ संकडी (विशाल नही) भूमि पर, ७ तुरन्त की (अभी की) अचित्त भूमि पर, ८ नगर-गाँव के समीप मे, ९ लीलन फूलन होवे वहां, १० जीवो के बिल (दर) वहां न बैठे)। २ क्षेत्र से बस्ती को दुर्गछा होवे वहा तथा आम रास्ते पर न बैठे। ३ काल से बैठने को भूमि को कालोकाल पडिलेहण करे व पूँजे। ४ भाव से बैठने को निकले तब आवस्सही ३ वार कहे, बैठने के पहिले शक्रेन्द महाराज की आज्ञा

मागे, बैठते समय वोसिरे ३ बार कहे और बैठ कर आते समय निस्सही ३ बार कहे। जल्दी सूख जावे इस तरह वेठे।

गुप्ति के चार-चार भेद .—१ द्रव्य से आरम्भ समारम्भ मे मन न प्रवर्तावे, २ क्षेत्र से समस्त लोक मे, ३ काल से जाव जीव तक, ४ भाव से विषय कषाय, आर्त-रौद्र राग-द्वेप मे मन न प्रवर्तावे।

वचन गुप्ति के ४ भेद :—१ द्रव्य से—चार विकथा न करे, २ क्षेत्र से—समग्र लोक मे, ३ काल से—जाव जीव तक. ४ भाव से—सावद्य (राग द्वेषविषय कपाय युक्त) वचन न बोले।

काया गुप्ति के ४ भेद —१ द्रव्य से—शरीर की सुश्रुपा(सेवा-शोभा) नही करे, २ क्षेत्र से—समस्त लोक मे, ३ काल से—जावजीव तक, ४ भाव से—सावद्य योग (पापकारी कार्य) न प्रवर्तावे (न सेवन करे)।

५२ अनाचार

(दशवैकालिक सूत्र, तीसरा अध्ययन)

१ मुनि के निमित्त तैयार किया हुआ आहार, वस्त्र, पात्र तथा मकान भोगवे तो अनाचार लागे ।

२ मुनि के निमित्त खरीदे हुए आहार, वस्त्र, पात्र तथा मकान भोगवे तो अनाचार लागे ।

३ नित्य एक घर का आहार भोगवे तो अनाचार लागे ।

४ सामने लाया हुआ आहार भोगवे तो अनाचार लागे ।

५ रात्रि भोजन करे तो आहार भोगवे तो अनाचार लागे

६ देश स्नान (शरीर को पोछ कर तथा सारे शरीर का स्नान करके) करे तो अनाचार लागे ।

७ सचित अचित पदार्थो की सुगन्ध लेवे तो अना० लागे ।

८ फूल आदि की माला पहिने तो अना० लागे

९ पखे आदि से पवन (हवा) चलावे तो अना० लागे

१० तेल, घी आदि आहार का संग्रह करे तो अना० लागे

११ गृहस्थ के वासन में भोजन करे तो अना० लागे

१२ राजपिण्ड-वलिष्ट आहार लेवे तो अना० लागे

१३ दानशाला मे से आहार आदि लेवे तो अना० लागे

१४ शरीर का बिना कारण मर्दन करे-करावे अना० लागे ।

१५ दातुन करे तो अना० लागे

१६ गृहस्थो की सुख शाता पूछा करे, खुशामद करे तो अनाचार लागे ।

१७ दर्पण में अगोपाग निरखे तो अना० लागे
१८ चौपड, शतरज आदि खेल खेले तो अना० लागे
१९ अर्थोपार्जन जुगार सट्टा आदि करे तो अना० लागे
२० धूप आदि के निमित्त छत्री आदि रक्खे तो अना० लागे
२१ वैद्यगिरी करके आजीविका चलावे तो अना० लागे
२२ जूतिये, मोजे आदि पैरो मे पहिने तो अना० लागे
२३ अग्निकाय आदि का आरम्भ (ताप आदि) करे तो अना० लागे।
२४ गृहस्थो के यहा गद्दी, तकियादि पर बैठे तो अना० लागे।
२५ गृहस्थो के यहा पलग, खाट पर बैठे तो अना० लागे।
२६ मकान की आज्ञा देने वाले के यहां से (शय्यान्तर) बहोरे तो अनाचार लागे।
२७ बिना कारण गृहस्थो के यहा बैठ कर कथादि करे तो अनाचार लागे।
२८ विना कारण शरीर पर पीठी, मालिश आदि करे तो अनाचार लागे।
२९ गृहस्थ लोगो की वैयावच्च (सेवा) आदि करे तो अनाचार लागे।
३० अपनी जाति, कुल आदि बता कर आजीविका करे तो अनाचार लागे।
३१ सचित्त पदार्थ लालोत्री, कच्चा पानी आदि भोगवे तो अनाचार लागे।
३२ शरीर मे रोगादि होने पर गृहस्थो की सहायता लेवे तो अनाचार लागे।
३३ मूला आदि सचित लोलोत्री, ३४ सेलडी के टुकडे, ३५ सचित कन्द, ३६ सचित मूल, ३७ सचित फल-फूल, ३८ सचित बीज

आदि, ३९ सचित नमक, ४० सेंधा नमक, ४१ सांभर नमक, ४२ धूलखारा का नमक, ४३ समुद्र का नमक, ४४ काला नमक ये सर्व सचित नमक भोगवे (खावे व वापरे) तो अनाचार लागे।

४५ कपड़े को धूप आदि से सुगन्धमय बनावे तो अनाचार लागे।

४६ भोजन करके वमन करे तो अनाचार लागे।

४७ बिना कारण रेचन (जुलाब) आदि लेवे तो अनाचार लागे।

४८ गुह्य स्थानो को धोवे, साफ करे तो अनाचार लागे।

४९ आंख में अंजन, सुरमा आदि लगावे तो अनाचार लागे।

५० दांतो को रंगावे तो अनाचार लागे।

५१ शरीर को तेल आदि लगाकर सुन्दर बनावे तो अनाचार लागे।

५२ शरीर की शोभा के लिए बाल, नख आदि उतारे तो अनाचार लागे।

उपरोक्त ५२ अनाचारो को टाल कर साधु-साध्वी सदा निर्मल चारित्र पाले।

आहार के १०६ दोष

मुनि १०६ दोष टाल कर गोचरी करे यह भिन्न-भिन्न सूत्रो के आधार से जानना। आचारांग, सूअगडांग तथा निशीथ सूत्र के आधार से ४२ दोष कहे जाते है।

१ आधाकर्मी—मुनि के निमित आरम्भ करके बनाया हुआ।

२ उद्देशिक—अन्य मुनि के निमित बनाया हुआ आधाकर्मी आहार।

३ पूति कर्म—निर्वद्य आहार मे आधाकर्मी अंश मात्र मिला हुआ होवे वह तथा रसोई मे साधु के निमित्त कुछ अधिक बनाया हुआ होवे।

४ मिश्र दोष—कुछ गृहस्थ निमित्त, कुछ साधु निमित्त बनाया हुआ मिश्र आहार।

५ ठवणा दोष—साधु निमित रक्खा हुआ आहार।

६ पाहुड़िय—मेहमान के लिए बनाया हुआ (साधु निमित्त) (मेहमानो की तिथि बदली होवे)।

७ प्रावार—जहा अन्धेरा गिरता हो, वहा साधु निमित खिड़की आदि करा देवे।

८ क्रीत – साधु निमित्त खरीद कर लाया हुआ।

९ पामिच्चे—साधु निमित्त उधार लाया हुआ।

१० परियडे—साधु निमित्त वस्तु बदले मे देकर लाया हुआ।

११ अभिद्रुत—अन्य स्थान से सामने लाया हुआ।

१२ भिन्नं—कपाट चक आदि उघाड कर दिया हुआ।

१३ मालोहड—माल (मेढ़ी) ऊपर से कठिनता से उतारा जा सके वह।

१४ अच्छीज्जे निर्बल पर दबाव डाल कर बलपूर्वक दिलावे वह।

१५ अणिसिट्ठे—हिस्से की चीज मे से कोई देना चाहे, कोई नही चाहे ऐसी वस्तु।

१६ अज्जोयर—गृहस्थ साधु निमित्त अपना आहार अधिक बनाया हुआ होवे।

१७ धाई दोष—गृहस्थ के बच्चो को खेला कर लिया हुआ।

१८ दुई दोष—दूतिपना (समाचार आदि लाना व ले जाना) करके लिया हुआ।

१९ निमित्त—भूत व भविष्य का निमित्त कहकर लिया हुआ।

२० आजीव—जाति, कुल आदि का गौरव बता कर लिया हुआ।

२१ वणीमग्ग—भिखारी समान दीनता से याचा (मांगा) हुआ।

२२ तिगछ—औषधि (दवा) आदि बता कर लिया हुआ।

२३ कोहे—क्रोध करके, २४ माने—मान कर, २५ माये—कपट करके, २६ लोभे—लोभ करके लिया हुआ।

२७ पुव्वं पच्छ सथुव—पहले तथा बाद में देने वाले की स्तुति करके लिया हुआ।

२८ विज्जा—गृहस्थों को विद्या बता कर लिया हुआ।

२९ मन्त्त—मन्त्र तन्त्र आदि वताकर लिया हुआ।

३० चून्न—रसायन आदि (एक वस्तु में दूसरी वस्तु मिला कर तीसरी वस्तु बनाना) सिखा कर लिया हुआ।

३१ जोगे—लेप, वशीकरण आदि बताकर लिया हुआ।

३२ मूल कर्म्म—गर्भपात आदि की दवा बता कर लिया हुआ।

उपरोक्त दोषो में से प्रथम १६ दोष "उद्गमन" अर्थात् भद्रिक श्रावक भक्ति के कारण अज्ञान साधुओं को लगाते है। पीछे के १६ दोष 'उत्पात' है। ये मुनि स्वयं लगा लेते है।

अब दश दोष नीचे लिखे जाते है, जो साधु और गृहस्थ दोनो के प्रयोग से लगाये जाते है।

३३ सकिए—जिसमे साधु तथा गृहस्थ को शुद्धता (निर्दोषता) की शङ्का होवे।

३४ मक्खिये—वहोराने वाले के हाथ की रेखा अथवा बाल सचित से भीजे हुए होवे तो।

३५ निक्खित्ते—सचित्त वस्तु पर अचित्त आहार रक्खा होवे।

३६ पहिये—अचित्त वस्तु सचित्त से ढकी होवे।

३७ मिसीये—सचित्त-अचित्त वस्तु मिली होवे।

३८ अपरिणिये—पूरा अचित्त आहार जो न हुआ हो।

३९ सहारिये—एक बर्तन से दूसरे बर्तन (नही वपराया हुआ) मे लेकर दिया हुआ।

४० दायगो—अगोपाग से हीन ऐसे गृहस्थो से लेवे कि जिन्हे चलने-फिरने से दु ख होता हो।

४१ लीत्त—तुरन्त के लीपे हुए आगन पर से लिया हुआ।

४२ छडिये—वहोरावने के समय वस्तु नीचे गिरती टपकती होवे।

आवश्यक सूत्र मे बताये हुए ५ दोष

१ गृहस्थो के दरवाजे आदि खुला कर लेवे तो।

२ गौ कुत्ते आदि के लिये रक्खी हुई रोटी लेवे तो।

३ देवी-देवता के नैवेद्य व वलिदान निमित्त वनी हुई वस्तु लेवे तो।

४ बिना देखी चीज-वस्तु लेवे तो।

५ प्रथम निरस आहार पर्याप्त आया हुआ होवे तो भी सरस आहार निमित्त निमन्त्रण आने पर रस लोलुपता से आहार ले लेवे तो।

श्री उत्तराध्ययन सूत्र में बताये हुए २ दोष

१ अन्य कुल में से गोचरी नही करते हुए अपने सज्जन सम्बन्धियों के यही से गोचरी करे तो।

२ बिना कारण आहार ले व बिना कारण आहार त्यागे।

६ कारण से आहार लेवे	६ कारण से आहार छोड़े
क्षुधा वेदनी सहन नही होने से	रोगादि हो जाने से
आचार्यादिकी वैयावच्च हेतु से	उपसर्ग आने से
ईर्या शोधन के लिये।	ब्रह्मचर्य के नही पलने पर
संयम निर्वाह निमित्त	जीवो की रक्षा के लिये
जीवों की रक्षा करने के लिये	तपश्चर्या के लिये
धर्म कथादि कहने के लिये	अनशन (संथारा) करने के लिये

श्री दशवैकालिक सूत्र मे बताये हुए २३ दोष

१ जहां नीचे दरवाजे मे से होकर जाना पड़े, वहां गोचरी करने से।

२ जहां अन्धेरा गिरता हो उस स्थान पर गोचरी करने से।

३ गृहस्थो के द्वार पर बैठे हुए बकरे-बकरी।

४ बच्चे-बच्ची।

५ कुत्ते।

६ गाय के बछडे आदि को उलांघ कर जावे तो।

७ अन्य किसी प्राणी को उलांघ कर जाने से।

८ साधु को आया हुआ जान कर गृहस्थ संघटे (सचितादि) की चीजो को आगे-पीछे कर देवे, वहाँ से गोचरी करने पर।

९ दान निमित्त बनाया हुआ।

१० पुण्य निमित्त बनाया हुआ।

११ रङ्क-भिखारी के लिए बनाया हुआ।

१२ बाबा साधु के लिए बनाया हुआ आहार लेवे तो ।
१३ राजपिण्ड (रईसानी-बलिष्ट) आहार लेवे तो ।
१४ शय्यान्तर-पिंड मकानदाता के यहाँ से लेवे तो ।
१५ नित्य-पिंड हमेशा एक ही घर से आहार लेवे तो ।
१६ पृथ्वी आदि सचित्त चीजो से लगा हुआ लेवे तो ।
१७ इच्छा पूर्ण करने वाली दानशालाओ से आहार लेवे तो ।
१८ तुच्छ वस्तु (कम खाने मे आवे और अधिक परठनी पड़े) गोचरी मे लेवे तो ।
१९ आहार देने के पहिले सचित्त पानी से हाथ धोया होवे तथा वहोराने के बाद सचित्त पानी से हाथ धोवे तो ।
२० निषिद्ध कुल (मद्य मासादि अभक्ष्य भोजी) का आहार लेवे तो ।
२१ अप्रतीतकारी (स्त्री-पुरुष दुराचारी हो, ऐसे कुल का) आहार लेवे तो ।
२२ जिसने अपने घर पर आने के लिये मना किया होवे ऐसे गृहस्थ के घर का आहार लेवे तो ।
२३ मदिरादि वस्तु की गोचरी करे तो महादोष है ।

श्री आचारांग सूत्र मे बताये हुए ८ दोष

१ मेहमान निमित्त बनाये हुए आहार मे से उनके जीमने के पहिले आहार लेवे तो ।
२ त्रस जीवो का मास (जो सर्वथा निपिद्ध है) लेवे तो महादोष ।
३ पुण्यार्थ धन-धान्य मे से बनाया हुआ आहार लेवें तो
४ रसोई (ज्योनार-जीमनवार) मे से आहार लेवें तो ।
५ जिस घर पर बहुत से भिखारी भोजनार्थी इकट्ठे हुए हों उस घर मे से आहार लेवे तो ।
६ गरम आहार को फूंक देकर वहोराया हुआ ।

७ भूमि गृह (भोयरा-ऊडी भकारी) में से निकाला हुआ आहार लेवे तो।

८ पंखे आदि से ठण्डे किये हुए आहार लेवे तो।

श्री भगवती सूत्र में बताये हुए १२ दोष

१ संयोग दोष—आये हुए आहार को मनोज्ञ वनाने के लिये अन्य चीजे मिलावे (दूध में शक्कर आदि मिलावे तो।

२ द्वेष-दोष—निरस आहार मिलने से घृणा लावे तो।

३ राग द्वेष—सरस ,, ,, खुशी ,

४ अधिक प्रमाण मे (ठूँस-ठूँस कर) आहार करे तो।

५ कालातिक्रम दोष—पहले प्रहर में लिये हुए का चौथे प्रहर में आहार करे तो।

६ मार्गातिक्रम दोष—२ गाउ से अधिक दूर ले जाकर आहार करे तो।

७ सूर्योदय पहले सूर्योदय पश्चात् आहार करे तो।

८ दुष्काल तथा अटवी मे दानशालाओ का आहार लेवे तो

९ ,, मे गरीबी के लिये किया हुआ आहार ,,

१० ग्लान-रोगी प्रमुख ,, ,, ,, ,,

११ अनाथो के लिये ,, ,, ,, ,,

१२ गृहस्थ के आमत्रण से उसके घर जाकर आहार लेवे तो

श्री प्रश्नव्याकरण सूत्र मे बताये हुए ५ दोष

१ मुनि के निमित्त आहार का रूपान्तर करके देवे तो।

२ ,, ,, ,, पर्याय पलट ,, ,,

३ गृहस्थ के यहाँ से अपने हाथ द्वारा आहार लेवे तो।

४ मुनि के निमित्त भडारिये आदि के अन्दर से निकाल कर दिया हुआ आहार लेवे तो।

५ मधुर वचन बोल कर (खुशामद करके) आहार की याचना करके लेवे तो।

श्री निशीथसूत्र मे बताये हुए ६ दोष

१ गृहस्थ के यहा जाकर 'इस बर्तन मे क्या है?' इस प्रकार पूछ-पूछ कर याचना करे तो।
२ अनाथ, मजूर के पास से दीनता पूर्वक याचना करके आहार लेवे तो।
३ अन्य तीर्थी (बाबा-साधु) की भिक्षा मे से याचकर आहार लेवे तो।
४ पासत्था (शिथिलाचारी) के पास से याचकर लेवे तो।
५ जैन मुनियो की दुर्गछा करने वाले कुल मे आहार ,,
६ मकान की आज्ञा देनेवाले को (शय्यान्तर) साथ लेकर उसकी दलाली से आहार लेवे तो।

श्री दशाश्रुत स्कन्ध सूत्र मे बताये हुए २ दोष

१ बालक निमित्त बनाया हुआ आहार लेवे तो।
२ गर्भवती ,, ,, ,, ,, ,,

श्री वृहत्कल्पसूत्र मे बताया हुआ १ दोष

१ चार प्रकार का आहार रात्रि को वासी रख कर दूसरे रोज भोगवे तो दोष।

एव ४२+५+२+२३+८+१२+५+६+२+१=१०६।
इनमे ५ माडला का और १०१ गोचरी का दोप जानना।

साधु-समाचारी

साधुओं के दिन और रात्रि कृत्य

(श्री उत्तराध्ययन सूत्र, अध्ययन २६)

समाचारी १० प्रकार की :

१ आवस्सिय, २ निसिहिय, ३ आपुच्छणा, ४ पडिपुच्छणा, ५ छदणा, ६ इच्छाकार, ७ मिच्छाकार, ८ तहत्कार, ९ अब्भुठणा, १० उप-संपया समाचारी।

१ आवस्सिय: साधु आवश्यक—जरूरी (आहार-निहार, विहार) कारण से बाहर जावे तब 'आवस्सिय' शब्द बोल कर निकले।

२ निसिहिय : कार्य समाप्त होने पर लौट कर जब पुनः उपाश्रय में आवे तब 'निसिहिय' शब्द बोल कर आवे।

३ आपुच्छणा : गोचरी, पडिलेहण आदि अपने सर्व कार्य गुरु की आज्ञा लेकर करे।

४ पडिपुच्छणा : अन्य साधुओं का प्रत्येक कार्य गुरु की आज्ञा लेकर करना।

५ छंदणा : आहार-पानी गुरु की आज्ञानुसार दे देवे और अपने भाग में आये हुए आहार को भी गुरुजनो आदि को आमन्त्रित करने के वाद खावे।

६ इच्छाकार : (पात्रलेपादि) प्रत्येक कार्य में गुरु की इच्छा पूछ कर करे।

७ मिच्छाकार : यत्किंचित् अपराध के लिये गुरु समक्ष आत्म-निन्दा करके 'मिच्छामि दुक्कड़' दे।

८ तहत्कार : गुरु के वचन को सदा 'तहत्' प्रमाण कह कर प्रसन्नता से कार्य करे।

६ अब्भुठणा : गुरु, रोगी, तपस्वी आदि की ग्लानता (घृणा) रहित वैयावच्च करे।

१० उपसंपया जीवन पर्यन्त गुरुकुल वास करे (गुरु आज्ञानुसार विचरे)।

दिन कृत्य

चार पहर दिन के और चार पहर रात्रि के होते है। दिन तथा रात्रि के चौथे भाग को पहर कहना।

(१) दिन निकलते ही प्रथम पहर के चौथे भाग मे सब उपकरणो का पडिलेहण करे, (२) तत्पश्चात् गुरु को पूछे कि मैं वैयावच्च करूँ अथवा सज्झाय ? गुरु की आज्ञा मिलने पर वैसा ही १ पहर तक करे, (३) दूसरे पहर मे ध्यान (किये हुए स्वाध्याय का चिंतवन) करे, (४) तीसरे पहर मे गोचरी करे, प्रासुक आहार लाकर गुरु को बतावे, सविभाग करे और वड़ो को आमन्त्रित करके आहार करे, (५) चौथे पहर के ३ भाग तक स्वाध्याय करे, (६) चौथे भाग मे उपकरणो का पडिलेहण करे तथा परठाने की भूमि भी पडिलेहे, तत्पश्चात् (७) देवसी प्रतिक्रमण करे (८) आवश्यक करे)।

रात्रि कृत्य

देवसी प्रतिक्रमण करने के बाद प्रथम पहर मे असज्झाय टाल कर स्वाध्याय करे। दूसरे पहर मे ध्यान करे, स्वाध्याय का अर्थ चितवे तत्पश्चात् निद्रा आवे तो तीसरे पहर मे सविधि यत्नपूर्वक सथारा-सस्तरी कर स्वल्प निद्रा लेकर चौथे पहर की शुरुआत मे उठे। निद्रा के दोष टालने के निमित्त काउसग्ग करे, पौन पहर तक स्वाध्याय सज्झाय करे। चौथे पहर मे चौथे (अन्तिम) भाग मे रायसि प्रतिक्रमण करे पश्चात् गुरु-वन्दन करके पच्चक्खाण करे।

अहोरात्रि की घड़ियों का यन्त्र

(श्री उत्तराध्ययन सूत्र, २६ वां अध्ययन)

७ श्वासोश्वास का १ थोब, ७ थोब का १ लव, ३८।। लव की १ घडी (२४ मिनिट), प्रतिदिन २।। लव और २।। थोव दिन बढता और घटता है, इसका यन्त्र :—

	दिन कितनी घडी का				रात्रि कितनी घडी की			
मास	वदी	७ अ०	शुदि	७ पूर्णिमा	विदि	७ अ०	शु०	७ पू०
आषाढ	३४।।	३५	३५।।	३६	२५।।	२५	२४।।	२४
श्रावण	३५।।	३५	३४।।	३४	२४।।	२५	२५।।	२६
भाद्रपद	३२।।	३३	३२।।	३२	२६।।	२७	२७।।	२८
आश्विन	३१।।	३१	३०।।	३०	२८।।	२९	२९।।	३०
कार्तिक	२९।।	२९	२८।।	२८	३०।।	३१	३१।।	३२
मार्गशीर्ष	२७।।	२७	२६।।	२६	३२।।	३३	३३।।	३४
पौष	२५।।	२५	२४।।	२४	३४।।	३५	३५।।	३६
माघ	२४।।	२५	२५।।	२६	३५।।	३५	३४।।	४३
फाल्गुन	२६।।	२७	२७।।	२८	३३।।	३३	३२।।	३२
चैत्र	२८।।	२९	२९।।	३०	३१।।	३१	३०।।	३०
वैशाख	३०।।	३१	३१।।	३२	२९।।	२९	२८।।	२८
ज्येष्ठ	३२।।	३३	३३।।	३४	२७।।	२७	२६।।	२६

दिन-पहर माप का यन्त्र

(श्री उत्तराध्ययन सूत्र, अध्ययन २६)

दिन मे प्रथम दो पहर में माप उत्तर तरफ मुंह रखकर लेवे और पिछले दो पहर मे माप दक्षिण तरफ मुंह रखकर लेवे। दाहिने पैर के घुटने तक की छाया को अपने पगले (पावने) और आगुल से मापे। इस प्रकार पोरसी तथा पोन पोरसी का माप पैर और आगुल बताने वाला यन्त्र :—

१ ली और ४ थी	१ पोरसी				पोन पोरसी			
मास	विदि ७ अ.		शुदि ७ पू०		विदि ७अ.		शु. ७ पू०	
आषाढ	प. आ.	प. आ.	प. आ,	प. आ.	प. आ.	प. आ.	प. आ.	प. आ.
	२-३	२-२	२-१	२-०	२-९	२-८	२-७	२-६
श्रावण	२-१	२-२	२-३	२-४	२-७	२-८	२-९	२-१०
भाद्रपद	२-५	२-६	२-७	२-८	३-१	३-२	३-३	३-४
आश्विन	२-९	२-१०	२-११	३-०	३-५	३-६	३-७	३-८
कार्तिक	३-१	३-२	३-३	३-४	३-९	३-१०	३-११	४-०
मार्गशीर्ष	३-५	३-६	३-७	३-८	४-३	४-४	४-५	४-६
पौष	३-९	३-१०	३-११	४-०	४-७	४-८	४-९	४-१०
माघ	३-११	३-१०	३-९	३-८	४-९	४-८	४-७	४-६
फाल्गुन	३-७	३-६	३-५	३-४	४-३	४-२	४-१	४-०
चैत्र	३-३	३-२	३-१	३-०	३-११	३-१०	३-९	३-८
वैशाख	२-११	२-१०	२-९	२-८	३-७	३-६	३-५	३-४
ज्येष्ठ	२-७	२-६	२-५	२-४	३-१	३-०	२-११	१-१०

घुटना (ढीचण) के बदले बेत से माप करना हो तो ऊपर से आधा समझना। ★

रात्रि-पहर देखने (जानने) की विधि

(श्री उत्तराध्ययन सूत्र, अध्ययन २६)

जिस काल के अन्दर जो-जो नक्षत्र समस्त रात्रि पूर्ण करता होवे व नक्षत्र के चौथे भाग में आता हो, उस समय ही पोरसी आती है। रात्रि की चौथी पोरसी चरम (अन्तिम) चौथे भाग को (दो घटी रात्रि को) पाउस (प्रभात) काल कहते है। इस समय सज्झाय से निवृत होकर प्रतिक्रमण करे। नक्षत्रा निम्नलिखित अनुसार है —

श्रावण में—१४ दिन उत्तराषाढ़ा, ७ दिन अभिच, ८दिन श्रवण, १ दिन घनिष्टा।

भाद्रपद में—१४ दिन धनिष्टा, ७ दिन शतभिखा, ८ दिन पूर्वा भाद्रपद, १ दिन उत्तरा भाद्रपद।

आश्विन मे—१४ दिन उत्तरा भाद्रपद, १५ दिन रेवती, १ दिन अश्वनी।

कार्तिक में—१४ दिन अश्वनी, १५ दिन भरणी, १ दिन कृतिका।

मृगशर मे—१४ दिन कृतिका, १५ दिन रोहिणी, १ दिन मृगशर।

पौष में—१४ दिन मृगशर, ८ दिन आर्द्रा, ७ दिन पुनर्वसु, १ दिन पुष्य।

माघ मे—१४ दिन पुष्य, १५ दिन अश्लेषा, १ दिन मघा।

फाल्गुन में—१४ दिन मघा, १५ दिन पूर्वा फाल्गुनी, १ दिन उत्तरा-फाल्गुनी।

चैत्र में—१४ दिन उत्तराफाल्गुनी १५ दिन हस्ति, १ दिन चित्रा।

वैशाख में—१४ दिन चित्रा, १५ दिन स्वाति, १ दिन विशाखा।

ज्येष्ठ में—१४ दिन विशाखा, १५ दिन अनुराधा, १ दिन ज्येष्ठा।

आषाढ़ मे—१४ दिन ज्येष्ठा, १५ दिन मूल और १ दिन पूर्वाषाडा।

अन्तिम एकेक दिन है, वह नक्षत्र पूर्णिमा के दिन होवे तो उस महीने का अन्तिम दिन समझना।

१४ पूर्व का यन्त्र

१४ पूर्व के नाम	पद संख्या	कर्ता	वस्तु	चूलावस्तु	शाही (स्याही) हस्ति	विषय-वर्णन
उत्पाद	क्रोड	पांचवें गणधर श्री सुधर्मा स्वामी	१०	४	१	सर्व द्रव्य, गुण पर्याय की उत्पत्ति और नाश
अगणीय	७० लाख		१४	१२	२	स द्र. गु. प का ज्ञान
वीर्य	६० ,,		८	८	४	जीवोके वीर्य का वर्णन
अस्ति-नास्ति	१ क्रोड़		१८	१०	८	अस्ति - नास्ति का स्वरूप और स्याद्वाद
ज्ञान प्रमाद	२ ,,		१२	०	१६	५ ज्ञान का व्याख्यान
सत्य ,,	२६ ,,		२	०	३२	सत्य सयम का ,,
आत्मा ,,	१ क्रोड ८०ला		१६	०	६४	नय प्रमाण दर्शन सहित आत्म स्वरूप
कर्म ,	८४ लाख		३०	०	१२८	कर्म प्रकृति, स्थिति अनुभाग, मूल उत्तर प्र.

प्रत्याख्यान १क्रोड़ १ हू० प्रमाद	२०	०	२५६	प्रत्याख्यान का प्रतिपादन
विद्या प्रमाद २६ क्रोड़	१५	०	५१२	विद्या के अतिशय का व्याख्यान
कल्याण प्रमाद १ क्रोड़	१२	०	१०२४	भगवान के क. का व्या.
प्राणावाय,, ६ ,,	१३	०	२०४८	भेद,स. प्रा. के वि. का ,,
क्रियावशा० १ क्रोड़ ५०ला०	३०	०	००९६	क्रिया का व्याख्यान
लोक बिन्दुसार ९६ लाख	२५	०	८१९२	विन्दु में लोक स्वरूप, सर्व अक्षर सन्निपात

अम्बाड़ी सहित हाथी के समान स्याही के ढगले से १ पूर्व लिखाया जाता है एवं १४ लिखने के लिए कुल १६३८३ हाथी प्रमाण स्याही की जरूरत होती है। इतनी स्याही से जो लिखा जाता है, उस ज्ञान को १४ पूर्व का ज्ञान कहते है।

सम्यक् पराक्रम के ७३ बोल

(श्री उत्तराध्ययन सूत्र, २६ वा अध्ययन)

१ वैराग्य तथा मोक्ष पहुँचने की अभिलाषा।
२ विषय-भोग की अभिलाषा से रहित होना।
३ धर्म करने की श्रद्धा।
४ गुरु व स्वधर्मी की सेवा-भक्ति करना।
५ पाप की आलोचना करना।
६ आत्म-दोषो की आत्म-साक्षी से निन्दा करना।
६ गुरु के समीप पाप की निन्दा करना।
८ सामायिक (सावद्य पाप से निवृत होने की मर्यादा) करे।
९ तीर्थंकरो की स्तुति करे।
१० गुरु को वन्दन करे।
११ पाप निर्वतन-प्रतिक्रमण करे।

१२ काउसग्ग करे, १३ प्रत्याख्यान करे, १४ सन्ध्या समय प्रतिक्रमण करके नमोत्थुण कहे, स्तुति मङ्गल करे, १५ स्वाध्याय का काल प्रतिलेखे, १६ प्रायश्चित्त लेवे, १७ क्षमा मागे, १८ स्वाध्याय करे, १९ सिद्धान्त की वाचना देवे, २० सूत्र-अर्थ के प्रश्न पूछे, २१ बारम्बर सूत्र ज्ञान फेरे, २२ सूत्रार्थ चिन्तवे २३, धर्म-कथा कहे, २४ सिद्धान्त की आराधना करे, २४ एकाग्र शुभ मन की स्थापना करे २६ सतरह भेद से सयम पाले, २७ बारह प्रकार का तप करे, २८ कर्म टाले, २९ विषय सुख टाले, ३० अप्रतिबन्धपना करे, ३१ स्त्री-पुरुष नपुंसक रहित स्थान भोगवे, ३२ विशेषत· विषय आदि से निवर्ते, ३३ अपना तथा अन्य का लाया हुआ आहार

वस्त्रादि इकट्ठे करके बांट लेवे इस प्रकार के संभोग का पच्चखाण करे, ३४ उपकरण का पच्चखाण करे, ३५ सदोष आहार लेने का पच्चखाण करे, ३६ कषाय का पच्चखाण करे, ३७ अशुभ योग का पच्च०, ३८ शरीर सुश्रूषा का पच्च०, ३९ शिष्य का पच्च०, ४० आहार पानी का पच्च०, ४१ दिशा रूप अनादि स्वभाव का पच्च०, ४२ कपट रहित यति के वेष और आचार मे प्रवर्ते, ४३ गुणवन्त साधु की सेवा करे, ४४ ज्ञानादि सर्वगुण सम्पन्न होवे, ४५ राग-द्वेप रहित प्रवर्ते, ४६ क्षमा सहित प्रवर्ते, ४७ लोभ रहित प्रवर्ते, ४८ अहङ्कार रहित प्रवर्ते, ४९ कपट रहित (सरल-निष्कपट) प्रवर्ते, ५० शुद्ध अन्त करण (सत्यता) से प्र०, ५१ करण सत्य (सविधि क्रिया काण्ड करता हुआ) प्र०, ५२ योग (मन, वचन, काया) सत्य प्र०, ५३ पाप से मन निवृत कर मन गुप्ति से प्र०, ५५ काय-गुप्ति से प्र०, ५६ मन में सत्य भाव स्थापित करके प्र०, ५७ वचन (स्वाध्यायादि) पर सत्य भाव स्थापित करके प्रवर्ते, ५८ काया को सत्य भाव से प्रवर्तावे, ५९ श्रुत ज्ञानादि सहित होवे, ६० समकित सहित होवे, ६१ चारित्र सहित होवे, ६२ श्रोत्रेन्द्रिय, ६३ चक्षुन्द्रिय, ६४ घ्राणेन्द्रिय, ६५ रसेन्द्रिय, ६६ स्पर्शेन्द्रिय का निग्रह करे, ६७-७० क्रोध, मान, माया, लोभ जीते, ७१ राग-द्वेष और मिथ्यात्व को जीते, ७२ मन, वचन, काया के योगों को रोकते हुए शैलेषी अवस्था धारण करके और ७३ सब कर्म रहित होकर मोक्ष पहुचे।

एव आत्मा ७३ बोलो के द्वारा क्रमश: मोक्ष प्राप्त करके शीतलीभूत होती है।

१४ राजु लोक

लोक असख्यात क्रोड़ाक्रोड योजन के विस्तार मे है, जिसमे पञ्चास्तिकाय भरी हुई है। अलोक मे आकाश सिवाय कुछ नही है। लोक का प्रमाण बताने के लिये 'राजु' सज्ञा दी जातो है।

३,८१,१२,६७० मन का एक भार। ऐसे १००० भार वजन के एक गोले को ऊँचा फेके तो ६ महोने, ६ दिन, ६ पहर, ६ घडी, ६ पल मे जितना नीचे आवे उतने क्षेत्र को १ राजु कहते है। ऐसे १४ राजु का लम्बा (ऊँचा) यह लोक है।

'राजु' के ४ प्रकार

(१) घनराज—लम्बाई, चौडाई, एकेक राजु, (२) परतर राज—घन राज का चौथा भाग, (३) सूचि राज—परतर राज का चौथा भाग (४) खण्ड राज—सूचि राज का चौथा भाग।

अधो लोक ७ राजु जाडा (ऊँचा) है, जिसमे एकेक राजु की जाडी ऐसी ७ नरक है।

नाम	जाडी	चौडाई	घनराज	परतरराज	सूचिराज	खडराज
रत्न प्रभा	१ राजु	१ राजु	१ राजु	४ राजु	१६ राजु	६४ राजु
शर्कर ,,	,,	२॥ ,,	६। ,,	२५ ,,	१०० ,,	४०० ,,
बालु ,,	,,	४ ,,	१६ ,,	६४ ,,	२५६ ,,	१०२४ ,,
पक ,,	,,	५ ,,	२५ ,,	१०० ,,	·०० ,,	१६०० ,,
धूम ,,	,,	६ ,,	३६ ,,	१४४ ,,	५७६ ,,	२३०४ ,,
तम ,,	,,	६॥ ,,	४२। ,,	१६९ ,,	६७६ ,,	२७०४ ,,
तमतमा ,	,,	७ ,,	४९ ,,	१९६ ,,	७८४ ,,	३१३६ ,,

अधोलोक में कुल १७५॥ घनराज, ७०२ परतर राज, २८०८ सूचि राज, ११२३२ खण्ड राज है।

१८०० योजन जाड़ा व १ राज विस्तार वाला तिर्च्छा लोक है, जिसमे असख्यात द्वीप समुद्र (मनुष्य तिर्यञ्च के स्थान) और ज्योतिषी देव है। तिर्च्छा और उर्ध्व लोक मिलकर ७ राजु है।

समभूमि से १॥ राजु ऊँचा १-२ देवलोक है, यहा से १ राजु ऊँचा तीसरा-चौथा देवलोक है, यहां से ०॥ राजु ऊँचा ब्रह्म देवलोक है, ०। राजु ऊँचा लाँतक देवलोक, यहाँ से ०। राजु ऊँचा सातवाँ देवलोक, ०। राजु ऊचा आठवाँ देव०, ०॥ राजु ऊंचा ९-१०वाँ देवलोक, ०॥ राजु ऊँचा ११-१२ देवलोक, १ राजु ऊंचा नव ग्रैवेयक १ राजु ऊंचा ५ अनुत्तर विमान आते है। इनका क्रमशः बढता घटता विस्तार यन्त्रानुसार है :—

स्थान	जाड़ा	विस्तार	घनराज	परतरराज	सूचिराज	खंडराज
सम भूमिसे	०॥	१	०॥	२	८	३२
यहां से	०॥	१॥	१ १/८	४।	१८	७२
,,	०।	२	१	४	१६	६४
१-२ देव० से०	०।	२॥	१॥ १/१६	६।	२५	१००
यहां से	०॥	३	४॥	१८	७२	२८८
३-४ देव० से०	०॥	४	८	३२	१२८	५१२
५ वा ,,	०।.।	५	१८॥।	७५	३००	१२००
६ ट्ठा ,,	०।	५	६।	२५	१००	४००
७ वां ,,	०।	४	४	१६	६४	२५६
८ वां ,,	०।	४	४	१६	६४	२५६
९-१० ,,	०॥	३	४॥	१८	७२	२८८
११-१२ ,,	०॥	२॥	३ १/८	१२॥	५०	२००
यहां से ,,	०।	२॥	१॥ १/१६	६।	२५	१००
नव ग्रैवेयक	०॥।	२	३	१२	४८	१९२
यहां से	०॥	१॥	१ १/८	४॥	१८	७२
५ अनु. वि.	०॥	१	०॥	२	८	३२

कुल उर्ध्व लोक के ६३॥ घन राज हुए और समस्त लोक के २३९ घनराज हुए।

नारकी का नरक वर्णन

नरक के २१ द्वार :—१ नाम, २ गोत्र, ३ (जाड़ापना) ऊंचाई, ४ चौड़ाई, ५ पृथ्वी पिण्ड, ६ करण्ड, ७ पाथड़ा, ८ आन्तरा, ९ पाथडा-पाथड़ा का आन्तरा (अन्तर), १० घनोदधि, ११ घनवायु. १२ तनवायु, १३ आकाश, १४ नरक-नरक का अन्तर, १५ नरकवासा, १६ अलोक अन्तर, १७ वलिया, १८ क्षेत्र वेदना, १९ देव वेदना, २० वैक्रिय, २१ अल्पबहुत्व द्वार।

नाम द्वार : १ घम्मा, २ वशा, ३ शीला, ४ अञ्जना, ५ रीठ्ठा, ६ मघा ७ माघवती।

गोत्र द्वार . १ रत्न प्रभा, २ शर्करा प्रभा, ३ वालुप्रभा, ४ पङ्क प्रभा, ५ धूम प्रभा, ६ तम प्रभा, ७ तमतमा (महातम प्रभा)।

जाडापना द्वार : प्रत्येक नरक एकेक राजु जाडो है।

चौडाई १ ली नरक १ राजु चौडो, २ री २॥ राजु, ३ री ४ राजु, चौथी ५ राजु, पाँचवी ६ राजु, छट्ठी ६॥ राजु और ७ वी नरक ७ राजु चौडी है। परन्तु नेरिये १ राजु विस्तार मे (त्रस नाल प्रमाण) ही है।

पृथ्वी पिण्ड द्वार . प्रत्येक नरक असख्य २ योजन की है, परन्तु पृथ्वी पिन्ड पहली नरक का १८०००० यो०, दूसरी का १३२००० यो०, तीसरी का १२८००० यो०, चौथी का १२०००० यो०, पांचवी का ११८००० यो०, छट्ठी का ११६००० योजन और सातवी का १०८००० योजन का पृथ्वी पिण्ड है।

करण्ड द्वार : पहली नरक में ३ करण्ड हैं :—(१) खरकरण्ड १६ जात का रत्नमय १६ हजार योजन का, (२) आयुल बहुल पानी (जल) मय ८० हजार योजन का, (३) पङ्क बहुल कर्दम मय ८४ हजार योजन का। कुल १८०००० योजन है। शेष ६ नरको मे करण्ड नही है।

पाथड़ा, आन्तरा द्वार : पृथ्वी पिण्ड में से १००० योजन ऊपर और १००० योजन नीचे छोड कर शेष पोलार में आन्तरा और पाथड़ा है। केवल सातवी नरक में ५२५०० योजन नीचे छोड़ कर ३००० योजन का एक पाथडा है।

पहली नरक मे १३ पाथड़ा १२ आन्तरा है।

दूसरी	,,	११	,,	१०	,,
तीसरी	,,	९	,,	८	,,
चौथी	,,	७	,,	६	,,
पांचवी	,,	५	,,	४	,,
छट्ठी	,,	३	,,	२	,,

पहली नरक के १२ आन्तरा में से २ ऊपर के छोड कर शेष १० आन्तराओ में दश जाति के भवनपति रहते है। शेष नरकों मे भवनपति देवताओ के वास नही है। प्रत्येक पाथड़ा ३००० योजन का है, जिसमे १०००० योजन ऊपर, १००० योजन नीचे छोड़ कर मध्य के १००० योजन के अन्दर नेरिये उत्पन्न होने की कुम्भिये है।

एकेक पाथडेका अन्तर . पहली नरक में ११५८३$\frac{१}{३}$ योजन दूसरी में ९७०० योजन, तीसरी में १२७५० योजन, चौथी में १६१६६$\frac{२}{३}$ यो०, पाँचवी में २५२५० योजन, छट्ठी में ५२५०० योजन का अन्तर है। सातवी में एक ही पाथडा है।

घनोदधि द्वार : प्रत्येक नरक के नीचे २० हजार योजन का घनोदधि है।

घनवायु द्वार : प्रत्येक नरक के घनोदधि नीचे असंख्य यो० का घनवायु है।

तनवायु द्वार · प्रत्येक नरक के घनवायु नीचे असंख्य यो० का तनवायु है।

आकाश द्वार . प्रत्येक नरक के तनवायु नीचे असंख्य यो० का आकाश है।

नरक-नरक का अन्तर : एक नरक में दूसरी नरक से असख्य-असंख्य योजन का अन्तर है।

नरक वासा द्वार : पहली नरक में ३० लाख, दूसरी में २५ लाख, तीसरी में १५ लाख, चौथी मे १० लाख, पाचवी मे ३ लाख, छट्ठी में ९९९९५ और सातवी नरक मे ५ नरक वासा है। इनमे $\frac{४}{५}$ नरक वासा असख्यात योजन का है, जिनमें असख्यात नेरिये है। $\frac{१}{५}$ नरक वासा सख्यात योजन का है और उनमे संख्यात नेरिया है।

तीन चिमटी बजाने में जम्बूद्वीप की २१ बार प्रदक्षिणा करने की गति वाले देवो को जघन्य १-२-३ दिन, उ० ६ माह लगे। कितनों का अन्त आवे और कितनो का नही आवे एवं विस्तार वाला असख्य योजन का कोई कोई नरक वासा है।

आलोक अन्तर, वलीया द्वार अलोक और नरक में अन्तर है, जिसमे घनोदधि, घनवायु और तनवायु का तीन वलय (चूडी कडा) के आकार समान आकार है·—

नरक	रत्न प्र०	शर्कर	वालु प्र०	पङ्क प्र०	धूम प्र०	तम प्र०	तमतमा प्र०
अलोक अं०	१२यो.	१२$\frac{२}{३}$यो.	१३$\frac{१}{३}$यो.	१४यो.	१४$\frac{२}{३}$यो	१५$\frac{१}{३}$.	१६ यो०
वलय स०	३	३	३	३	३	३	३ यो०
घनोदधि	६ यो	६$\frac{१}{३}$यो.	६$\frac{२}{३}$यो.	७ यो.	७$\frac{१}{३}$ यो.	७$\frac{२}{३}$ यो.	८ ,,
घनवात	४॥ यो.	४।।।,,	५ ,,	५। ,,	५॥ ,,	५।।। ,,	६ ,,
तनवात	१॥ ,,	१॥$\frac{१}{१२}$,,	१॥$\frac{२}{१२}$,,	१।।। ,,	१।।।$\frac{१}{११}$,,	१।।।$\frac{२}{१२}$,,	२ ,,

क्षेत्र वेदना द्वार : दश प्रकार का है—अनन्त क्षुधा, तृषा, शीत, उष्ण, दाह (जलन, ज्वर, भय, चिन्ता, खुजली और पराधीनता । एक से दूसरी में, दूसरी से तीसरी में (इस प्रकार) अनन्त-अनन्त गुणी वेदना सातवी नरक तक है । नरक के नाम के अनुसार पदार्थो की भी अनन्त वेदना है ।

देव कृत वेदना : १-२-३ नरक में परमधामी देव पूर्व कृत पाप याद करा-करा कर विविध प्रकार से मार दुख देते है । शेष नरक के जीव परस्पर लड़-लड़ कर कटा करते है ।

वैक्रिय द्वार : नेरिये खराब (तीक्ष्ण) शस्त्र के समान रूप बनाते है अथवा वज्रमुख कीड़े रूप होकर अन्य नेरियो के शरीरो में प्रवेश करते है । अन्दर जाने के बाद बड़ा रूप बना कर शरीर के टुकड़े-टुकड़े कर डालते हैं ।

अल्पबहुत्व द्वार : सर्व से कम सातवी नरक के नेरिये, उससे ऊपर ऊपर के असंख्यात गुणा नेरिये जानना । शेष विस्तार २४ दण्डकादि थोकड़ों में से जानना ।
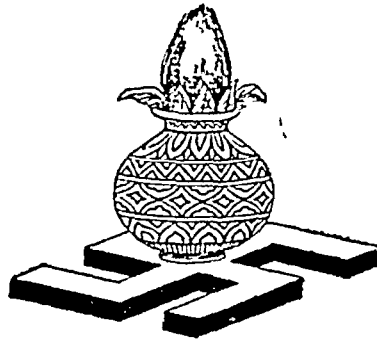
भवनपति विस्तार

भवनपति देवो के २१ द्वार

१ नाम, २ वासा, ३ राजधानी, ४ सभा ५, भवन संख्या, ६ वर्ण, ७ वस्त्र, ८ चिन्ह ९ इन्द्र, १० सामानिक, ११ लोकपाल, १२ त्रायस्त्रिंश, १३ आत्म रक्षक, १४ अनीका, १५ देवी, १६ परिषद, १७ परिचारणा, १८ वैक्रिय, १९ अवधि, २० सिद्ध, २१ उत्पन्न द्वार।

नाम द्वार—१० भेद : १ असुर कुमार, २ नाग कुमार, ३ सुवर्ण कुमार, ४ विद्युत कुमार, ५ अग्नि कुमार, ६ द्वीप कुमार, ७ दिशा कुमार, ८ उदधि कुमार, ९ वायु कुमार और १० स्तनित् कुमार।

वासा द्वार—पहली नरक के १२ आन्तराओ मे से नीचे के १० आन्तराओ मे दश जाति के भवनपति रहते है।

राजधानी द्वार—भवनपति की राजधानी तिर्छे लोक के अरुण वर द्वीप समुद्रो मे उत्तर दिशा के अन्दर 'अमरचञ्चा' बलेन्द्र की राजधानी है और दूसरे नवनिकाय के देवो की भी राजधानिये है। दक्षिण दिशा मे 'चमर चञ्चा' चमरेन्द्र की और नव निकाय के देवो की भी राजधानिये है।

सभा द्वार—एकेक इन्द्र के पाँच सभा है : १ उत्पात सभा (देव उत्पन्न होने के स्थान), २ अभिषेक सभा (इन्द्र के राज्याभिषेक का स्थान), ३ अलङ्कार सभा (देवो के वस्त्र-भूषण—अलकार सजने के स्थान), ४ व्यवाय सभा (देवयोग्य धर्म नीति की पुस्तको का स्थान) और ५ सौधर्मी सभा (न्याय इन्साफ करने का स्थान)।

भवन संख्या—कुल भवन ७ करोड ७२ लाख है, जिनमें ४ क्रोड़

६ लाख भवन दक्षिण में और ६ क्रोड़ ६६ लाख भवन उत्तर दिशा में है। विस्तार यन्त्र से समझना।

वर्ण, वस्त्र, चिन्ह, इन्द्र द्वार—यन्त्र से जाना :

नाम	भवन लाख उत्तर में	भवन लाख द० में	वण	वस्त्र वर्ण	चिन्ह	इन्द्र दो २ उत्तर के	इन्द्र दो २ दक्षिण के
असुर कुमार	३०	३४	काला	रक्त	चूड़ामणि	बलेन्द्र	चमरेन्द्र
नाग ,,	४०	४४	श्वेत	नीला	नागफण	भूतेन्द्र	धरणेन्द्र
सुवर्ण ,,	३४	३८	सुवर्ण	श्वेत	गरुड़	बेणुदाली	वेणुदेव
विद्युत ,,	३६	४०	रक्त	नीला	वज्र	हरिसिह	हरिकान्त
अग्नि ,,	३६	४०	,,	,,	कलश	अग्निमानव	अग्निसिह
द्वीप ,,	३६	४०	,,	,,	सिह	विशेष्ट	पूर्ण
दिशा ,,	३६	६०	पांडूर	,,	अश्व	जल प्रभ	जलकान्त
उदधि ,,	३६	४०	सुवर्ण	श्वेत	गज	अमृत वाहन	अमृतगति
पवन ,,	४६	५०	श्याम	प, वर्ण	मगर	प्रभञ्जन	वेलव
स्तनित ,,	३६	४०	सुवर्ण	श्वेत	वर्धमान	महाघोष	घोष

सामानिक देव—(इन्द्र के उमराव समान देव) चमरेन्द्र के ६४ हजार, बलेद्र के ६० हजार और शेष १८ इंद्रों के छः २ हजार सामानिक देव है ।

लोक पाल देव—(कोटवाल समान) प्रत्येक इंद्र के चार चार लोक पाल है।

त्रायस्त्रिश देव—(राजगुरु समान) प्रत्येक इंद्र के तैंतीश २ त्रायस्त्रिश देव है।

आत्म रक्षक देव—चमरेद्र के २ लाख ५६ हजार देव, बलेद्र के २ लाख ४० हजार देव और शेष इंद्रों के चौवीस २ हजार देव है।

अनीका द्वार—हाथी, घोडे, रथ, महेष, पैदल, गंधर्व, नृत्यकार एव ७ प्रकार की अनीका है। प्रत्येक अनीका की देव सख्या—चमरेंद्र के ८१ लाख १८ हजार, बलेद्र के ७६ लाख २० हजार और १८ इद्रो के ३५ लाख ५६ हजार देव होते है।

देवी द्वार—चमरेंद्र तथा बलेंद्र की ५-५ अग्रमहिषी (पटरानी) है। प्रत्येक पटरानी के ८ हजार देवियो का परिवार है। एकेक देवी ७ हजार वैक्रिय करे अर्थात् ३२ क्रोड वैक्रिय रूप होते है। शेष १८ इंद्रो की ६-६ अग्रमहिषी है। एकेक के ६-६ हजार देवियो का परिवार है और सर्व ६-६ हजार वैक्रिय करे एव २१ क्रोड साठ लाख वैक्रिय रूप होते है।

परिषदा द्वार—परिषदा (सभा) तीन प्रकार की है।

१ आभ्यन्तर सभा—सलाह योग्य बडो की सभा जो मान पूर्वक बुलाने से आवे (और भेजने पर जावे)।

२ मध्यम सभा—सामान्य विचार वाले देवो की सभा जो बुलाने से आवे परन्तु बिना भेजे जावे।

३ बाह्य सभा—जिन्हे हुक्म दिया जा सके ऐसे देवो की सभा, जो विना बुलाये आवे और जावे।

इन्द्र	आभ्यन्तर सभा		मध्य सभा		बाह्य सभा	
	देव स०	स्थिति	देव स०	स्थिति	देव स०	स्थिति
चमरेन्द्र	२४०००	२।। पल्य	२८०००	२ पल्य	३२०००	१।। पल्य
बलेन्द्र	२००००	३।। ,,	२४०००	३ ,,	२८०००	२।। ,,
दक्षिण के ९ इन्द्र	६००००	१ ,,	७००००	०।। ,, से अ०	८००००	०।। , से अ०
उत्तर के ९ इन्द्र	५००००	०।। ,,	६००००	,, ,, से अ०	७००००	,, ,, से अ०

इन्द्र	आभ्यान्तर सभा		मध्यम सभा		बाह्य सभा	
	देवी सं०	स्थिति	देवी सं०	स्थिति	देवी स०	स्थिति
चमरेन्द्र	३५०	१॥ पल्य	३००	१ पल्य	२५०	१ पल्य
बलेन्द्र	४५०	२॥ ,,	४००	२ ,,	३५०	१॥ पल्य
दक्षिण के ६ इन्द्र	१७५	०॥ ,,	१५०	०। ,, से० न्यून	१२५	०। ,, से अ०
उत्तर के ६ इन्द्र	२२५	०॥ पल्य	२००	०॥ पल्य से न्यून	१७५	०। ,, से अ०

परिचारणा द्वार—(मैथुन) पांच प्रकार का—मन, रूप, शब्द, स्पर्श और काय परिचारण (मनुष्यवत् देवी के साथ भोग)।

वैक्रिय करे तो—चमरेन्द्र देव-देवियों से समस्त जबूद्वीप असख्य द्वीप भरने की शक्ति है परन्तु भरे नही।

बलेन्द्र देव-देवियो से साधिक जंबूद्वीप भरे, असख्य भरने की शक्ति है परन्तु भरे नही।

इन्द्र देव-देवियों से समस्त जंबूद्वीप भरे संख्यात द्वीप भरने की शक्ति है परन्तु भरे नही।

लोकपाल देवियों की शक्ति संख्यात द्वीप भरने की शेष सबों की सामानिक, त्रायस्त्रिश देव-देवी और लोकपाल देव की वैक्रिय शक्ति अपने इन्द्रवत्, वैक्रिय का काल १५ दिन का जानना।

अवधि द्वार – असुर कुमार देव ज० २५ यो० उ० ऊर्ध्व सौधर्म देवलोक, नीचे तीसरी नरक, तीर्च्छा असंख्य द्वीप समुद्र तक जाने व देखे शेष जाति के भवनपति देव ज० २५ यो० उ० ऊंचा ज्योतिषी के तले तक, नीचे पहेली नरक, तीर्च्छा सख्यात द्वीप समुद्र तक जाने—देखे।

सिद्ध द्वार—भवनपति मे से निकले हुवे देव मनुष्य होकर १ समय मे १० जीव मोक्ष जा सके भवनपति-देवियों मे से निकली हुई देवीये (मनुष्य होकर) पॉच जीव मोक्ष जा सके ।

उत्पन्न द्वार—सर्व प्राण, भूत, जीव सत्व भवनपति देव व देवी रूप से अनन्त बार उत्पन्न हुवे परन्तु सत्य ज्ञान बिना गरज सरी नही (उद्देश्य पूर्ण हुवा नही)

शेष विस्तार लघुदण्डक आदि थोकड़ से जानना चाहिये ।

●

वाणव्यंतर विस्तार

वाणव्यन्तर के २१ द्वार

१ नाम, २ वास, ३ नगर, ४ राजधानी, ५ सभा, ६ वर्ण, ७ वस्त्र, ८ चिन्ह, ९ इन्द्र, १० सामानिक, ११ आत्म रक्षक, १२ परिषद, १३ देवी, १४ अनीका, १५ वैक्रिय, १६ अवधि, १७ परिचारण, १८ सुख, १९ सिद्ध, २० भव, २१ उत्पन्न द्वार ।

नाम द्वार—१६ व्यन्तर—१ पिशाच, २ भूत ३ यक्ष ४ राक्षस ५ किन्नर ६ किपुरुष ७ महोरग ८ गधर्व ९ आणपन्नी १० पाण पन्नी ११ ईसीवाय १२ भूय वाय १३ कन्दिय १४ महा कन्दिय १५ कोदन्ड १६ पयग देव ।

वासा द्वार—रत्न प्रभा नरक के ऊपर का १ हजार योजन का जो पिण्ड है उसमे १०० योजन ऊपर १०० योजन नीचे छोड़ कर ८०० योजन में ८ जाति के वाण-व्यन्तर देव रहते है और ऊपर के १०० यो० पिण्ड में १० यो० ऊपर, १० यो० नीचे छोड कर ८० यो० मे ९ से १६ जाति के व्यन्तर देव रहते है । (एकेक की यह मान्यता है कि ८०० यो० मे व्यन्तर देव और ८० यो० मे १० जृम्भका देव रहते है ।

नगर द्वार—ऊपर के वासाओ मे वाणव्यन्तर देवो के असंख्यात नगर है जो संख्याता संख्याता योजन के विस्तार वाले और रत्नमय है।

राजधानी द्वार—भवनपति से कम विस्तार वाली प्रायः १२ हजार योजन की तीर्च्छे लोक के द्वीप समुद्रो मे रत्नमय राजधानिये है।

सभा द्वार—एकेक इन्द्र के ५-५ सभा है भवनपतिवत्।

वर्ण द्वार—यक्ष, पिशाच, महोरग, गधर्व का श्याम वर्ण, किन्नर का नील, राक्षस और किपुरुष का श्वेत, भूत का काला। इन वाण-व्यन्तर देवो के समान शेष ८ व्यन्तर देवो के शरीर का वर्ण जानना।

वस्त्र द्वार—पिशाच, भूत, राक्षस के नीले वस्त्र, यक्ष किन्नर किपुरुष के पीले वस्त्र, महोरग गन्धर्व के श्याम वस्त्र एव शेष व्यन्तरो के वस्त्र जानना।

चिन्ह और ६ इन्द्र द्वार—प्रत्येक व्यन्तर की जाति के दो २ इन्द्र है।

व्यन्तर देव	दक्षिण इन्द्र	उत्तर इन्द्र	ध्वजा पर चिन्ह
पिशाच	कालेन्द्र	महा कालेन्द्र	कदम वृक्ष
भूत	सुरूपेन्द्र	प्रति रूपेन्द्र	सुलक्ष ,,
यक्ष	पूर्णेन्द्र	मणिभद्र	बड ,,
राक्षस	भीम	महा भीम	खटक उपकर
किन्नर	किन्नर	किंपुरुष	अशोक वृक्ष
किंपुरुष	सापुरुष	महापुरुष	चपक ,,
महोरग	अतिकाय	महाकाय	नाग ,,
गंधर्व	गति रति	गति यश	तुंबरु ,,
आणपन्नी	सनिहि	सामानी	कदम्ब ,,
पाण पन्नी	धाई	विधाई	सुलस ,,
ईसी वाय	ऋषि	ऋषि पाल	बड़ ,,
भूय वाय	ईश्वर	महेश्वर	खटक उपकर

कन्दिय	सुविच्छ	विशाल	अशोक वृक्ष
महाकन्दिय	हास्य	हास्यरति	चपक ,,
कोदण्ड	श्वेत	महाश्वेत	नाग ,,
पयग देव	पतग	पतग पति	तु बरु ,,

सामानिक द्वार—सर्व इन्द्रो के चार चार हजार सामानिक है।

आत्म रक्षक द्वार—सर्व इन्द्रो के सोलह सोलह हजार आत्म रक्षक देव है।

परिषदा द्वार—भवनपति समान इनके भी तीन प्रकार की सभा है। (१) आभ्यन्तर (२) मध्यम (३) वाह्य।

सभा	देव सख्या	स्थिति	देवी संख्या	स्थिति
आभ्यन्तर	८०००	०॥पल्य	१०० ०।	पल्य जाजेरी
मध्यम	१००००	०॥" से न्यून	१०० ०।	"
वाह्य	१२०००	०। पल्य जा०	१०० ०।	" से न्यून

देवी द्वार—प्रत्येक इन्द्र के चार चार देवी, एक-एक देवी हजार के परिवार सहित सब देविये हजार हजार वैक्रिय रूप कर सकती है।

अनीका द्वार—हाथी, घोडे आदि ७ प्रकार अनीका है प्रत्येक में ५०८००० देव होते है।

वैक्रिय द्वार—समग्र जम्बू द्वीप भरा जाय इतने रूप बनावे, सख्यात द्वीप समुद्र भरने की शक्ति है।

अवधि द्वार—ज० २५ यो०, उ० ऊचा ज्योतिषी का तला, नीचे पहली नरक और तीर्च्छे संख्यात द्वीप-समुद्र जाने देखे।

परिचारण द्वार—(मैथुन) ५ प्रकार से, भवनपति समान।

सुख द्वार—अबाधित मनुष्यो के सुखो से अनत गुणा सुख है।

सिद्ध द्वार—वाण व्यन्तर देवो मे से निकल कर १ समय मे दस सिद्ध हो सके व देवियो में से ५ हो सके।

भव द्वार—संसार भ्रमण करे तो जीव १, २, ३ अनंत भव करे।

उत्पन्न द्वार—सर्व जीव अनंती बार वाणव्यतर मे उत्पन्न हो आये है, परन्तु इन पौद्गलिक सुखों से सिद्ध नही हुई।

●

ज्योतिषी देव विस्तार

ज्योतिषी देव २॥ द्वीप में (चार चलने वाले) और २॥ द्वीप बारह स्थिर हैं। ये पक्की ईंट के आकारवत् हैं। सूर्य-सूर्य के और चन्द्र-चन्द्र के एकेक लाख योजन का अन्तर है। चर ज्योतिषी से स्थिर ज्यो० आधी क्रान्ति वाले है। चन्द्र के साथ अमिल नक्षत्र और सूर्य के साथ पुष्य नक्षत्र का सदा योग है। मानुषोत्तर पर्वत से आगे और अलोक से ११११ योजन इस तरफ उसके बीच में स्थिर ज्यो० देव विमान है। परिवार चर ज्यो० समान जानना।

ज्योतिषी के ३१ द्वार :

१ नाम, २ वासा, ३ राजधानी, ४ सभा, ५ वर्ण, ६ वस्त्र, ७ चिह्न, ८ विमान चौड़ाई, ९ विमान जाडाई, १० विमान वाहक, ११ मांडला, १२ गति, १३ ताप, क्षेत्र, १४ अन्तर, १५ संख्या, १६ परिवार, १७ इन्द्र, १८ सामानिक, १९ आत्म रक्षक, २० परिषदा; २१ अनीका, २२ देवी, २३ गति, २४ ऋद्धि, २५ वैक्रिय, २६ अवधि, २७ परिचारणा, २८ सिद्ध, २९ भव, ३० अल्पबहुत्व, ३१ उत्पन्न द्वार।

नाम द्वार—१ चन्द्र, २ सूर्य, ३ ग्रह, ४ नक्षत्र, ५ तारा।

वासा द्वार—तीर्छे लोक में समभूमि से ७६० योजन ऊँचे पर ११० यो० मे और ४५ लाख यो० के विस्तार मे ज्यो० देवो के विमान है। जैसे ७६० यो० ऊँचे पर ताराओ के विमान, यहा से १० यो० ऊचे पर सूर्य का, यहा से ८० यो० ऊचा चन्द्र का, यहा से ४ यो० ऊचा नक्षत्र का, यहा से ४ यो० ऊंचा बुध का, यहा से ३ यो० शुक्र का, यहा से ३ यो० वृहस्पति का, यहाँ से ३ यो० मङ्गल का और यहा से ३ यो० ऊचा शनिश्चर का विमान है। सर्व स्थानो पर ताराओ के विमान ११० योजन मे है।

राजधानी—तीर्छे लोक मे असख्यात राजधानिये है।

सभा द्वार—ज्योतिषो के इन्द्रो के भी ५-५ सभा है। (भवनपति समान)।

वर्ण द्वार—ताराओ के शरीर पञ्चवर्णी है। शेष ४ देवो का वर्ण सुवर्ण समान है।

वस्त्र द्वार—सर्व वर्ण के सुन्दर, कोमल वस्त्र सब देवताओ के होते है।

चिन्ह द्वार—चन्द्र पर चन्द्र मडल, सूर्य पर सूर्य मडल एव सब देवताओ के मुकुट पर अपना २ चिन्ह है।

विमान चौड़ाई और जाडाई द्वार—एक यो० के ६१ भागो मे से ५६ भाग ($\frac{56}{61}$ यो०) चद्र विमान की चौडाई, ४८ भाग सूर्य विमान की, दो गाउ ग्रह विमान की, १ गाउ नक्षत्र विमान की और ०॥ गाउ तारा विमान की चौडाई है। जाडाई इससे आधी २ जानना। सब विमान स्फटिक रत्नमय है।

विमान वाहक—ज्योतिषी विमान आकाश के आधार पर स्थित रह सकते है, परतु स्वामी के बहुमान के लिए जो देव विमान उठाकर फिरते है, उनकी सख्या चद्र-सूय के विमान के १६-१६ हजार देव,

ग्रह विमान के ८-८ हजार देव, नक्षत्र वि० के ४-४ हजार और तारा विमान के २-२ हजार देव वाहक है। ये समान २ सख्या मे चारों ही दिशाओ में मुँह करके पूर्व में सिह रूप से, पश्चिम में वृषभ रूप से, उत्तर में अश्व रूप से और दक्षिण में हस्ति रूप से देव रहते है।

मांडला द्वार—चद्र सूर्य आदि की प्रदक्षिणा (चारो ओर चक्कर लगाना) दक्षिणायन से उत्तरायण जाने के मार्ग को 'मांडला' कहते है। मांडले का क्षेत्र ५१० यो० का है, जिसमे ३३० यो० लवण समुद्र में और १८० यो० जम्बू द्वीप मे है। सूय के १८४ मांडलों में से ११९ लवण मे ६५ जम्बू द्वीप मे है। ग्रह के ८ मांडलो मे से ६ लवण मे और और २ जम्बूद्वीप मे है। जम्बू द्वीप मे ज्योतिषी के माडले है वे निषिध और नीलवंत पर्वत के ऊपर है। चन्द्र के मांडलो का अन्तर ३५$\frac{३०}{६१}$ योजन का है। सूर्य के प्रत्येक मडल से दूसरे मडल का अन्तर योजन का है।

गति द्वार—सूर्य की गति कर्क संक्रांति को (आषाढी पूर्णिमा) १ मुहूर्त मे ५२५१$\frac{२९}{६१}$ क्षेत्र तथा मकर सक्रांति (पौष पूर्णिमा) को १ मुहूर्त में ५३०५ $\frac{}{६१}$ मे क्षेत्र है। चन्द्र की गति कर्क सक्रांति को १ मु० मे ५०७३$\frac{७७४४}{१३७२५}$ और मकर सक्रांतिको ५१२५$\frac{६९९०}{१३७२५}$ है।

ताप क्षेत्र—कर्क सक्राति को ताप क्षेत्र ९७५२६$\frac{२६}{६१}$ और उगता सूर्य ४७२०३$\frac{२१}{६१}$ योजन दूर से दृष्टिगोचर होता है। मकर सक्राति को ताप क्षेत्र ६३६६३$\frac{१६}{१६}$ उगता सूर्य ३१८३१$\frac{३८}{६१}$ योजन दूर से दृष्टिगोचर होता है।

अन्तर द्वार—अन्तर दो प्रकार का पड़े। १ व्याघात-किसी पदार्थ का बीच मे आ जाने से और २ निर्व्याघात-बिना किसी के बीच मे आये। व्याघात अपेक्षा ज० २६६ योजन का अन्तर कारण निषिध नीलवंत पर्वत का शिखर २५० यो० है और यहां से ८-८ योजन दूर ज्यो० चलते है अर्थात् २५०+८+८=२६६ उ० २२४२ योजन कारण-मेरु शिखर १० हजार यो० का है और इससे १२२१ यो० दूर

ज्यो० विमान फिरते है। अर्थात् १०००० + ११२१ + ११२१ = १२२४२ योजन का अन्तर है। अलोक और ज्यो० देवो का अन्तर ११११ यो० का मांडलापेक्षा अन्तर मेरु पर्वतसे ४८८० यो० अन्दर के माडल का और ४५०३० यो० वाहर के मडल का अन्तर है। चन्द्र चन्द्र के मडल का १५ ३०/६१ ४/७ यो० का और सूर्य सूर्य का मडल का दो यो० का अन्तर है। निर्व्याघात अपेक्षा ज० ५०० धनुष्य का और उ० २ गाउ का अन्तर है।

सख्या द्वार—जम्बू द्वीप मे २ चन्द्र, २ सूर्य है लवरा समुद्र मे ४ चन्द्र, ४ सूर्य है धातकी खण्ड मे १२ चन्द्र, १२ सूर्य है कालोदधि समुद्र मे ४२ चन्द्र, ४२ सूर्य है। पुष्करार्ध द्वीप मे ७२ चन्द्र, ७२ सूर्य है एव मनुष्य क्षेत्र में १३२ चन्द्र १३२ सूर्य है। आगे इसी हिसाव से समझना अर्थात् पहले द्वीप व समुद्र मे जितने चन्द्र तथा सूर्य होवे उनको तीन से गुरणा करके पीछे की सख्या गिनना (जोडना)।

दृष्टात—कालोदधि मे चन्द्र सूर्य जानने के लिये उससे पहले धातकी खण्ड मे १२ चन्द्र १२ सूर्य है उन्हे १२ × ३ = ३६ में पीछे की सख्या (लवरा समुद्र के ४ और जम्बू द्वीप के २ एवं ४ + २ = ६) जोडने से ४२ हुवे।

परिवार द्वार—एकेक चन्द्र और एकेक सूर्य के २८ नक्षत्र, ८८ ग्रह और ६६६७५ क्रोड क्रोड तारो का परिवार है।

इन्द्र द्वार—असख्य चन्द्र, सूर्य है ये सर्व इन्द्र है परन्तु क्षेत्र अपेक्षा १ चन्द्र इन्द्र और १ सूर्य इन्द्र है।

सामानिक द्वार—एकेक इन्द्र के ४-४ हजार सामानिक देव है।

आत्म रक्षक द्वार—एकेक इन्द्र के १६-१६ हजार आत्म रक्षक देव है।

परिषदा—तीन-तीन है। आभ्यन्तर सभा मे ८००० देव, मध्य सभा मे १० हजार और बाह्य सभा मे १२ हजार देव है। देविये तीनो हो सभा की १००-१०० है प्रत्येक इन्द्र की सभा इसी प्रकार जानना।

अनीका द्वार—एकेक इन्द्र के ७-७ अनीका है व प्रत्येक अनीका में ५ लाख ८० हजार देवता है सात अनीका भवनपति वत् ।

देवी द्वार- एकेक इद्र की चार-चार अग्र महिषी है एकेक पट-रानी के चार-चार हजार देवियो का परिवार है एकेक देवी ४-४ हजार रूप वैक्रिय करे अर्थात् ४×४००० = १६००० × ४००० = ६४-०००००० देवी, रूप एकेक इंद्र के है ।

जाति द्वार-- सर्व से मद जाति चद्र की, उससे सूर्य की शीघ्र (तेज) उससे ग्रह की तेज ऊससे नक्षत्र की तेज और उससे तारा की तेज गति है ।

ऋद्धि द्वार—सर्व से कम ऋद्धि तारा की उससे उत्तरोत्तर महद्ऋद्धि ।

वैक्रिय द्वार—वैक्रिय रूप से सम्पूर्ण जम्बू द्वीप भरते है सख्याता जम्बू द्वीप भरने की शक्ति चद्र सूर्य, सामानिक और देवियो मे भी है।

अवधि द्वार—तीर्छा ज० उ० संख्यात द्वीप समुद्र ऊचा अपनी ध्वजा पताका तक और नीचे पहली नरक तक जानेदेखे ।

परिचारणा—(पांचो ही मनुष्य वत्) प्रकार से भोग करे ।

सिद्ध द्वार—ज्योतिषी देव से निकल कर १ समय में १० जीव और ज्योतिषी देवियो से निकल कर १ समय मे २० जीव मोक्ष जा सकते है ।

भव द्वार—भव करे तो ज० १ २ ३ उ० अनन्ता भव करे ।

अल्प बहुत्व द्वार—सर्व से कम चद्र सूर्य, उनसे नक्षत्र, उनसे ग्रह और उनसे तारे (देव) सख्यात सख्यात गुणा है ।

उत्पन्न द्वार—ज्योतिषी देव रूप से यह जीव अनन्त अनन्त वार उत्पन्न हुवा परन्तु वीतराग आज्ञा का आराधन किये बिना आत्मिक सुख नही प्राप्त कर सका ।

●●

वैमानिक देव

विमान वासी देवो के २७ द्वार :

१ नाम, २ वासा, ३ सस्थान ४ आधार, ५ पृथ्वी पिण्ड, ६ विमान ऊचाई, ७ विमान सख्या, ८ विमान वर्ण, ९ विमान विस्तार, १० इन्द्र नाम, ११ इन्द्र विमान, १२ चिन्ह, १३ सामानिक, १४ लोकपाल, १५ त्रायस्त्रिशक, १६ आत्म रक्षक, १७ अनीका, १८ परिषदा, १९ देवी, २० वैक्रिय, २१ अवधि, २२ परिचारण, २३ पुण्य, २४ सिद्ध, २५ भव, २६ उत्पन्न, २७ अल्पबहुत्व द्वार ।

नाम द्वार—१२ देव लोक – सौधम, ईशान, सनत्कुमार, महेन्द्र, ब्रह्म, लातक, महाशुक्र, सहस्रार, आणत, प्राणत, आरण, अच्युत नव ग्रैवेयक—भद्दे, सुभद्दे, सुजाने, सुमानसे, सुदशने प्रियदसणे, अमोहे, सुप्रतिबद्ध और यशोधरे । ५ अनुत्तर विमान—विजय, विजयन्त, जयन्त, अपराजित और सर्वार्थ सिद्ध । पाचवे देवलोक के तीसरे परतर मे नव लोकातिक देव और ३ किल्विषी मिलकर कुल ३८ जाति के वैमानिक देव है ।

वासा द्वार—ज्योतिषी देवो से असख्य क्रोडाक्रोड योजन ऊचा वैमानिक देवो का निवास है । राजधानिये और ५-५ सभाये अपने देवलोक मे ही है । शक्रेन्द्र, ईशानेन्द्र के महल, उनके लोकपाल और देवियो की राजधानिये तीर्छे लोक में भी है ।

सठाण द्वार—१, २, ३, ४ और ९, १०, ११, १२ एव ८ देव लोक अर्ध चन्द्राकार है । ५, ६, ७, ८ देव लोक और ९ ग्रैवेयक पूर्ण चन्द्राकार है । चार अनुत्तर विमान त्रिकोन चारो ही तरफ है और वीच में सर्वार्थसिद्ध विमान गोल चन्द्राकार है ।

आधार द्वार—विमान और पृथ्वी पिण्ड रत्नमय है। १, २ देव लोक घनोदधि के आधार पर है। ३, ४, ५ देव घनवायु के आधार से है। ६, ७, ८ देव लोक घनोदधि घनवायु के आधार से है। शेष विमान आकाश के आधार पर स्थित है।

पृथ्वी पिण्ड, विमान ऊंचाई, विमान और परतर, विमान वर्ण द्वार—

विमान	पृथ्वी पिड	वि. ऊंचाई	वि. सख्या	परतर	वर्ण
१	२७०० यो.	५०० यो.	३२ लाख	१३	" ,,
२	,, ,,	,, ,,	२८ ,,	१३	५ ,,
३	२६०० ,,	६०० ,,	१२ ,,	१२	४ ,,
४	,, ,,	,, ,,	८ ,,	१२	४ ,,
५	२५०० ,,	७०० ,,	४ ,,	६	३ ,,
६	,, ,,	,, ,,	५० हजार	५	३ ,,
७	२४०० ,,	८०० ,,	४० ,,	४	२ ,,
८	,, ,,	,, ,,	६ ,,	४	२ ,,
९	२३०० ,,	९०० ,,	४००	४	१ ,,
१०	,,	,, ,,	,,	४	१ ,,
११	,, ,,	,, ,,	३००	४	१ ,,
१२	,, ,,	,, ,,	,,	४	१ ,,
९ ग्री,	२२०० ,,	१००० ,,	३१८	९	१ ,,
५ अनु.	२१०० ,,	११०० ,,	५	१	१ ,,

विमान विस्तार—कितने ही विमानों का विस्तार (चार भाग का) अस० योजन का और कितने ही का (एक भाग का) सख्यात योजन के विस्तार का है, परन्तु सवार्थ सिद्ध विमान १ लाख यो० के विस्तार में है।

इन्द्र द्वार—१२ देवलोक के १० इन्द्र है। आगे सर्व अहमेन्द्र है।

११ विमान द्वार—तीर्थंकरो के कल्याण के समय मृत्युलोक मे वैमानिक देव जो विमान मे बैठ कर आते है उनके नाम—पालक, पुष्प, सुमानस, श्रीवत्स, नन्दी वर्तन, कामगमनाम, मनोगम, प्रियगम, विमल सर्वतोभद्र।

चिन्ह, सामानिक, लोकपाल, त्रयस्त्रिश, आत्म रक्षक—

इन्द्र	चिन्ह	सामा	लोकपाल	त्रयस्त्रिश	आत्म रक्षक
शक्रेन्द्र	मृग	८४ हजार	४	३३	३३६०००
ईशानेन्द्र	महर्षि	८० ,,	४	३३	३२००००
सनत्कु इन्द्र	शूकर	७२ ,,	४	३३	२८८०००
महेन्द्र	सिह	७० ,,	४	३३	,,
ब्रह्मेद्र	अज(बकरा)	६० ,,	४	३३	२४००००
लतकेद्र	मडूक(मेडक)	५० ,	४	३३	२०००००
महाक्रेद्र	अश्व	४० ,,	४	३३	१६००००
सहस्रेद	हस्ति	३० ,,	४	३३	१२००००
प्राणतेद्र	सर्प	२० ,,	४	३३	८००००
अच्युतेद्र	गरुड	१० ,,	४	३३	४००००

अनीका—प्रत्येक इंद्र को अनीका ७-७ प्रकार की है। प्रत्येक अनीका मे देवता उन इन्द्रो के सामानिक से १२७ गुणा होते है।

प्रत्येक इन्द्र के तीन २ प्रकार की परिषदा होती है।

इन्द्र	आभ्यन्तर देव	मध्यम देव	बाह्य २० देव	देविये
१	१२ हजार	१४ हजार	१६ हजार	शकेन्द्र
२	१० ,,	१२ ,,	१४ ,,	७ सौ
३	८ ,,	१० ,,	१२ ,,	६ सौ
४	६ ,,	८ ,,	१० ,,	५ सौ
५	४ ,,	६ ,,	८ ,,	ईशानेन्द्र
६	२ ,,	४ ,,	६ ,,	९ सौ

७	१ ,,	२ ,,	४ ,,	८ सौ
८	५०० ,,	१ ,,	२ ,,	७ सौ
९	२५०	५००	१ ,,	शेष ८ इन्द्रो के
१०	१२५	२५०	५००	देविये नही

देवी द्वार—शक्रेन्द्र के आठ अग्रमहिषी देविये है। एकेक देवी के १६-१६ हजार देवियों का परिवार है। प्रत्येक देवी १६-१६ हजार वैक्रिय करे। इसी प्रकार ईशानेन्द्र की भी ८×१६००० = १२८०००× १६००० = २०४८०००००० जानना। शेष में देविये नही होवे। केवल पहले दूसरे देव लोक रहे और ८ वे लोक तक जाया करे।

वैक्रिय द्वार—शकेद्र वैक्रिय के देव-देवियों से २ जम्वू द्वीप भर देते है। ईशा० २ जम्बू द्वीप जाजेरा सनत्कुमार ४ जम्बू०, महेन्द्र ४ जम्बू० जाजेरा, ब्रह्मेन्द्र ८ जम्बू० लंतकेद्र ८ जम्बू० जाजेरा, महाशुक्र १६जम्बू ०सहसेद्र १६ जम्बू जाजेरा प्राणतेद्र ३२ जम्बू०, अच्युतेद्र ३२ जम्वू जाजेरा भरे० (लोक पाल, त्रयस्त्रिश, देविये आदि अपने इद्र-वत्) असख्य जम्बू द्वीप भर देने की शक्ति है, परतु इतने वैक्रिय नही करते है।

अवधि द्वार—सर्व इन्द्र ज० अगुल के असख्यातवे भाग अवधि से जाने-देखे० उ० ऊँचा अपने विमान की ध्वजा पताका तक–तीर्छा असंख्य द्वीप समुद्र तक जाने देखे और नीचे १-२ देव लोक वाले पहली नरक तक, ३ ४ देव दूसरी नरक तक, ५-६ देव० तीसरी नरक तक, ७–८ देव० चौथी नरक तक, ९ से १२ देव० पांचवी नरक तक, ९ ग्रीयवेक छट्ठी नरक तक ४ अनुत्तर विमान ७ वी नरक तक और सर्वार्थ सिद्ध वाले त्रस नाली सम्पूर्ण (पाताल कलश) जाने देखे।

परिचारणा—१-२ देव में पांच (मन, शब्द, रूप, स्पर्श और काय) परिचारणा, ३-४ देव० में स्पर्श परि०, ५-६ देव० में रूप परि०, ७-८ देव० में शब्द परि०, ९ से १२ देव० मे मन परि०, आगे नही।

पुण्य द्वार—जितने पुण्य व्यतर देव सौ वर्ष में क्षय करते है, उतने पुण्य नागादि ९ देव २ सौ वर्ष मे, असुर ३ सौ वर्ष मे ग्रह-नक्षत्र तारा ४ सौ वर्ष मे चंद्र-सूर्य ५ सौ वर्ष मे, सौधर्मईशान १ हजार वर्ष में ३-४ देव० २ हजार वर्ष मे, ५-६ देव० ३ हजार वर्ष में, ७-८ देव० ४ हजार वर्ष मे, ९ से १२ देव० ५ हजार वर्ष मे, १ ली त्रिक १ लाख वर्ष मे, दूसरी त्रिक २ लाख वर्ष मे, तीसरी त्रिक ३ लाख वर्ष मे, ४ अनु० विमान ४ लाख वर्ष मे और सर्वार्थ सिद्ध के देवता ५ लाख वर्ष मे इतने पुण्य क्षय करते है।

सिद्ध द्वार—वैमानिक देव में से निकले हुए मनुष्य मे आकर एक समय मे १०८ सिद्ध हो सकते है। देवी में से निकल कर २० सिद्ध हो सकते है।

भव द्वार—वैमानिक देव होने के वाद भव करे तो जघन्य १-२-३ सख्यात, अस० यावत् अनंत भव भी करे।

उत्पन्न द्वार—नव ग्रैवेयक वैमानिक देव रूप मे अनंती वार यह जीव उत्पन्न हो चुका है। ४ अनु० वि० मे जाने के बाद सख्यात (२-४) भव मे और सर्वार्थ सिद्ध से १ भव मे मोक्ष जावे।

अल्पबहुत्व द्वार—सव से कम ५ अनुत्तर विमान मे देव, उनसे उतरते २ नववे देवलोक तक सख्यात गुणा, ८ में से उतरते दूसरे देवलोक तक असख्यात गुणा देव, उनसे दूसरे देव की देविये सख्यात गुणी, उनसे पहले देवलोक के देव सख्यात गुणा और उनसे पहले देवलोक की देविये संख्यात गुणी।

संख्यादि २१ बोल अर्थात् डालापाला

संख्या के १ बोल है :—१ जघन्य सख्याता, २ मध्यम संख्याता, ३ उत्कृष्ट संख्याता । असंख्याता के नव भेद ।

१	ज०	प्र०	असंख्यात	४	ज०	युक्ता	अ०	७	ज०	अ०	अ०
२	म०	,,	,,	५	म०	,,	,,	८	म०	,	,,
३	उ०	,,	,,	६	उ०	,,	,,	९	उ०	,,	,

अनन्ता के ६ भेद

१	ज०	प्रत्येक	अनंता	४	ज०	युक्ता	अनंता	७	ज०	अ०	अ०
२	म०	,,	,,	५	म०	,,	,,	८	म०	,,	,,
३	उ०	,,	,,	६	उ०	,,	,,	९	उ०	,	,,

ज० संख्याता मे एक दो तक गिनना म० सख्याता मे तीन से आगे यावत् उ० संख्याता में एक न्यून उ० सख्याता के लिये माप बताते है—

चार पाला—(१) शीलाक (२) प्रति शालाक (३) महा शीलाक (४) अनवस्थित । इनमे से प्रत्येक पाला धान्य मापने की पाली के आकार वत् है किन्तु प्रमाण में १ लक्ष योजन लम्बे चौड़े ३१६२२७ यो० अधिक की परिधि वाला, १० हजार यो० गहरा ८ यो० की जगती कोट जिसके ऊपर०॥ यो० की वेदिका इस प्रकार पाला की कल्पना करना तथा इनमे से अनवस्थित पाला को सरसव के दानो से सम्पूर्ण भर कर कोई देव उठावे, जम्बू द्वीप से शुरू करके एकेक दाना एकेक द्वीप और समुद्र में डालता हुवा चला जावे अन्त में १ दाना बच जाने पर द्वीप व समुद्र में डालने से रुके बचा हुवा दाना शीलाकवाला के अन्दर डाले जितने द्वीप व समुद्र तक डालता

हुआ पहुच चुका है उतना वडा लम्बा और चौड़ा पाला किन्तु १० हजार यो० गहरा ८ यो० जगती०।। यो० की वेदिका वाला बनावे इसे सरसव से भर कर आगे के द्वीप व समुद्र मे एकेक दाना डालता जावे एक दाना बच जाने पर ठहर जावे वचे हुवे दाने को शालाक पाले मे डाले पुन· उतने ही द्वीप तथा समुद्र के विस्तार वत् (गहराई जगती ऊपर वत्) बनाकर सरसव से भरकर आगे के एकेक द्वीप व एकेक समुद्र मे एकेक दाना डालता जावे बचे हुवे एक दाने को डाल कर शीलाक को भर देवे भर जाने पर उसे उठा कर अन्तिम (वाकी भरे हुवे) द्वीप तथा समुद्र से आगे एकेक दाना डाल कर खाली करे एक दाना बचने पर पुन उसे प्रति शीलाक पाले मे डाले इस प्रकार आगे २ के द्वीप समुद्र को अनवस्थित पाला बनावे बचे हुवे एक दाने से शीलाक भरे शीलाक की बचत के एकेक दाने से प्रति शीलाक को भरे प्रति शीलाक को खाली करते हुवे बचत के एकेक दाने से महा शीलाक को भरे इस प्रकार महा शीलाक को भर देवे पश्चात् प्रति शीलाक, शीलाक और अनवस्थित को क्रम से भर देवे।

इस तरह चार ही पाले भर देवे अन्तिम दाना जिस द्वीप व समुद्र मे पडा होवे वहा से प्रथम द्वीप तक डाले हुवे सब दानो को एकत्रित करे और चार ही पालो के एकत्रित किए हुवे दानो का एक ढेर करे इसमे से एक दाना निकाल ले तो उत्कृष्ट सख्याता, निकाला हुवा एक दाना डाल दे तो जघन्य प्रत्येक असंख्याता जानना इस दाने की सख्या को परस्पर गुणाकार (अभ्यास) करे और जो संख्या आवे बो जघन्य युक्ता असख्याता कहलाती है इसमें से एक दाना न्यून वो उ० प्र० असंख्याता दो दाना न्यून वो मध्यम प्र० असख्याता (१ आवलिका का समय ज० युक्ता असंख्याता जानना)।

जघन्ययुक्ता अस० की राशि (ढेर) को परस्पर गुणा करने से जघन्य अस० असख्यात सख्या निकलती है। इसमे से १ न्यून वो उ० युक्ता असं० दो न्यून वाली म० युक्ता असं० जानना।

ज० असं० असंख्याता की राशि को परस्पर गुणा करने से ज० प्रत्येक अनंता सख्या आती है। इसमे से २ न्यून वाली सख्या म० असं० असख्याता और १ न्यून वाली उ० असं० असंख्याता जानना।

ज० प्र० अनंता की राशि को गुणित करने से ज० युक्ता अनता। इसमे से २ न्यून म० प्र० अनंता, १ न्यून उत्कृष्ट प्र० अनता जानना।

ज० यु० अनन्ता को परस्पर गुणित करने ज० अनन्तानन्त सख्या होती है जिसमे से २न्यून वाली म० युक्ता अनन्ता १ न्यून वाली उ० युक्ता अनन्ता जानना।

ज० अनन्तानन्त को परस्पर गुणाकार करने से म० अनन्तानन्त संख्या निकलती है और परस्पर गुणाकार करे तो उ० अनन्तानन्त सख्या जानना परन्तु ससार में उत्कृष्ट अनन्तानन्त संख्या वाले कोई पदार्थ नही है।

तत्व केवली गम्य।

●

प्रमाण-नय

(श्री अनुयोग द्वार—सूत्र तथा अन्य ग्रन्थों के आधार पर २४ द्वार कहे जाते है)।

(१) सात नय, (२) चार निक्षेप, (३) द्रव्य गुण पर्याय (४) द्रव्य, क्षेत्र, काल भाव, (५) द्रव्य-भाव, (६) कार्य-कारण, (७) निश्चय-व्यवहार, (८) उपादान-निमित्त, (९) चार प्रमाण, (१०) सामान्य-विशेष, (११) गुण-गुणी, (१२) ज्ञेय ज्ञान, ज्ञानी, (१३) उप्पनेवा, विगमेवा, धुवेवा, (१४) आधेय-आधार, (१५) आविर्भाव-तिरोभाव, (१६) गौणता-मुख्यता, (१७) उत्सर्ग अपवाद, (१८) तीन आत्मा, (१९) चार ध्यान, (२०) चार

अनुयोग, (२१) तीन जागृति, (२२ नव व्याख्या, (२३) आठ पक्ष, (२४) सप्त-भगी ।

नय—(पदार्थ अश को ग्रहण करना) प्रत्येक पदार्थ के अनेक धर्म होते है और इनमे से हर एक को ग्रहण करने से एकेक नय गिना जाता है—इस प्रकार अनेक नय हो सकते है, परन्तु यहा सक्षेप से ७ नय कहे जाते है ।

नय के मुख्य दो भेद है—द्रव्यास्तिक (द्रव्य को ग्रहण करना) और पर्यायास्तिक (पर्याय को ग्रहण करना) द्रव्यास्तिक नय के १० भेद—१ नित्य २ एक, ३ सत्, ४ वक्तव्य, ५ अशुद्ध, ६ अन्वय, ७ परम, ८ शुद्ध ९ सत्ता, १० परम-भाव द्रव्यास्तिक नय-पर्यायास्तिक नय के ६ भेद—१ द्रव्य २ द्रव्य व्यजन, ३ गुण, ४, गुण व्यजन, ५ स्वभाव, ६ विभाव-पर्यायास्तिक नय । इन दोनो नयो के ७०० भेद हो सकते है ।

नय सात—१ नैगम २ सग्रह ३ व्यवहार ४ ऋजु-सूत्र ५ शब्द ६ समभिरूढ ७ एवं भूतनय इनमे से प्रथम ४ नयो को द्रव्यास्तिक, अर्थ तथा क्रिया नय कहते है और अन्तिम तीन को पर्यायास्तिक शब्द तथा ज्ञान नय कहते है ।

१ नैगम नय—जिसका स्वभाव एक नही—अनेक मान, उन्मान, प्रमाण से वस्तु माने तीन काल, ४ निक्षेप सामान्य—विशेष आदि माने इसके तीन भेद—

(१) अश-वस्तु के अश को ग्रहण करके माने जैसे निगोद को सिद्ध समान माने ।

(२) आरोप—भूत, भविष्य और वर्तमान, तीनो कालो को वर्तमान मे आरोप करे ।

(३) विकल्प—अध्यवसाय का उत्पन्न होना एव ७०० विकल्प हो सकते है ।

शुद्ध नैगम नय और अशुद्ध नैगम एव दो भेद भी है ।

२ सग्रह नय—वस्तु की मूल सत्ता को ग्रहण करे जैसे सर्व जीवो

को सिद्ध समान जाने, जैसे एगे आया-आत्मा एक (एक समान स्वभाव अपेक्षा) ३ काल ४ निक्षेप और सामान्य को माने, विशेष न माने।

३ व्यवहार नय—अन्तःकरण (आन्तरिक दशा) की दरकार (परवाह) न करते हुवे व्यवहार माने जैसे जीव को मनुष्य तिर्यच, नरक, देव माने। जन्म लेने वाला, मरने वाला आदि, प्रत्येक रूपी पदार्थो मे वर्ण, गन्ध आदि २० बोल सत्ता में है परन्तु बाहर जो दिखाई देवे केवल उन्हे ही माने जैसे हस को श्वेत, गुलाब को सुगन्धी शर्कर को मीठी माने। इसके भी शुद्ध अशुद्ध दो भेद। सामान्य के साथ विशेष माने, ४ निक्षेप, तीन ही काल की बात माने।

४ ऋजु सूत्र—भूत, भविष्य की पर्यायों को छोड कर केवल वर्तमान-सरल पर्याय को माने वर्तमान काल, भाव निक्षेप और विशेष को ही माने जैसे साधु होते हुवे भोग में चित्त जाने पर भोगो और गृहस्थ होते हुवे त्याग मे चित्त जाने से उसे साधु माने।

ये चार द्रव्यास्तिक नय है। ये चारो नय समकित, देश व्रत, सर्व व्रत, भव्य अभव्य दोनो मे होवे परन्तु शुद्धोपयोग रहित होने से जीव का कल्याण नही होता।

५ शब्द नय—समान शब्दो का एक ही अर्थ करे विशेष, वर्तमान काल और भाव निक्षेप को ही माने। लिंग भेद नही माने। शुद्ध उपयोग को ही माने जैसे शक्रेन्द्र, देवेन्द्र, पुरेन्द्र, सूचीपति इन सब को एक माने।

६ समभिरुढ नय—शब्द के भिन्न-भिन्न अर्थो को माने। जैसे शक्र सिहासन पर बैठे हुवे को ही शक्रेन्द्र माने एक अश न्यून होवे उसे भी वस्तु मान लेवे, विशेष भाव निक्षेप और वर्तमान काल को ही माने।

७ एवभूत नय—एक अश भी कम नही होवे उसे वस्तु माने। शेष को अवस्तु माने, वर्तमान काल और भाव निक्षेप को ही माने।

जो नय से ही एकान्त पक्ष ग्रहण करे उसे नयाभास (मिथ्यात्वी) कहते है। जैसे—७ अन्धो ने एक हाथी को दतुशल, सूण्ड, कान, पेट, पॉव, पूछ और कुम्भस्थल माना वे कहने लगे कि हाथी मूसल समान, हडूमान समान, सूप समान, कोठी समान, स्तम्भ समान, चामर समान तथा घट समान है। समदृष्टि तो सब को एकातवादी समझ-कर मिथ्या मानेगा, परन्तु सर्व नयो को मिलाने पर सत्य स्वरूप बनता है। अत वही समदृष्टि कहलाता है।

निक्षेप चार—एकेक वस्तु के जैसे अनन्त नय हो सकते है, वैसे ही निक्षेप भी अनन्त हो सकते है, परन्तु यहां मुख्य चार निक्षेप कहे जाते है। निक्षेप सामान्य रूप प्रत्यक्ष ज्ञान है। वस्तु तत्व ग्रहण मे अति आवश्यक है। इसके चार भेद .—

नाम निक्षेप : जीव व अजीव का अर्थ शून्य, यथार्थ तथा अयथाथ नाम रखना।

स्थापना निक्षेप . जीव व अजीव की सदृश (सद्भाव तथा अस-दृश (अदृश भाव) स्थापना (आकृति व रूप) करना सो स्थापना निक्षेप।

द्रव्य निक्षेप भूत और वर्तमान काल की दशा को वर्तभान मे भाव शून्य होते हुए कहना व मानना। जैसे युवराज तथा पद-भ्रष्ट राजा को राजा मानना, किसीके कलेवर (लाश) को उसके नाम से जानना।

भाव निक्षेप . सम्पूर्ण गुणयुक्त वस्तु को हो वस्तु रूप से मानना।

दृष्टान्त —महावीर नाम सो नाम निक्षेप-किसी ने अपना यह नाम रक्खा हो, महावीर लिखा हो, चित्र निकाला हो, मूर्ति होवे अथवा कोई चीज रख कर महावीर नाम से सम्बोधित करते हो तो यह महावीर का स्थापना निक्षेप केवलज्ञान होने के पहिले ससारी जीवन को तथा निर्वाण प्राप्त करने के वाद के शरीर को महावीर मानना सो महावीर का द्रव्य निक्षेप और महावीर स्वय केवलज्ञान-

दर्शन सहित विराजमान हो उन्ही को ही महावीर मानना (कहना) सो भाव निक्षेप । इस प्रकार जीव, अजीव आदि सर्व पदार्थों का चार निक्षेप लगा कर ज्ञान हो सकता है ।

द्रव्य गुण पर्याय द्वार—धर्मास्ति काय आदि जैसे ६ द्रव्य है। चलन सहाय आदि स्वभाव यह प्रत्येक का अलग-अलग गुण है और द्रव्यो में उत्पाद-व्यय, ध्रौव्य आदि परिवर्तन होना सो पर्याय है ।

दृ टान्त : जीव-द्रव्य, ज्ञान, दर्शन आदि गुण, मनुष्य, तिर्यच, देव; साधु आदि दशा यह पर्याय समझना ।

द्रव्य, क्षेत्र-काल-भाव द्वार=द्रव्य-जीव अजीव आदि आकाश प्रदेश यह क्षेत्र, समय यह काल (घड़ी जाव काल चक्र तक समझना) वर्ण, गन्ध, रस स्पर्श आदि सो भाव । जीव, अजीव सब पर द्रव्य क्षेत्र काल भाव घट (लागू) हो सकता है ।

द्रव्य भाव द्वार—भाव को प्रकट करने मे द्रव्य सहायक है । जैसे द्रव्य से जोव अमर, शाश्वत भाव से अशाश्वत है । द्रव्य से लोक शाश्वत है भाव से अशाश्वत है अर्थात् द्रव्य यह मूल वस्तु है, सदैव शाश्वत है । भाव यह वस्तु की पर्याय है अशाश्वती है ।

जैसे भौरे के लक्कड़ कुतरते समय 'क' ऐसा आकार वन जाता है सो यह द्रव्य 'क' और किसी पण्डित ने समझ कर 'क' लिखा सो भाव 'क' जानना ।

कारण-कार्य द्वार—साध्य को प्रगट कराने वाला तथा कार्य को सिद्ध कराने वाला कारण है । कारण बिना कार्य नही हो सकता । जैसे घट बनाना यह कार्य है और इसलिये मिट्टी, कुम्हार, चाक, (चक्र) आदि कारण अवश्य चाहिये । अत: कारण मुख्य है ।

निश्चय व्यवहार-- निश्चय को प्रगट कराने वाला व्यवहार है । व्यवहार बलवान है, व्यवहार से ही निश्चय तक पहुॅच सकते है । जैसे निश्चय मे कर्म का कर्ता कर्म है । व्यवहार से जीव कर्मो का

कर्ता माना जाता है। जैसे निश्चय से हम चलते है, किन्तु व्यवहार से कहा जाता है कि गॉव आया, जल चूता है। परन्तु कहा जाता है कि छत चूती है इत्यादि।

उपादान निमित्त—उपादान यह मूल कारण है, जो स्वयं कार्य मे परिणमता है। जैसे घट का उपादान कारण मिट्टी और निमित्त यह सहकारी कारण है। जैसे घट वनाने मे कुम्हार, पावड़ा, चाक आदि। शुद्ध निमित्त कारण होवे तो उपादान को साधक होता है और अशुद्ध निमित्त होवे तो उपादान को बाधक भी होता है।

चार प्रमाण—प्रत्यक्ष, आगम, अनुमान, उपमा प्रमाण। प्रत्यक्ष के दो भेद : (१) इन्द्रिय प्रत्यक्ष (पॉच इन्द्रियो से होने वाला प्रत्यक्ष ज्ञान), (२ नो इन्द्रिय प्रत्यक्ष (इन्द्रियो की सहायता के विना केवल आत्म-शुद्धता से होने वाला प्रत्यक्ष ज्ञान)। इसके दो भेद —१ देश से (अवधि और मन. पर्यव) और २ सर्व से (केवल ज्ञान)।

आगम प्रमाण—शास्त्र वचन, आगमो के कथन को प्रमाण मानना।

अनुमान प्रमाण—जो वस्तु अनुमान से जानी जावे इसके ५ भेद —

(१) कारण से—जैसे घट का कारण मिट्टी है, मिट्टी का कारण घट नही।

(२) गुण से—जैसे पुष्प मे सुगन्ध, सुवर्ण मे कोमलता, जीव मे ज्ञान।

(३) आसरण (चिन्ह)—जैसे धुएँ से अग्नि, बिजली से बादल आदि समझना व जानना।

(४) आवयवेणं—जैसे दन्तशूल से, हाथी चूडियो से स्त्री, शास्त्र रुचि से समकिति जानना।

(५) दिट्ठी सामन्न—सामान्य से विशेष को जाने। जैसे एक रुपये को देख कर अनेक रुपये जाने। एक मनुष्य को देखने से समस्त देश के मनुष्यों को जाने।

अच्छे-बुरे चिन्ह देखकर तीनों ही काल के ज्ञान की कल्पना अनुमान से हो सकती है।

उपमा प्रमाण :—उपमा देकर समान वस्तु से ज्ञान (जानना) करना। इसके ४ भेद :

(१) यथार्थ वस्तु को यथार्थ उपमा, (२) यथार्थ वस्तु को अयथार्थ उपमा, (३) अयथार्थ वस्तु को यथार्थ उपमा और (४) अयर्थाथ वस्तु को अयथार्थ उपमा।

सामान्य विशेष—सामान्य से विशेष बलवान है। समुदाय रूप जानना सो सामान्य। विविध भेदानुभेद से जानना सो विशेष। जैसे द्रव्य सामान्य, जीव-अजीव ये विशेष। जीव द्रव्य सामान्य, संसारी सिद्धि विशेष इत्यादि।

गुण गुणी—पदार्थ में जो खास वस्तु (स्वभाव) है वह गुण और जो गुण जिसमें होता है वो वस्तु (गुणधारक) गुणी है। जैसे ज्ञान यह गुण और जीव गुणी, सुगन्ध गुण व पुष्प गुणी। गुण और गुणी अभेद (अभिन्न) रूप से रहते है।

ज्ञेय-ज्ञान-ज्ञानी—जानने योग्य (ज्ञान के विषय भूत) सर्व द्रव्य ज्ञेय। द्रव्य का जानना सो ज्ञान है और पदार्थों को जानने वाला वो ज्ञानी। ऐसे ही ध्येय ध्यान ध्यानी आदि समझना।

उपन्नेवा, विहज्जेवा धुवेवा—उत्पन्न होना, नष्ट होना और निश्चल रूप से रहना। जैसे जन्म लेना, मरना व जीव याने कायम (अमर) रहना।

आधेय-आधार—धारणा करने वाला आधार और जिसके आधार से (स्थित) रहे वो आधेय। जैसे—पृथवी आधार, घटादि पदार्थ आधेय। जीव आधार, ज्ञानादि आधेय।

आविर्भाव-तिरोभाव—जो पदार्थ गुण दूर है वो तिरोभाव और जो पदार्थ गुण समीप मे है वो आविर्भाव। जैसे—दूध मे घी का तिरोभाव है और मक्खन मे घी का आविर्भाव है।

गौणता-मुख्यता—अन्य विषयो को छोड कर आवश्यक वस्तुओं का व्याख्यान करना सो मुख्यता और जो वस्तु गुप्त रूप से अप्रधानता से रही हो वो गौणता। जैसे—ज्ञान से मोक्ष होता ऐसा कहने मे ज्ञान की मुख्यता रही और दर्शन, चारित्र तपादि की गौणता रही।

उत्सर्ग-अपवाद – उत्सर्ग यह उत्कृष्ट मार्ग है और अपवाद उसका रक्षक है उत्सर्ग माग से पतित अपवाद का अवलबन लेकर फिर से उत्सर्ग (उत्कृष्ट) मार्ग पर पहुच सकता है। जैसे सदा ३ गुप्ति से रहना यह उत्सर्ग मार्ग है और ५ समिति यह गुप्ति के रक्षक (सहायक) अपवाद मार्ग है। जिन कल्प उत्कृष्ट मार्ग है, स्थविरकल्प अपवाद मार्ग। इत्यादि षट् द्रव्य मे भी जानना चाहिए।

तीन आत्मा—बहिरात्मा अन्तरात्मा और परमात्मा।

बहिरात्मा—शरीर, धन, धान्यादि समृद्धि, कुटुम्ब परिवार आदि मे तल्लीन होवे सो मिथ्यात्वी।

अन्तरात्मा—वाह्य वस्तु को अन्य समझ कर उसे त्यागना चाहे व त्यागे वो अन्तरात्मा ४ से १३ गुण स्थान वाले।

परमात्मा—सर्व कार्य जिसके सिद्ध हो गये हो और कर्म मुक्त होकर जो स्व-स्वरूप मे लीन है वह सिद्ध परमात्मा।

चार ध्यान—(१) पदस्थ •—पञ्च परमेष्टि के गुणो का ध्यान करना सो पदस्थ ध्यान।

(२) पिंडस्थ—शरीर मे रहे हुए अनन्त गुणयुक्त चैतन्य का अध्यात्म-ध्यान करना।

(३) रूपस्थ – अरूपी होते हुए भी कर्म योग से आत्मा संसार मे अनेक रूप धारण करती है एव विचित्र ससार अवस्था का ध्यान करना और उससे छूटने का उपाय सोचना।

(४) रूपातीत—सच्चिदानन्द, अगम्य, निराकार, निरञ्जन सिद्ध प्रभु का ध्यान करना ।

चार अनुयोग—१ द्रव्यानुयोग – जीव, अजीव, चैतन्य जड़ (कर्म) आदि द्रव्यों का स्वरूप का जिसमे वर्णन होवे ।

(२) गणितानुयोग—जिसमे क्षेत्र, पहाड़, नदी, देवलोक, नारकी, ज्योतिषी आदि के गणित माप का वर्णन होवे ।

(३) चरणानुयोग—जिसमें साधु-श्रावक का आचार, क्रिया का वर्णन होवे ।

(४) धर्म कथानुयोग—जिसमे साधु श्रावक, राजा, रङ्क आदि के वैराग्यमय बोधदायक जीवन प्रसगों का वर्णन होवे ।

जागरण तीन—(१) बुध जाग्रिका—तीर्थंकर और केवलियो की दशा । (२) अबुध जाग्रिका—छद्मस्थ मुनियों की और (३) सुद खु जाग्रिका—श्रावको की (अवस्था) ।

व्याख्या नय—एकेक वस्तु की उपचार नय से ६-६ प्रकार से व्याख्या हो सकती है ।

(१) द्रव्य मे द्रव्य का उपचार—जैसे काष्ठ मे वशलोचन
(२) „ „ गुण का „ „ जीव ज्ञानवन्त है
(३) „ „ पर्याय का „ „ „ स्वरूपवान है ।
(४) गुण मे द्रव्य का „ — „ „ अज्ञानी जीव है ।
(५) „ „ गुण „ „ — „ „ ज्ञानी होने पर भी क्षमावंत है ।
(६) गुण मे पर्याय „ „ — „ यह तपस्वी बहुत स्वरूपवान है ।
(७) पर्याय में द्रव्य „ „ — „ यह प्राणी देवता का जीव है ।
(८) „ „ गुण „ „ — „ यह मनुष्य बहुत ज्ञानी है ।

(६) ,, ,, पर्याय ,, ,, — ,, यह मनुष्य श्याम वर्ण का है इत्यादि।

पक्ष आठ—एक वस्तु की अपेक्षा से अनेक व्याख्या हो सकती है। इसमे मुख्यतया आठ पक्ष लिए जा सकते है। नित्य, अनित्य, एक, अनेक, सत्, असत्, वक्तव्य और अवक्तव्य से आठ पक्ष निश्चय व्यवहार से उतारे जाते है।

पक्ष	व्यवहार नय अपेक्षा	निश्चय नय अपेक्षा
नित्य	एक गति मे घूमने से नित्य है	ज्ञान दर्शन अपेक्षा नित्य है
अनित्य	समय २ आयुष्य क्षय होने से अनित्य है	अगुरु लघु आदि पर्याय से अनित्य है
एक	गति में वर्तन दशा से एक है	चैतन्य अपेक्षा जीव एक है
अनेक	पुत्र पुत्री, भाई आदि स से अ. है	असख्य प्रदेशापेक्षा अनेक है
सत्	स्वगति, स्वक्षेत्रापेक्षा सत् है	ज्ञानादि गुणापेक्षा सत् है
असत्	पर गति पर क्षेत्रापेक्षा असत् है	पर गुण अपेक्षा असत् है
वक्तव्य	गुणस्थान आदि की व्याख्या हो सकने से	सिद्ध के गुणो को जो व्याख्या हो सके
अवक्तव्य	जो व्याख्या केवली भी नही कर सके	सिद्ध के गुणो को जो व्याख्या नही हो सके

सप्त भगी—१ स्यात् अस्ति, २ स्यात् नास्ति, ३ स्यात् अस्ति नास्ति, ४ स्यात् वक्तव्य, ५ स्यात् अस्ति अवक्तव्य, ६ स्यात् नास्ति अवक्तव्य, ७ स्यात् अस्ति नास्ति अवक्तव्य।

यह सप्त भगी प्रत्येक पदार्थ (द्रव्य) पर उतारी जा सकती है। इसमे ही स्याद्वाद का रहस्य भरा हुआ है। एकेक पदार्थ को अनेक अपेक्षा से देखने वाला सदा समभावी होता है।

दृष्टान्त के लिए सिद्ध परमात्मा के ऊपर सप्त भगी उतारी जाती है।

(१) स्यात् अस्ति-सिद्ध स्वगुण अपेक्षा है ।

(२) स्यात् नास्ति-सिद्ध पर गुण अपेक्षा नही (परगुणों का अभाव है)

(३) स्यादस्ति-नास्ति-सिद्धो में स्वगुणो की अस्ति और परगुणो की नास्ति है ।

(४) स्यादवक्तव्य—अस्ति-नास्ति युगपत् है तो भी एक समय मे नही कही जा सकती है ।

(५) स्यादस्ति अवक्तव्य—स्वगुणो की अस्ति है तो भी १ समय में नही कही जा सकती है ।

(६) स्यान्नास्त्य वक्तव्य—पर गुणो की नास्ति है और १ समय में नही कहे जा सकते है ।

(७) स्यादस्तिनास्त्य वक्तव्य—अस्ति नास्ति दोनो है परन्तु एक समय में कहे नही जा सकते ।

इस स्याद्वाद स्वरूप को समझ कर सदा समभावी वन कर रहना जिससे आत्म-कल्याण होवे ।

भाषा-पद

(श्री पन्नवणा सूत्र के ११ वे पद का अधिकार)

(१) भाषा जीव को ही होती है। अजीव को नही होती किसी प्रयोग से (कारण से) अजीव मे से भी भाषा निकलती हुई सुनी जाती है। परन्तु यह जीव की ही सत्ता है ।

(२) भाषा की उत्पत्ति--औदारिक, वैक्रिय और आहारक इन तीन शरीर द्वारा ही हो सकती है ।

(३) भाषा का सस्थान--वज्र समान है भाषा के पुद्गल वज्र सस्थान वाले है।

(४) भाषा के पुद्गल उत्कृष्ट लोक के अन्त (लोकान्तक) तक जाते है।

(५) भाषा दो प्रकार की है—पर्याप्त भाषा (सत्य-असत्य) और अपर्याप्त भाषा (मिश्र और व्यवहार भाषा)

(६) भाषक—समुच्चय जीव और त्रस के १९ दण्डक में भाषा बोली जाती है। ५ स्थावर और सिद्ध भगवान अभाषक है। भाषक अल्प है। अभाषक इनसे अनन्त है।

(७) भाषा चार प्रकार की है—सत्य, असत्य, मिश्र और व्यवहार भाषा। १६ दण्डको मे चार ही भाषा तीन दण्डको (विकलेन्द्रिय) में व्यवहार भाषा है ५ स्थावर में भाषा नही।

(८) स्थिर-अस्थिर—जीव जो पुद्गल भाषा रूप से लेते है वे स्थिर है या अस्थिर ? आत्मा के समीप रहे हुवे स्थिर पुद्गलो को ही भाषा रूप से ग्रहण किये जाते है। द्रव्य-क्षेत्र, काल-भाव अपेक्षा चार प्रकार से ग्रहण होता है।

१ द्रव्य से अनन्त प्रदेशी द्रव्य को भाषा रूप से ग्रहण करते है।

२ क्षेत्र से असंख्यात आकाश प्रदेश अवगाहे ऐसे अनन्त प्रदेशी द्रव्य को भाषा रूप में लेते है।

३ काल से १-२-३-४-५-६-७-८-९-१० सख्याता और असख्याता समय की एव १२ बोल की स्थिति वाले पुद्गलों को भाषा रूप से लेते है।

४ भाव से—५ वर्ण, २ गन्ध, ५ रस, ४ स्पर्श वाले पुद्गलो को भाषा रूप में ग्रहण करते है। यह इस प्रकार के एकेक वर्ण, एकेक रस, और एकेक स्पर्श के अनन्त गुणा अधिक के १३ भेद करना अर्थात् वर्ण के ५×१३=६५, गन्ध के २×१३=२६, रस के ५×१३ =६५ और स्पर्श के ४×१३=५२ बोल हुवे।

इनमे द्रव्य का १ बोल क्षेत्र का १ और काल के १२ बोल मिलाने से २२२ बोल हुवे ये २२२ बोल वाले पुद्गल द्रव्य भाषा रूप से ग्रहण होते है—(१) स्पर्श किये हुवे (२) आत्म अवगाहन किये हुवे (३) अनन्तर अवगाहन किये हुवे (४) अगुवा सूक्ष्म (५) बादर स्थूल (६) उर्ध्व दिशा का (७) अधो दिशा का (८) तीर्छी दिशा का ९) आदि का (१०) अन्त का (११) मध्य का (१२) स्वविषय का (भाषा योग्य) (१३) अनुपूर्वी [क्रमशः] (१४) त्रस नाली की ६ दिशा का (१५) ज० १ समय उ० असख्यात समय की अ० मु के सान्तर पुद्गल (१६) निरन्तर ज. २ समय ज २ समय उ, असंख्य समय की अ मु का (१७) प्रथम के पुदगलों को ग्रहण करे, 'अन्त समय त्यागे मध्यम कहे और छोडता रहे ये १७ बोल और ऊपर के २२२ मिल कर कुल २३९ बोल हुवे समुच्चय जोव और १९ दण्डक एवं २० गुण करने से २३९×२०=४७८० बोल हुवे।

(९) सत्य भाषापने पुद्गल ग्रहे तो समुच्चय जीव और १६ दण्डक ये १७ वोल २३९ प्रकार से [ऊपर अनुसार] ग्रहे अर्थात् १७×२३९=४०६३ बोल इसी प्रकार असत्य भापा के ४०६३ वोल

और मि ‍। भाषा के ४०६३ बोल. तथा व्यवहार भाषा के समुच्चय जीव और १६ दण्डक एव २०×२३६=४७८० बोल, कुल मिल कर २१७४६ बोल एक वचनापेक्षा और २१७४६ वहु वचनापेक्षा, कुल ४३३६८ भागा भाषा के हुवे।

(१०) भाषा के पुद्गल मुँह मे से निकलते जो वे भेदाते निकले तो रास्ते मे से अनन्त गुणी वृद्धि होते २ लोक के अन्त भाग तक चले जाते है, जो अभेदाते पुद्गल निकले तो सख्यात योजन जाकर [विध्वस] लय पा जाते है।

(११) भाषा के भेद भेदाते पुद्गल निकले। वो ५ प्रकार से (१) खण्डा भेद—पत्थर, लोहा, काष्ट आदि के टुकड़े वत् (२) परतर भेद—अबरख के पुडवत् (३) चूर्ण भेद—धान्य कठोल वत् (४) अगुतडिया भेद—तालाव की सूखी मिट्टी वत् (५) उक्करिया भेद—कठोल आदि की फलीयाँ फटने के समान इन पाचो का अल्पबहुत्व—सब से कम उक्करिया, उनसे अणुतडिया अनन्त गुणा, उनसे चूर्णिय अनन्त गुणा, उनसे परतर अनन्त गुणा, उनसे खण्डाभेद भेदाते पुद्गल अनन्त गुणा।

(१२) भाषा पुद्गल की स्थिति ज० अ० मु० की।

(१३) भाषक का आन्तरा ज० अ० मु०, अनन्त काल का (वनस्पति मे जाने पर)।

(१४) भाषा पुद्गल काया योग से ग्रहण किये जाते है।

(१५) भाषा पुद्गल वचन योग से छोडे जाते है।

(१६) कारण-मोह और अन्तराय कर्म के क्षयोपशम और वचन योग से सत्य और व्यवहार भाषा बोली जाती है। ज्ञानावरण और मोहकर्म के उदय से और वचन योग से असत्य और मिश्र भापा वोली जाती है। केवली सत्य और व्यवहार भाषा ही बोलते है। उनके चार घातिक कर्म क्षय हुए है। विकलेन्द्रिय केवल व्यवहार

भाषा-संसार रूप ही बोलते हैं और १६ दण्डक के जीव चारों ही प्रकार की बोलते हैं।

(१७) जीव जिस प्रकार की भाषा रूप में द्रव्य ग्रहण करते है वे उसी प्रकार की भाषा बोलते हैं।

(१८) वचन द्वार—बोलने वाले—व्याख्यानदाताओं को नीचे का वचन ज्ञान करना ।जानना चाहिए। एक वचन, द्विवचन, बहु वचन; स्त्री वचन, पुरुष वचन, नपुंसक वचन, अध्यवसाय वचन, वर्ण (गुण कीर्तन), अवण (अवर्णवाद), वर्णावर्ण (प्रथम गुण करने के बाद अवर्ण वाद), अवर्ण वर्ण (प्रथम अवगुण करके पश्चात् गुण कहना), भूत-भविष्य-वर्तमान काल वचन, प्रत्यक्ष-परोक्ष वचन, इन १६ प्रकार के सिवाय विभक्ति तद्धित, धातु, प्रत्यय आदि का ज्ञाता होवे।

(१६) शुभ इरादे से चार प्रकार की भाषा बोलने वाला आराधक हो सकता है।

(२०) चार भाषा के ४२ नाम है, सत्य भाषा के १० प्रकार—१ लोक भाषा २ स्थापना सत्य [चित्रादि के नाम से कहलाने वाली] ३ नाम सत्य [गुण होवे या नहीं होवे जो नाम होवे वह कहना] ४ रूप सत्य [तादृश रूप समान कहना जैसे हनुमान समान-रूप पुतले को हनुमान कहना] ५ अपेक्षा सत्य ६-७ व्यवहार सत्य ८ भाव सत्य ६ योग सत्य १० उपमा सत्य।

असत्य वचन के १० प्रकार—१ क्रोध से २ मान से ३ माया से ४ लोभ से ५ राग से ६ द्वेष से ७ हास्य से ८ भय से [इन कारणो से बोली हुई भाषा—आत्म ज्ञान भूल कर] बोली हुई होने से सत्य होने पर भी असत्य है। ६ परपरिताप वाली १० प्राणातिपात [हिंसक] भाषा एवं १० प्रकार की भाषा असत्य है।

मिश्र भाषा के १० प्रकार—इस नगर में इतने मनुष्य पैदा हुवे, इतने मरे, आज इतने जन्म मरण हुवे, ये सर्व जीव है, ये सब अजीव

है, इनमें आधे जीव हैं, आधे अजीव है, यह वनस्पति समस्त अनन्त काय है वह सर्व परित्त काय है। पोरसी दिन आ गया। इतने वर्ष व्यतीत हो गये, तात्पर्य यह कि जब तक जिस बात का निश्चय न होवे [चाहे कार्य हुआ हो] वहा तक मिश्र भाषा ।

व्यवहार भाषा के १२ प्रकार—१ सबोधित भाषा [हे वीर, हे देव इ०] २ आज्ञा देना ३ याचना करना ४ प्रश्नादि पूछना ५ वस्तु-तत्त्व प्ररूपणा करनी ६ प्रत्याख्यानादि करना ७ सामने वाले की इच्छानुसार बोलना "जहासुह" ८ उपयोग शून्य बोलना ९ इरादा पूर्वक व्यवहार करना १० शंका युक्त बोलना ११ अस्पष्ट बोलना, १२ स्पष्ट बोलना, जिस भाषा मे असत्य न होवे और सपूर्ण या तो उसे व्यवहार भाषा जानना ।

२१ अल्प बहुत्व—सब से कम सत्य भाषक, उनसे मिश्र भाषक असंख्यात गुणा, उससे असत्य भाषक असख्यात गुणा, उनसे व्यवहार भाषक असख्यात गुणा और उनसे अभाषक (सिद्ध तथा एकेन्द्रिय) निश्चय सत्य न होवे अनन्त गुणा ।
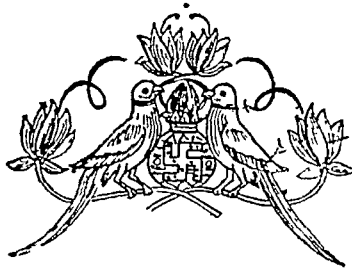
आयुष्य के १८०० भांगा

(श्री पन्नवणा सूत्र, पद छट्ठा)

पांच स्थावर मे जीव निरन्तर उत्पन्न होवे और इनमें से निरन्तर निकले। १६ दण्डक मे जीव सान्तर और निरन्तर उपजे और सान्तर तथा निरन्तर निकले। सिद्ध भगवान सान्तर और निरन्तर उपजे परन्तु सिद्ध में से निकले नही ४ स्थावर समय समय असख्याता जीव उपजे और असख्याता चवे, वनस्पति मे समय स-य अनन्ता जीव उपजे और अनन्त चवे १६ दण्डक मे समय समय १-२-३ यावत् से संख्याता, असंख्याता जीव उपजे और चवे। सिद्ध भगवान १-२-३ जाव १०८ उपजे परन्तु चवे नही।

आयुष्य का बन्ध किस समय होता है ? नारकी, देवता और युगलिये आयुष्य मे जब ६ माह शेष रहे तब परभव का आयुष्य वाधे शेष जीव दो प्रकार बाधे—सोपक्रमो और निरुपक्रमी। निरुपक्रमी तो नियमा तीसरा भाग आयुष्य का शेष रहने पर बांधे और सोपक्रमी आयुष्य के तीसरे, नववे, सत्तावीसवे, एकाशीवे २४३ वे भाग में तथा अन्तिम अन्तर्मुहुर्त्त में परभव का आयुष्य वान्धे आयुष्य-कर्म के साथ साथ ६ बोल (जाति, गति, स्थिति, अवगाहना, प्रदेश और अनुभाग) का बन्ध होता है।

समुच्चय जीव और २४ दण्डक के एकेक जीव ऊपर के बोलो का बन्ध करे (२५×६=१५०) ऐसे ही अनेक जीव बन्ध करे। १५०+१५०=३००, ३०० निद्धस और ३०० निकांचित बन्ध होवे। एव ६०० भांगा (प्रकार) नाम कर्म के साथ, ६०० गोत्र कर्म के साथ और ६०० नाम गोत्र के साथ (एकट्ठा साथ लगाने से आयुष्य कर्म के १८०० भांगे हुवे)।

जीव जाति निद्धस आयुष्य बांधते है, गाय जैसे पानी को खीच कर पीवे वैसे ही आकर्षित करते है, कितने आकर्षण से पुद्गल ग्रहण करते है। उस समय १-२-३- उत्कृष्ट कर्म खेचते है उसका अल्प बहुत्व सर्व से कम ८ कर्म का आकर्षण करने वाले जीव, उनसे ७ कर्म का आकर्षण करने वाले जीव संख्यात गुणा, उनसे ६ कर्म का आकर्णण करने वाले जीव सख्यात गुणा, उनसे ५-४-३-२ और १ कर्म का आकर्णण करने वाले जीव क्रमश सख्यात सख्यात गुणा ।

जैसे जाति नाम निद्धस का समुच्चय जीव अपेक्षा अल्प बहुत्व बताया है वैसे ही गति आदि ६ बोलो का अल्पबहुत्व २४ दण्डक पर होता है। एव १५० का अल्पबहुत्व यावत् ऊपर के १८०० भांगो का अल्पबहुत्व कर लेवे ।
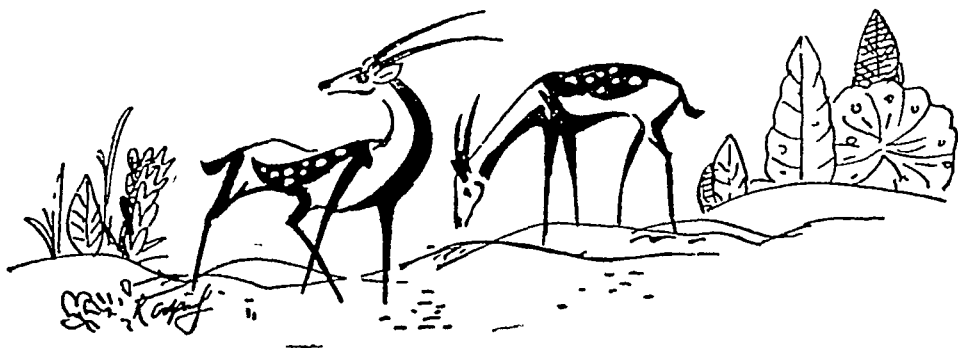
सोपक्रम-निरुपक्रम

(श्री भगवती सूत्र शतक २० उद्देशा)

सोपक्रम आयुष्य ७ कारण से टूट सकता है—१ जल से २ अग्नि से ३ विष से ४ शस्त्र से ५ अति-हर्ष से ६ शोक से ७ भय से (बहुत चलना, बहुत खाना, मैथुन का सेवन करना आदि व्यसन से)।

निरुपक्रम आयुष्य-बन्धा हुवा पूरा आयुष्य भोगवे बीच मे टूटे नही। जीव दोनो प्रकार के आयुष्य वाले होते है।

१ नारकी, देवता, युगल मनुष्य, तीर्थंकर, चक्रवर्ती, वासुदेव, प्रति वासुदेव, इनके आयुष्य निरुपक्रमी होते है शेष सब जीवो के दोनो प्रकार का आयुष्य होता है।

२ नारकी सोपक्रम (स्वहस्ते शस्त्रादि) से उपजे, पर उपक्रम से तथा बिना उपक्रम से ? तीनो प्रकार से। तात्पर्य कि मनुष्य तिर्यंच पने जीव नरक का आयुष्य बान्धा होवे तो मरते समय अपने हाथो से दूसरो के हाथों से अथवा आयुष्य पूर्ण होने के बाद मरे, एव २४ दण्डक जानना।

३ नेरिये नरक से निकले तो स्वोपक्रम से परोपक्रम से तथा उपक्रम से। बिना उपक्रम से। एव १३ देवता के दण्डक में भी बिना उपक्रम से चवे। स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय, तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय और मनुष्य एवं १० दण्डक के जीव तीनों ही उपक्रम से चवे।

४ नारकी स्वात्म ऋद्धि (नरकायु आदि) से उत्पन्न होवे कि पर ऋद्धि से ? स्वऋद्धि से और निकले (चवे) भी स्वऋद्धि से एव २३ दण्डक मे जानना।

५,२४ दण्डक के जीव स्वप्रयोग (मन, वचन, काय) से उपजे और निकले, पर प्रयोग से नही।

६,२४ दण्डक के जीव स्वकर्म से उपजे और निकले (चवे), कर्म से नही।

●

हियमाण-वढ्ढमाण

(श्री भगवती सूत्र, शतक ५ उ० ८)

(१) जीव हियमान (घटता) है या वर्द्धमान (वढता) ? न तो हियमान है और न वर्द्धमान परन्तु अवस्थित (बध-घट बिना जैसे का तैसा रहे) है।

(२) नेरिया हियमान, वर्धमान और अवस्थित भी है एव २४ दण्डक, सिद्ध भगवान वर्धमान और अवस्थित है।

(३) समुच्चय जीव अवस्थित रहे तो शाश्वत नेरिया हियमान, वर्धमान रहे तो ज० १ समय उ० आवलिका के असख्यातवे भाव और अवस्थित रहे तो विरह काल से दुगुणा (देखो विरह पद का थोकडा) एव २४ दण्डक में अवस्थित काल विरह से दूना, परन्तु ५ स्थावर मे अवस्थित काल हियमानवत् जानना। सिद्धो मे वर्धमान जघन्य १ समय, उत्कृष्ट ८ समय और अवस्थित काल जघन्य १ समय उत्कृष्ट ६ माह।
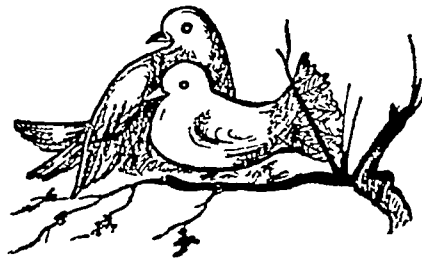
सावचया सोवचया

(श्री भगवती सूत्र, शतक ५, उ० ८)

१ सावचया (वृद्धि), २ सोवचया (हानि), ३ सावचया सोवचया (वृद्धि-हानि) और ४ निरुवचया (न तो वृद्धि और न हानि)। इन चार भागों पर प्रश्नोत्तर। समुच्चय जीवो में चौथा भांगा पावे, शेष तीन नही, २४ दण्डक मे चार ही भांगा पावे। सिद्ध मे भांगा २ (सावचया और निरुवचया-निरवचया)

समुच्चय जीवों में जो निरुवचया-निरवचया है वे सर्वार्थ है। और नारकी में निरुवचया-निरवचया सिवाय तीन भागों की स्थिति ज० १ समय की उ० आवालिका के असख्यात भाग की तथा निरुवचया-निरवचया की स्थिति विरह द्वारवत्, परन्तु पांच स्थावर मे निरुवचया-निरवचया भी ज० १ समय, उ० आवलिका के असंख्यातवे भाग सिद्ध मे सावचया जघन्य १ समय उत्कृष्ट ८ समय की और निरुवचया-निरवचया जघन्य १ समय की उत्कृष्ट ६ माह को स्थिति जानना।

नोट :—पाच स्थावर मे अवस्थित काल तथा निरुवचया निरवचया काल आवलिका के असख्यातवे भाग कही हुई है यह परकायापेक्षा है। स्वकाय का विरह नही पडता।

क्रत संचय

(श्री भगवती सूत्र, शतक २०, उद्देशा १०)

(१) क्रत सचय—जो एक समय मे दो जीवो से सख्याता जीव उत्पन्न होते है।

(२) अक्रत सचय—जो एक समय मे असख्याता अनन्ता जीव उत्पन्न होते है।

(३) अवक्तव्य संचय—एक समय मे एक जीव उत्पन्न होता है।

१ नारकी (७), १० भवन पति, ३ विकलेन्द्रिय, १ तिर्यञ्च पचेन्द्रिय, १ मनुष्य, १ व्यन्तर, १ ज्योतिषी और १ वैमानिक एव १६ दण्डक मे तीनो ही प्रकार के सचय।

पृथ्वी काय आदि ५ स्थावर मे अक्रत संचय होता है। शेष दो सचय नही होते कारण समय-समय असंख्य जीव उपजते है। यदि किसी स्थान पर १-२-३ आदि संख्याता कहे हो तो उनको परकायापेक्षा समझना।

सिद्ध क्रत संचय तथा अवक्तव्य सचय है, अक्रत सचय नही।

अल्प बहुत्व

नारकी मे सर्व से कम अवक्तव्य सचय उनसे क्रत सचय सख्याता गुणा उनसे अक्रत सचय असंख्यात गुणा एव १६ दण्डक का अल्पबहुत्व जानना।

५ स्थावर मे अल्प बहुत्व नही।

सिद्ध मे सर्व से कम क्रत सचय, उनसे अवक्तव्य सचय सख्यात गुणा।

द्रव्य-(जीवा जीव)

(श्री भगवती सूत्र, शतक २५ उ० २)

द्रव्य दो प्रकार का है—जीव द्रव्य और अजीव द्रव्य।

क्या जीव द्रव्य संख्याता, असंख्याता तथा अनन्ता है? अनन्ता है। कारण कि जीव अनन्त है।

अजीव द्रव्य संख्याता, असंख्याता तथा क्या अनन्ता है? अनन्ता है। कारण कि अजीव द्रव्य पांच है:—धर्मास्तिकाय, अधर्मास्ति काय, असंख्याता प्रदेश है। आकाश और पुद्गल के अनन्त प्रदेश है। और काल वर्तमान एक समय है भूतभविष्यापक्षा अनन्त समय है; इस कारण जीव द्रव्य अनन्ता है।

प्र०—जीव द्रव्य, अजीव द्रव्य के काम में आते है कि अजीव द्रव्य जीव द्रव्य के काम मे आते है।

उ०—जीव द्रव्य अजीव द्रव्य के काम में नही आते, परन्तु अजीव द्रव्य जीव द्रव्य के काम में आते है। कारण कि—जीव अजीव द्रव्य को ग्रहण करके १४ बोल उत्पन्न करते है यथा—१ औदारिक, २ वैक्रिय, ३ आहारक, ४ तेजस, ५ कार्मण शरीर, ५ इन्द्रिय; ११ मन, १२ वचन, १३ काया और १४ श्वासोश्वास।

प्र०—अजीव द्रव्य के नारकी के नेरिये काम आते है कि नेरिये के अजीव द्रव्य काम आते है?

उ०—अजीव द्रव्य के नेरिये काम नही आते, परन्तु नेरिये के अजीव द्रव्य काम आते है। अजीव का ग्रहण करके नेरिये १२ बोल उत्पन्न करते हैं।

(३ शरीर, इन्द्रिय, मन, वचन और श्वासोश्वास)

देवता के १३ दण्डक के प्रश्नोत्तर भी नारकीवत् (१२ बोल उपजावे)।

चार स्थावर के जीव ६ बोल (३ शरीर-स्पर्शेन्द्रिय काय और श्वासोश्वास) उपजावे वायु काय के जीव ७ बोल ऊपर के ६ और वैक्रिय) उपजावे।

बेइन्द्रिय जीव ८ बोल उपजावे (३ शरीर, २ इन्द्रिय, २ योग, श्वासोश्वास)।

त्रि-इन्द्रिय जीव ९ बोल उपजावे (३ शरीर, ३ इन्द्रिय, २ योग, श्वासोश्वास)।

चौरिन्द्रिय जीव १० बोल उपजावे (३ शरीर, ४ इन्द्रिय, २ योग, श्वासोश्वास)।

तिर्यंच पचेन्द्रिय १३ बोल उपजावे (४ शरीर, ५ इन्द्रिय, ३ योग श्वासोश्वास)।

मनुष्य सम्पूर्ण १४ बोल उपजावे।
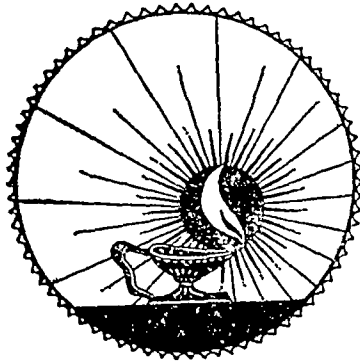
संस्थान–द्वार

(श्री भगवती सूत्र, शतक २५ उद्देशा ३)

संस्थान—आकृति। इसके दो भेद—१ जीव संस्थान और २ अजीव संस्थान। जीव सस्थान के ६ भेद—१ समचौरस २ सादि ३ निग्रोधपरिमण्डल ४ वामन ५ कुब्जक ६ हूण्डक संस्थान। अजीव संस्थान के ६ भेद—१ परिमण्डल (चूड़ी के समान गोल) २ वट्ट (लड्डू समान गोल) ३ त्रस (त्रिकोन) ४ चौरस (चौरस) ५ आयतन (लकड़ी समान लम्बा) ६ अनवस्थित (इन पांचो से विपरीत)।

परिमण्डल आदि छ. ही संस्थानों के द्रव्य अनन्त है; संख्याता या असंख्याता नही।

इन सस्थानों के प्रदेश भी अनन्त है, संख्याता असख्याता नही।

६ संस्थानों का द्रव्यापेक्ष अल्पबहुत्व : सर्व से कम परिमण्डल संस्थान के द्रव्य। उनसे वट्ट का द्रव्य सख्यात गुण। उनसे चौरस के द्रव्य सख्यात गुणा उनसे त्रस के द्रव्य सख्यात गुणा उनसे आयतन के द्रव्य सख्यात गुणा, उनसे अनवस्थित के द्रव्य असंख्यात गुणा।

प्रदेशापेक्षा अल्पबहुत्व भी द्रव्यापेक्षावत् जानना।

द्रव्य-प्रदेशापेक्षा का एक साथ अल्पबहुत्व : सब से कम परिमडल द्रव्य, उनसे वट्ट द्रव्य संख्यात गुण उनसे चौरस द्रव्य सस्यात गुणा उनसे त्रस-द्रव्य संख्याता गुणा उनसे आयतन द्रव्य संख्यात गुणा अनवस्थित सख्यात अस० गुणा आयतन परिमण्डल प्रदेश असख्यात अनवस्थित वटट प्रदेश सं० गुणा आयतन चौरस प्रदेश सख्यात अनवस्थित त्रस प्रदेश स० गुणा आयतन प्रदेश संख्यात अनवस्थित असंख्यात गुणा।

संस्थान के भांगे

(श्री भगवती सूत्र, शतक २५ उद्देशा ३)

सस्थान ५ प्रकार का है—१ परिमडल, २ वट्ट, ३ त्रस, ४ चौरस, ५ आयतन। ये पांचो ही संस्थान सख्याता, असख्याता नही परन्तु अनन्ता है।

७ नारकी, १२ देवलोक, ९ गवेयक, ५ अनुत्तर विमान, सिद्ध शिला और पृथ्वी के ३५ स्थान मे पाच प्रकार के अनन्ता अनन्ता सस्थान है एव ३५×५=१७५ भागे हुवे।

एक यवमध्य परिमडल सस्थान मे दूसरा परिमडल सस्थान अनन्त है। एवं यावत् आयतन सस्थान तक अनन्त अनन्त कहना। इसी प्रकार एक यवमध्य परिमडल के समान अन्य ४ सस्थानो की व्याख्या करना। एक सस्थान मे दूसरे पाचो ही सस्थान अनन्त है अत प्रत्येक के ५×५=२५ बोल। इन उक्त ३५ स्थानो मे होवे अर्थात् ३५+२५=८७५ और १७५ पहले के मिल कर १०५० भागे हुए।

खेताणु-वाई
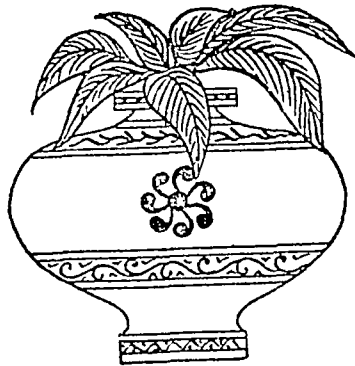
(श्री पन्नवणा सूत्र, तीसरा पद)

तीन लोकों के ६ भेद (भाग) करके प्रत्येक भाग मे कौन रहता है ? यह बताया जाता है।

ऊर्ध्व लोक—

(१) ऊर्ध्व लोक (ज्योतिषी देवता के ऊपर के तले से ऊपर) मे—१२ देवलोक, ३ किल्विषी, ६ लोकांतिक, ६ ग्रैयवेक, ५ अनुत्तर विमान इन ३८ देवो के पर्याप्ता, अपर्याप्ता (७६ देव) तथा मेरु की वापी अपेक्षा वादर तेऊ के पर्याप्ता सिवाय ४६ जाति के तिर्यच होवे, एवं ७६+४६=१२२ भेद (प्रकार) के जीव होते है।

अधोलोक—

(२) अधो लोक (मेरु की समभूमि से ६०० योजन नीचे तीर्छा लोक उससे नीचे) में जीव के भेद ११५ है—७ नारकी के १४ भेद, १० भवनपति, १५ परमाधामी के पर्या० अपर्या० एव ५० देव, सलीलावति विजय अपेक्षा (१ महाविदेह का पर्या० अपर्या० और संमूर्छिम मनुष्य) ३ मनुष्य और ४८ तिर्यच के भेद मिलाकर १४+५०+३+४८=११५ है।

तिर्यक् लोक—

(३) तीर्च्छा लोक (१८०० योजन) में ३०३ मनुष्य, ४८ तिर्यच और ७२ देव (१६ व्यन्तर, १० जृंभका, १० ज्योतिषी इन ३६ के पर्या० अपर्या०) कुल ४२३ के भेद जीव है।

ऊर्ध्व तिर्यक् लोक—

(४) ऊर्ध्व-तीर्छा लोक-(ज्योतिषी के ऊपर के तलाके प्रदेशी

प्रतर के बीच में) देव गमनागमन के समय और जीव चक्कर ऊर्ध्व लोक मे तथा तीर्छे लोक जाते गमनागमन के समय स्पर्श करते हैं।

अध तिर्यक् लोक—

(५) अधो-तीर्छे लोक मे भी दोनो प्रतरों को चव कर जाते आते जीव स्पर्शते है।

ऊर्ध्व अध' तिर्यक् लोक—

(६) तीनो ही लोक (ऊर्ध्व, अधो और तीर्छा लोक) का देवता, देवी तथा मरणांतिक ममुद्रघात करते जीव एक साथ स्पर्श तिर्यच) का करते है।

२४ दण्डक के जीव उपरोक्त ६ लोक में कहाँ न्यूनाधिक है। इसका अल्पबहुत्व —२० बोल (समुच्चय एकेन्द्रिय, ५ स्थावर के ६ समुच्चय, ६ पर्याप्ता, ६ असर्याप्ता १ समुच्चय और १ समुच्चय अल्पबहुत्व।

सब से कम ऊर्ध्व-तीर्छे लोक में, उनसे अधो तीछै लोक में विशेष उससे तीर्छे लोक मे असख्यात गुणा उनसे तीनो लोक में असख्यात गुणा उनसे ऊर्ध्व लोक मे असख्यात गुणा उनसे तीनो अधोलोक में विशेष।

३ बोल (समुच्चय नारकी, पर्याप्ता और अपर्याप्ता नारकी का अल्पबहुत्व सब से कम तीन लोक मे। अधो तीर्छे लोक में असंख्यात, अधो लोक में असंख्यात गुणा)।

६ बोल—भवनपति के (१ समुच्चय, १ पर्याप्ता, १ अपर्याप्ता एवं ३ देवी के) सब से कम ऊर्ध्व लोक में उनसे ऊर्ध्व तीर्छे लोक मे असख्यात गुणा, उनसे तीनो लोक मे सखयात गुणा उनसे अधे-तीर्छे लोक मे असखयात गुणा उनसे तीर्छे लोक में असखयात गुणा उनसे अधो लोक में असखयात गुणा।

४ बोल (तिर्यचनी समुच्चय देव, समुच्चय देवी, पचेन्द्रिय, के पर्याप्ता) का अल्पबहुत्व सब से कम ऊर्ध्वलोक में उनसे ऊर्ध्व-तीर्छे

लोक में असंख्यात गुणा उनसे तीनो लोक मे संख्यात गुणा उनसे अधो-तीर्छे लोक में सख्यात गुणा उनसे अधो लोक में संख्यात गुणा उनसे तीर्छे लोक में ३ बोल सख्यात गुणा और पंचेन्द्रिय का पर्याप्ता असंख्यात गुणा। (एव तीन मनुष्यनी के) बोल—सव से कम तीनों लोक में उनसे ऊर्ध्व-तीर्छे लोक में मनुष्य असंख्यात गुणा मनुष्यनी संख्यात गुणी उनसे अधो-तीर्छे लोक में संख्यात गुणा उनसे ऊर्ध्व लोक में संख्यात गुणा उनसे अधोलोक में संख्यात गुणा उनसे तीर्छे लोक में संख्यात गुणा।

६ बोल-व्यन्तर के (समु० व्यन्तर देव पर्याप्ता, अपर्याप्ता एवं ३ देवी के) बोल सब से कम ऊर्ध्व लोक मे, उनसे ऊर्ध्व तीर्छे लोक में असंख्यात गुणा उनसे तीन लोक में संख्यात गुणा उनसे अधो-तीर्छे लोक में असंख्यात गुणा उनसे अधोलोक मे संख्यात गुणा उनसे तीर्छे लोक में संख्यात गुणा

६ वोल ज्योतिषी के (३ देव के, ३ देवी के ऊपरवत्) सब से कम ऊर्ध्व लोक में उनसे ऊर्ध्व तीर्छे लोक में असं० गुणा उनसे तीन लोक में सख्यात गुणा उनसे अधो-तीर्छे लोक मे असंख्यात गुणा उनसे अधोलोक में संख्यात गुणा, उनसे तीर्छे लोक असंख्यात गुणा।

६ बोल-वैमानिक (३ देवी के ऊपरवत्) के सब से कम ऊर्ध्व-तीर्छे लोक में उनसे तीन लोक में संख्यात गुणा उनसे अधो-तीर्छे लोक में संख्यात गुणा उनसे अधो लोक में संख्या गुणा उनसे अधो लोक में सख्यात गुणा उनसे ऊर्ध्व लोक में असंख्यात गुणा।

६ वोल तीन विकलेन्द्रिय के (३ पर्याप्ता, ३ अपर्याप्ता) सब से कम ऊर्ध्व लोक उनसे ऊर्ध्व तीर्छे लोक में असंख्यात गुणा उसने अधो तीर्छे लोक में असख्यात गुणा उनसे अधो लोक में सख्यात गुणा उनसे तीर्छे लोक मे सख्यात गुणा।

५ वोल (समुच्चय पंचेन्द्रिय समु० अपर्याप्त समु० त्रस, त्रस के पर्या० अपर्याप्त) सब से कम तीन लोक मे उनसे ऊर्ध्व-तीर्छे लोक

में संख्यात गुणा उनसे अधो-तीर्छे लोक मे सख्यात गुणा उनसे ऊर्ध्व लोक में सख्यात गुणा उनसे अधो लोक में संख्यात गुणा उनसे तीर्छे लोक मे असख्यात गुणा।

पुद्गल क्षेत्रापेक्षा सब से कम तीन लोक मे उनसे ऊर्ध्व—तीर्छे लोक मे अन० गुणा उनसे आधो-तीर्छे लोक में विशेष लोक मे उनसे तीर्छे अनन्त गुणा असं० उनसे ऊर्ध्व लोक में उनसे अस० गुणा उनसे अधोलोक मे विशेष।

द्रव्य क्षेत्रापेक्षा : सब से कम तीन लोक मे उनसे ऊर्ध्व-तीर्छे लोक मे अनत गुणा उनसे अधो तीर्छे लोक मे विशेष उनसे ऊर्ध्व लोक मे अनत गुणा उनसे अधो तीर्छे लोक मे अनत गुणा उनसे ऊर्ध्व तीर्छे लोक मे अनंत गुणा।

पुद्गल दिशापेक्षा सब से कम ऊर्ध्व दिशा मे उनसे अधो दिशा मे विशेष, उनसे ईशान नैऋत्य कोन मे अस० गुणा उनसे अग्नि वायव्य कोन मे विशेष, उनसे पूर्व दिशा मे अस० गुणा उनसे पश्चिम दिशा मे विशेष। उनसे दक्षिण दिशा मे विशेष और उनसे उत्तर दिशा मे विशेष पुद्गल जानना।

द्रव्य दिशापेक्षा सब से कम द्रव्य अधो दिशा मे, उनसे ऊर्ध्व दिशा मे अनन्तगुणा उनसे ईशान नैऋत्य कोन मे अनन्तगुणा, उनसे अग्नि वायु कोन मे विशेष उनसे पूर्व दिशा मे असख्यात गुणा उनसे पश्चिम दिशा मे विशेष, उनसे दक्षिण दिशा मे विशेष उनसे उत्तर दिशा मे विशेष।
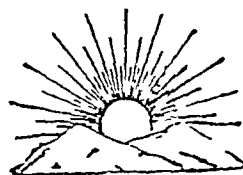
अवगाहना का अल्पबहुत्व

१ सब से कम सूक्ष्म निगोदके पर्याप्ता की ज० अवगाहना उनसे
२ सूक्ष्म वायु काय के अपर्याप्ता की ज० ,, असं० गुणी ,,
३ ,, तेऊ ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,,
४ ,, अप ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,,
५ ,, पृथ्वी ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,,
६ ,, बादर वायु ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,,
७ ,, तेऊ ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,,
८ ,, अप ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,,
९ ,, पृथ्वी ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,,
१० ,, निगोद ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,,
११ प्रत्येक शरीरी बादर वनस्पति के अ० की ,, ,, ,, ,,
१२ सूक्ष्म निगोद के पर्याप्त की ,, ,, ,, ,,
१३ ,, ,, ,, अपर्या. ,, उ० ,, विशेष ,,
१४ ,, ,, ,, पर्याप्ता ,, ,, ,, ,, ,,
१५ ,, वायुकाय ,, ,, ,, ज. ,, असं. गु. ,,
१६ ,, ,, ,, ,, अपर्या. ,, उ ,, विशेष ,,
१७ ,, ,, ,, ,, पर्याप्ता ,, ,, ,, ,, ,,
१८ ,, तेऊ ,, ,, ,, ,, ज. असं. गु. ,,
१९ ,, ,, ,, ,, अपर्या. ,, उ. ,, विशेष ,,
२० ,, ,, ,, ,, पर्याप्ता ,, ,, ,, ,, ,,
२१ ,, अप ,, ,, ,, ,, ज. ,, असं. गु. ,,
२२ ,, ,, ,, ,, अपर्या. ,, उ. ,, विशेष ,,

२३ ,, ,, ,, ,, पर्याप्ता ,,	,,	,,	,,	,,
२४ ,, पृथ्वी ,, , ,, ,,	ज	,,	अस. गु	,,
२५ , ,, ,, ,, अपर्या ,,	उ.	,,	विशेष	,,
२६ ,, ,, ,, ,, पर्याप्ता ,,	,,	,,	,,	,,
२७ बादर वा, ,, ,, ,, ,,	ज.	,	अस गु.	,,
२८ ,, ,, ,, ,, अपर्या. ,,	उ	,,	विशेष	,,
२९ ,, ,, ,, ,, पर्याप्ता ,,	उ.	,,	,,	,,
३० ,, तेऊ ,, ,, ,, ,,	ज.	,,	असं.गु.	,,
३१ ,, ,, ,, ,, अपर्या. ,,	उ.	,,	विशेष	,,
३२ ,, ,, ,, ,, पर्या ,,	,,	,,	,,	,,
३३ ,, अप ,, ,, ,, ,,	ज	,,	अस.गु	,,
३४ ,, ,, ,, ,, अपर्या ,,	उ	,,	विशेप	,,
३५ ,, ,, ,, ,, पर्या ,,	उ.	,,	,,	,,
३६ वादर पृ ,, ,, ,,	ज.	,,	,,	,,
३७ ,, ,, ,, ,, अपर्या. ,,	उ.	,,	विशेप	,,
३८ ,, ,, ,, ,, पर्या ,,	,,	,,	,,	,
३९ ,, निगोद ,, पर्या ,,	ज.	,,	अस. गुणी	
४० ,, ,, ,, ,, अपर्या. ,,	उ	,,	विशेष	,,
४१ ,, ,, ,, ,, पर्या ,,	,,	,,	,,	,,
४२ प्रत्येक शरीरी बादर वन पर्या. की	ज.	,,	अस. गु	,,
४३ ,, ,, ,, ,, अपर्या	उ	,,	,,	,,
४४ ,, ,, ,, ,, पर्या.	,,	,,	,,	,,

चरम पद

(श्री पन्नवणा सूत्र, दशवां पद)

चरम की अपेक्षा अचरम है और अचरम की अपेक्षा चरम है। इनमें कम से कम दो पदार्थ होने चाहिये। नीचे रत्नप्रभादि एकेक पदार्थ का प्रश्न है। उत्तर में अपेक्षा से नास्ति है। अन्य अपेक्षा से अस्ति है। इसी को स्यादवाद् कहते है।

पृथ्वी ८ प्रकार की है – ७ नारकी और ईशद् प्राग्भारा (सिद्ध शिला)।

प्रश्न — रत्नप्रभा क्या (१) चरम है ? (२) अचरम है ? (३) अनेक चरम है ? (४) अनेक अचरम है ? (५) चरम प्रदेश है ? (६) अचरम प्रदेश है ?

उत्तर— रत्नप्रभा पृथ्वी द्रव्यापेक्षा एक है। अत चरमादि ६ बोल नहीं होवे। अन्य अपेक्षा रत्नप्रभा के मध्य भाग और अन्त भाग ऐसे दो भाग करके उत्तर दिया जाय तो–चरम पद का अस्तित्व है। जैसे रत्नप्रभा; पृथ्वी, द्रव्यापेक्षा (१) चरम है। कारण कि मध्य भाग की अपेक्षा बाहर का भाग (अन्त भाग) चरम है। (२) अचरम है। कारण कि अन्त भाग की अपेक्षा मध्य भाग अचरम है। क्षेत्रापेक्षा (३) चरम प्रदेश है। कारण कि मध्य प्रदेशापेक्षा अन्त चरम है और (४) अचरम प्रदेश है। कारण कि अन्त प्रदेशापेक्षा मध्य का प्रदेश अचरम है।

रत्नप्रभा के समान ही नीचे के ३६ बोलो को चार-चार बोल लगाये जा सकते है। ७ नारकी, १२ देव लोक, ९ ग्रैवेयक, ५ अनुत्तर

विमान, १ सिद्ध शिला, १ लोक और १ अलोक एवं ३६×४=१४४ बोल होते है।

इन ३६ बोलों की चरम प्रदेश में तारतम्यता है।

अल्पबहुत्व—

रत्नप्रभा के चरमाचरम द्रव्य और प्रदेशो का अल्पबहुत्व :—सव से कम अचरम द्रव्य, उनसे चरम द्रव्य असख्यात गुणा, उनसे चरमाचरम द्रव्य विशेष। सब से कम चरम प्रदेश, उनसे अचरम प्रदेश असख्यात गुणा, उनसे चरमाचरम प्रदेश विशेष।

द्रव्य और प्रदेश का एक साथ अल्पबहुत्व —सबसे कम अचरम द्रव्य, उनसे चरम द्रव्य असख्यात गुणा, उनसे चरमाचरम द्रव्य विशेष, उनसे चरम प्रदेश असख्यात गुणा, उनसे अचरम प्रदेश असख्यात गुणा, उनसे चरमाचरम प्रदेश विशेष, इसी प्रकार के लोक सिवाय ३५ बोलो का अल्पबहुत्व जानना।

अलोक में द्रव्य का अल्पबहुत्व :—सबसे कम अचरम द्रव्य, उनसे चरम द्रव्य असख्य गुणा, उनसे चरमाचरम द्रव्य विशेष।

प्रदेश का अल्पबहुत्व —सबसे कम चरम प्रदेश, उनसे अचरम प्रदेश अनत गुणा, उनसे चरमाचरम प्रदेश विशेष।

द्रव्य प्रदेश का अल्पबहुत्व –सबसे कम अचरम द्रव्य, उनसे चरम द्रव्य असख्य गुणा, उनसे चरमाचरम द्रव्य विशेष, उनसे चरम प्रदेश असख्य गुणा, उनसे अचरम प्रदेश अनत गुणा, उनसे चरमाचरम प्रदेश विशेष। लोकालोक मे चरमाचरम द्रव्य का अल्पबहुत्व।

सब से कम लोकालोक के चरम द्रव्य, उनसे लोक के चरम द्रव्य असख्य गुणा, उनसे अलोक के चरम द्रव्य विशेष, उनसे लोकालोक के चरमाचरम द्रव्य विशेष।

लोकालोक मे चरमाचरम प्रदेश का अल्पबहुत्व :—सब से कम लोक के चरम प्रदेश, उनसे अलोक के चरम प्रदेश विशेष, उनसे

लोक के अचरम प्रदेश असंख्य गुणा, उनसे अलोक के अचरम प्रदेश अनन्त गुणा, उनसे लोकालोक के चरमाचरम प्रदेश विशेष ।

लोकालोक में द्रव्य-प्रदेश चरमाचरम का अल्पबहुत्व :–सबसे कम लोकालोक के चरम द्रव्य, अस० गुणा, उनसे अलोक के चरम द्रव्य विशेष, उनसे लोक के चरम प्रदेश असफ्य गुणा, उनसे अलोक के चरम प्रदेश विशेष, उनसे लोक के अचरम प्रदेश असख्य गुणा, उनसे अलोक के अचरम प्रदेश अनन्त उनसे लोकालोक के चरम प्रदेश विशेष ।

एवं ६ बोल, सब द्रव्य प्रदेश और पर्याय १२ बोलो का अल्प-बहुत्व—सब से कम लोकालोक के चरम द्रव्य, उनसे लोक के चरम द्रव्य, असंख्य गुणा, उनसे अलोक के चरम द्रव्य विशेष, उनसे लोका-लोक के चरमाचरम द्रव्य विशेष, उनसे लोक के चरम प्रदश असख्य गुणा उनसे अलोक के चरम प्रदेश विशेष; उनसे लोक के अचरम प्रदेश असंख्य गुणा, उनसे अलोक के अचरम प्रदेश अनन्त गुणा, उनसे लोकालोक के चरमाचरम प्रदेश विशेष, उनसे सब द्रव्य विशाष, उनसे सब प्रदेश अनन्त गुणा, उनसे सब पर्यय अनन्त गुणो ।
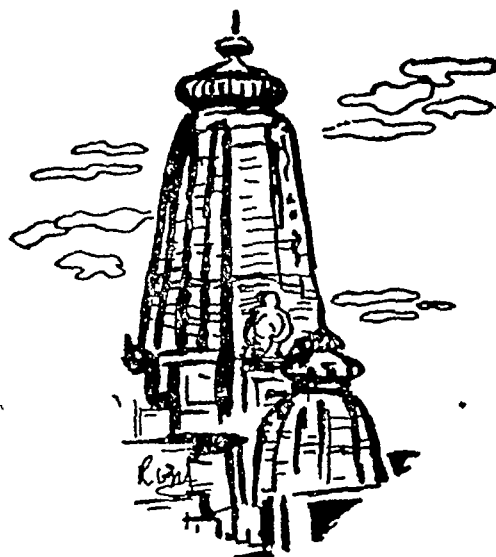
चरमाचरम

(श्री पन्नवणा सूत्र, दसवा पद)

द्वार ११—१ गति, २ स्थिति, ३ भव, ४ भाषा, ५ श्वासोश्वास, ६ आहार, ७ भाव, ८ वर्ण, ९ गध, १० रस, ११ स्पर्श द्वार ।

१ गति द्वार—गति अपेक्षा जीव चरम भी है और और अचरम भी है । जिस भव मे मोक्ष जाना है वह गति चरम और अभी भव बाकी है वो अचरम, एक जीव अपेक्षा और २४ दण्डक अपेक्षा ऊपरवत् जानना । अनेक जीव तथा २४ दण्डक के अनेक जीव अपेक्षा भी चरम अचरम ऊपर अनुसार जानना ।

२ स्थिति द्वार– स्थिति अपेक्षा एकेक जीव, अनेक जीव २४ दण्डक के एकेक जीव और २४ दण्डक के एकेक जीव और २४ दण्डक के अनेक जीव स्यात् चरम, स्यात् अचरम है ।

३ भव द्वार—इसी प्रकार एकेक और अनेक जीव अपेक्षा समुच्चय जीव और २४ दण्डक भव अपेक्षा स्यात् चरम है, स्यात् अचरम है ।

४ भाषा द्वार—भाषा अपेक्षा ११ दण्डक (स्थावर सिवाय के) एकेक और अनेक जीव चरम भी है और अचरम भी है ।

५ श्वासोश्वास द्वार—श्वासोश्वास अपेक्षा सब चरम भी है, अचरम भी है ।

६ आहार—अपेक्षा यावत् २४ दण्डक के जीव चरम भी है, अचरम भी है ।

८ से ११ वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श के २० बोल अपेक्षा यावत् २४ दण्डक के एकेक और अनेक जीव चरम भी है, अचरम भी है । ★

जीव-परिणाम पद

(श्री पन्नवणा सूत्र, तेरहवां पद)

जिस परिणति से परिणमे उसे परिणाम कहते है। जैसे जीव स्वभाव से निर्मल, सच्चिदानन्द रूप है। तथापि पर-प्रयोग से कषाय में परिणमन होकर कषायी कहलाता है। इत्यादि। परिणाम दो प्रकार का है—१ जीव परिणाम, २ अजीव परिणाम।

१ जीव परिणाम—जीव परिणाम १० प्रकार का है—गति, इन्द्रिय कषाय, लेश्या, योग, उपयोग, ज्ञान, दर्शन, चारित्र और वेद परिणाम। विस्तार से गति के ४, इन्द्रिय के ५. कषाय के ४, लेश्या के ६, योग के ३, उपयोग के २ (साकार ज्ञान और निराकार दर्शन), ज्ञान के ८ (५ ज्ञान, ३ अज्ञान), दर्शन के ३ (सम-मिथ्या-मिश्र दृष्टि), चारित्र के ७ (५ चारित्र, १ देश व्रत और अव्रत), वेद के ३, एवं कुल ४५ बोल है। और समुच्चय जीव में १ अनिन्द्रिय, २ अकषाय, ३ अलेषी. ४ अयोगी और ५ अवेदी। एवं ५ बोल मिलाने से ५० बोल हुए।

समुच्चय जीव एवं ५० बोल पने परिमणते है। अब ये २४ दण्डक पर उतारे जाते है।

(१) सात नारकी के दण्डक मे २६ बोल पावे १ नरक गति, ५ इन्द्रिय, ४ कषाय, ३ लेश्या, ३ योग, २ उपयोग, ६ ज्ञान (३ ज्ञान, ३ अज्ञान) ३ दर्शन, १ असंयम-चारित्र, १ वेद नपुंसक एव २६ बोल।

(११) १० भवन पति १ व्यन्तर एव ११ दण्डक में ३१ बोल-पावे नारकी के २६ बालो मे १ स्त्री वेद और १ तेजो लेश्या वढाना।

(३) ज्योतिषी और १-१ देवलोक मे २८ बोल, ऊपर मे से ३ अशुभ लेश्या घटाना ।

(१०) तोसरे से बारहवे देव लोक तक २७ बोल—ऊपर मे से १ स्त्री वेद घटाना ।

(१) नव ग्रैवेयक मे २६ बोल-ऊपर मे से १ मिश्र दृष्टि घटानो ।

(२) पाच अनुत्तर विमान मे २२ बोल । १ दृष्टि और ३ अज्ञान घटाना ।

(३) पृथ्वी, अप, वनस्पति मे १८ बोल । १ गति, १ इन्द्रिय, ४ कषाय, ४ लेश्या, १ योग, २ उपयोग, २ अज्ञान १ दर्शन, १ चारित्र १ वेद एव १८ ।

(२) तेउ-वायु मे १७ बोल-ऊपर मे से १ तेजो लेश्या घटाना ।

(१) बेइन्द्रिय मे २२ बोल-ऊपर के १७ बेलो मे से १ रसेन्द्रिय १ वछन योग, २ ज्ञान, १ दृष्टि एव ५ बढाने से २२ हुवे ।

(१) त्रि-इन्द्रिय मे २३ बोल । उपरोक्त २२ मे १ घ्राणेन्द्रिय बढानी ।

(१) चौरिन्द्रिय मे २४ बोल-२३ में १ चक्षु इन्द्रिय बढानी ।

(१) तिर्यच पचेन्द्रिय मे ३५ बोल १ गति, ५ इन्द्रिय, ४ कषाय ६ लेश्या, ३ योग, २ उपयोग, ३ ज्ञान, ३ दर्शन, २ चारित्र, ३ वेद एव ३५ बोल ।

(१) मनुष्य मे ४७ बोल—५० मे से ३ गति कम शेष सब पावे ।

●

अजीव परिणाम

(श्री पन्नवणा सूत्र; १३ वां पद)

अजीव—पुद्गल का स्वभाव भी परिणमन का है इसके परिणमन के १० भेद है—१ बन्धन, २ गति, ३ सस्थान, ४ भेद, ५ वर्ण, ६ गन्ध, ७ रस, ८ स्पर्श, ९ अगुरुलघु और १० शब्द ।

बन्धन—स्निग्ध का बन्धन नही होवे, (जैसे घी से घी नही बंधाय) वैसे ही रुक्ष (लूखा) रुक्ष का बन्धन नही होवे (जैसे राख से राख तथा रेती से रेती नही बन्धाय) परन्तु स्निग्ध और रूक्ष-दोनों मिलने से बन्ध होत ा है ये भी आधा-आधा (सम प्रमाण में) होवे तो बन्ध नही होवे विषम (न्यूनाधिक) प्रमाण मे होवे तो बन्ध होवे; जैसे परमाणु, परमाणु से नही वन्धाय परमाणु दो प्रदेशी आदि स्कन्ध से बन्धाय ।

गति—पुद्गलो की गति दो प्रकार की है, (१) स्पर्श करते चले (जैसे पानी का रेला और (२) स्पर्श किए बिना चले (जैसे आकाश में पक्षी) ।

संस्थान—(आकार) कम से कम दो प्रदेशी जीव अनन्ता परमाणु के स्ककन्धो का कोई न कोइ संस्थान होता है । इसके पांच भेद O परिमण्डल, O वट्ट, △ त्रिकोन, ।‾। चोरस, । आयतन ।

भद—पुद्गल पांच प्रकार से भेदे जाते है (भेदाते है) (१) खण्डा भेद (लकडी, पत्थर आदि के टुकड़े के समान (२) परतर भेद (अबरख समान पुड़) (३) चूर्ण भेद (अनाज के आटे के समान) (४) उकलिया भेद (कठोल की फलियां सूख कर फटे उस समान) (५) अणनूडिया (तालाब की सूखी मिट्टी समान) ।

वर्ण—मूल रंग पॉच है—काला नीला, लाल, पीला, सफेद । इन रगो के सयोग से अनेक जाति के रंग बन सकते है । जैसे—बादामी, केशरी, तपखीरी, गुलाबी, खासी आदि ।

गंध - सुगन्ध और दुर्गन्ध (ये दो गन्ध वाले पुद्गल होते है) ।

रस—मूल रस पांच है—तीखा, कड़वा, कषैला, खट्टा, मीठा और क्षार (नमक का रस) मिलाने से षट् रस कहलाते है।

स्पर्श—आठ प्रकार का है—कर्कश, मृदु, गुरु, लघु, शीत, उष्ण, रुक्ष, स्निग्ध।

अगुरु लघु—न तो हल्का और न भारी जैसे परमाणु प्रदेश, मन भाषा, कार्मण शरीर आदि के पुद्गल।

शब्द—दो प्रकार के है—सुस्वर और दुःस्वर। *

बारह प्रकार का तप

(श्री उववाई सूत्र)

तप १२ प्रकार का है। ६ बाह्य तप, (१ अनशन, २ उनोदरी, ३ वृत्तिसंक्षेप, ४ रस परित्याग, ५ काया-क्लेश, ६ प्रतिसलिनता), और ६ आभ्यन्तर तप, (१ प्रायश्चित, २ विनय, ३ वैयावच्च, ४ स्वाध्याय, ५ ध्यान, ६ काउसग्ग)।

अनशन के २ भेद—१ इत्वरीक—अल्प काल का तप, २ अवकालिक—जावजीव का तप। इत्वरीक तप के अनेक भेद है—एक उपवास, दो उपवास यावत्, वर्षी तप (१ वर्ष तक के उपवास)। वर्षी तप प्रथम तीर्थंकर के शासन मे हो सकता है। २२ तीर्थंकर के शासन मे ८ माह और चरम (अन्तिम) तीर्थंकर के समय मे ६ माह उपवास करने का सामथ्य रहता है।

अवकालिक—(जावजीव का) अनशन व्रत के २ भेद १ एक भक्त प्रत्याख्यान और २ पादोपगमन प्रत्याख्यान। एक भक्त प्रत्या० के २ भेद—(१) व्याघात उपद्रव आने पर अमुक अवधि तक ४ आहार का पच्चखाण करते जैसे अर्जुनमाली के भय से सुदर्शन सेठ ने किया था। (२) निर्व्याघात—(उपद्रव रहित) के दो भेद (१) जावजीव तक ४ आहार का त्याग करे (२) नित्य सेर, आधासेर तथा पाव सेर दूध या पानी की छूट रख कर जावजीव का तप करे।

पादोपगमन—(वृक्ष की कटी हुई डाल समान हलन चलन किये बिना पड़े रहे। इस प्रकार का संथारा करके स्थिर हो जाना) अनशन के दो भेद—१ व्याघात (अग्नि-सिंहादि का उपद्रव आने से) अनशन करे जैसे सुकोशल तथा अति सुकुमाल मुनियो ने किया। २ निर्व्याघात (उपद्रव रहित) जावर्जीव का पादोपगमन करे। इनको प्रतिक्रमणादि करने की कुछ आवश्यकता नही एक प्रत्याख्यान अनशन वाला जरूर करे।

उनोदरी तप के २ भेद—द्रव्य उनोदरी और भाव उनोदरी द्रव्य उनोदरी के २ भेद (१) उपकरण उनोदरी (वस्त्र, पात्र और इष्ट वस्तु जरूरत से कम रक्खे—भोगवे) २ भाव उनोदरी के अनेक प्रकार है। यथा अल्पाहारी ८ कवल (कवे) आहार करे, अल्प अर्ध उनोदरी वाले १२ कवल ले, अर्ध उनोदरी करे तो १६ कवल ले, पौन उनोदरी करे तो २४ कवल ले, एक कवल उनोदरी करे तो ३१ कवल ले, ३२ कवल का पूरा आहार समझना। जितने कवल कम लेवे उतनी ही उनोदरी होवे उनोदरी से रसेंद्रिय जीताय, काम जीताय, निरोगी होवे।

भाव उनोदरी के अनेक भेद—अल्प क्रोध, अल्प मान, अल्प माया, अल्प लोभ, अल्प राग, अल्प द्वेष, अल्प सोवे, अल्प बोले आदि।

वृत्ति सक्षेप (भिक्षाचरी) के अनेक भेद—अनेक प्रकार के अभिग्रह धारण करे जैसे द्रव्य से अमुक वस्तु ही लेना, अमुक नही लेना। क्षेत्र से अमुक घर, गांव के स्थान से ही लेने का अभिग्रह। काल से अमुक समय, दिन को व महीने में ही लेने का अभिग्रह। भाव से अनेक प्रकार के अभिग्रह करे जैसे बर्तन में से निकालता देवे तो कल्पे, बर्तन मे डालता देवे तो कल्पे, अन्य को देकर पीछे फिरता देवे तो कल्पे, अमुक वस्त्र आदि वाले तथा अमुक प्रकार से तथा अमुक भाव से देवे तो कल्पे इत्यादि अनेक प्रकार के अभिग्रह धारण करे।

रस परित्याग तप के अनेक प्रकार है—विगय (दूध, दही, घी, गुड, शक्कर, तेल, शहद, मक्खन आदि) का त्याग करे। प्रणीत रस (रस झरता हुआ आहार) का त्याग करे, निवि करे, एकासन करे, आयंबिल करे, पुरानी वस्तु, बिगडा हुआ अन्न, लूखा पदार्थ आदि का आहार करे। इत्यादि रस वाले आहार को छोडे।

काया क्लेश तप के अनेक भेद है—एक ही स्थान पर स्थिर होकर रहे, उकडु-गौदुह-मयूरासन पद्मासन आदि ८४ प्रकार का कोई भी आसन करके बैठे। साधु की १२ पडिमा पालन, आतापना लेना, वस्त्र रहित रहना, शीतउष्णता (तडका) सहन करना, परिषह सहना। थूंकना नही, दान्त धोने नहीं, शरीर की सार सम्भाल करना नही। सुन्दर वस्त्र पहिनना नही, कठोर वचन गाली, मार प्रहार सहना, लोच करना, नगे पैर चलना आदि।

प्रतिसलिनता तप के चार भेद—१ इन्द्रिय सलिनता, २ कषाय सलिनता, ३ योग सलि०, ४ विविध शयनासन संलि०, (१) इन्द्रिय सलिनता के ५ भेद—(पाचो इन्द्रियो को अपने-२ विषय मे राग द्वेष करते रोकना (२) कषाय सलि० के चार भेद—१ क्रोध घटा कर क्षमा करना। २ मान घटा कर विनीत बनना, ३ माया को घटा कर सरलता धारण करना, ४ लोभ को घटा कर सतोष धारण करना। (३) योग प्रति सलिनता के तीन भेद—मन वचन, काया को बुरे कामो से रोक कर सन्मार्ग मे प्रवर्ताविना। (४) विविध शयनासन सेवन प्रति संलि० के अनेक भेद है—उद्यान चैत्य, देवालय, दुकान, वखार, श्मशान, उपाश्रय आदि स्थानो पर रह कर पाट पाटले, बाजोट, पाटिये, बिछौने, वस्त्र-पात्रादि प्रासुक स्थान अगीकार करके विचरे।

आभ्यन्तर तप

१ प्रायश्चित के १० भेद—१ गुर्वादि सन्मुख पाप प्रकाशे, २ गुरु के बताये हुवे दोष और पुनः ये दोष नही लगाने की प्रतिज्ञा करे,

३ प्रायश्चित प्रतिक्रमण करे, ४ दोषित वस्तु का त्याग करे, ५ दस, वीस, तीस, चालीस, लोगस्स का काउसग्ग करे, ६ एकाशन, आयंवलि यावत् छमासी तप करावे, (७) ६ मास तक को दीक्षा घटावे, ८ दीक्षा घटा कर सबसे छोटा बनावे, ६ समुदाय से वाहर रख कर मस्तक पर श्वेत कपडा (पाटा) वन्धवा कर साधुजी के साथ दिया हुआ तप करे, १० साधु वेष उतरवा कर गृहस्थ वेष में छमाह तक साथ फेर कर पुनः दीक्षा देवे।

२ विनय के भेद—मति ज्ञानी. श्रुत ज्ञानी, अवधि ज्ञानी, मनः पर्यय ज्ञानी, केवल ज्ञानी आदि की असातना करे नही, इनका वहु-मान करे, इनका गुण कीर्तन करके लाभ लेना। यह ज्ञान विनय जानना।

चारित्र विनय के ५ भेद—पाँच प्रकार के चारित्र वालों का विनय करना।

योग विनय के ६ भेद—मन, वचन, काया ये तीनों प्रशस्त और अप्रशस्त एव ६ भेद है। अप्रशस्त काय विनय के ७ प्रकार—अयत्ना से चले, बोले, खड़ा रहे, बैठे, सोवे, इन्द्रिय स्वतन्त्र रक्खे, तथा अगो-पांग का दुरुपयोग करे ये सातों अयत्ना से करे तो अप्रशस्त विनय और यत्ना पूर्वक प्रवर्तावे सो प्रशस्त विनय।

व्यवहार विनय के ७ भेद—१ गुर्वादिक के विचार अनुसार प्रवर्ते, २ गुरु आदि की आज्ञानुसार वर्ते ३ भात पानी आदि लाकर देवे ४ उपकार याद करके कृतज्ञता पूर्वक सेवा करे ५ गुर्वादिक की चिन्ता-दुख जानकर दूर करने का प्रयत्न करे ६ देश काल अनुसार उचित प्रवृत्ति करे ७ निद्य (किसी को खराव लगे ऐसी) प्रवृत्ति न करे।

३ वैयावच्च (सेवा) तप के १० भेद—१ आचार्य की, २ उपाध्याय की, ३ नव दीक्षित की, ४ रोगी की, ५ तपस्वी की, ६ स्थविर की,

७ स्वधर्मी की, ८ कुलगुरु की, ९ गणावच्छेदक की १० चार तीर्थ की वैयावच्च (सेवा-भक्ति) करे।

४ स्वाध्याय तप के ५ भेद—१ सूत्रादि की वाचना लेवे व देवे २ प्रश्नादि पूछ कर निर्णय करे, पढे हुवे ज्ञान को हमेशा फेरता रहे ४ सूत्र-अर्थ का चितवन करता रहे, ५ परिषद मे चार प्रकार की कथा कहे।

५ ध्यान तप के ४ भेद—आर्त ध्यान, रौद्र ध्यान, धर्म ध्यान, शुक्ल ध्यान।

आर्त्त ध्यान के चार भेद—१ अमनोज्ञ (अप्रिय) वस्तु का वियोग चितवे, २ मनोज्ञ (प्रिय) वस्तु का सयोग चितवे, ३ रोगादि से घबरावे, ४ विषय भोगो मे आसक्त बना रहे उसकी गृद्धि से दुख होवे। चार लक्षण—१ आक्रद करे, २ शोक करे, ३ रुदन करे, ४ विलाप करे।

रौद्र ध्यान के चार भेद—हिंसा मे, असत्य मे, चोरी मे, और भोगोपभोग मे आनन्द माने। चार लक्षण—१ जीव हिंसा का २ असत्य का ३ चोरी का थोडा वहुत दोष लगावे ४ मृत्युशय्या पर भी पाप का पश्चात्ताप नही करे।

धर्म ध्यान के भेद—चार पाये—१ जिनाज्ञा का विचार २ रागद्वेष उत्पत्ति के कारणो का विचार ३-कर्म विपाक का विचार ४ लोक सस्थान का विचार।

चार रुचि—१ तीर्थंकर की आज्ञा आराधना करने की रुचि २ शास्त्र श्रवण की रुचि ३ तत्त्वार्थ श्रद्धान की रुचि ४ सूत्र सिद्धान्त पढने की रुचि।

चार अवलम्बन १ सूत्र सिद्धान्त की वाचना लेना व देना २ प्रश्नादि पूछना ३ पढे हुए ज्ञान को फेरना ४ धर्म कथा करना।

चार अनुपेक्षा—१ पुद्गल को अनित्य नाशवन्त जाने २ ससार मे कोई किसी को शरण देने वाला नही ऐसा चितवे ४ मै अकेला हूं, ऐसा सोचे ४ ससार-स्वरूप विचारे एव धर्म-ध्यान के १६ भेद हुए।

शुक्ल ध्यान के १६ भेद : १ पदार्थो मे द्रव्य गुण पर्याय का विविध प्रकार से विचार करे २ एक पुद्गल का उन्मादादि विचार वदले नही ३ सूक्ष्म ईर्यावहि क्रिया लागे परन्तु अकषायी होने से बन्ध न पड़े ४ सर्व क्रिया का छेद करके अलेशी बने। चार लक्षण—१ जीव को शिव रूप-शरीर से भिन्न समझे, २ सर्व संग को त्यागे ३ चपलता पूर्वक उपसर्ग सहे. ४ मोह रहित वर्ते। चार अवलम्बन—१ पूर्ण निर्लोभता, ३ पूर्ण सरलता, ४ पूर्ण निरभिमानता। चार अनुपेक्षा—१ प्राणातिपात आदि पाप के कारण सोचे २ पुद्गल की अशुभता चितवे, ३ अनन्त पुद्गल परावर्तन का चितन करे, ४ द्रव्य के बदलने वाले परिणाम चितवे।

६ कायोत्सर्ग तप के दो भेद : १ द्रव्य कायोत्सर्ग, २ भाव कायोत्सर्ग के चार भेद—१ शरीर के ममत्व का त्याग करे, २ सम्प्रदाय के ममत्व का त्याग करे ३ वस्त्र पात्रादि उपकरण का ममत्व त्यागे ४ आहार पानी आदि पदार्थो का ममत्व त्यागे। भाव कायोत्सर्ग के ३ भेद—१ कषाय कायोत्सर्ग (४ कषाय का त्याग करे) २ संसार कायोत्सर्ग (४ गति मे जाने के कारण का बध करना) ३ कर्म कायोत्सर्ग (८ कर्म बन्ध के कारण जान कर त्याग करे)।

इस प्रकार कुल बारह प्रकार के तप के सर्व ३५४ भेद उवाई सूत्र से जानना।